महाकविश्रीमदम्बिकादत्तव्यासरचित

शिवराज-विजय

(प्रथम विराम के दो निःश्वास)

व्याख्याकार
देव नारायण मिश्र
एम ए (संस्कृत, हिन्दी) व्याकरणाचार्य
प्रवक्ता,
आर० एम० पी० स्नातकोत्तर कालेज, सीतापुर

प्रकाशक
साहित्य भण्डार
सुभाष बाजार, मेरठ।

[मूल्य ५.००

● प्रकाशक .
रतिराम शास्त्री
अध्यक्ष
साहित्य भण्डार
सुभाष बाजार, मेरठ

प्रथम सस्करण १९७५

मूल्य पाँच रुपये मात्र।

● मुद्रक
सर्वोदय प्रेस, मेरठ।
दूरभाष ७४३५२

पूर्व-कथन

सस्कृत गद्य-काव्य मे पण्डित अम्बिकादत्त व्यास का अन्यतम स्थान है। पुरातन परम्पराओ से कुछ हटकर लिखा गया यह काव्य अपनी मौलिकता, ऐतिहासिकता और सुबोधता के कारण बहुत ही जनप्रिय ही नही हुआ अपितु विद्वान आलोचको का भी प्रशसा का विषय बन गया। इस अर्वाचीन कृति के महत्त्व को दृष्टिगत करते हुए कतिपय विश्वविद्यालयो के स्नातकीय या परा-स्नातकीय परीक्षाओ मे इसे स्थान दिया गया है। अस्तु, यत्किञ्चित्करी व्यवसायात्मिका बुद्धि से प्रेरित होकर इसके प्रथम विराम के दो निश्वासो की व्याख्या करने मे प्रवृत्त हुआ। व्याख्या में कुछ तथ्य अवधेय है—सर्वप्रथम हिन्दी अनुवाद, तदनन्तर सस्कृत-व्याख्या, हिन्दी-व्याख्या तथा टिप्पणी दी गई है। हिन्दी अनुवाद मे शाब्दिक अनुवाद करने का प्रयास किया है किन्तु किसी विषय को भाषान्तरित करने मे शाब्दिक अनुवाद असम्भव हो जाता है। इस कारण यत्किञ्चित् भाषात्मक अन्तर हो सकता है। सस्कृत-व्याख्या अत्यन्त सरल रूप मे दी गई है क्योकि उसका भी उद्देश्य छात्रो के लिये बोधगम्य बनाना था। हिन्दी-व्याख्या मे छात्रों एव पाठको की सुविधा के लिये शब्दो का हिन्दी मे अर्थ, समास, व्युत्पत्ति, व्याकरण (प्रकृति-प्रत्यय आदि) विशेष रूप से दिये गये है जिससे पाठको या छात्रो को विश्लेषणात्मक ज्ञान हो सके। इसके बाद टिप्पणी मे अलकार, रस, गुण तथा अन्य अन्तर्निहित वैशिष्ट्यो का उल्लेख है। इस प्रकार मूल को अत्यन्त सरल एव सुबोध बनाने का प्रयास किया गया है। प्रारम्भ की भूमिका मे सस्कृत गद्यकाव्य का इतिहास, गद्य की विधाएँ, अम्बिका-दत्त व्यास का परिचय तथा शिवराज विजय की काव्यगत विशेषताओ का उल्लेख किया है जिससे परीक्षार्थियो को विशेष लाभ होगा।

इस ग्रन्थ की व्याख्या के लिये प्रेरणाप्रद पूज्य गुरुवर डा० कृष्णकान्त त्रिपाठी को शिरोवनत हूँ तथा अन्य गुरुजनो एव सहयोगियो के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। पुस्तक के प्रकाशन के लिये साहित्य भण्डार के प्रकाशक महोदय साधुवाद के पात्र हैं क्योकि उनकी उत्कट उत्कण्ठा के कारण ही इस पुस्तक लेखन मे मुझे द्रुत गति का आश्रय लेना पड़ा है।

श्रावणी, १९७५

—व्याख्याकार

भूमिका

(क) सस्कृत गद्य साहित्य का उदभव और विकास

सस्कृत साहित्य विश्व का प्राचीनतम साहित्य है। इसमे पाश्चात्य एव पौर्वात्य सभी विद्वानो को कोई विप्रत्तिपत्ति नही है। सम्प्रति सस्कृत वाड्मय गद्य एव पद्य द्विविध रूप मे प्राप्त है, उपलब्ध साहित्य के आधार पर पद्य की ही प्राचीनता कही जा सकती है। किन्तु गद्य या पद्य के प्राचीनतम आदिम रूप के सम्बन्ध मे विद्वानो मे वैमत्य है। प्रथम पक्ष के अनुसार गद्य मनुष्य की स्वाभाविक भापा होने के कारण आरम्भ मे गद्यात्मक साहित्य का ही विकास हुआ होगा। ऋग्वेद के सवाद सूक्तो और यजुर्वेद के प्राप्त गद्य-खण्डो के आधार पर इस मत की पुष्टि की जा सकती है। दासगुप्ता ने भी इसी मत को प्रामाणिक सिद्ध किया है। द्वितीय पक्ष यह है कि साहित्य का प्रारम्भिक विकास पद्य के रूप मे हुआ। प्राचीनतम ऋग्वेद पद्य मे उपलब्ध है। भाषा-विदो ने भी भाषा की उत्पत्ति सगीत के आधार पर बताते हुये यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि मनुष्य की स्वाभाविक भाष। सगीतात्मक थी परिणाम-स्वरूप प्रारम्भ मे पद्य-साहित्य का ही विकास हुआ।

मेरी दृष्टि मे द्वितीय मत अधिक समीचीन प्रतीत होना है। पद्यात्मक वाणी मनुष्य की सहज प्रवृत्ति होने के कारण ही गद्य कवीना' निकषं वदन्ति इस सिद्धान्त की उद्भावना हुई और अलकृत, परिमार्जित गद्य-विधान को कवियो की कसौटी माना गया। सस्कृत गद्य की प्रधान विशिष्टता 'शब्द लाघव' है इसका कारण समास कं सत्ता है। 'ओज' गद्य का प्राण है और इसका प्रधान लक्षण 'समास.वहुलता' है। दण्डी ने भी कहा है—ओज समास-भूयरस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्'। सस्कृत गद्य की वर्णन-शैली प्रत्यधिक अलकृत है। सस्कृत मे गद्य के लेखको ने अपने पाण्डित्य प्रदर्शन को ही प्रधान लक्ष्य वनाया है।

सस्कृत पद्य का उद्भव—सस्कृत गद्य की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्राचीनतम गद्य का उदाहरण हमे कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय सहिता मे प्राप्त होता है। इस वेद की काठक और मैत्रेयी सहिताओ मे भी गद्य की मात्रा न्यून नही है। इसके पश्चात् अथर्ववेद का छठा भाग पूर्णतया गद्यात्मक है आगे चलकर समस्त ब्राह्मण और आरण्यक-ग्रन्थो की रचना भी गद्य मे हुई। उपनिषदो मे प्राचीन उपनिषद् भी गद्यात्मक है। इस प्रकार स्पष्ट है कि गद्य का उद्भव वैदिक काल मे ही होता है। वैदिक साहित्य मे गद्य का प्रयोग बहुत व्यापक और उदार रूप मे हुआ है।

सस्कृत-गद्य का विकास

वैदिक गद्य साहित्य—वैदिक-साहित्य मे गद्य साहित्य का रूप उनमे वर्णित आख्यानो मे दिखायी पडता है। इन आख्यानो मे गद्य के साथ पद्य का भी भाग मिलता हे जिसे 'गाथा' कहते है। ऋग्वेद मे 'नाराशसी' गाथाओ का उल्लेख है। वैदिकगद्य मे छोटे-छोटे सरल एव सुबोध शब्दो का प्रयोग है। 'ह', 'उ', 'वै' आदि अव्यय वाक्यालकार के रूप मे प्रयुक्त है जिनसे रोचकता तथा सुन्दरता का समावेश हो जाता है। समासो का प्राय अभाव है। उदाहरणो की बहुलता है। उपमा तथा रूपक जैसे सादृश्यमूलक अलकारो का सुन्दर सयोजन है। वैदिक गद्य का उदाहरण देखिये—

"व्रात्य आसीदीयमान एव स प्रजापति समैरयत्।
स प्रजापति सुवर्णमात्मन्नपश्यत् तत् प्राजनयत्॥"

पौराणिक एव शास्त्रीय गद्य—वैदिक गद्य के बाद पौराणिक एव शास्त्रीय गद्य अत्यन्त प्रौढ, समास बहुल एव गाढबन्ध वाला है। अलकृत होने के कारण इसमे साहित्यिकता के दर्शन होते है। श्रीमद्भागवत और विष्णुपुराण का गद्य इसका स्पष्ट उदाहरण है। विष्णुपुराण का एक उदाहरण देखिये—

"यथैव व्योम्नि वह्नि पिराडोपम त्वामहपश्य तथैवाद्याग्रतो गतमप्यत्र भगवताकिञ्चिन्न प्रसादीकृत विशेपमुपलक्षयामीत्युक्ते भगवता सूर्येणनिजण्ठाक दुन्मुच्यरयम तक नाम महामणि वरमवतार्य एकाते न्यस्तम्।"

शास्त्रीय गद्य मे तत्वज्ञान सम्बन्धी दर्शन—ग्रन्थ, भाष्य एव व्याकरण शास्त्र

सम्बन्धी ग्रन्थ आते है। ऐसे शास्त्रकारो मे पतञ्जलि, शबर स्वामी शङ्कराचार्य, और जयन्तभट्ट प्रमुख हैं। पतञ्जलि के महाभाष्य मे गद्य की रमणीयता कथोपकथन शैली मे अभिव्यक्त हुई है। ऐसा प्रतीत होता है मानो वे अपने सामने बैठे छात्रो को समझा रहे है। यथा—

ये पुन कार्याभावा निवृतौ यावत् तेषा यत्न क्रियते। तद् यथा घटेन कार्यं करिष्यन् कुम्भकारकुल गत्वार कुरू घट कार्यमने न करिष्यामीति।"

प्रौढमीमासक शबर स्वामी ने 'कर्ममीमासा पर लिखे गये सूत्रो पर भाष्य रचा जिसमे सीधी सादी व्यास शैली का प्रयोग किया गया है। इसके शकराचार्य ने अपने भाष्यो मे प्रौढ एव प्राञ्जल गद्य का प्रयोग किया है। शकराचार्य का गद्य माधुर्य तथा प्रसाद गुण सम्पन्न है, अत उसमे साहित्यिकता के दर्शन होते हैं। यथा—

"नहि पद्भ्या पलायितु पारयमाणो जानुभ्या रहितुमर्हति।"

अर्थात् 'पैरो' से दौडने मे समर्थ व्यक्ति को घुटनो से रेंगना शोभा नही देता।'

शकराचार्य का गद्य मात्रा मे भी अधिक है। ब्रह्मसूत्र, गीता तथा उपनिषदो पर भाष्य लिखना उनके रचना चातुर्य का द्योतक है। जयन्तभट्ट द्वारा रचित 'न्यायमजरी' का गद्य बडा ही सुन्दर, सरस तथा प्राञ्जल है। इनके गद्य मे व्यग्य उक्तियो की अधिकता है।

लौकिक गद्य का अभ्युदय—लौकिक गद्य का सर्वप्रथम दर्शन हमे दण्डी, सुबन्धु और बाण की रचनाओ मे मिलता है। किन्तु इनकी रचनाओ का गद्य अत्यन्त विकसित रूप मे प्राप्त होता है। अत निश्चय ही ये गद्य-काव्य के चरमोत्कर्ष के प्रतीक हैं। सस्कृत मे गद्यात्मक-कथाओ का उदय ईसा से लगभग ४०० वर्ष पूर्व हो चुका था। वैयाकरण वार्तिककार कात्यायन (४०० ई० पूर्व) सस्कृत गद्य काव्य की आदिकालीन आख्यायिकाओ और आख्यान से परिचित थे। महाभाष्यकार पतञ्जलि (२०० ई० पू०) ने तीन आख्यायिकाओ वासवदत्ता, सुमनोत्तरा तथा भैमरथी का उदाहरण रूप मे उल्लेख किया है—

"अधिकृत्य कृतेग्रन्थे" बहुल लुग्वक्तव्य वासवदत्ता समुनोत्तरा न च भवति भैमरथी।"

काशिका में भी इन्हीं नामो का उल्लेख मिलता है परन्तु उनका पता अभी तक नही चला है। अत निश्चय ही सस्कृत-गद्य अत्यन्त प्राचीन है। कुछ उपलब्ध शिलालेखो से सस्कृत-गद्य-काव्य के विकसित रूप की सूचना मिलती है। इनमे प्रमुख रुद्रदामन का गिरनार शिलालेख (१५० ई०) है। इसकी भाषा सरल, प्रवाहमयी एव आलकारिक है तथा कुछ बडे तथा कुछ छोटे समासो का प्रयोग हुआ है।

अत यह निश्चित हो जाता है कि प्रौढ गद्य का प्रणयन दण्डी, सुबन्धु और बाण ने किया उसका उद्भव और विकास शताब्दियो पूर्व हो चुका था, किन्तु प्राचीन गद्यकाव्य के ग्रन्थ आज दुर्भाग्यवश उपलब्ध नही है।

सस्कृत गद्य-काव्य का समृद्धि युग—सस्कृत गद्य-काव्य का समृद्धि युग गद्य काव्यकार दण्डी, सुबन्धु और बाण का युग माना जाता है इन्होने सस्कृत गद्य-काव्य को अपनी उत्कृष्ट गद्यात्मक रचनाओ से चरम उन्नति प्रदान की।

१ दण्डी—दण्डी 'किरातार्जुनीयम् महाकाव्य के रचयिता भारवि के प्रपौत्र थे। दण्डी विदर्भ के निवासी थे और इन्हे नरसिंह वर्मा प्रथम का राज्याश्रय प्राप्त था। उनका स्थिति काल ७०० ई० के लगभग माना जाता है। राजशेखर के 'त्रयोदण्डि प्रबन्धाश्च त्रिपु लोकेपु विश्रुता के अनुसार दण्डी की तीन रचनायें प्रतीत हैं। जिनमे 'काव्यादर्श और 'दशकुमारचरित' नि सदेह उनकी रचनायें है। तीसरी रचना के विपय मे मतभेद है। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के प्रकाश मे आ जाने से बहुत लोग इसे ही दण्डी की तीसरी रचना मानते है।

'काव्यादर्श' अलकार शास्त्र का अनुपम ग्रन्थ है। 'दशकुमार-चरित' मे दस राजकुमार अपने देश देशान्तरो मे भ्रमण, विचित्र अनुभवो का मनोरजक वर्णन करते हैं। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' मे अवन्ती सुन्दरी की कथा है।

दण्डी की काव्य-शैली पाञ्चाली रीति है। अर्थ की स्पष्टता रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और शब्द का लालित्य ये दण्डी की शैली के विशेप गुण है। अतएव प्राचीन समीक्षको ने कहा है—"दण्डिन पदलालित्यम्" बडे-बडे जटिल समासो से दण्डी की शैली अधिकाशत मुक्त है। डा० कृ— ने

उनकी मुख्य विशेषता उनका चरित्र-चित्रण माना है। डण्डी की काव्यात्मक विशेषताओ के कारण कतिपय आलोचक उन्हे वाल्मीकि और व्यास के बाद तीसरा कवि मानते हैं।

२ सुबन्धु—अलकृत शैली के गद्य-लेखको मे सुबन्धु का स्थान अत्यन्त उच्च है। सुबन्धु के स्थितिकाल के विषय मे आलोचको मे मतभेद है। कुछ इन्हे बाण का पूर्ववर्ती और कुछ परवर्ती मानते है। अधिकाश विद्वान इनका स्थितिकाल छठी शताब्दी का अन्तिम भाग निर्धारित करते हैं।

सस्कृत गद्य मे सुबन्धु का यश उनकी एकमात्र रचना वासवदत्ता पर अवलम्बित है। वासवदत्ता मे राजकुमारी वासवदत्ता की कथा है जिसमे कथानक नितान्त स्वल्प है परन्तु वर्णन प्रचुर मात्रा मे है। वस्तुत कवि का मुख्य ध्येय अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करना ही है। सुबन्धु ने गौडी रीति का प्रयोग किया है उनके ग्रन्थ के प्रत्येक अक्षर मे श्लेष हैं। सुबन्धु ने अपनी श्लेप प्रधान शैली के विषय मे कहा है—

"प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपञ्चविन्यासवैदग्ध्य निधि प्रबन्धम्।
सरस्वती दत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धु सुजनैकबन्धु ॥"

श्लेष के अतिरिक्त विरोधाभास, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलकारो की भी कमी नही है। दीर्घ समासो से युक्त गौडी रीति के प्रयोग के कारण उनकी शैली मे प्रसाद और माधुर्य न होकर आडम्बर कृत्रिमता तथा क्लिष्टता ही अधिक है। सुबधु ने वर्णन-वैचित्र्य के कारण विशेप ख्याति अर्जित की।

३ बाण—सस्कृत-गद्य-काव्य का चरमोत्कर्प हर्पवर्धन के आश्रित कवि बाणभट्ट की कादम्बरी मे लक्षित होता है। हर्प का राज्यकाल ६०६ ई० से से ६४८ ई० है। अत बाण का समय सातवी शताब्दी का पूर्वार्द्ध सिद्ध होता है।

महाकवि बाण की पाँच कृतियाँ प्रसिद्ध हैं—हर्पचरित, कादम्बरी, पार्वती-परिणय, चण्डीशतक और मुकुटताडितक।

बाण के काव्य मे अल्पसमास शैली, दीर्घसमास शैली और समास रहित शैली—ये तीन प्रकार की शैलियाँ प्राप्त होती हैं। रीति की दृष्टि से बाण ने

"पाञ्चाली रीति" का प्रयोग किया है। कादम्बरी मे अर्थ के अनुरूप शब्दो का प्रयोग हुआ है। 'ओज समास भूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्, के अनुसार बाण ने ओजगुणमण्डिता समास बहुला वाक्यो का प्रयोग किया है परन्तु उनके काव्य मे छोटे-छोटे समास वाले वाक्य भी प्राप्त होते है। परिसख्या, श्लेष, उत्प्रेक्षा और उपमा आदि इनके प्रिय अलकार है। उनकी दृष्टि प्रकृति के घोर और रम्य दोनो रूपो पर पडी है। डॉ० कीथ ने बाण की शैली के विषय मे कहा है—"बाण ने एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत किया है जिसकी प्रशसा करना तो सरल है पर उसका सफलतापूर्वक अनुसरण करना कठिन है। वास्तव मे परवर्ती ऐसी कोई रचना हमारे सम्मुख नही है जो क्षणभर के लिये भी उसकी रचनाओ के समकक्ष रखी जा सके"।

परवर्ती सस्कृत गद्यकाव्यकार—महाकवि बाण के बाद प्रमुख गद्यकवि धनपाल (१० वी शताब्दी का उत्तरार्द्ध) ने सुप्रसिद्ध गद्य-काव्य 'तिलक मञ्जरी' की रचना की जिसमे उस समय मे प्रचलित कलाओ का अत्यन्त रोचक वर्णन है। धनपाल के ही समकालीन वादीभसिंह का 'गद्यचिंतामणि' जैन पुराणो मे उल्लिखित जीवन्धर की कथा का वर्णन सुन्दर शब्दो मे करता है। इसमें भी कथानक और भाषा की दृष्टि से बाण का अनुकरण किया गया है। वामनभट्ट १५ वी शती का 'वेम-भूपाल-चरित' हर्षचरित के अनुकरण पर लिखा गया आख्यायिका ग्रन्थ है। इसके बाद लगभग ४ शताब्दियो तक सस्कृत-गद्य मे कोई प्रमुख रचना नही हुई।

आधुनिक युग के प्रमुख गद्य-कवि अम्बिकादत्तव्यास है जिन्होने क्षत्रपति शिवाजी के जीवन को आधार बनाकर शिवराज-विजय की रचना की। आपका गद्य दण्डी, बाण और सुबधु तीनो से प्रभावित है। शिवराज-विजय सर्वप्रथम सन् १९०१ मे प्रकाशित हुआ। व्यास जी के अतिरिक्त प० हृषी केश शास्त्री भट्टाचार्य अपनी 'प्रबन्ध मञ्जरी' के कारण प्रसिद्ध है। वर्तमान युग के अन्य गद्यकार पण्डिता क्षमाराव, श्रीपदशास्त्री हरसूरकर श्रीमती राजम्भा, श्री व्यवसाय शास्त्री (मद्रास) आदि है। प० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने सस्कृत-गद्य मे समीक्षात्मक प्रवृत्ति को प्रश्रय देकर अनेक आलोचनात्मक निबन्ध लिखे। आलोचनात्मक निबन्धो के लिये डॉ० रेवा प्रसाद द्विवेदी का नाम भी प्रसिद्ध हैं।

आधुनिक युग में संस्कृत-गद्य के प्रसार में सस्कृत पत्र-पत्रिकाओ का

महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हो रहा है । इनमे भवितव्यम् (नागपुर) पण्डित पत्रिका (काशी), भारतवाणी (पूना), शारदा (बम्बई), सम्कृत रत्नाकार (दिल्ली), सस्कृत पत्रिका (मैसूर) आदि प्रमुख हे ।

सस्कृत-गद्य-काव्य के विकास मे उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट हे कि सस्कृत-गद्य का जो रूप वैदिक काल मे था वह क्रमश ब्राह्मण, पौराणिक एव शास्त्रीय ग्रन्थो मे विकसित होता हुआ, सप्तम शती मे बाण, दण्डी एव सुबन्धु के द्वारा चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ । इसके पश्चात् सस्कृत गद्य का लगभग अभाव रहा । इसका प्रमुख कारण हमारे देश मे विदेशियो का आगमन था । बीसवी शताब्दी मे पुन सम्कृत गद्य की रचना प्रारम्भ हुई और आज भी सस्कृत-गद्य रचा जा रहा है किन्तु वह पत्र-पत्रिकाओ एव लघुकाय निबन्धो के रूप मे ही सीमित है और गद्य रचनाओ का जो रूप है वह समाज की जीवन झाँकी को प्रस्तुत करने मे पूर्णतया समर्थ नही है । इसका कारण परिवर्तित सामाजिक, राजनैतिक भाषात्मक एव सास्कृतिक स्थितियाँ हैं ।

गद्य साहित्य की मुख्यत दो धाराएँ उपलब्ध होती हैं—

१ कथा या आख्यान साहित्य ।	१ नीतिपरक कथासाहित्य ।
२ गद्य काव्य की विधाये ।	२ काव्यपरक कथासाहित्य ।

१ **नीतिपरक कथा साहित्य**— विश्व-साहित्य मे भारत के आख्यान-साहित्य का अत्यत महत्वपूर्ण स्थान हे । मौलिकता, रचना नैपुण्य तथा विश्व-व्यापक प्रभाव की दृष्टि से वह अनुपम और अद्वितीय सिद्ध हो चुका है । इन आख्यानो मे शुद्ध काल्पनिक जगत् का चित्रण किया गया है । उनमे कही कुतूहल है, कही घटना-वैचित्र्य है, कही हास्य और विनोद है, कही गम्भीर उपदेश है कही सरस काव्य की मधुर झलक हैं । सस्कृत कथा या आख्यान साहित्य को दो भागो मे विभाजित किया जा सकता हे—नीति-कथा और लोक-कथा ।

नीति-कथा—उपदेशात्मक प्रवृत्ति का मनोरंजनकारी परिपाक नीति-कथाओ मे हुआ हे । नीति-कथाओ का उद्देश्य रोचक कहानियो द्वारा त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) की बातो का उपदेश देना ह । नीतिकथाओ का प्रतिपाद्य विषय सदाचार, राजनीति और व्यवहारिक ज्ञान हे ।

नीतिकथायें जहाँ नीतिशास्त्र का ज्ञान कराती है वहाँ वे संस्कृत भाषा की

सरल एव रोचक शैली का आदर्श भी उपस्थित करती है। नीतिकथाओ की सबसे प्रमुख विशेपता यह है कि उनमे एक प्रधान कथा के अन्तर्गत कई गौण कथाओ का भी समावेश होता है।

पचतन्त्र—'पचतन्त्र' सस्कृत नीति-कथा-साहित्य का अत्यन्त प्राचीन और महत्वपूर्ण ग्रथ है। इसमे नीति की बडी मनोहर शिक्षाप्रद कहानियाँ है। वादशाह खुसरू अनूशेरवाँ (५३१–५७९ ई०) के हुक्म मे पहलवी भाषा मे 'पचतन्त्र' का प्रथम अनुवाद किया गया था। राजकार्य मे सस्कृत-भाषी ब्राह्मणो का प्रधान स्थान हो गया था। अत ऐसे ग्रथो की आवश्यकता पडी जो सस्कृत का बोध कराने के साथ-साथ राजनीति की भी शिक्षा दे सके। उसी उद्देश्य को लक्ष्य मे रखकर पचतन्त्र की रचना हुई।

पचतन्त्र की रचना का मूल उद्देश्य राजकुमारो को नीतिशास्त्र मे निपुण बनाना था। पचतन्त्र मे केवल पाँच तन्त्र या भाग है—मित्रभेद, 'मित्रलाभ' सन्धि-विग्रह, लब्धप्रणाश तथा अपरीक्षाकारित्व। प्रत्येक भाग मे मुख्य कथा के अन्तर्गत कई गौण कथायें आई है। उसमे पशु पक्षी, सदाचार, नीति और लोक व्यवहार के विषय मे वातचीत करते हैं तथा धर्म-ग्रथो के सूक्ष्म विपयो पर विचार-विनिमय करते है।

'पचतन्त्र' की शैली सरल और मुहावरेदार है। भापा विषय के सर्वथा अनुरूप है। मुख्यत वालको के लिये रचित होने के कारण उसका गद्य अत्यन्त सुबोध है, समास बहुत कम या छोटे-छोटे है। कथानक का वर्णन गद्य मे है, पर उपदेशात्मक सूक्तियाँ पद्य मे निहित है। 'महाभारत' तथा पाली-जातक-सग्रह' से भी अनेक पद्य लिये गये है। पचतन्त्र की कथाओ का प्रचार विश्व-व्यापि हुआ है। 'बाइबल' के बाद ससार की सबसे अधिक प्रचलित पुस्तक 'पचतन्त्र' ही है।

हितोपदेश—नीतिकथाओ के वाद 'हितोपदेश' का ही नाम आता है। हितोपदेश के रचयिता नारायण पण्डित थे, जिनके आश्रयदाता वगाल के कोई धवलचन्द्र राजा थे। 'हितोपदेश' की एक पाडुलिपि १३७३ ई० की पाई गई है, अत उसकी रचना १४ वीं शताब्दी के पूर्व हो चुकी थी। 'हितोपदेश' की

रचना बहुत कुछ 'पचतन्त्र' के ही आधार पर हुई है।

हितोपदेश की ४३ कथाओ मे से २५ तो 'पचतन्त्र' से ही ली गई है। 'हितोपदेश' के चार परिच्छेद है—मित्रलाभ, सुहृद् भेद, विग्रह और सन्धि। प्रथम दो परिच्छेद प्राय पचतन्त्र से ही लिये गये है। पद्यो का बाहुल्य है।

लोक-कथा—उपदेश-प्रधान नीतिकथाओ के अतिरिक्त-मनोरञ्जनात्मक लोक कथाओ का भी अस्तित्व सस्कृत साहित्य में पाया जाता है। लोक-कथाओ का प्राचीनतम सग्रह गुणाढ्य-कृत 'बृहत्कथा' है। ब्यूलर के मतानुसार 'बृहत्कथा, प्रथम या द्वितीय शताब्दी ईस्वी की कृति है। गुणाढ्य ने अपने समय की प्रचलित अनेक लोककथाओ को सगृहीत कर 'बृहत्कथा' की रचना की थी। रामायण' और 'बृहत्कथा' भी भारतीय साहित्य की एक अपूर्व निधि थी।

'बृहत्कथा' के दो तमिल सस्करण भी पाये जाते हैं। 'वेतालपचविंशतिका' । २५ कहानियों का सग्रह है। 'सिंहासनद्वात्रिंशिका' तथा द्वात्रिंशत्देत्तलिका भी एक मनोरञ्जक कहानी-सग्रह है।

अन्य प्रसिद्ध कथा सग्रहो मे ये प्रमुख हैं—१५ वी शताब्दी के प्रसिद्ध मैथिल कवि विद्यापति ने 'पुरुष परीक्षा की रचना की, जिसमे ४४ नैतिक और राजनीतिक कहानियाँ हैं। शिवदास कृत 'कथार्णव' मे चोरो और मूर्खो की ३५ कथाये है। १६ वी शताब्दी के बल्लालसेन-विरचित 'भोजप्रबन्ध' मे सस्कृत महाकवियो की अनेक रोचक दन्तकथायें दील गई है। नारायण-बालकृष्ण कृत 'ईस नीति कथा' मे ईसप की कहानियो का अनुवाद है। बौद्धो के कथा-सग्रह 'अवदान' नाम से प्रख्यात है।

सस्कृत कथा-साहित्य का ससार मे इतना अधिक प्रचार हुआ कि वे विश्व साहित्य की एक अंग बन गई। एक आलोचक ने ठीक ही कहा है—"कि भारतीय आख्यान जितने विचित्र हैं, उससे कहीं अधिक विचित्र आर्य आख्यान साहित्य के विश्वविजय की कथा है।"

२ काव्यपरक कथा-साहित्य—

काव्य परक गद्य साहित्य लगभग चार रूपो मे प्राप्त होता है—

१ कथा, २ आख्यायिका, ३ लघुकथा और ४. उपन्यास।

कथा—

गद्य-काव्य की विधाओ मे कथा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थानहे । दण्डी ने कथा का स्वरूप वताते हुए कहा हे—कथा कवि कल्पित होती हे । कथा मे वक्ता स्वय नायक अथवा अन्य कोई रहता है । कथा मे कन्या हरण, सग्राम, विप्रलम्भ, सूर्वोदय, चन्द्रोदय आदि विपयो का वर्णन रहता है । कथा मे लेखक किसी अभिप्राय से कुछ विशेष शब्दो का प्रयोग करता है ।

'कादम्बरी, सस्कृत साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है । बाणभट्ट ने इसे स्वय कथा कहा है । बाण ने 'कादम्बरी' का कथा बीज गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' से लिया है । उसमे उन्होने अपनी प्रतिभा का पुट चढाकर उसे एक मर्वथा नवीन एव मौलिक रूप दे दिया है । सारी कथा कुतूहलमय रोचकता से ओत-प्रोत हे ।

बाण ने अपने पात्रो का चरित्र-चित्रण बडे विशद रूप से किया है । सभी पात्र सजीव है । 'कादम्बरी' के चित्रण मे बाण ने अपने अप्रतिम कल्पना-वैभव, वर्णन-पटुता और मानव मनोवृत्तियो के मार्मिक निरीक्षण का परिचय दिया है ।

प्रासाद, नगर, वन तथा आश्रमो का यथातथ्य वर्णन उनके पर्याप्त भ्रमण का द्योतक है । कादम्बरी का प्रधान रस शृङ्गार है । जन्म-जन्मान्तर के सचित सस्कारो का 'जननान्तर सौहृद का सजीव चित्रण है, विस्मृत अतीत तथा जीवित वर्तमान को स्मृति के सुकुमार तारो से सयुक्त करने वाली काव्यशृ खला है । मानव हृदय की मूक प्रणय-वेदना की मर्मभरी कथा है ।

२ आख्यायिका—

आख्यायिका गद्यकाव्य का एक अग माना जाता हे । आख्यायिका का स्वरूप इस प्रकार है—आख्यायिका ऐतिहासिक इतिवृत्त पर अवलम्बित होती है । आख्यायिका मे नायक स्वय वक्ता होता है । आख्यायिका को हम एक प्रकार से आत्मकथा कह सकते हे । आख्यायिका का विभाग अध्यायो मे किया जाता है, जिन्हे उच्छ्वास कहते है तथा उसमे वक्त्र तथा अपरवक्त्र छन्द के पद्यों का समावेश रहता हे । आख्यायिका मे सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि विपयो का वर्णन नही रहता है ।

'हर्षचरित' बाण की प्रथम कृति है । बाण स्वय कहते है यह आख्यायिका है । यह कृति आख्यायिका के सपूर्ण लक्षणो का सग्रह हे । इसमें आठ उच्छ्वास है । प्रथम तीन उच्छ्वासों में बाण की आत्म-

कथा वर्णित है, तथा शेष मे सम्राट् हर्ष का जीवन चरित्र है। 'हर्षचरित' मे ऐतिहासिक विषय पर गद्य-काव्य लिखने का प्रथम बार प्रयास किया गया है।

काव्य-सौन्दर्य की दृष्टि से भी 'हर्षचरित' मे कई विशेषतायें है। बाण की अद्भुत वर्णन शक्ति का परिचय स्थान-स्थान पर मिलता हे। प्रभाकर वर्णन के अन्तिम क्षणो का वर्णन ओज एव कारुण्य के लिये हुये है। छठे उच्छ्वास मे सिंहनाद का उपदेश 'कादम्बरी' के शुकनासोपदेश की कोटि का ही है। हर्ष सर्वत्र एक महान् सम्राट् के रूप मे हमारे सम्मुख आते हैं। राज्यवर्धन भी आज्ञाकारी पुत्र, स्नेहशील भाई और शूर योद्धा है। इस प्रकार 'हर्षचरित' एक आख्यायिका मानी जाती है।

३ लघु कथा—

सस्कृत के लक्षण ग्रन्थकारो ने आधुनिक लघुकथा जैसी कोई साहित्यिक रचना की चर्चा नही की है। कथा उस गद्यकाव्य को कहा गया है, जिसमे गद्य मे ही सरस वस्तु का निर्माण हो—"कथाया सरस वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।" 'लक्षण ग्रन्थकारो' द्वारा दिये गये सम्पूर्ण लक्षण काल्पनिक एव ऐतिहासिक उपन्यासो पर ही प्रयोग मे आते हे। उनके अनुसार 'कादम्बरी' कथा 'हर्षचरित' आख्यायिका है तथापि 'गद्य मे सरस वस्तु का निर्माण' लघुकथाओ पर ही प्रयुक्त हो सकता है।

लघु कथा के सम्बन्ध मे पाश्चात्य विद्वानो ने विभिन्न विचार व्यक्त किये हैं, कहानी मे वस्तु, चरित्रचित्रण, कथोपकथन, वातावरण, उद्देश्य और शैली ये छ तत्त्व होते है और उन्ही के आधार पर पर कहानी साहित्य का मर्म समझा जा सकता है।

वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक सस्कृत के कथा-साहित्य का विकास विभिन्न युगीन परिस्थितियो के अनुकूल है। भारतीय कथाकारो के सुन्दर शिल्प और मनोवैज्ञानिक रीति से प्रस्तुत करने की निपुणता के कारण ससार के अनेक देशो मे भारतीय कथायें अनुवाद के रूप मे पहुँची है और वहाँ के कथारसिको ने उनकी प्रशसा की है। वैदिक सहिताओ मे निहित कथातत्वो के वीज ब्राह्मण ग्रन्थों और आरण्यको की कथाओ व आख्यानो के रूप मे अङ्कुरित, रामायण महाभारत व पुराणों के उपाख्यानों में पल्लवित, पञ्चतन्त्र, जातक तथा

बृहत्कथा के रूप मे पुष्पित और दशकुमारचरित, वेतालपचविंशतिका, हितोपदेश इत्यादि कथासग्रहो मे फलित हुये हैं।

आधुनिक सस्कृत गद्यकारो मे पण्डिता क्षमाराव विशेष उल्लेखनीय है। इनकी रचनाओ मे 'कथा मुक्तावली' विशेष प्रसिद्ध है। उन्नीसवी शताब्दी का अन्तिम दशक व प्रारम्भिक दशक सस्कृत लघुकथाओ के विकास का युग कहा जा सकता है। १८९८ ई० से १९१० की अवधि मे सस्कृत की लघुकथाओ से सम्बद्ध नौ सग्रह निकले हे। अम्बिकादत्तव्यास के 'रत्नाष्टक'' में हास्य व उपदेश प्रधान आठ कहानियो का सग्रह है। १८९८ ई० मे व्यास जी का एक दूसरा कहानी सग्रह 'कथाकुसुमम्, नाम से निकला, जिसमे भावपूर्ण कहानियो का समावेश है।

४ उपन्यास—

अर्वाचीन गद्य की धाराओ मे उपन्यास का महत्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास को सर्वथा नई काव्यरीति कहा जा सकता है। सस्कृत मे उपन्यास-लेखन अनूदित साहित्य के साथ प्रारम्भ हुआ हैं। इस प्रकार सर्वप्रथम उपन्यास 'शिवराजविजय है जिसको अम्बिकादत्त व्यास ने १८७० ई० मे लिखा था। अम्बिकादत्त व्यास की यह रचना मौलिक कृति के रूप मे स्वीकार की जाती हैं। 'महाराष्ट्र जीवन प्रभात' नामक बगला कृति का अनुवाद कृष्ण मोहनलाल जौहरी ने अग्रेजी मे 'शिवाजी' के नाम से प्रस्तुत किया था। अनुवाद की शैली को हृदयगम करने के लिये देखिये—

Shivaji—On this mountain pass was a solitary horse-man galloping his horse

सस्कृत वाड्मय के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का सौभाग्य 'शिवराज-विजय' को प्राप्त हे जो अनुपम वाक्य-विन्यास एव अलकरण एव शब्दश्लेष की दृष्टि से कादम्बरी से प्रभावित, रूपशिल्प की दृष्टि से बग उपन्यासो के निकट है।"

बगाली उपन्यासकार वकिम बाबू के प्राय समस्त उपन्यास सस्कृत मे अनूदित हो चुके है। शैल ताताचार्य की 'क्षत्रिय रमणी' सरल भाषा मे है। अप्पाशास्त्री ने 'देवीकुमुद्वती, 'इन्दिरा' लावण्यमयी व 'कृष्णकान्तस्य निर्वाणम्' कृतियो का अनुवाद करके सस्कृत-साहित्य की उपन्यास-विधा को समृद्ध बनाया है। विधुशेखर ने रवीन्द्रनाथ टैगोर के जयपराजयम् का अनुवाद किया था।

अंग्रेजी कृतियों को सस्कृत मे रूपान्तरित कर उन्हें उपन्यास रीति मे प्रस्तुत करने का श्रेय ए० आर० राजराजवर्म कोइतम्बुरान को है। उन्होने शेक्सपीयर के नाटक 'ओथेलो' का रूपान्तरण "उद्दालचरितम्' नाम से किया है।

उन्नीसवी शताब्दी मे ऐसे उपन्यासो की भी रचना हुई, जो रामायण, महाभारत व पुराणो पर आधारित कहे जा सकते हैं। इनमें लक्ष्मण सूरि के 'रामायण सग्रह', 'भीष्मविजयम्' 'महाभारतसग्राम' उपन्यासो मे कथाप्रवाह वर्णनातिरेक मे अवरुद्ध सा हो गया है। पौराणिक उपन्यासकारो मे शकरलाल माहेश्वर अग्रगणनीय हैं। उनके "अनसूयाभ्युदम्' 'भगवती भाग्योदय.', 'चन्द्रप्रभाचरितम्' व 'महेश्वरप्राणप्रिया' हृदयावर्जक उपन्यास है। ऐतिहासिक घटनाओ को इस युग मे उपन्यासबद्ध किया गया है। सामाजिक उपन्यासो की रचना इस युग मे हुई है।

(ख) प० अम्बिकादत्त व्यास का स्थितिकाल एव कृतियाँ

साहित्याचार्य प० अम्बिकादत्त व्यास ने 'शिवराजविजय' नामक गद्य-काव्य की रचना की जो काशी से १९०१ ई० मे प्रकाशित हुआ। व्यास जी का स्थिति-काल १८५८–१९०० ई० था। इनके पूर्वज जयपुर राज्य के निवासी थे पर इनके पितामह काशी में आकर बस गये थे। वही उनका अध्ययन सम्पन्न हुआ। 'बिहारी-विहार' मे उन्होने 'सक्षिप्त निज वृतान्त' स्वय लिखा है। मृत्यु के समय वे गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज पटना मे प्रोफेसर थे। बिहार मे 'सस्कृत सजीवनी समाज" स्थापित कर उन्होने सस्कृत शिक्षा-प्रणाली का सुधार किया। व्यास जी ने छोटी बडी मिलाकर सस्कृत और हिन्दी मे कुल ७८ पुस्तकें लिखी है।

सस्कृत वाङ्मय के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का सौभाग्य 'शिवराज विजय' को प्राप्त है। जो अनुपम वाक्य-विन्यास एव अलकरण एव शब्दश्लेष की दृष्टि से कादम्बरी से प्रभावित—रूप शिल्प की दृष्टि से बग उपन्यासो के निकट है।"

प० अम्बिकादत्त व्यास बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। १० वर्ष की

अवस्था मे ही काव्य-रचना प्रारम्भ कर दी थी। लगभग बारह वर्ष की अवस्था मे व्यास जी ने धर्मसभा की परीक्षा मे पुरस्कार प्राप्त किया और श्री तैलङ्ग अष्टावधान के 'सुकविरेप' कहने पर भारतेन्दु जी ने "काशी कविता वर्द्धिनी सभा" की ओर से 'सुकवि' की उपाधि प्रदान की।

बाल विवाह की प्रथा के कारण तेरह वर्ष की अवस्था मे व्यास जी का विवाह हो गया। इनके पिता दुर्गादत्त पौरोहित्य कर्म से जीविकोपार्जन करते थे, अत आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त परिवार का भरण-पोषण साधारण रूप से ही हो पाता था। दूसरी ओर व्यास जी का पारिवारिक जीवन भी सुखमय नही था। असमय मे माता-पिता का देहावसान हो गया। यौवन की चौखट पर पाँव रखते ही उनके छोटे भाई ने अपनी पत्नी के सिन्दूर साफ कर दिये। इनकी छोटी बहन ने भी जीवन के वसन्त काल मे इनका साथ छोड दिया। इनके बडे भाई इनसे द्वेष भाव रखते थे। इन अपार कष्टो, असीम वेदनाओ और अनेक मानसिक आघातो को भी अपने अन्तस् मे समेट कर अपने कर्त्तव्य पथ पर हिमाचल की तरह अडिग रहे। उन्होने शिव के समान सारे अशिव आसव का पान करके भी समाज को 'सत्य शिव सुन्दरम्' का मिश्रित अमृत पिलाया।

व्यास जी स० १९३७ मे गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज से साहित्याचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करके १९४० मे एक सस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करने लगे। कुछ दिन बाद वहाँ से त्याग पत्र देकर मुजफ्फरपुर चले गये। जिला स्कूल के प्रधानपण्डित के पद पर कार्य करने लगे।

व्यास जी अप्रतिप्रतिभाशाली थे। वक्ता और साहित्य सृष्टा के साथ ही चित्रकारिता, अश्वारोहिता, सगीत और शतरज मे भी विशेष रुचि रखते थे। सितार, हारमोनियम, जल तरग और मृदग इनके प्रिय वाद्य थे। व्यास जी हिन्दी, सस्कृत, अग्रेजी और बगला भाषा के ज्ञाता थे। न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन मे इनकी अच्छी गति थी। कविता कला मे इतने प्रवीण थे कि एक घडी मे सौ श्लोको की रचना कर सकते थे। सौ प्रश्नो को एक साथ ही सुनकर उन सभी का उत्तर उसी क्रम मे देने की अद्भुत क्षमता थी। इसीलिये इन्हे 'शतावधान' तथा 'घटिका शतक' की उपाधि मिली थी।

व्यास जी की लगभग ८० रचनाओ मे 'शिवराज विजयम्' (उपन्यास), 'सामवतम्' (नाटक) गुप्ता-शुद्धि-प्रदर्शनम्, अवोधनिवारण तथा 'विहारी विहार' (हिन्दी काव्य) प्रमुख थे।

२२ वर्ष की अवस्था मे लिखा गया व्यास जी का 'सामवतम्' नाटक भाष्य, भाव और वर्ण्य की दृष्टि से अधिक उत्तम है। उसके विपय मे डा० भगवानदास ने लिखा है—

"श्री अम्बिकादत्त व्यास जी का रचा 'सामवतम्' नाम नाटक दो बार पढा। 'पुराणमित्येव हि साधु सर्वम्' ऐसा मानने वाले सज्जन प्राय मेरे मत पर हँसेंगे तो भी मेरा मत यही है कि कालिदास रचित 'शकुन्तला' से किसी बात मे कम नही है।"

'सामवतम्' नाटक को स० १९४५ मे मिथिलेश्वर को समर्पित करने के बाद ही शिवराज विजय की रचना आरम्भ कर दी और स० १९५० मे उसे पूरा कर दिया। स० १९५२ मे ब्रिहारी के दोहो पर आधारित कुण्डलियो मे रचित 'विहारी विहार' की रचना के बाद हिन्दी जगत् के मूर्धन्य कवियो के चर्चा के विपय बन गये। इस ग्रन्थ की शोधपूर्ण भूमिका के सम्बन्ध मे जार्ज ग्रियर्सन ने लिखा है—

I have read the introduction with special interest and was much gratified to see so much fresh light thrown on difficult historical questions, indeed I have no hesitation in saying that it is a model of historical research conducted with industry and sobriety, both of which are unfortunately too often abandoned by writers in the country in favour of credulity and hasty conclusions [1]

अम्बिकादत्त व्यास की सर्वश्रेष्ठ कृति उनका शिवराज विजय है। शिवराज विजय सस्कृत-गद्य-साहित्य मे अन्यतम स्थान रखता है। वाण, दण्डी और सुबन्धु

१ विहार विहारी' परिशिष्ट, पृष्ठ-६।

अवस्था में ही काव्य-रचना प्रारम्भ कर दी थी। लगभग बारह वर्ष की अवस्था में व्यास जी ने धर्मसभा की परीक्षा में पुरस्कार प्राप्त किया और श्री तैलङ्ग अष्टावधान के 'सुकविरेप' कहने पर भारतेन्दु जी ने "काशी कविता वर्द्धिनी सभा" की ओर से 'सुकवि' की उपाधि प्रदान की।

बाल विवाह की प्रथा के कारण तेरह वर्ष की अवस्था मे व्यास जी का विवाह हो गया। उनके पिता दुर्गादत्त पौरोहित्य कर्म से जीविकोपार्जन करते थे, अत आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त परिवार का भरण-पोषण साधारण रूप से ही हो पाता था। दूसरी ओर व्यास जी का पारिवारिक जीवन भी सुखमय नही था। असमय मे माता-पिता का देहावसान हो गया। यौवन की चौखट पर पाँव रखते ही उनके छोटे भाई ने अपनी पत्नी के सिन्दूर साफ कर दिये। इनकी छोटी बहन ने भी जीवन के वसन्त काल मे इनका साथ छोड दिया। इनके बडे भाई इनसे द्वेष भाव रखते थे। इन अपार कष्टो, असीम वेदनाओ और अनेक मानसिक आघातो को भी अपने अन्तस् मे समेट कर अपने कर्त्तव्य पथ पर हिमाचल की तरह अडिग रहे। उन्होने शिव के समान सारे अशिव आसव का पान करके भी समाज को 'सत्य शिव सुन्दरम्' का मिश्रित अमृत पिलाया।

व्यास जी स० १९३७ मे गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज से साहित्याचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करके १९४० मे एक सस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करने लगे। कुछ दिन बाद वहाँ से त्याग पत्र देकर मुजफ्फरपुर चले गये। जिला स्कूल के प्रधानपण्डित के पद पर कार्य करने लगे।

व्यास जी अप्रतिप्रतिभाशाली थे। वक्ता और साहित्य स्रष्टा के साथ ही चित्रकारिता, अश्वारोहिता, सगीत और शतरज मे भी विशेष रुचि रखते थे। सितार, हारमोनियम, जल तरग और मृदग इनके प्रिय वाद्य थे। व्यास जी हिन्दी, सस्कृत, अग्रेजी और बगला भाषा के ज्ञाता थे। न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन मे इनकी अच्छी गति थी। कविता कला मे इतने प्रवीण थे कि एक घडी मे सौ श्लोको की रचना कर सकते थे। सौ प्रश्नो को एक साथ ही सुनकर उन सभी का उत्तर उसी क्रम मे देने की अद्भुत क्षमता थी। इसीलिये इन्हे 'शतावधान' तथा 'घटिका शतक' की उपाधि मिली थी।

व्यास जी की लगभग ८० रचनाओ मे 'शिवराज विजयम्' (उपन्यास), 'सामवतम्' (नाटक) गुप्ता-शुद्धि-प्रदर्शनम्, अवोधनिवारण तथा 'विहारी विहार' (हिन्दी काव्य) प्रमुख थे।

२२ वर्ष की अवस्था मे लिखा गया व्यास जी का 'सामवतम्' नाटक भाष्य, भाव और वर्ण्य की दृष्टि से अधिक उत्तम है। उसके विषय मे डा० भगवानदास ने लिखा है—

"श्री अम्बिकादत्त व्यास जी का रचा 'सामवतम्' नाम नाटक दो बार पढा। 'पुराणमित्येव हि साधु सर्वम्' ऐसा मानने वाले सज्जन प्राय मेरे मत पर हँसेंगे तो भी मेरा मत यही है कि कालिदास रचित 'शकुन्तला' से किसी बात मे कम नही है।"

'सामवतम्' नाटक को स० १९४५ मे मिथिलेश्वर को समर्पित करने के बाद ही शिवराज विजय की रचना आरम्भ कर दी और स० १९५० मे उसे पूरा कर दिया। स० १९५२ मे बिहारी के दोहो पर आधारित कुण्डलियो मे रचित 'विहारी विहार' की रचना के बाद हिन्दी जगत् के मूर्धन्य कवियो के चर्चा के विषय बन गये। इस ग्रन्थ की शोधपूर्ण भूमिका के सम्बन्ध मे जार्ज ग्रियर्सन ने लिखा है—

I have read the introduction with special interest and was much gratified to see so much fresh light thrown on difficult historical questions, indeed I have no hesitation in saying that it is a model of historical research conducted with industry and sobriety, both of which are unfortunately too often abandoned by writers in the country in favour of credulity and hasty conclusions[1]

अम्बिकादत्त व्यास की सर्वश्रेष्ठ कृति उनका शिवराज विजय है। शिवराज विजय सस्कृत-गद्य-साहित्य मे अन्यतम स्थान रखता है। वाण, दण्डी और सुबन्धु

१ विहार विहारी' परिशिष्ट, पृष्ठ-९।

अवस्था मे ही काव्य-रचना प्रारम्भ कर दी थी। लगभग बारह वर्ष की अवस्था मे व्यास जी ने धर्मसभा की परीक्षा मे पुरस्कार प्राप्त किया और श्री तैलङ्ग अष्टावधान के 'सुकविरेप' कहने पर भारतेन्दु जी ने "काशी कविता वर्द्धिनी सभा" की ओर से 'सुकवि' की उपाधि प्रदान की।

बाल विवाह की प्रथा के कारण तेरह वर्ष की अवस्था मे व्यास जी का विवाह हो गया। इनके पिता दुर्गादत्त पौरोहित्य कर्म से जीविकोपार्जन करते थे, अत आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त परिवार का भरण-पोषण साधारण रूप से ही हो पाता था। दूसरी ओर व्यास जी का पारिवारिक जीवन भी सुखमय नही था। असमय मे माता-पिता का देहावसान हो गया। यौवन की चौखट पर पाँव रखते ही उनके छोटे भाई ने अपनी पत्नी के सिन्दूर साफ कर दिये। इनकी छोटी बहन ने भी जीवन के वसन्त काल मे इनका साथ छोड दिया। इनके बडे भाई इनसे द्वेष भाव रखते थे। इन अपार कष्टो, असीम वेदनाओ और अनेक मानसिक आघातो को भी अपने अन्तस् मे समेट कर अपने कर्त्तव्य पथ पर हिमाचल की तरह अडिग रहे। उन्होने शिव के समान सारे अशिव आसव का पान करके भी समाज को 'सत्य शिव सुन्दरम्' का मिश्रित अमृत पिलाया।

व्यास जी स० १९३७ मे गवर्नमेण्ट सस्कृत कालेज से साहित्याचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करके १९४० मे एक सस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करने लगे। कुछ दिन बाद वहाँ से त्याग पत्र देकर मुजफ्फरपुर चले गये। जिला स्कूल के प्रधानपण्डित के पद पर कार्य करने लगे।

व्यास जी अप्रतिप्रतिभाशाली थे। वक्ता और साहित्य स्रष्टा के साथ ही चित्रकारिता, अश्वारोहिता, सगीत और शतरज मे भी विशेष रुचि रखते थे। सितार, हारमोनियम, जल तरग और मृदग इनके प्रिय वाद्य थे। व्यास जी हिन्दी, सस्कृत, अग्रेजी और बगला भाषा के ज्ञाता थे। न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन मे इनकी अच्छी गति थी। कविता कला मे इतने प्रवीण थे कि एक घडी मे सौ श्लोको की रचना कर सकते थे। सौ प्रश्नो को एक साथ ही सुनकर उन सभी का उत्तर उसी क्रम मे देने की अद्भुत क्षमता थी। इसीलिये इन्हे 'शतावधान' तथा 'घटिका शतक' की उपाधि मिली थी।

व्यास जी की लगभग ८० रचनाओ मे 'शिवराज विजयम्' (उपन्यास), 'सामवतम्' (नाटक) गुप्ता-शुद्धि-प्रदर्शनम्, अवोधनिवारण तथा 'विहारी विहार' (हिन्दी काव्य) प्रमुख थे।

२२ वर्ष की अवस्था मे लिखा गया व्यास जी का 'सामवतम्' नाटक भाष्य, भाव और वर्ण्य की दृष्टि से अधिक उत्तम है। उसके विषय मे डा० भगवानदास ने लिखा है—

"श्री अम्बिकादत्त व्यास जी का रचा 'सामवतम्' नाम नाटक दो बार पढा। 'पुराणमित्येव हि साधु सर्वम्' ऐसा मानने वाले सज्जन प्राय मेरे मत पर हँसेगे तो भी मेरा मत यही है कि कालिदास रचित 'शकुन्तला' से किसी बात मे कम नही है।"

'सामवतम्' नाटक को स० १९४५ मे मिथिलेश्वर को समर्पित करने के बाद ही शिवराज विजय की रचना आरम्भ कर दी और स० १९५० में उसे पूरा कर दिया। स० १९५२ मे बिहारी के दोहो पर आधारित कुण्डलियो मे रचित 'विहारी विहार' की रचना के बाद हिन्दी जगत् के मूर्धन्य कवियो के चर्चा के विषय बन गये। इस ग्रन्थ की शोधपूर्ण भूमिका के सम्बन्ध मे जार्ज ग्रियर्सन ने लिखा है—

' I have read the introduction with special interest and was much gratified to see so much fresh light thrown on difficult historical questions, indeed I have no hesitation in saying that it is a model of historical research conducted with industry and sobriety, both of which are unfortunately too often abandoned by writers in the country in favour of credulity and hasty conclusions '

अम्बिकादत्त व्यास की सर्वश्रेष्ठ कृति उनका शिवराज विजय है। शिवराज विजय संस्कृत-गद्य-साहित्य मे अन्यतम स्थान रखता है। बाण, दण्डी और सुबन्धु

१ विहार विहारी' परिशिष्ट, पृष्ठ-९।

के बाद व्यास जी का नाम ही आता है। यद्यपि अन्य बहुत से और भी गद्यकार हैं किन्तु साहित्यिक उत्कृष्टता, बौद्धिक प्रतिभा और सामाजिक आकलनो के वैशिष्ट्य के कारण व्यास जी प्रमुख गद्यकारो मे परिगणित हैं। इस सबका अधिक श्रेय शिवराज विजय को है।

दु ख का विषय है कि ऐसा प्रतिभाशाली व्यक्ति दीर्घायु नही हो सका। बयालिस वर्ष की अवस्था मे ही महाकवि का सम्मान प्राप्त कर व्यास जी सोमवार, मार्ग शीर्ष त्रयोदशी, स० १६५७ को अपने पीछे एक नववर्षीय पुत्र, एक कन्या और विधवा पत्नी को असहाय छोडकर पञ्चतत्व को प्राप्त हो गये। किन्तु उनका यश शरीर अजर और अमर है।

शिवराज विजय एक कृति—शिवराज विजय एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसमे वर्णित कथा ऐतिहासिक है, किन्तु व्यास जी ने अपनी प्रतिभा और कल्पना के सहारे उसे उच्च कोटि की साहित्यिकता प्रदान कर दी है। कथा अधिकाश रूप मे मौलिक होते हुये भी साहित्यिक कल्पना का समावेश है। इसमे कथावस्तु की सघटना प्राच्य और पाश्चात्य शिल्प के समन्वय से की गई है। यद्यपि इसमे दो स्वतन्त्र धाराएँ समानान्तर रूप से प्रवाहित होती हैं—एक के नायक शिवा जी हैं तो दूसरी के नायक रघुवीर सिंह है, तथापि एक दूसरे से पूर्ण स्वतन्त्र और निरपेक्ष्य नही है। एक दूसरे के पूरक हैं। एक का महत्त्व दूसरे से उद्भासित होता है। अत दोनो परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। कथा मे इतना प्रवाह और सम्प्रेषणीयता है कि पाठक की आकाक्षा उत्तरोत्तर वृद्धिगत होती जाती है। शिवराज विजय की सम्पूर्ण कथा तीन नि श्वासो मे समाहित है।

व्यास जी के शिवराज विजय मे इतिहास और कल्पना, आदर्श और यथार्थ, अनुभव और कल्पना का सुन्दर समन्वय है। उनके सभी पात्र अपने चरित्र निर्वाह मे पूरी तरह से खरे उतरते हैं। वीर शिवाजी, गौरसिंह, रघुवीरसिंह, यशवन्तसिंह, अफजल खाँ, शाइस्ताखाँ, तथा ब्रह्मचारी आदि सदा अपनी स्वाभाविकता और यथार्थत । का निर्वाह करते है। उनमे न कही अतिशयता है और न कही न्यूनता या अस्पष्टता।

शिवराज विजय वीर रस प्रधान काव्य है तथापि उपकारी रूप मे सभी रसो का चित्रण है। व्यास जी ने अलकार-विधान मे सदैव सजगता दिखाई है। यद्यपि इनका वर्णन कही पर अलकृत नही है तथापि अनावश्यक अलकार भार से बोझिल भी नही है।

गद्यकारो मे सर्वाधिक अलकार विधान वाण ने किया है। यदि इस क्षेत्र मे उनके साथ व्यास जी को देखा जाय तो अन्तर यह दिखेगा कि इनकी कृति अन-पेक्षित अलकार भार से बोझिल नही है।

शिवराज विजय की शैली अत्यन्त सरल, सरस प्रवाहमयी है। भाषा की सरलता और भाव की उत्कृष्टता का समन्वय ही कवि की प्रमुख विशेषता होती है। कविकथ्य जितने ही सरल और सुन्दर ढङ्ग से कहा जाय, काव्य उतना ही हृदय-ग्राही और 'सद्य परिनिवृतये' की भावना को प्राप्त करने वाला होता है।

अस्तु, शिवराज विजय, भाषा और भाव दोनो की दृष्टि से एक उत्तम कोटि का काव्य कहा जा सकता है। इसमे प्रतिभा की प्रौढता, कल्पना की सूक्ष्मता, अनुभव की गहनता, अभिव्यक्ति की स्पष्टता, भावो की यथार्थता और रमणीयता, पदावलियो की मधुरता, कथानक की प्रवाहमानता, आदर्श की स्था-पना, शिव की भावना और सुन्दर की सुन्दरता निहित है। उपन्यास की दृष्टि से भी कथानक, पात्र, घटना, सवाद, अन्तर्द्वन्द्व, आकाक्षा आदि तत्त्वो से पूर्ण है और 'गद्य कवीना निकष वदन्ति' की कसौटी पर खरा उतरता है।

शिवराज विजय का काव्य-शिल्प

भाषा—शैली—मनोगत भावो को परहृदय सवेद्य बनाने का प्रमुख साधन भाषा है और भाषा के क्रमबद्धता या रचना-विधान को सम्भवत शैली भी कहा जाता है, अत सामान्यत 'भाषा शैली' ऐसा प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। इस आधार के साथ यह कहा जा सकता है कि काव्य मे मनोगत भावो को मूर्त रूप प्रदान करने का प्रमुख एव सहज साधन 'शैली' है। 'शब्दार्थौ सहितौ काव्यम् के परिप्रेक्ष्य मे यदि अर्थ काव्य की आत्मा है तो शब्द अर्थात् शैली काव्य का शरीर। अत भाव की मनोहरता, स्थिरता और सूक्ष्मता शैली पर ही निर्भर होती है।

डा० श्यामसुन्दर दास के अनुसार किसी कवि या लेखक की शब्द-योजना, वाक्यांशो का प्रयोग, उसकी बनावट और ध्वनि आदि का नाम ही शैली है। दण्डी ने काव्यादर्श मे—'अस्त्यनेको गिराम मार्ग सूक्ष्मभेदपरस्परम्' कहा है।

इन भावनाओं के अनुसार स्थूलत शैली के दो भेद किये जाते हैं—(१) समास शैली (२) व्यास शैली। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक व्यक्तित्वो के आधार पर आजकल विद्वानो ने मार्ग (शैली) को चार प्रकार का माना है। किन्तु अनन्तर काल मे इन्हे शैली न कहकर रीतियाँ कहा जाने लगा है। ये रीतियाँ चार हैं—(१) वैदर्भी (२) गौणी (३) पाञ्चाली (४) लाटी।

१. कोमल वर्णो और असमासा अथवा अल्पसमासा, माधुर्यपूर्ण रचना वैदर्भी रीति है।

२ महाप्राण-घोषवर्णा, ओजगुणसम्पन्ना तथा समास बहुला रचना गौडी है।

३ वैदर्भी और गौणी का सम्मिश्रण पाञ्चाली रीति है।

४ वैदर्भी और पाञ्चालो का सम्मिश्रण लाटी रीति है।

शिवराज विजय की भाषा सरल, सुबोध एव स्पष्ट है। पदावलियो के प्रयोग वर्ण्य-विषय के अनुसार होना चाहिये। एक ही विधा प्रत्येक वर्णन को प्रभावमय नही बना सकती। और व्यास जी ने ऐसा ही किया है। अत कहा जा सकता है कि शिवराज विजय मे उचित शब्दावलियो का प्रयोग, अर्थपूर्ण वाक्यविन्यास तथा अवसर के अनुकूल कोमल तथा कठोर वर्णों का प्रयोग किया गया है।

व्यास जी ने अवसर के अनुकूल एक ओर दीर्घ समास बहुला पदावली का प्रयोग किया है तो दूसरी ओर सरल और लघु पदावली का। दूसरी ओर पूर्वोक्त रीतियो के सन्दर्भ मे शिवराज विजय मे व्यास जी ने पाञ्चाली रीति का आश्रय लिया है। इनके साक्ष्य मे तथ्य द्रष्टव्य है—अफजल खाँ के शिविर का वर्णन करते हुए व्यास जी समस्त (दीर्घ) पदावली मे कहते है—

"इतस्तु स्वतन्त्र-यवनकुल-भुज्यमान-विजयपुराधीश-प्रेषित पुण्य नगरस्य समीपे एव प्रक्षालित गण्डशैल मण्डलाया निर्झरवारिधारा-पूर-पूरित-प्रबल-

प्रवाहाया, पश्चिम-पारावार-प्रान्त-प्रसूत-गिरि-ग्राम-गुहा-गर्भ-निर्यताभा अभि प्राच्य-पयोनिधि-चुम्बन-चञ्चुराया, रिङ्गत्-तरङ्ग-भङ्गोद्‌भूतावर्त शत-भीमाया भीमाया नद्या, अनवरत-निपतद्-वकुल-कुल-कुसुम-कदम्ब-सुरभीकृतमपि नीर वगाहमान-मत्त-मतङ्गज-मद-धाराभि कटूकुर्वन्, हय-हेषा-ध्वनि-प्रतिध्वनि-वधि-रीकृत-गव्यूति-मध्यगाध्वनीन वर्ग, पट-कुटीर-कूट विहित-शारदाम्भोधर-विडम्बन निरपराध-भारताभिजन-जन-पीडन-पातक पटलैरिव समुद्धूयमाननीलध्वजै रुप-लक्षित ।"

दूसरी ओर व्यास जी की लघुसमास शैली भी अत्यन्त भावपूर्ण और मार्मिक है। उसमे अभिव्यक्ति की स्पष्टता और सूक्ष्मता निहित है—

"एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचर चक्रस्य, कुण्डलमाख-लदिश, दीपको ब्रह्माण्डभागस्य, प्रेयान् पुण्डरीक पटलस्य, शोक विमोक कोक-लोकस्य अवलम्बो रोलकदम्बस्य, सूत्रधार सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य।"

व्यास जी की इस रचना मे समासरहित सुन्दर पदावलियो का प्रयोग भी अत्यन्त हृद्य है—

"बटुरसौ आकृत्या सुन्दर, वर्णेन गौर, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडश-वषवर्षीय, कम्बुकण्ठ, आयत ललाट, सुबाहुर्विशाललोचनश्चासीत्।"

अम्बिकादत्त व्यास विद्वान् थे, भाषा पर उनका पूण अधिकार था और भावाभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता। भाव के अनुकूल भाषा का सयोजन करने का ध्यान सदैव रखते थे। जैसा कोमल या कठोर भाव का वर्णन करना होता था उसी के अनुसार भाषा सयोजन करते थे। शान्त, स्निग्ध एव नीरव-निशा का वर्णन देखिये—

"धीरसमीर स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनी चन्दनविन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी कपटेन सुधाधारमिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्ता शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतगकुलेषु कैरवविकाश हर्षप्रकाश-मुखरेषु चञ्चरीकेषु"।

भावो की सरल एव स्वाभाविक अभिव्यक्ति के लिये उनकी भाषा द्रष्टव्य है—

"क्वचिद् हरिद्रा हरिद्रा, लशुन लशुनम्, मरिचमरिचम्, चुक्रम् चुक्रम्, वितुन्नक वितुन्नकम्, शृ गवेर शृ गवेरम्, रामह रामहम्, मत्स्यण्डी, मत्स्यण्डी, मत्स्या मत्स्या, कुक्कुटाण्ड, कुक्कुटाण्डम् पलल पललमिति—"

अस्तु, इस कृति के अवलोडन से स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने भाषा और शैली का प्रयोग भाव के अनुसार ही किया है। यत्र-तत्र व्याकरणिक शब्दो का भी प्रयोग उनकी विद्वत्ता की ओर सकेत करता है। सन्नन्त, यङन्त, यङलुडन्त शब्दो का भी प्रयोग मिलता है। उनकी भाषा शैली उनके काव्य को उत्कृष्टता प्रदान करने मे पूर्णत उपजीव्य है।

अलङ्कार योजना—कविता कामिनी का शृ गार है अलङ्कार योजना। जिस प्रकार आभूषण से सुरन्दर नारी का सौन्दर्य बढ जाता है उसी प्रकार अलङ्कार से काव्य का भी चमत्कार एव हृदय सवेद्यता बढ जाती है। अनलङ्कृत भाषा एव रमणी दोनो चित्ताकर्षक नही होते। कुछ अर्थालकार तो इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि उनके विधान से काव्य के सर्वस्व वे प्रतीत होने लगते हैं। इसी कारण तो कुछ अलकारवादियो ने अलकार को ही काव्य की आत्मा मानना प्रारम्भ कर दिया। कुछ भी हो काव्य मे अलकार का स्थान महत्त्वपूर्ण है। अलकार के अभाव मे काव्य अपनी पूर्णता को प्राप्त करने मे कभी भी समर्थ नही हो सकता।

प० अम्बिकादत्त व्यास ने अपनी सुरभारती को एक कुशल रमणी की भाँति अलकारो से सजाया हैं। अनुकूल एव समुचित अलकार का सयोजन किया है। बाण की कृति अलकार के भार से बोझिल हुई प्रतीत होती है किन्तु व्यास की कृति विरलालकार विभूपिता लावण्यमयी तन्वगी के समान है। उन्होने शब्दालङ्कार और अर्थालङ्कार दोनो का सावसर प्रयोग किया है। शब्दालङ्कार तो पदे-पदे दृष्टिगोचर होता है। अनुप्रास अलङ्कार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"मानिनी भ्रू भङ्ग भूरिभाव प्रभाव पराभूतवैभवेषु भटेषु"।

×   ×   ×   ×,

"चञ्चच्चन्द्रहास चमत्कार चाकचक्यचिल्लीभूत चक्षुषका"।

यत्र-तत्र यमक का भी प्रयोग किया है—

"विलक्षणोऽय भगवान् सकलकलाकलाप कलन सकल कालन कराल काल. ।"

कवि का कल्पना का बहुत बडा सम्बल ह—उत्प्रेक्षा अलङ्कार। वाण की तरह व्यास जी ने भी उत्प्रेक्षा की पर्याप्त सयोजना की है। एक मालोत्प्रेक्षा का उदाहरण द्रष्टव्य है—

"गगनसागरमीने इव, मनोजमनोज्ञ हसे इव, विरहि निवक्रन्तेन रौप्यकुन्त प्राते इव, पुण्डरीकाक्षपत्नीकरपुण्डरोकपत्रे इव, शारदाभ्रसारे इव सप्तसप्ति सप्तिपादच्युते राजतखुरत्रे इव मनोहरतामहिला ललाटे इव, कन्दर्पकीर्तिलताङ्कुर इव, प्रजाजननयनकर्पूरखण्डे इव, तमीतिमिरकर्तन शाणोल्लीढनिस्त्रिंशे इव च समुदिते चैत्रखण्डे"।

उपमा अलङ्कारो मे प्रमुख माना जाता है क्योंकि उपमा एक प्रकार से वक्तव्य के कहने का ढङ्ग है जिसका व्यवहार सर्वाधिक होता है। साधर्म्य अलङ्कारो की माला मे उपमा 'सुमेरु' है। उपमा का प्रयोग भी व्यास जी ने बडे सरल तथा स्वाभाविक ढङ्ग से किया है—

"सेय वर्णेन तुवर्णम्, कलरवेण पुस्कोकिलान्, केशैरोलम्बकदम्बान्, ललाटेन कलाधरकलाम् लोचनाभ्याम् खञ्जनान्, अधरेण वन्धुजीवम्, हासेन ज्योत्स्नाम्"।

व्यास जी ने परम्परा से हटकर नये उपमानो का भी प्रयोग किया है, जैसा कि सस्कृत कवियो मे प्राय नही देखा जाता है। कवि ने नौका की उपमा एक कुम्भडे की फाक से देते हुए लिखा है—"कुष्माण्डफक्किाकारया नौकया"।

विरोधाभास व्यास जी का प्रिय अलङ्कार है। विरोधाभास के चित्रण मे कवि, वाण की समानता करता हुआ दिखाई पडता है शिवाजी के वर्णन मे विरोधाभास की छटा वरवश पाठको को आकृष्ट करती है—

इ र्वामप्यखर्वपरिक्रमाम्, श्याममपि यश समूहश्वेतीकृत त्रिभुवनाम्, कुशासनाश्रयामपि सुशासनाश्रयाम्, पठनपाठनादि परिश्रमानभिज्ञामपि नीतिनिष्णाताम् स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्मदर्शनाम्, ध्वसकाण्ड व्यसनिनीमपि धमनीरेभीम्, कठिनामपि

कोमलाम्, उग्रामपि शान्ताम् शोभित विग्रहामपि दृढसन्धि बन्धाम्, कलित-गौरवामपि कलितलाघवाम्' ' ।"

चित्तौडगढ के स्त्रियो के वर्णन में श्लेष गर्भित विरोधाभास द्वारा अत्यन्त सुन्दर चित्रण किया गया है—

"क्षत्रियकुलाङ्गना कमला इव कमला, शारदा इव विशारदा, अनुसूया इवानुसूया, यशोदा इव यशोदा., सत्या इव सत्या, रुक्मिण्य इव रुक्मिण्य, सुवर्णा इव सुवर्णा, सत्य इव सत्य ।"

इसके अतिरिक्त दीपक, श्लेष, उदात्त, यथासख्य, आदि अलङ्कारो की भी योजना की है। डा० भगवानदास कादम्बरी से तुलना करते हुए लिखते है— "जहाँ बासवदत्ता और कादम्बरी के शब्दो की अरण्यानी मे बेचारा अर्थ-पथिक सर्वथा भूल भटक कर खोजता है, उसका पता ही नही लगता, वहाँ शिवराज विजय के सुललित उद्यान मे, उसकी सहज अलकृत शैली मे पाठक का मन खूब रमता है। कादम्बरी के शब्दो की विकट आरण्यानी की तरह शिवराज विजय के शब्दससार को देखकर उसका मन घबरा नही उठता, अपितु उसमे प्रविष्ट होकर उसके आनन्द को लेने की उत्सुकता को जगाता है।"

अस्तु, व्यास जी ने अलङ्कारो का प्रयोग मात्र कविता कामिनी को सजाने के लिये ही किया है।

रस-योजना—'वाक्य रसात्मक काव्यम्' के अनुसार रस ही काव्य की आत्मा है। यह सच भी है कि 'रसहीन' काव्य नही हो सकता है। अत काव्य मे रस योजना होती ही है। यद्यपि रसो मे उच्चावचता या श्रेणी विभाग नही तथापि वर्ण्य की दृष्टि से रस की मुख्यता या गौणता अवश्य होती है।

शिवराज का प्रधान रस है 'वीर'। प्राय अन्य सभी रस इसमे उपकारी रूप मे निहित हैं। उद्देश्य के अनुसार इसमे वीर रस का विशेष रूप से चित्रण किया गया है। शिवाजी के शौर्य का जो अद्भुत वर्णन किया गया है, वह अत्यन्त स्पृहणीय है। गौरसिंह अफजलखाँ से कहता है—

"को नामापर शिववीरात् ? स एव राजनीतौ निष्णात, स एव सैन्धवा-रोह विद्यासिन्धु, स एव चन्द्रहास चालने चतुर, स एव मल्लविद्यामर्मज्ञ, स-

एव बाणविद्यावारिधि, स एव वीरवारवर पुरुषपौरुष परीक्षक, स एव दीन-दुखदावदहन, स एव स्वधर्मरक्षण सक्षण ।"

× × ×

आगत एष शिववीर इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरोधिषु 'केचन मूर्च्छिता निपतन्ति, अन्ये विस्मृतशास्त्रास्त्रा पलायन्ते, इतरे महाभासाकुञ्चितोदरा विशिथिलवाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखा दशनेषु तृण सन्धाय साम्रेड प्रणियातपरम्परा रचयन्तो जीवन याचन्ते ।

व्यास जी ने यत्र-तत्र शृङ्गार रस का भी चित्रण किया है । इन्होंने शृङ्गार का वर्णन अत्यन्त शिष्ट और सात्त्विक रूप मे किया है, उसमे मादकता या उच्छृंखलता लेशमात्र की नही है—

"सा चावलोक्य तमेव पूर्वावलोकित युवानम्, वीराभरमन्थरापि ताताज्ञया बलादितप्रेरिता ग्रीवा नमयन्ती आत्मनाऽऽत्मन्येव निविशमाना स्वपादाग्रमेवालोकयन्ती मोदकभाजन समाजित सव्येतर कर तदग्रेप्रसारयत् । पुनश्च सा अञ्चल कोण कटिकच्छ प्रान्ते आयोज्य, हस्ताभ्या मालिका विस्तार्य नतकन्धरस्य रघुवीरसिहस्य ग्रीवाया चिक्षेप इषत्कम्पितगात्रयष्टिश्च शनैर्यथा निववृते ।"

कही-कही करुण रस का अत्यन्त हृदयग्राही वर्णन किया गया है—

"माता च तव ततोऽपि पूर्वमेव कथावशेषा सवृत्ता, यमलौ भ्रातरौ च तव द्वादशवर्षदेशीयावेव आखेट व्यसनिनौ महार्हभूषणभूषितौ तुरगावरुह्य वन गतौ दस्युभिरपहृतौ इति न श्रूयेत तयोर्वार्ताऽपि, त्व तु मम यजमानस्य पुत्रीति स्वपुत्रीवमयैव सह नीता वर्द्धयसे च । अहह ! वारवारम् बालैव सुन्दरकन्याविक्रय व्यसनिभिर्यवन वराकैरपह्रियसे ।"

व्यास जी ने एकत्र वात्सल्य रस का भी अत्यन्त हृदयग्राही वर्णन किया है । डाकुओ के चगुल मे फसे हुए गौरसिह और श्यामसिह अपनी भगिनी के विषय मे सोचते है—

"हन्त ! हत भाग्या सा बालिका, या अस्मिन्नेव वयसि पितृभ्या परित्यक्ता, अवयवोरपि अदर्शनेन क्रन्दनै कण्ठ कदर्थयति । अहह ! सतत मस्मक्रोडैक क्रीड-

निकाम्, सततमस्मन्मुखचन्द्रचकोरीम्, सततकस्मत् कण्ठरत्नमालाम्, सततमस्मन्सह भोजनीम् "

इस प० अम्बिकादत्त व्यास के द्वारा वर्जित रसो की योजना अत्यन्त परि॰ पक्व और साधिकार है। मुख्यत वीररस का चित्रण करते समय इसमे सभी रस वर्णन यत्किञ्चद् रूप मे उपलब्ध होते हैं।

काव्य-अभिव्यञ्जना

वस्तु एव प्रकृति-चित्रण—काव्य मे अभिव्यञ्जना का महत्त्व शिल्प की अपेक्षा अधिक होता है। हृदयग्राही मार्मिक भावो की अभिव्यञ्जना ही काव्य की सफलता है। वस्तु घटना, भाव या दृश्य का साक्षातथ्येन वर्णन करना ही कवि की विशेषता है। इस मे अम्बिकादत्त व्यास अत्यन्त निपुण और बहुमुखी है। सस्कृत कवियो मे प्रकृति-वर्णन की परम्परा रही हे। जितनी सफलता के के साथ प्रकृति का चित्रण कवि ने किया है, वह उतना ही अधिक सफल हुआ है। व्यास जी ने भी शिवराज विजय मे प्रकृति नटी का सुन्दर अकन किया है। यह अवश्य है कि वे कठोर प्रकृति की अपेक्षा कोमल प्रकृति के चित्रण मे अधिक समर्थ सिद्ध हुए हैं। प्रकृति के कठोर रूप का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"सुदुरमस्मात्स्थानात् कोड्कण देश मध्येच विकटा अटव्य शतश शैल श्रेणय त्वरित धारा धुन्य, पदे-पदे च भयानकभल्लूकानामम्बकृत-सङ्कुलानाम्, मुस्ता-मूलोत्खनन घुर्घुशोयित्त-घोर-घोणानाम् घोणिनाम्,-पङ्क परिवर्तोमथित-कासाराणा, नरमास बुभुक्षूणा तरक्षणाम, विकट करटिकट विपाटन-पाटव-पूरित-सहनाना सिहानाम्, नासाग्र-विषाणशोणनच्छल विहित-गण्डशैल-खण्डाना खाड्ग-नाम् दोदुल्यमान-द्विरेफ-दल-पेपीयमान-दानधारा-धुरन्धराणा-सिन्धुराणा ।"

इस प्रकार व्यास जी प्रकृति के रूप के वणन मे तो उतने सक्षम नही हो पाये हैं किन्तु प्रकृति के मनोरम पक्ष के वर्णन मे अत्यन्त सफल हुए हैं। सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय, चन्द्रास्त एवम् रात्रि आदि के वर्णन मे व्यास जी ने अत्यन्त कुशलता का परिचय दिया है। सूर्यास्त का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

जगत प्रभाजालमाकृष्य, कमलानि-सम्मुद्रय, कोकान् सशोकीकृत्य, सकल-

चराचरचक्षु सञ्चारशक्ति शिथिलीकृत्य, कुण्डलेनेव निज मण्डलेन पश्चिमामाशा भूषयन्, वारुणी सेवनेनेव माञ्जिष्ठमाञ्जिम रञ्जित =, अनवरत भ्रमणपरिश्रम-श्रान्त इव सुषुप्सु, म्लेच्छगणदुराचारदु खाऽऽक्रान्त-वसुमतीवेदनामिव समुद्र-शायिनि निविवेदयिषु, वैदिक-धर्म-ध्वस-दर्शन-सजात निर्वद इव गिरिगह्वनषु प्रविश्य तपश्चिकीषु, घर्म-ताप तप्त इव समुद्रजले सिस्नाषु, साय समयम-वगत्य सन्ध्योपासनमिवविधित्सु, अन्धतमसे च जगत पातयन्, चाक्षुपाम्-गोचर एव सजात ।"

आश्रम की शोभा का वर्णन करते हुए कवि कहता है—

"कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वत परम-पवित्रपानीय परस्सहस्रपुण्डरीकपटलपरिलसित पतत्रिकूलकूजितपूजित पय पूर पूरितसर आसीत् । दक्षिणतश्चैको निर्झरझर्झर ध्वनि-ध्वनित दिगन्तर फल-पटलाऽऽस्वादचपलित चञ्चुपतङ्गकुलाऽऽक्रमणाधिकविनतशाखशाखिसमूहव्याप्त सुन्दर कन्दर पर्वतखण्ड आसीत् ।"

व्यास जी ने रात्रि की नीरवता का अत्यन्त सटीक और स्वाभाविक वर्णन किया है । नीरव निशा का चित्र खीचते हुए लिखते है—

"धीरसमीर स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनीचन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदीकपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्ता शुश्रूषुषु इव मौनमाकपत्सु पतगकुलेषु, कैरव-विकाश-हर्ष-प्रकाश-मुखरेषु चञ्चरीकेषु ।"

झञ्झावात का भी चित्रण इतनी सफलता के साथ किया है कि उसे पढकर आँधी की वास्तविकता उसके नेत्रो के सामने उपस्थित हो उठती है । उसका भयानक दृश्य व्यास जी के शब्दो मे देखिये—

तावदकस्मादुत्थितो महान् झञ्झावात, एक साय समय प्रयुक्त स्वभाव-वृत्तोऽन्धकार, स च द्विगुणितो मेघमालाभि झञ्झावातोद्धूतै = रेणुभि शीर्णै पत्रै कुसुम परागै शुष्क पुष्पैश्च । पुनरेष द्वैगुण्य प्राप्त । इह पर्वत-श्रेणीत पर्वत श्रेणी, वनाद् वनानि, शिखराच्छिखराणि, प्रपातात् प्रपाता, अधित्यकातोऽधित्यका, उपत्यकात् उपत्यका, न कोऽपि सरलोमार्ग, नानुद्वेदिनी भूमि, पन्था अपि च नावलोक्यते । पदे-पदे दोधूयमाना वृक्षशाखा सम्मुख माऽघ्नन्ति । परित सहडहडाशब्द दोधूयमानाना परस्सहस्र वृक्षाणा, वाताघात

सजात पापाण पाताना प्रपातानाम्, महान्ध तमसेन ग्रस्यमान इव सत्वाना क्रन्दनस्य च भयानकेन-स्वनेन कवली कृतमिव गगन तलम् ।"

इस प्रकार व्यास जी प्रकृति-चित्रण के साथ अन्य वस्तुओ के वर्णन मे सचेष्ट रहे है। छाया-चित्र उपस्थित करने मे भी व्यास जी ने पर्याप्त सफलता प्राप्त की है। आजकल के शिविर का वर्णन व्यास जी के शब्दो मे इस प्रकार है—

"आत्मन कुमारस्यापि च केशान् प्रसाधनिकया प्रसाध्य, मृखमार्द्रं पटेन प्रोञ्छचलललाटे सिन्दूर बिन्दुतिलक विरचय्य, उष्णीपिकामपट्टाय, शिरशि सूचिर-यूतासौवर्णकुसुमलतादिचित्रविचिश्रितामुष्णीषिका सधार्यंशरीरे हरितकौशेयकञ्चु-किकामायोज्य, पादयो शोणपट्ट निर्मितमघो वसनमाकलम्य, दिल्ली निर्मिते महार्हे उपानाहौ धारयित्वा, लघीयसी तानपूरिकामेका सहनेतु सहचर हस्ते समर्प्य, "

पूर्वीबङ्गाल के वर्णन को पढकर पाठक ऐसा अनुभव करता है, जैसे वह नदी के तट पर खडा हुआ सारा दृश्य अपनी आंखो से देख रहा है—

"पूर्ववङ्गमपि सम्यगवालुलोकदेष जन । यत्र प्रान्तप्ररुढा पद्मावली परि-मर्दयन्तीपद्मेव द्रवीभूता पय पूरप्रवाहपरम्पराशि पद्मा प्रवहति' यत्र ब्रह्म पुत्र इव शत्रुसेनानाशनकुशला ब्रह्मदेश विभजन् ब्रह्मपुत्रो नाम नदो भूभाग क्षाल-यति, यत्र साम्लसुमधुररसपरितानि फूत्कारोद्धूतभूतिज्वलदङ्गारविजित्वरवर्णानि जगत्प्रसिद्धानि नारङ्गाण्युद्भवन्ति, यद्देशीयाना जम्बीराणा रसालाना ताल-नारिकेलाना खर्जूराणा च महिमा सर्वदेशरसज्ञाना साम्रेड कर्णं स्पृशति, यत्रला भयकराऽऽवर्तसहस्राऽऽकुलासुस्रोतस्वतीषु सहोहोकारक्षेपणी सिपन्त. अरित्र चाल-यन्त, वडिश योजयन्स, कुवेणीस्थम्रियमाणा मत्स्यपरीवर्तानालोकमालोकम-नन्दत, ।"

सुन्दर सरोवर के किनारे दर्भासन पर बैठे सविधि पूजन करने वाले मुनि-जनो का अतीव हृदयहारी चित्रण व्यास जी ने किया है—

"तत्र वरटाभिरनुगम्यमानाना राजहसाना पक्षति कण्डूतिकपणचञ्चल-चञ्चुपुटाना मल्लिकाक्षाणा, लक्ष्मणाकण्ठस्पर्शहर्षवर्षप्रफुल्लाङ्गरुहाणा सारसाना, भ्रमद्भ्रमरझङ्कारभारविद्रावितनिद्राणा कारण्डवाना च तास्ता शोभा पश्यन्ती,

तडाग तट एव पम्फुल्यमानाना मकरन्दतुन्दिलानामिन्दीवगणा समीपत एवम-सृणपापाणपट्टिकासु कुशासनानिमृगचर्मासनानि उर्णासनानि च विस्तीर्योप-विष्टाना, ।"

इस प्रकार व्यास जी ने शिवराज विजय मे जिसका वर्णन किया हे उसका यथारूप मे चित्र खीचकर पाठक को भावविभोर कर दिया है। वस्तु या दृश्य वर्णन की कुशलता व्यास जी मे कूट-कूट कर भरी है। वस्तु वर्णन में व्यास जी अपने पूववर्ती गद्य कवियो की पक्ति मे विराजमान होते हैं।

सामाजिक चित्रण—सस्कृत गद्य काव्य में गद्य की अनेक विधाएँ निहित है और विविध भावो के वर्णन का भी समन्वय है। किन्तु शिवराज विजय के पूर्व जिन आख्यानो या कथाओ का वर्णन मिलता है, वे या तो चरित्र प्रधान है या दृश्य (बिम्ब) प्रधान। शिवराज विजय एक मात्र ऐसा उपन्यास है जिसमे तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियो और चरित्रो का समग्र रूप से वर्णन किया गया है। 'साहित्य समाज का दर्पण होता है' शिवराज विजय इस कथन का पूर्णत समर्थन करता है।

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास ने शिवराज विजय में मुगलकालीन समाज का सुन्दर चित्रण किया है। उस समय राजा अकर्मण्य विलासी और विद्वेषी थे। हिन्दु जाति मुसलमायो के अत्याचार से पीडित थी। दूसरी ओर मुसलमानो का माम्राज्य भारत मे निरन्तर वढता जा रहा था और उसको साथ-साथ ही के द्वारा हिन्दु कन्याओ के अग्हरण, मन्दिरो और मूर्तियो के विध्वस, पवित्र धर्म-ग्रन्थो के विनाश और अनाथ हिन्दुओ के प्रपीडन को अपना कर्त्तव्य समझते थे। हिन्दु राजा मुसलमान शासको की दासता स्वीकार कर उनकी प्रशसा मे रत थे और उनकी कृपा पर जीवित थे।

ऐसी विपम परिस्थिति मे महाराष्ट्राधीश्वर वीर शिवा जी ने अपने शौर्य पराक्रम और सदाचरण द्वारा हिन्दु जनता और हिन्दुत्व की रक्षा की। उसके मुसलमानों अस्तगत शौर्य को वडी कुशलता और वीरता से पुनार्जागृत किया। उन्होने देशभक्ति राष्ट्रभक्ति, आत्मविश्वास, स्वधर्मानुराग एवम् मातृभूमि की सेवा भाव का हिन्दु जनता मे सञ्चार किया।

अति अनीति की पराज्य सर्वदा होती है। जिस विलासिता और व्यसन

के कारण हिन्दु राजाओ का पतन हुआ उसी विलास और भोगप्राचुर्य के कारण मुस्लिम शासको का भी पराभव हुआ। हिन्दुओ पर उनका अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुका था। उनके अत्याचारो का वर्णन करते हुए व्यास जी कहते हैं—

" क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद्धनानि लुण्ट्यन्ते, क्वचिदार्तनादा, क्वचिद्रुधिरधारा, क्वचिदग्निदाह, क्वचिद्गृहनिपात, श्रूयते अवलोक्यते च परित. ।"

मुसलमान शासक इतने मदान्वित और विलासी प्रवृत्ति के हो चुके थे कि अफजल खाँ भी, वीर शिवा जी जैसे शक्तिशाली और सर्वसमर्थ राजा को पराजित करने की प्रतिज्ञा विजयपुर नरेश के सामने करके आया था, सदैव भोग विलास और नशे मे चूर रहता था। जिसका वर्णन करते हुये व्यास जी कहते हैं—

"स प्रौढि विजयपुराधीश महासभाया प्रतिज्ञाय समायातोऽपि शिवप्रतापञ्च विदन्नपि अद्य नृत्यम्, अद्य गानम्, अद्य लास्यम्, अद्य मद्यम्, अद्य वाराङ्गना, अद्य भ्रूकुसक, अद्य वीणा वादनम् इति स्वच्छन्दैरुच्छृङ्खला चरणैर्दिनानि गमयति।"

इसी का परिणाम था कि गायक (गौरसिंह) के समक्ष अफजल खाँ सगर्व अपनी भावी गोप्य योजना (शिववीर को सन्धिव्याज से पकडने) की घोषणा स्पष्ट रूप से कर देता हैं। इस प्रकार तत्कालीन मुस्लिम राजाओ मे उसी वृत्ति का सञ्चार हो रहा था जिसके कारण हिन्दु राजाओ की पराजय हुई थी। उस समय हिन्दु राजाओ मे आपसी वैरभाव बढा हुआ था, वेश्याओ और मदिरा क चक्कर मे अपनी सम्पत्ति नष्ट कर चुके थे, मिथ्या प्रशसा करने वाले चाटुकारो को ही सबसे निकट और हितैषी समझते थे और स्वार्थ की वृत्ति सर्वोपरि हो चुकी थी। इसी कारण तो भारतवर्ष सैकडो वर्ष तक पराधीनता की बेडियो मे जकडा रहा। इसका वर्णन करते हुए व्यास जी कहते है—

"शनै शनै पारस्परिक-विरोध-विशिथिलीकृत-स्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनी-भ्रूभङ्ग-भूरिभाव-प्रभाव-पराभूत वैभवेषु भटेषु, स्वार्थचिन्तासन्तान

वितानैकतानेषु अमात्यवर्गेषु प्रशंसामात्रप्रियेषु प्रभुषु, "इन्द्रस्त्वं कुबेरस्त्वं वरुणस्त्वमिति वर्णनमात्रसक्तेषु बुद्धजनेषु ।"

किन्तु महाराष्ट्राधीश्वर, वीर शिवा जी उन हिन्दु राजाओं में अपवाद रूप थे, न तो उनमें उक्त प्रकार की कमजोरी थी और न ही स्वार्थ लिप्सा। वे एक वीर, पराक्रमी, राजनीति पारगत एवं कुशल प्रशासक थे। उनकी क्षमता व्यूहरचना, ओजस्विता एवं धीरता अपूर्व थी। इसी कारण विशाल सेना वाले मुस्लिम शासक के विरुद्ध उन्होंने विजय प्राप्त की। उनके गुप्तचर गौरसिंह आदि तथा द्वारपाल के चरित्र एवं कार्यों के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है। गौरसिंह अपनी गुप्तचरीय व्यूहरचना का वर्णन करते हुए कहता है—

"भगवन्! सर्वं सुसिद्धम्, प्रतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृतसनातनधर्मरक्षामहाव्रताना धारितमुनिवेषाणा वीरवराणामाश्रमा सन्ति। प्रत्याश्रमञ्च वल्मीकेषु गोपयित्वा स्थापिता परश्शता खड्गा, पटलेषु तिरोभाविता शक्तया कुशपुञ्जान्त स्थापिता भुशुण्डयश्च समुल्लसन्ति। उञ्छस्य शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्गुदीपर्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्र परिमार्गणस्य, कुसुमावाचयनस्य, तीर्थाटनस्य, सत्सङ्गस्य च व्याजेन केचन जटिला, परे मुण्डिन, इतरे काषायिण, अन्ये मौनिन, अपरे ब्रह्मचारिणश्च बहव पटवो वटवश्चरा सञ्चरन्ति। त्रिजयपुरादुड्डीयात्रागच्छन्त्या मक्षिकाया अप्यन्त स्थित वय विद्म, किं नाम एषा यवनहतकानाम्।'

वीर शिवा जी सदैव योग्य और विश्वस्त व्यक्ति को ही गुप्तचर के रूप में नियुक्त करते थे। गुप्तचर की निपुणता, कार्यक्षमता, विश्वसनीयता और गम्भीरता आदि की परीक्षा लेने के बाद ही राजपक्ष के लोग गुप्तचरों को रहस्य की बातें बताते थे, केवल गुप्तचर होने मात्र से न तो उनकी सन्तुष्टि हो पाती थी और न ही वे उन्हें गुप्त सन्देशों के कहने योग्य समझते थे। तोरण दुर्ग का अध्यक्ष शिवा जी के गुप्तचर की परीक्षा लेकर ही उसे रहस्य की बात बताने के लिये तैयार होता है—

"नैतेषु विषयेषु कदापि सतन्द्रोऽत्रतिष्ठते महाराज, स सदा योग्यमेव जन पदेषु नियुनक्ति, नून बालोऽप्येषोऽबाल हृदयोऽस्ति, तदस्मै कथयिष्याम्यखिल वृत्तान्तम्, पत्र च केषुचिद विषयेषु समर्पयिषामि।"

शृङ्गाटकचत्वरोद्यानगोष्ठमयानि नगराणि च काननी करोति । निरीक्ष्यता कदाचिदिहैव भारते वर्षे यायजूकै राजसूयादियज्ञा व्यायाणिपत, कदाचिदिहैव वपवानातपहिमसहानि तपासि अतापिपत् ।"

ब्रह्मचारि गुरु ने योगिराज से आमनबद्ध योगियो के स्वरूप का जो चित्रण किया है, वह योगपरक है—

"भगवन् ! बद्धसिद्धासनैर्निरुद्धनिश्वासै प्रबोधितकुण्डलिनीकैर्विजितदशेन्द्रियैरनाहतनादतन्तुम् अवलम्ब्याऽऽज्ञाचक्र सस्पृश्य, चन्द्रमण्डल भित्त्वा, तेज' पुञ्जमविगणय्य, सहस्रदलकमलस्यान्त प्रविश्य, परमात्मान साक्षात्कृत्य, तत्रैव रममाणैर्मृत्युञ्जयै रानन्दमात्रस्वरूपैर्ध्यानावस्थितैर्भवादृशैर्न ज्ञायते कालवेग ।"

गौरसिह और द्वारपाल के वार्तालाप से साधुओ और सन्यासियो के सम्मान की भावना की पुष्टि होती है—

"कथमस्मान् सन्यासिनोऽपि कठोर भाषणैस्तिरस्करोषि ?"

शिवराज विजय मे हनुमन्मन्दिर का विशेष वर्णन मिलता है, जिससे देवी-देवी-देवताओ मे हनुमान की पूजा विशेष रूप से प्रचलित होती है । मुसलमानो के अत्याचारो को रोकने, पीडित हिन्दुओ की रक्षा करने तथा हिन्दू और हिन्दु-धर्म की सुरक्षा के लिये सन्यासी वेष मे फैले हुए शिवाजी के गुप्तचर तथा हनुमान् के मन्दिर और उनकी भीषण मूर्ति विशेष साधन थे । हनुमान् जी की एक भीषण मूर्ति का वर्णन करते हुए व्यास जी ने लिखा है—

"ततोऽवलोक्य ता अजेणेष निर्मिता, साकारामिव वीरताम् गदामुद्यम्य दुष्ट-दलदलनार्थमुच्छलन्तीमिव केशरिकिशोरमूर्तिम्, न जाने कथ वा कुतो वा किमिति वा प्रातरन्धकार इव वसन्ते हिम इव, बोधोदयेऽबोध इव ब्रह्म साक्षात्कारे भ्रम इव झटित्यपससार आवयो शोक ।"

मन्दिर के पुजारी और सन्यासी भी शस्त्र-विद्या मे निपुण, बुद्धिमान और राजनीति पारगत होते थे । मन्दिरो, आश्रमो और कुटीरो मे असीम शस्त्रास्त्र गुप्त रखे जाते थे । देवी देवताओ मे अखण्ड विश्वास था । 'हनुमान् जी सब कुछ ठीक कर देंगे' इस प्रकार के आश्वासन के साथ मन्दिराध्यक्ष अतिथियो, असहायो और पीडितो को शरण प्रदान करते थे । मन्दिराध्यक्ष के आतिथ्य का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"हनुमान् सर्वं साधयिष्यति, मास्मश्चिन्ता सन्तान-वितानैरात्मान दु खादुस्तम् । यथा सरलेनोपायेन कोङ्कणदेश प्राप्स्यस्यथस्तथा प्रभाते निर्देक्ष्यामि । साम्प्रतमित आगम्यताम्, पीयतामिदमेलागोस्तनीकेसरशर्करातम्पर्कसुधाविस्पर्द्धि महिर्षि दुग्धम् ।"

इस प्रकार शिवराज मे वर्णित धार्मिक भावनाओ के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अत्याचारो से प्रपीडित हिन्दु समाज विशेप रूप से बलशाली हनुमान की पूजा-शत्रुओ की प्रतिरोध की भावना से करता था और अन्य साधु-सन्यासी भी उसी रूप मे कार्यरत रहते थे । अत तत्कालीन समाज के धार्मिक भावना की प्रबलता थी ।

चरित्र-चित्रण—उपन्यास मे चरित्र-चित्रण का भी विशेष स्थान होता है । काव्य की सफलता अधिकाश रूप में चरित्र-चित्रण पर निर्भर होती है । पडित अम्बिकादत्त व्यास अपने शिवराज विजय मे सभी पात्रो के चरित्राङ्कन मे विशेष सफल हुए हैं । उनके सभी पात्र जीवन्त एव प्रभावी हैं । व्यास जी के चरित्राकन की विशेषता यह रही है कि जिसे जैसा होना चाहिए, उसे वैसा ही वर्णित किया किया है, जबकि बाण ने 'भवितव्य' का बहुत अधिक बढा चढाकर चित्रण है । अत बाण जैसी अस्वाभाविकता व्यास जी के चित्रण मे नही है । इन के सभी पात्रो का चित्रण अत्यन्त स्वाभाविक है ।

आश्रमवासी ब्रह्मचारी गुरु, गौरबटु तथा योगिराज आदि का वर्णन अत्यन्त सरल एव स्पष्ट है । महाराष्ट्र केसरि वीर शिवाजी, रघुवीर सिह तथा अफजल खाँ आदि के चित्रण मे व्यास जी ने अत्यन्त वास्तविकता और स्वाभाविकता का आश्रय लिया है, कही पर भी कृत्रिमता का पुट नही है । जो जैसा था उस का वैसा ही चित्रण किया । यही उनकी विशेपता है ।

वीर शिवाजी स्वधर्म रक्षा के व्रती, राजनीति मे निष्णात तथा भारतीय आदर्शों और सस्कृति के प्रतिनिधि हैं । सनातन धर्म की रक्षा के लिये अपने प्राणो की बाजी लगाने को तैयार रहते थे । उनका शौर्य, पराक्रम एव वीरता अद्भुत थी । उनकी वीरता से शत्रुओ के दिल दहल जाते थे । शिवाजी के आतक-कारी वीरता का वर्णन करते हुए व्यास जी ने लिखा है—

"कथ वा आगत एप शिववीर इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरोधिपु

केचन मूर्च्छिता निपतन्ति, अन्ये विस्मृतशस्त्रास्त्रा पलायन्ते, इतरे महात्रासा कुञ्चितोदरा विशिथिल वाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखा दशनेषु तृण सन्धाय साम्रेडम् प्रणिपातपरम्परा रचयन्तो जीवन याचन्ते ।"

शिववीर मे अपने देश के प्रति प्रेम था, गर्व था। उसकी रक्षा के लिये प्राणार्पण से सन्नद्ध रहते थे। इस भावना का अत्यन्त सुन्दर चित्रण व्यास जी ने किया है—

"शिववीर—भारतवर्षीया यूयम्, तत्रापि महोच्चकुल जाता, अस्ति चेद भारतवर्षम् भवति च स्वाभाविक एवानुराग सर्वस्यापि स्वदेशे, पवित्रतमश्च यौष्माकीण सनातनो धर्म, तमेते जाल्मा समूलमुच्छिन्दन्ति, अस्ति च—'प्राणा यान्तु न च धर्म" इत्यार्याणा दृढ सिद्धान्त ।"

दूसरी ओर मुगल शासको की परम्पराओ से घिरा हुआ सेनापति अफजल खॉं का चरित्र अत्यन्त स्वाभाविक तथा सत्य रूप मे चित्रित किया है। अन्य शासको के समान वह भी विलासी, अदूरदर्शी, आत्मश्लाघी तथा सूक्ष्म राजनीतिक कलाबाजियो से अनभिज्ञ है। व्यास जी ने उसके चरित्र को अत्यन्त रोचक ढग से चित्रित किया है। वह मद के वशीभूत हुआ अपनी योजना को गोप्य नही रख पाता और कह उठता है—

"इति कथयति तानरङ्गे, अभिमान-परवश स स्वसहचरान् सम्बोध्य पुनरादिशत् भो-भो योद्धार ! सूर्योदयात् प्रागेव भवन्त पञ्चापि सहस्राणि सादिना दशापि च सहस्राणि पत्तीना सज्जीकृत्य युद्धाय तिष्ठत । गोपीनाथपण्डित-द्वारा-ऽऽहूतोऽस्ति मया शिव वराक । तद् यदि विश्वस्य स समागच्छेत्, ततस्तु बद्ध्वा जीवन्त नेष्याम, अन्यथा तु सदुर्गमेन धूलीकरिष्याम ।'

व्यास जी ने अफजल खॉं के सैनिको की कायरता, भयाकुलता तथा अत्याचारो को भी ऐतिहासिक तथ्यो के अनुकुल काव्यात्मक ढङ्ग से चित्रित किया है—

"वय वलिन, आस्माकीना महती सेना, तथाऽपि न जानीम किमिति कम्पत इव क्षुभ्यतीव च हृदयम् ! 'यवनाना पराजयो भविष्यति अफजलखानो विनङ्क्ष्यति इति न विद्म को जपतीव कर्णे, लिखनीव सम्मुखे, क्षिपतीव चान्त करणे।"

गौरसिंह, शिवाजी के लिये गुप्तचर का कार्य करने वाले, का जैसा उ

प्रशस्य तथा वास्तविक चित्र व्यास जी ने खीचा है, वह वास्तव मे अद्वितीय है। गौरसिंह अच्छा सुभट है, राजनीति मे प्रवीण है, योद्धाओ मे अग्रणी है वेष परिवर्तन मे निपुण है तथा अपने कार्य मे दृढ, अनालस एव सतत सजग है। गौरसिंह वीरता के साथ अपहृत बालिका को यवनो से छीनता हैं, बडी चतुरता से शिववीर के द्वारपाल की परीक्षा करता है तथा अफजल खाँ के शिविर मे जाकर बडी पटुता से उसकी भावी योजना की जानकारी करता है और शिवाजी की प्रशसा भी कर आता है। शिवाजी के दिये गये कार्य का बडी बुद्धिमत्ता से सम्पादन करता है। दो-दो कोस की दूरी पर आश्रमो की स्थापना तथा विविध वेषधारी तपस्वियो के माध्यम से अवरङ्गजेब तथा उसके सेनापति की प्रत्येक गतिविधियो की जानकारी कर लेता है, जिससे उसकी राजनीतिक चेतना का परिचय मिलता है।

अन्य जितने भी उपन्यास के पात्र हैं, उन सभी का चरित्र व्यास जी अपनी प्रातिभ लेखनी से अत्यन्त जीवन रूप मे चित्रित किया है। न कही न्यूनता है, न कही अधिकता, न कही स्वाभाविकता का अभाव है और न कही कृत्रिमता का आधान।

इस प्रकार पडित अम्बिकादत्त व्यास का शिवराज विजय वर्ण्य पात्रो के चरित्राङ्कन तथा विषय वस्तु की दृष्टि से अपनी काव्यात्मक विधा पर खरा उतरता है। और निश्चित रूप से सस्कृत-गद्य-साहित्य मे उसका अपना एक विशिष्ट स्थान हैं, जो किसी अन्य काव्य को नही प्राप्त है। इस ऐतिहासिक उपन्यास की अपनी निजी विशेषतायें हैं जो उसको उत्कृष्टता के शिखर पर पहुँचा देती है। शिवराज विजय भारतीय गौरव, सस्कृत भाषा-वैशिष्टय तथा कवि के उत्कृष्ट कवित्व का प्रतीक है।

———

शिवराज विजय

प्रथमो विराम ·

"विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितञ्जगत्"

[भागवतम् १०।१।२५]

"हिंस्र स्वपापेन विहिंसित खल साधु समत्वेन भयाद्विमुच्यते"

[भागवतम् १०।७।३१]

हिन्दी अनुवाद वह विष्णु की माया ऐश्वर्यशालिनी है, जिसने सम्पूर्ण जगत् को मोह मे डाल रखा है (भागवत १०।१।२५)

दुष्ट हिंसक अपने पाप से मारा गया और सज्जन समत्वभाव के कारण भय से बच गया। (भागवत १०।७।३१)

सस्कृत-व्याख्या—व्यासोक्ति प्रस्तौति व्यास ब्रह्मण सत्वप्रधाना शक्ति मायेति नाम्नी ऐश्वर्यशालिनी अस्ति। ऐश्वर्यमेव प्रकारान्तरेण मोह, अतएव सा समस्तमपि जगत् सम्मोहयति।

"न कर्तृत्व न कर्माणि लोकस्य पृजति प्रभु" इत्युक्ति दिशा व्यास-वचनम् प्रतिपादयति अम्बिकादत्त ग्रन्थेऽस्मिन् यत्—असाधु हिंसकश्च स्वपापकर्मणा स्वमेव विहन्यते। सज्जन रागद्वेषादि भावनया विरहित सन् स्वकीयेन सत्कर्मणा पापगतभयो भवति सदा। इत्येव निर्दिष्टमुपन्यासेऽस्मिन्।

हिन्दी-व्याख्या—विष्णो=विष्णु की, वेवेष्टिचराचरात्मक प्रपञ्चमिति विष्णु तस्य। भगवान् विष्णुअ खलि चराचर जगत् मे व्याप्त है।
माया=ब्रह्म की शक्ति, सत्व प्रधाना शक्ति माया सम्पूर्ण को मोहित करने वाली है। भगवती=ऐश्वर्यशालिनी, 'भग+मतुप् + ङीप्' (अस्ति अर्थ मे मतुप् प्रत्यय) भग=भग कहते है—'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य धर्मस्य यशस श्रिया। ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णा भगा इतीरणा।' यया=जिस माया के द्वारा। जगत्=ससार, गच्छतीति=जो निरन्तर क्रियाशील या गतिशील है, वह जगत् है। सम्मोहितम्=सम्मोहित है अर्थात् यह सारा ससार ब्रह्म की माया

से सम्मोहित (मोहग्रस्त) है क्योकि माया ऐश्वर्यशालिनी है और ऐश्वर्यमूलक ही मोह है।

हिंस्र = हिंसक। स्वपापेन=अपने पाप से। विहिंसित =मारा जाता है, 'भवति' का अध्याहार कर लेने पर अर्थ विशेष सगत हो जाता है,(विहिंसितो भवति)। खल = दुष्ट । साधु =सज्जन, साध्नोति परकार्यमिति साधु। समत्वेन=समत्व बुद्धि से अर्थात् रागद्वेषादि भावना से विरहित होकर। भयाद्=भय से। विमुच्यते=मुक्त हो जाता है।

टिप्पणी—लेखक ने भागवत की सूक्तियो को उद्धृत किया है। प्रथम मे विष्णु की शक्ति और उसके प्रभाव का वर्णन किया है। यह पूर्णत मगल परक है। द्वितीय मे दुष्ट विनाश और साधु सुरक्षा का निर्देश शिवराज की विजय और यवन शासक के विनाश का सूचक है।

अरुण एष प्रकाश पूर्वस्या भगवतो मारीचिमालिन। एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचर-चक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिश, दीपको ब्रह्माण्डभाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोकविमोकः कोक लोकस्य, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधार सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्र जनयति, अयमेव वत्सर द्वादशसु भागेषु विभनक्ति, अयमेव कारण षण्णामृतूनाम्, एष एवाङ्गीकरोति उत्तर दक्षिण चायनम् एनेनैव सम्पादिता युगभेदा, एनेनैव कृता कल्पभेदा, एनमेवाऽऽश्रित्य भवति परमेष्ठिन परार्द्धसङ्ख्या, असावेव चर्कर्तिबर्भर्ति जर्हर्ति च जगत्, वेदा एतस्यैव वन्दिन, गायत्री अमुमेव गायति, ब्रह्म-निष्ठा ब्राह्मण अमुमेवाहरहरुपतिष्ठन्ते धन्य एष कुलमूल श्री रामचन्द्रस्य प्रणम्य एष विश्वेषामिति उदेष्यन्त भास्वन्त प्रणमन् निजपर्णकुटीरात् निश्चक्राम कश्चित् गुरुसेवनपटुर्विप्रबटु।

हिन्दी अनुवाद—पूर्व दिशा मे भगवान् सूर्य का यह लाल (प्रकाश) है। यह भगवान (सूर्य) आकाश मण्डल के मणि, नक्षत्र समूह के चक्रवर्ती (सम्राट्), इन्द्र (पूर्व) की दिशा के कुण्डल, ब्रह्माण्ड रूपी गृह के दीपक, कमल कुल के अत्यन्त प्रेमपात्र, चक्रवाक समुदाय के शोक को दूर करने वाले भ्रमर

समूह के अवलम्ब, सम्पूर्ण व्यवहार के सूत्रधार (प्रवर्तक) और दिन के स्वामी हैं। ये ही दिन-रात के जनक हैं, ये ही वर्ष को बारह भागो मे विभाजित करते हैं, छ ऋतुओ के ये ही कारण है, ये ही उत्तर और दक्षिण अयन (सूर्य मार्ग) को अगीकार करते हैं। इन्होने ही युगभेद (सत्युग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलियुग का भेद) सम्पादित किया है, इन्हीं के द्वारा कल्पभेद (चारो युग के सहस्र क्रम को कल्प कहते हैं) किया गया है, इन्हीं के आश्रय से ब्रह्मा की सबसे बडी और अन्तिम सख्या (पूर्ण) होती है, ये ही ससार का बार-बार सृजन, भरण-पोषण तथा सहार करते हैं, वेद भी इन्हीं की बन्दना करते हैं, गायत्री इन्हीं का गान करती हैं। और ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण इन्हीं की प्रतिदिन उपासना करते है। ये (भगवान् सूर्य) श्री रामचन्द्र के कुल के मूल (आदि पूर्वज) धन्य है, ये विश्व के प्रणाम करने योग्य है—(इस प्रकार सोचकर) उदित होते हुये भगवान् सूर्य को प्रणाम करता हुआ, (एक कोई गुरुसेवा मे पटु ब्राह्मण बालक अपनी पर्णकुटी से निकला।

सस्कृत-व्याख्या—पूर्वस्या=पूर्व दिशायाम्, भगवत =ऐश्वर्यशीलस्य, मरीचि-मालिन =सहस्त्राशो (सूर्यस्य वा), एप =अयम्, अरुण =रक्तिम, प्रकाश =ज्योति, अस्तीति शेप। एप, भगवान्=सूर्य, आकाशमण्डलस्य= अतरिक्ष लोकस्य, मणि =रत्नम्, खेचर चक्रस्य=नक्षत्र समूहस्य=चक्रवर्ती सम्राट्, आखण्डलदिश =इन्द्रदिश, कुण्डलम्=कर्णाभरणम्, ब्रह्माण्ड भाण्ड-स्य=ब्रह्माण्डस्य सदनस्य, दीपक =प्रकाशक, पुण्डरीकपटलस्य=कमल् कुलस्य, प्रेयान्=अतिशयेनप्रिय कोकलोकस्य=चक्रवाकसमूहस्य, शोक-विमोक =चिन्ताहर, रोलकदम्बस्य=भ्रमरसमूहस्य, अवलम्ब =आश्रय, सर्वव्यवहारस्य=लौकिक सकलव्यवहारस्य, सूत्रधार =प्रवर्तक (अथ च) दिनस्य=दिवसस्य, इन =स्वामी (अस्तीति)। अयमेव=सूर्य एव, अहोरात्रम् =नक्त दिवम्, जनयति=करोति, अयमेव, वत्सरम्=वर्षम्, द्वादशसु, भागेपु=खण्डेपु, विभनक्ति=विभजते, अयमेव, पण्णामृतूना=वसन्तग्रीष्मा-दिपड्टतूनाम्, कारणम्=हेतु, एप एव=सूर्य एव, अङ्गीकरोति=स्वीकरोति, उत्तर दक्षिणम्, च अयनम्=दक्षिणोत्तर स्वमार्गम् एनेनैव= सूर्येणैव, युगभेदा =सत्कृत् त्रेताद्वापरादियुगभेदा, सम्पादिता =कृता,

एनमेव, कल्पभेदा =एकसहस्र महायुगात्मका कालभेदा एनमेव=सूर्यमेव, आश्रित्य=आश्रयम् कृत्वा, परमेष्ठिन॰=विधातु, परार्द्धसख्या=अन्तिमा परार्द्धनाम्ना ख्याता सख्या, (भवति इति शेष), असौ=सूर्य, एव, जगत्=ससारम्, चर्कर्ति=पुन पुन करोति, बर्भर्ति=पुन पुन भरति, जर्हर्ति=पुन पुन हरति च, वेदा, एतस्यैव=सूर्यस्यैव, वन्दिन =स्तुतिपाठका, गायत्री=जप्यमान-महामन्त्र, अमुमेव=सूर्यमेव, गायति=गान करोति, ब्रह्मनिष्ठा=वेदपारगा, ब्राह्मणा मनीषिण, अमुमेव =सूर्यमेव, उपतिष्ठन्ते=ध्यायन्ति, धन्य =महार्ह, एष =सूर्य, (य) श्रीरामचन्द्रस्य, कुलमूल =आदि-पूर्वज, एष॰=सूर्य, विश्वेषाम्=लोकानाम्, प्रणम्य =प्रणामयोग्य, इति (वि चिन्त्य) उदेष्यन्तम्=उदीयमानम्, भास्वन्तम्=सूर्यम्, प्रणमन्=प्रणाम कुर्वन् कश्चित् गुरुसेवनपटु =गुरुसेवने कुशल, विप्रबटु =ब्राह्मण बालक, निजपर्ण कुटीरात्=स्वकीयपत्रोटजात्, निश्चक्राम=निर्जगाम।

हिन्दी-व्याख्या—भगवत॰=भग ऐश्वर्यम् अस्ति अस्य, तस्य। भग+मतुप् (ष० ए० व०)। भग अर्थात् ऐश्वर्य जिसके पास हो। 'मरीचि-मालिन'=मरीचीना मालाऽस्यास्तीति, तस्य। मरीचिमाला+णिनि (ष० ए० व०)। मरीचि अर्थात् किरणो की माला वाला सूर्य। खेचरचक्रस्य=खे आकाशे चरन्तीति खेचरा। सप्तमी विभक्ति का अलुक्, √'चर्+अच्,' खेचर्—आकाश मे चरण (भ्रमण) करने वाले। खेचराणाम् चक्र, तस्य। खेचरचक्रस्य=नक्षत्र समूह का। आखण्डलदिश =आखण्डलस्य दिक्, तस्य (ष० तत्पु०)। आखण्डल=इन्द्र से सम्बन्धित, दिश =दिशा का। ब्रह्माण्ड भाण्डस्य=ब्रह्माण्डमेव भाण्डम्, तस्य। ब्रह्माण्ड रूपी घर का। प्रेयान्=अतिशयेन प्रिय, प्रिय+इयसुन्, अधिक प्रिय। पुण्डरीक पटलस्य=पुण्डरीकाणा पटलस्य, कमलो के समूह का। रोलम्बकदम्बस्य=रोलम्बानाम् कदम्ब, तस्य (ष० तत्पु०), ऐलम्ब=भ्रमर, कदम्ब=समूह। सर्वव्यवहारस्य=ऐहिक और आमुष्मिक सभी प्रकार के कार्यो का। इन =स्वामी या सूर्य, "इन सूर्ये प्रभौ च" इत्यमर। अहोरात्रम्=अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रम् (समा० द्वन्द्व, नपु०), रात्रि और दिन। कल्पभेदा =कल्पाना भेदा, कल्पो के भेद,

एकसहस्र युग की काल सीमा को कल्प कहते है। चर्कर्ति='पुन पुन करोति' के अर्थ को सूचित करने के लिये, √कृ+यङ् (लुक्), लट्, प्र० पु०, ए० व० का रूप है। बर्भर्ति=पुन पुन के अर्थ मे, √भृञ्+यङ् (लुक्)+लट् (प्र० पु०, ए० व०), पुन पुन धारण या पोषण करता है। जर्हर्ति=बार बार नष्ट करता है, √हृ+यङ् (लुक्)+लट् (प्र० पु० ए० व०) उपतिष्ठन्ते=उप+√स्था (पूजा करना)+लट् (आत्मने पद)। प्रणम्य=प्रणाम करने योग्य, प्र+√नम्+यत् भास्वन्तम्=सूर्य को, "भास्वद्विवस्वत्सप्ताश्वहरिदश्वोष्णरश्मय" इत्यमर। प्रणमन्=प्रणाम करता हुआ, प्र+√नम्+शतृ। निजपर्ण कुटीरात्=निजस्य पर्णाना कुटीर, तस्मात्, अपनी छोटी कुटी से ह्रस्वकुटी को कुटीर कहते है, कुटी+र, 'कुटी शर्मा शुण्डाभ्योर'। गुरुसेवनपटु=गुरो सेवने पटु गुरु सेवा मे दक्ष। विप्रबटु=ब्राह्मण पुत्र।

टिप्पणी (i) 'अरुण' शब्द से कथा का प्रारम्भ करके उससे मगल सूचित किया गया है—'अकारोवासुदेव'। कथा के प्रारम्भ मे सूर्य के प्रकाश रूप वस्तु निर्देश से मगलाचरण किया गया है।

(ii) 'एष भगवान्' से 'इनश्च दिनस्य' तक माला रूपक अलकार है। वैदर्भी रीति तथा प्रसाद गुण है।

(iii) अयमेव अहोरात्रम् से आगे स्वभावोक्ति अलकार है। काल के सब प्रकार के विभाजन का कारण सूर्य को माना गया है। प्रकाश होने से वही सभी व्यवहारो का प्रवर्तक है। सूर्य को जगत् का उत्पादक, पालक तथा सहारक मानकर उसमे ब्रह्मत्व का आधान किया गया है। बृहदारण्यक आदि मे गायत्री का मुख्य वाच्य ब्रह्म को बताया गया है। इसीलिये यहाँ एव पद 'अमुमेव' का निर्देश किया गया है।

(iv) उदीयमान एव भास्वान् सूर्य को प्रणाम करने योग्य कहकर लेखक ने उदीयमान एव समृद्धिमान् व्यक्ति की पूजार्हता का व्यावहारिक निर्देश किया है।

(v) 'गुरुसेवन पटु' से तत्कालीन 'गुरुशुश्रूषया विद्या' की शिक्षा पद्धति का निर्देश किया गया है।

"अहो ! चिररात्राय सुप्तोऽहम्, स्वप्नजालपरतन्त्रेणैव महान् पुण्यमय समयोऽतिवाहित , सन्ध्योपासन-समयोऽयमस्मद् गुरुचरणानाम्, तत्सपदि अवचिनोमि कुसुमानि" इति चिन्तयम् कदलीदलमेकमाकुञ्च्य, तृणशकलै सन्धाय, पुटक विधाय, पुष्पावचय कर्त्तुमारेभे ।

हिन्दी अनुवाद—'ओह ! मै बहुत देर तक सोता रहा, मैंने निद्रारूपी जाल मे फसकर अत्यन्त पुण्यमय समय बिता दिया, यह हमारे पूज्य गुरु जी के सन्ध्या-वन्दन का समय है इसलिये शीघ्र ही फूल तो तोडता हूँ' (उस विप्रबटु ने इस प्रकार सोचते हुए एक केले के पत्ते को (लेकर) तोडकर (उसे) तिनको से जोडकर पुटक (दोना) बनाकर फूल तोडना प्रारम्भ कर दिया ।

संस्कृत-व्याख्या—'अहो' इति आश्चर्यं खेदे, चिररात्राय=चिर यावत्, स्वप्नजालपरतन्त्रेण=निद्रानायायत्तेन, एव, महान् पुण्यमय•=अति पुण्यप्रद , समय =काल•, अतिवाहित =नाशित , सन्ध्योपासन समय = सन्ध्यावन्दनादि काल , अयम् अस्मद् गुरुचरणानाम्,=मदीय गुरु पादानाम्, तत्=तस्मात्, सपदि=शीघ्रम्, कुसुमानि=पुष्पाणि, अवचिनोमि=सकलयामि' इति=एवम्, चिन्तयन्=विचारयन्, एकम्, कदलीदलम्=रम्भापत्रम्, आकुञ्च्य=आछिद्य, तृणशकलै =तृणाना खण्डै , सन्धाय=समेल्य, पुटकम्=पुष्पावधार्यं पात्रम्, विधाय=सम्पाद्य, पुष्पावचय=पुष्पसग्रहम्, कर्त्तुम् आरेभे=आरभत ।

हिन्दी-व्याख्या— अहो=आश्चर्य युक्त खेद ! नित्यनैमित्तिक कर्मानुष्ठान की वेला समाप्त हो जाने से खेद-व्यक्त कर रहा है। चिररात्राय=अधिक देर तक 'चिराय चिररात्राय चिरस्याश्चिरार्थका' इत्यमर । स्वप्न-जाल-परतन्त्रेण=निद्रारूपी जाल मे फसकर, स्वप्न एव जालम् तस्य परतन्त्रेण (तत्पु०) । पुण्यमय=पुण्य+मयट्, 'ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्' (मनुस्मृति) । अतिवाहित =व्यतीत कर दिया । गुरुचरणानाम्=गुरु जी का,

पूजार्थक बहुवचन । सपदि=शीघ्र ही । अवचिनोमि=तोडता हू, अव+√चिनु+लट् । चिन्तयन् ='चिन्त+शतृ' (विचार करता हुआ) । आकुञ्च्य = तोडकर, आ+√कुञ्च+ल्यप् । तृणशकलै =तृण के टुकडो से, तृणाना शकलानि तै । सन्धाय=सयोजित करके, सम्+√धा+ल्यप् । पुटकम् दोना । आरेभे=प्रारम्भ किया, आ+√रम्भ+लिट् (तिप्) ।

टिप्पणी—(1) द्विज, ब्रह्मचारी तथा मुनियो आदि को-ब्राह्ममूहुर्त मे उठकर नित्य नैमित्तिक कर्म करना चाहिए । अत वह पुण्यमय समय होता है । अतएव वह ब्रह्मचारी देर तक सोने के कारण खेद व्यक्त कर रहा है ।

(ii) इस वर्णन मे आश्रम जीवन की झलक मिलती है ।

बटुरसौ आकृत्या सुन्दर, वर्णेन गौर, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडशवर्षदेशीय., कम्बुकण्ठ, आयतललाट, सुबाहुर्विशाललोचन-श्चाऽऽसीत् ।

हिन्दी अनुवाद—वह बटु (ब्रह्मचारी) सुन्दर आकृति वाला था, गौर वर्ण का था, जटाओ से ब्रह्मचारी प्रतीत होता था, लगभग सोलह वर्ष की अवस्था वाला था, कम्बु (शख) तुल्य कण्ठ वाला विस्तृत मस्तक वाला, सुबाहु (सुन्दर भुजाओ वाला) तथा विशाल नेत्रो वाला था ।

सस्कृत-व्याख्या-असौ=अयम्, बटु =ब्रह्मचारी, आकृत्या=आकारेण, सुन्दर =शोभन, वर्णेन गौर =गौरवर्ण, जटाभि =सटाभि, ब्रह्मचारी, वयसा=अवस्थया, षोडषवर्प देशीय =षोडवर्ष कल्प कम्बुकण्ठ =शखग्रीव, आयत लालट = आयतमस्तक, सुबाहु =सुन्दर भुज, विशाललोचन = विशाल नेत्र च, आसीत् ।

हिन्दी-व्याख्या—आकृत्या=आकृति से, 'प्रकृत्यादिभ्य उपसख्यानम्' से तृतीया विभक्ति । वर्णेन=रग से, यहाँ भी उक्त नियम से तृतीया । जटाभि = जटाओ के द्वारा, यहा 'इत्थभूत लक्षणे' से तृतीया विभक्ति, जटा से ब्रह्मचारी प्रतीत होता है । वयसा=अवस्था से । षोडशवर्षदेशीय =लगभग सोलह वर्ष की अवस्था वाला, षोडशवर्ष+देशीय (प्रत्यय) 'ईषदसमाप्तौ कल्पब्देशीयर' । कम्बुकण्ठ =शख के समान कण्ठ, कम्बुरिवकण्ठो यस्य स

(बहुव्रीहि)। आयतललाट =विस्तृत मस्तक वाला, आयत ललाट यस्य स (ब व्री)। सुबाहु =शोभनौ बाहू यस्य स । विशाललोचन =विशालेलोचने, यस्य स, बडे-बडे नेत्रो वाला।

टिप्पणी—(1) 'कम्बु कण्ठ' मे लुप्तोपमा अलकार है।
(11) ब्रह्मचारी के सुन्दर अवयवो का स्वाभाविक एव उदात्त चित्रण किया गया है। अत उदात्तालकार है।

कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वत परम-पवित्र-पानीय परस्सहस्र-पुण्डरीक-पटल-परिलसित पतत्रि-कुल कूजित पूजित पय पूरित सर आसीत्। दक्षिणतश्चैको निर्झर-झर्झर-ध्वनि-ध्वनित-दिगन्तर फल-पटलाऽऽस्वाद-चपलित-चञ्चुपतङ्गकुलाऽऽक्रमणाधिक विनत-शाख-शाखि-समूह व्याप्त सुन्दरकन्दर पर्वतखण्ड आसीत्।

हिन्दी अनुवाद —केले के पत्तो से घिरे हुए होने के कारण कुञ्ज के समान प्रतीत होने वाले उस कुटीर के चारो ओर पुष्पवाटिका थी, पूर्व मे परम पवित्र जल वाला, सहस्रो (से अधिक) श्वेत कमल-समूह से पूर्ण तथा पक्षिकुल के कूजन से युक्त जल से भरा हुआ तालाब था। दक्षिण दिशा मे झरने की झर-झर ध्वनि से मुखरित दिशाओ वाला, फलो के आस्वाद से चञ्चल चोच वाले पक्षिकुल के आक्रमण से अधिक झुकी हुई शाखाओ वाले वृक्ष-समूह से व्याप्त तथा सुन्दर कन्दराओ (गुफाओ) वाला एक पर्वत खण्ड (पहाडी) था।

संस्कृत-व्याख्या—कदलीदलकुञ्जायितस्य = रम्भादलै कुञ्जीभू-तस्य, एतत् कुटीरस्य = पर्णोटजस्य, समन्तात् = परित, पुष्पवाटिका = प्रसूनोद्यान, पूर्वत = पूर्वस्याम्, परमपवित्रपानीयम् = अतिस्वच्छजलीयम्, परस्सहस्त्र पुण्डरीक पटल परिलसितम् =सहस्त्राधिक सिताम्बुज समूहोपशो-भितम्, पतत्रिकुलकूजितपूजितम् =पक्षिकुल कलरवविराजितम् पय पूरितम् = जलपूर्णम्, सर. =जलाशय., आसीत्। दक्षिणतश्च =दक्षिण दिशि, एक, निर्झर-झर्झर ध्वनि ध्वनितदिगन्तर =निर्झरस्य=प्रवाहस्य, झर्झर इति-ध्वनिना, ध्वनित =मुखरित., दिशामन्तर यस्य स, फलाना पटलस्य= समूहस्य, आस्वादेन=भक्षणेन, चपलिता =चञ्चलिता, चञ्चव मुखभागा.

येपा ते च ते पतगा.=पक्षिण, तेषा, कुलस्य=समूहस्य, आक्रमणेन, अधिकम् =अत्यन्तम्, विनता =नम्रीभूता, शाखा येपा ते च ते शाखिन =वृक्षा, तेपा, समूहेन=पटलेन, व्याप्त =आवृत, सुन्दर कन्दर =शोभन गुह, पर्वतखण्ड =अचलाश, आसीत्।

हिन्दी व्याख्या—**कदलीदलकुञ्जायितस्य**=कदलीना दलं कुञ्जायितस्य कुञ्जमिवभूतस्य (तत्पु०), कदली के दलो से घिरे हुए होने के कारण कुञ्ज के समान प्रतीत होने वाले, 'कुञ्जमिव आचरति' इस अर्थ मे कुञ्ज से क्यड् हुआ हैं— 'कुञ्ज+क्यड्+क्त' 'कत्तु क्यड् सलोपश्च' से 'क्त' प्रत्यय। **एतत्-कुटीरस्य**=इस कुटीर के। **समन्तात्**=चारो ओर। **पूर्वत** = पूर्व की ओर, पूर्व+तस्, पुवद्भाव। **परमपवित्रपानीयम्**=परमपवित्र-ञ्चासौ पानीयम्, परमपवित्र जल वाला। **परस्सहस्त्रपुण्डरीकपटलपरिल-सितम्**=परस्सहस्राणाम् पुण्डरीकाणा पटलेन परित लसितम् (तत्पु०) सहस्रो श्वेतकमल समूह से सुशोभित। **पतत्रिकुलकूजितपूजितम्**=पतत्रि-णाम् कुलस्य कूजितेन पूजितम् (तत्पु०), पक्षियो के कुल के कुजन से युक्त। **पय पूरितम्**=पयसापूरितम्, जल से भरा हुआ। इसके पूर्व के चारो प्रथमान्त पद 'सर' (तालाब) के विशेषण हैं। **दक्षिणत**=दक्षिण की ओर, 'दक्षिण +तस्'। **निर्झर झर्झर ध्वनि ध्वनित दिगन्तर**=निर्झरस्य झर्झर ध्वनिना ध्वनितम् दिशाम् अन्तरम् यस्य स (तत्पु० गर्भ बहुव्री०) 'झर्झर' शब्द जल प्रवाह से जनित ध्वनि का अनुकरण है, झरने की झर्झर ध्वनि से मुखरित दिशाओ वाला। **"फलपटलास्वादचपलितचञ्चुपतग"** इत्यादि=फलाना पटलस्य (समूह के) आस्वादेन चपलिता चञ्चव येषा ते च ते पतगा, तेषा कुलस्य आक्रमणेन अधिक विनता शाखा येपा ते च ते शाखिन, तेषा समूहेन व्याप्त (बहु० गर्भ तत्पु०), फलो के समूह के भक्षण से चचल चचु वाले पक्षिकुल के आक्रमण से अधिक झुकी हुई शाखाओ वाले वृक्षो के समूह से व्याप्त। पतग=पक्षी,'पतगौ पक्षि सूर्यौ च' इत्यमर। चपलित=चपल+ इतच्। विनत=वि+√नम्+क्त। शाखिन ='शाखा+इनि' वृक्ष, 'वृक्षो महीरूह शाखी विटपी पादपस्तरु' (अमरकोष)। **सुन्दर कन्दर**=सुन्दर गुफाओ वाला। **पर्वतखण्ड आसीत्**=पहाडी थी।

टिप्पणी—(1) कुटीर को कदलीदल के कुञ्ज के समान माना गया है—लुप्तोपमालंकार है। अनुप्रास की छटा प्राय प्रत्येक पंक्ति मे आकर्षक है।

(ii) शब्द योजना के अनुसार यहाँ गौडी रीति है।

(iii) प्राकृतिक सुरम्य सुषमा का सुन्दर चित्रण किया गया है।

यावदेष ब्रह्मचारी बटुरलिपुञ्जमुद्धूय कुसुमकोरकानवचिनोति, तावत् तस्यैव सतीर्थ्योऽपरस्तत्समानवया कस्तूरिका-रेणु-रुषित इव श्याम, चन्दनचर्चित-भाल, कर्पूरागुरु-क्षोदच्छुरित-वक्षो-बाहु-दण्ड, सुगन्ध-पटलैरुन्निद्रयन्निव निद्रा-मन्थराणि कोरकनिकुरम्बकान्तराल सुप्तानि मिलिन्द-वृन्दानि झटिति समुपसृत्य निवारयन् गौरबटुमेवमवादीत्—

हिन्दी अनुवाद —जैसे ही वह ब्रह्मचारी बटु भ्रमर समूह को उडाकर फूल की कलियो को तोडने लगा, उसी समय उसी का सहपाठी, समान अवस्था वाला एक दूसरा (ब्रह्मचारी), कस्तूरिका के चूर्ण से सना हुआ (छुरित) सा श्याम वर्ण वाला, चन्दन से लिप्त ललाट वाला तथा कपूर और अगुरु के चूर्ण से व्याप्त (शोभित) वक्षस्थल एव भुजाओ वाला (वह) निद्रा से अलसाये हुए तथा कोरक कदम्बो (कलियो) के अन्तराल मे (अन्दर) सोए हुए भ्रमर समूहो को सुगन्ध की अधिकता से जगाता हुआ सा एकाएक (सहसा) समीप मे आकर उस गौर बटु को (फूल तोडने से) रोकता हुआ इस प्रकार बोला :—

संस्कृत-व्याख्या —यावद्=यदैव, एष., ब्रह्मचारी बटु=पूर्वोक्त गौर-बटु, अलिपुञ्जम्=भ्रमर कुलम्, उद्धूय=निवार्य, कुसुमकोरकान्=प्रसून कलिका अवचिनोति=सकलयति, तावद्=तदा एव, तस्यैव=बटो, एव, सतीर्थ्य =सहाध्यायी, अपर =द्वितीय, समानवया =समावस्थ., कस्तूरिका रेणुरुपित =मृगनाभिरजश्छुरित, इव=उत्प्रेक्षा वाचक, श्याम.=श्याम-

वर्ण, चन्दन चर्चित भाल =गन्धसारलिप्तललाट, कर्पूरस्य=घनसारस्य, अगुरो =सुगन्धद्रव्यविशेषस्य, च क्षोदेन=चूर्णेन, छुरिनम्=व्याप्तम्, वक्षोबाहुदण्डम् =उरोभागभुजद्वयम् यस्य स, सुगन्ध पटलै =सौरभ समूहै निद्राम-थराणि=निद्रालसितानि, कोरकाणा=कलिकाना, निकुरम्बकाणा =वृन्दाना, अन्तराले=मध्ये, सुप्तानि=शयानानि, मिलिन्दवृन्दानि= भ्रमरकुलानि, उन्निद्रयन्निव=जागरयन्निव, झटिति=सपद्येव, समुपसृत्य =समीपे आगत्य, निवारयन्=वर्जयन्, गौरवटुम्=ब्राह्मणबालकम्, अवादीत्=जगाद।

हिन्दी-व्याख्या — **अलिपुञ्जम्**=भ्रमर समूह को। **उद्धूय**=उडाकर, उद्+धूञ्+ल्यप्। **कुसुमकोरकान्**=फूलो की कलियो को, "कलिका कोरक पुमान्' (अमरकोष) रात्रि होने के कारण सुविकसित न होने से ही कलियो को तोड रहा था। **सतीर्थ्यं**=सहपाठी, समाने तीर्थे गुरौ वसति=सतीर्थ्य, 'समान+तीर्थ+यत्' समान को 'स' आदेश 'तीर्थे ये' सूत्र से तथा 'समान-तीर्थेवासी' से 'यत्' प्रत्यय, 'सतीर्थ्यास्त्वेक गुरव' (अ० को०)। **अपर** = दूसरा। **तत्समानवया** =उसकी समान अवस्था वाला, समान वय यस्य स (ब० व्री०)। **कस्तूरिकारेणुरुषित इव**=कस्तूरी की रेणु (बुकनी) से सने हुए के समान, कस्तूरिकाया. रेणुभि रुषित (तत्पु०)। **श्याम** =श्याम वर्ण वाला। **चन्दनचर्चितभाल** =चन्दन के लेप से शोभित ललाट वाला, चन्दनेन चर्चितम् भालम् यस्य स (ब० व्री) **'कर्पूरागुरु दण्ड'**=कपूर और अगर के चूर्ण (बुकनी) से अनुलिप्त वक्षस्थल एव भुजाओ वाला, कर्पूरस्य अगुरोश्च क्षोदेन छुरितम् वक्षो बाहु दण्डम् यस्य स (ब० व्री०)। **सुगन्धपटलै** =सुगन्ध समूह से। **उन्निद्रयन्-इव**=जगाता हुआ सा, 'उद्+√निद्+णिच्+शतृ'। **निद्रामन्थराणि**=निद्रा से मन्थर (अलसाये हुई) निद्रया मन्थराणि (तृ० तत्पु०)। **कोरकनिकुरम्बकान्तराल सुप्तानि** =कलियो के समूह के अन्तराल (गोद) मे सोये हुए, कोरकाणा निकुरम्बकाणाम् अन्तराले सुप्तानि (तत्पु०)। "निकुरम्ब कदम्बकम्" (अ० को०)। **मिलिन्दवृन्दानि** भौरो का समूह, मिलिन्दाना वृन्दानि (तत्पु०) **झटिति**=झटपट। **समुपसृत्य**=पास मे आकर

'सम्+उप+√सृज्+ल्यप्'। निवारयन्=रोकता हुआ, नि+√वृ+णिच्+शतृ'। गौरबटुम्=गौर बालक को। अवादीत्=बोला '√वद्+लुङ्'।

टिप्पणी —(१) 'कस्तूरिका' श्यामः' मे उत्प्रेक्षा अलकार है। इव उत्प्रेक्षा वाचक है।

(२) 'उन्निद्रयन्निव' मे भी 'इव' उत्प्रेक्षा वाचक होने से उत्प्रेक्षा अलकार है।

(३) श्याम बटु के शरीर मे लिप्त चन्दन, कपूर, अगर तथा कस्तूरी के लेप की सुगन्ध को सूघ कर अलसाये हुए भ्रमर उडकर उसके शरीर पर जाने की उत्सुकता से चचल हो गये। अतएव उन्निद्रित होने की सम्भावना अत्यन्त स्वाभाविक है।

"अल भो अलम्! मयैव पूर्वमवचितानि कुसुमानि, त्व तु चिर रात्रावजागरीरिति क्षिप्र नोत्थापित, गुरुचरणा अत्र तडागतटे सन्ध्यामुपासते, सस्थापिता मया निखिला सामग्री तेषा समीपे। या च सप्तवर्षकल्पाम्, यावनत्रासेन नि शब्द रुदतीम् परमसुन्दरीम्, कलित-मानवदेहामिव सरस्वती सान्त्वयन्, मरन्दमधुरा अप पाययन्, कन्दखण्डानि भोजयन्, त्व त्रियामाया यामत्रयमनैषी, सेयमधुना स्वपिति, उद्बुद्धय च पुनस्तथैव रोदिष्यति, तत्परिमार्गणीयान्येतस्याः पितरौ गृह च—"

इति सश्रुत्य उष्ण नि श्वस्य यावत् सोऽपि किञ्चिद्वक्तुमियेष तावदकस्मात् पर्वतशिखरे निपतात उभयोर्दृष्टि।

हिन्दी अनुवाद —"बस, भाई बस! पहले ही मैंने फूल तोड लिये हैं, तुम देर तक रात्रि मे जगते रहे, इसलिये शीघ्र ही तुम्हे नहीं जगाया, (इस समय) गुरु जी यहाँ तालाब के किनारे सन्ध्योपासन कर रहे हैं, मैंने सभी (पूजन) सामग्री उनके पास रख दी है। और जिस, लगभग सात वर्ष वाली, यवनो (मुसलमानो) के भय से नि शब्द रोती हुई, परम सुन्दरी तथा मानव-शरीर धारण करने वाली सरस्वती के समान कन्या को सान्त्वना प्रदान करते हुए, पुष्प रस से मीठे जल को पिलाते हुए तथा कन्द-खण्डों को खिलाते हुए,

रात्रि के तीन पहर व्यतीत कर दिये थे, वह (कन्या) इस समय सो रही है, उठकर पुन वैसे ही रोयेगी, अत उसके माता-पिता और घर का पता लगाना चाहिए।" यह सुनकर, गर्म सास लेकर जब तक उस (गौर बटु) ने भी कुछ कहना चाहा, तभी अचानक उन दोनों की दृष्टि पर्वत शिखर पर पडी।

सस्कृत व्याख्या —अल भो अलम्=अलमिति पर्याप्ते तथा भो इति सम्बोधने, मया=श्यामबटुना, एव, पूर्वम्=आदौ, कुसुमानि=पुष्पाणि, अवचितानि=सकलितानि, त्व तु=गौरबटुस्तु, चिर=चिरकालम् यावत्, रात्रौ=निशाया, अजागरी =न अशयिष्ठा, इति=अस्माद्धेतो, क्षिप्र=शीघ्रम् न, उत्थासि = जाग्रन्, गुरुचरणा = गुरुवर्य, अत्र = इह, तडागतटे = सरस्तीरे, सन्ध्याम्=प्राप्तस्पूजनम्, उपासते=सम्पादयन्ति, सस्थापिता=निक्षिप्ता मया=श्यामबटुना, निखिला=समग्रा, सामग्री=पूजनोपकरणम्, तेषाम्=गुरूणाम्, समीपे—पार्श्वे। या=या कन्याम्, च, सप्तवर्षकल्पाम्=सप्तवर्ष-देशीयाम्, यावनत्रासेन= यवनभयेन, नि शब्दम् = शब्दमकुर्वाणा, रुदतीम् = विलपन्तीम्, परमसुन्दरीम् = अनिन्द्य-सुन्दरीम्, कलित मानव देहाम्=कलित, धारित = मानवस्य, मनुष्यस्य, देह, शरीरम् यया सा, ताम्, इव सरस्वतीम्=वीणापाणिम्, सान्त्वयन्=आश्वासयन्, मरन्दमधुरा=पुष्परसेन मिष्ठा, अप =जलानि, पाययन्=पातुं प्रददन्, कन्दखण्डानि=ऋषीणाम् खाद्यविशेषाणा भागान्, भोजयन्=खादयन्, त्व=गौरबटु, त्रियामाया =निशाया, यामत्रयम्=प्रहरत्रयम्, अनैषी =अयापयथी, मेयम्=सा बालिका, अधुना=इदानीम्, स्वपिति=शेते, उद्बुद्ध्य=उन्निद्र्य, पुनस्तथैव=भूयोपूर्ववत्, रोदिष्यति=विलपिष्यति, तत्=तस्मात्, तस्या =बालिकाया, पितरौ=जननी जनकौ, गृह च=सद्म च, परिमार्गणीयानि=अन्वेष्टव्यानि-इति=एवम सश्रुत्य=निशम्य, उष्ण नि श्वस्य=अशीतमुच्छ्वस्य, यावत् - यदैव, सोऽपि=गौरबटुरपि, किञ्चिद्, वक्तुम्=कथयितुम्, इयेष=इच्छति स्म, तावद्=तदैव, अकस्मात् =सहसा, पर्वत शिखरे=पर्वत शृगे, उभयो =गौरबटुश्यामबट्वो, दृष्टि, निपपात=अपतत्।

हिन्दी-व्याख्या—अल भो अलम् = अलम् पर्याप्त हो गया है, बस करो, भो=सम्बोधन सूचक पद हे। अवचितानि=तोड लिये गये है, अव+√चि +क्त (न पु० प्र० व०)। चिरम्=देर तक, अव्यय पद। रात्री-अजागरी· =रात्रि मे-जागते रहे, √'जागृ+लुड् (म० पु०, ए०व०)। क्षिप्रम्=शीघ्र। न उत्थापित.=नही उठाये गये, 'उत्+√स्था+पुक्+णिच्+क्त'। गुरुचरणा=गुरु जी (आदर के लिये व० व०)। तडागतटे=तालाव के किनारे, तडागस्य तटे (तत्पु०)। सन्ध्याम्=नित्यकृत्य पूजन। उपासते= उपासना कर रहे है, उप+√आस्+लट् (२), आत्मने पद। सस्थापिता= रख दिया है, सम्+स्था+णिच्+पुक्+क्त (स्त्री लि०)। निखिला=) स.पूर्ण। सामग्री=पूजा की सामग्री। सप्तवर्षकल्पाम्=लगभग सात वर्ष अवस्था वाली, 'सप्तवर्ष+कल्पप्' यहा 'ईषद् असमाप्ति' (कुछ कमी) के अर्थ मे 'ईषदसमाप्तौ कल्पब्देश्यदेशीयर' से 'कल्पप्' प्रत्यय हुआ है। यावनत्रासेन— यवन के भय के कारण, 'यवनेभ्य आगत' अथवा 'यवनानाम् अयम्' इस अर्थ मे यवन से अण् होकर 'यावन' बनता है-'यावनश्चासौत्रास तेन' यावनत्रासेन, सस्कृत साहित्य मे यवन और जवन दोनो शब्द मिलते है। विवेचन के आधार श्री पञ्चानन तर्क रत्न भट्टाचार्य ने जवन शब्द को ही उचित माना है। निःशब्दम्=बिना शब्द किये हुए, भय के कारण रोने मे शब्द नही कर रही थी, 'निर्गत शब्द यथा, तथा नि शब्दम्'। रुदतीम्=रोती हुई को, √रुद शतृ+डीप् (स्त्री द्वि० ए०व०)। कलितमानवदेहाम्=कलित मानव देह या सा, ताम् (वहु०) मानव शरीर को धारण करने वाली। सान्त्वयन्= ढास बधाते हुए। मरन्द मधुरा=पुष्प रस के मिश्रण से मधुर, 'मरन्द' क प्रयोग पण्डितराज ने किया है-"अपि दलदरविन्द! स्यन्द मानम् मरन्दम् तव किमपि लिहन्तो मञ्जु गुञ्जन्तु भृङ्गा" 'मरम् द्यति इति मरन्द' अर्थात भ्रमर के मरण को नष्ट वाला 'मरन्द' होता है। मरन्द भ्रमर का जीवन होता है। अप =जल। पाययन्=पिलाता हुआ, √'पा+णिच्+शतृ' कन्दखण्डानि=कन्द के खण्डो को कन्द ऋषियो का एक विशेष प्रका का भोजन है। पृथ्वी के भीतर होने वाली जड के रूप मे होता 'कन्दमस्त्री, मूलमस्त्रम्' (वैजयन्ती)। भोजयन्=खिलाते हुए, √'भुज+

णिच् + शतृ' । त्रियामाया =रात्रि के, यह योगरूढ शब्द है, 'रात्रि स्त्रियामा क्षणदा क्षपेत्यमर ।' यामत्रयम्=तीन पहर (तीन घण्टे का एक पहर होता है।) अनैषी =बिता दिया था, √नी+लुङ् (म० पु०, ए० व०)। स्वपिति=सो रही है। उदबुद्धय=जगकर, 'उद्+√बुध+ल्यप्,'। रोदिष्यति=रोयेगी । परिमार्गणीयानि=खोजना चाहिए, परि+√मृज्+अनीयर (ब व)। एतस्या =इसके। पितरौ=माता पिता को, माता च पिता च (एकशेष द्वन्द)। सश्रुत्य=सुनकर, सम्+श्रू+ल्यप् । नि श्वस्य =श्वास लेकर, नि +, श्वस्+ल्यप्। वक्तुम्=कहने के लिये, √'वच्+तुमुन, इयेष=इच्छा की,√इष्+लिट्(तिप्) । पर्वतशिखरे=पर्वत की चोटी पर, पर्वतस्य शिखरे (तत्पु०) । दृष्टि=दृष्टि, 'दृश+क्तिनि'। निपपात=पडी 'नि+पत् +लिट् (तिप्)'।

टिप्पणी—(1) 'कलित मानव देहामिव' सरस्वतीम्' यहाँ मानव के रूप मे अवतीर्ण हुई सरस्वती के समान मे 'इव' उत्प्रेक्षा अलकार है।

(11) यावन त्रास से त्रस्य सप्तवर्ष देशीय के वर्णन से यवनो की क्रूरता और अत्याचार का निर्देश किया गया है। और उस कन्या की दुखद स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है।

तस्मिन् पर्वते आसीदेको महान्कन्दर । तस्मिन्नेव महामुनिरेक समाधौ तिष्ठति स्म। कदा स समाधिमङ्गीकृतवानिति कोऽपि न वेत्ति। ग्रामणी-ग्रामीण-ग्रामा समागत्य मध्ये मध्ये त पूजयन्ति प्रणमन्ति स्तुवन्ति च। त केचित् कपिल इति, अपरे लोमश इति, इतरे जैगीषव्य इति, अन्ये च मार्कण्डेय इति, विश्वसन्ति स्म। स एवायमधुना शिखरादवतरन् ब्रह्मचारि बटुभ्यामदर्शि।

हिन्दी-अनुवाद—उस पर्वत पर एक बहुत बडी गुफा थी उसी मे एक महामुनि समाधि मे स्थित थे। इन्होने कब समाधि लगाई, यह कोई नहीं जानता गाव के प्रधान तथा गावो के लोग बीच-बीच (कभी-कभी) वहाँ आकर उनका पूजन, प्रणाम और स्तवन किया करते थे। उनको कोई कपिल, कोई लोमश,

कोई जैगीषव्य और कोई मार्कंडेय समझता था। वही इस समय (पर्वत) शिखर से उतरते हुए (उन) दो ब्रह्मचारी बालकों के द्वारा देखे गये।

संस्कृत-व्याख्या—तस्मिन्=पूर्वोक्ते, पर्वते=अचलशिखरे, आसीत्, एक' महान्कन्दर=विशालगुहा, तस्मिन् एव, एक महामुनि=एक. महर्षि, समाधौ=चित्तवृतिनिरोधात्मके योगे, तिष्ठति स्म=स्थितः आसीत्, कदा=अज्ञात काले, स मुनि समाधिम्=योगम् अगीकृतवान्=धारयामास, इति, कोऽपि=कश्चिदपि, न वेत्ति=न जानाति, ग्रामणीग्रामीणग्रामा'=ग्रामाधिपग्रामवासिना समूहा, समागत्य,=समेत्य मध्ये मध्ये=अन्तरेऽन्तरे, तम्=योगिराजम् पूजयन्ति=पूजाकुर्वन्ति, प्रणमन्ति=नमन्ति, स्तुवन्ति=स्तुति कुर्वन्ति, त केचित्, कपिल इति अपरेलोमश इति, इतरे जैगीषव्य इति, अन्ये च मार्कण्डेय इति=इत्यादीनि विविधनामानि योगिराजस्य, विश्वसन्ति स्म=विश्वास कुर्वन्ति स्म। स एव=योगिराज एव, अयम्=एष अधुना इदानीम्, शिखरात्=पर्वत शृ खलाया, अवतरन्=अवरोहन्, ब्रह्मचारिवटुभ्याम्=आश्रमवासिशिष्याभ्याम्, आदर्शि=दृष्ट।

हिन्दी-व्याख्या—महान् कन्दर=पर्वत की बडी गुफा। समाधौ=चित्त की एकाग्रता की स्थति मे तिष्ठति स्म=बैठे थे। 'स्म' के योग से धातु का भूतकालिक अर्थ हो जाता है। अङ्गीकृतवान्=अङ्गीकार किया था। वेत्ति=जानता है। ग्रामणीग्रामीण ग्रामा=गाव के प्रधान तथा गाव के निवासियो का समूह, ग्रामण्यश्च ग्रामीणाश्च तेषा ग्रामा। समागत्य=आकर 'सम्+आ+गम्+ल्यप्'। पूजन्ति=पूजा करते हैं। प्रणमन्ति=प्रणाम करते हैं, 'प्र+नम्+लट् (झि)'। स्तुवन्ति=स्तुति करते है, 'स्तुञ्+लट् (झि)।' कपिल, लोमश, जैगीषव्य तथा मार्कण्डेय आदि पदो से 'इति' निपातन से अभिहित होने के कारण द्वितीया विभक्ति नही हुई है। विश्वसन्ति स्म=विश्वास करते थे, लट् लकार के 'स्म' लगा देने से भूतकाल की क्रिया हो जाती है। अवतरन्=उतरते हुये, अव+√तृ+शतृ। आदर्शि=देखे गये, दृश्+लुङ् (त) आत्मनेपद, (भावकर्म का रूप)

टिप्पणी—(1) 'समाधि' एक यौगिक साधना है जिसमे चित्तवृत्तियो के निरोध के लिए ध्यान लगाया जाता है।

(ii) 'ग्रामणी·· ग्रामा.' मे अनुप्रास अलकार है। एक ही मुनि का अनेक रूपो मे उल्लेख करने से उल्लेखालङ्कार है।

(iii) शान्त रस का वर्णन किया गया है।

"अहो ! प्रबुद्धोमुनि. ! प्रबुद्धोमुनि ! इत एवागच्छति, इत एवागच्छति, सत्कार्योऽयम, सत्कार्योऽयम्" इति तौ सम्भ्रान्तौ बभूवतु. ।

अथ समापित सन्ध्यावन्दनादिक्रिये समायाते गुरौ, तदाज्ञया नित्य-नियम-सम्पादनाय प्रयाते गौरवटौ, छात्रगण-सहकारेण प्रस्तुतासु च स्वागत सामग्रीषु 'इत आगम्यताम् सनाथ्यतामेष आश्रम' इति सप्रणाममभि-गम्य वदत्सु निखिलेषु, योगिराज आगत्य तन्निर्दिष्ट काष्ठपीठ भास्वानि-वोदयगिरिमारुरोह उपाविशच्च ।

हिन्दी अनुवाद—'अहो ! मुनि जग गये ! मुनि जग गये ! इधर ही आ रहे हैं, इधर ही आ रहे हैं, ये सत्कार्य हैं, ये सत्कार्य है' इस प्रकार (कहते हुए) वे दोनों बटु सम्भ्रान्त (भाव व्याकुल) हो गये।

इसके बाद सन्ध्यावन्दनादि क्रिया समाप्त करके गुरु के आ जाने पर, उनकी आज्ञा से नित्यनियम सम्पादित करने के लिए गौरबटु के चले जाने पर, छात्रगण की सहायता से स्वागत सामग्री के प्रस्तुत हो जाने पर तथा प्रणाम पूर्वक सभी लोगो के 'इधर आइये, इस आश्रम को सनाथ कीजिये' इस प्रकार कहने पर (वे पर्वत से उतरने वाले) योगिराज आकर मुनि के द्वारा निर्दिष्ट काष्ठासन पर उदयाचल पर सूर्य के समान, चढकर बैठ गये।

संस्कृत-व्याख्या—"अहो=इति साश्चर्यखेदे, प्रबुद्ध =जागृत , मुनि= ऋषि , इत एव=आश्रमाभिमुखमेव आगच्छति - आयाति, सत्कार्योऽयम् = सत्कारयोग्योऽय महर्षि ' इति=एवम, सम्भ्रान्तौ = क्षुभितौ बभूवतु = जातौ ।

अथ=तदनन्तरम्, समापित सन्ध्या समापिता=सम्पादिता, सन्ध्या-वन्दनादय = सन्ध्यावन्दनदेवगुरुपितृपूजनमन्त्रजपादय , क्रिया कर्माणि= येन स —तस्मिन्, समायाते = आगते, गुरौ = मुनौ, तदाज्ञया = मुनेराज्ञया, नित्य नियम सम्पादनाय=स्नानपूजन सन्ध्यावन्दनादि कर्म-कर्तुम्, गौरवटौ = गौराङ्गबालके, छात्रगण सहकारेण=शिष्यवृन्द साहाय्येन,

प्रस्तुतासु=उपस्थितासु, च, स्वागतसामग्रीषु=उपचारद्रव्येषु, "इत=अत्र, आगम्यताम्=आयातु, सनाथ्यताम=समलक्रियताम्, एष=अयम्, आश्रम=तपस्विना स्थानम्" इति=एवम्, सप्रणामम्=प्रणामपूर्वकम् अभिगम्य=आगत्य, वदत्सु=कथयत्सु, निखिलेषु=उपस्थितेपु सर्वेषु, योगिराज=महामुनि, आगत्य=एत्य, तन्निर्दिष्ट काष्ठपीठम्=मुनिसकेतितकाष्ठासन, भास्वान् इव=सूर्य इव, उदयगिरिम्=उदयाचलम्, आरुरोह=अधिशिश्रिये, उपाविशत् च=आसिवान् च ।

हिन्दी-व्याख्या—अहो=आश्चर्य और प्रसन्नता का सूचक है। प्रबुद्ध=जग गये, 'प्र+√बुध+क्त'। इत एव=इधर को ही। सत्कार्य=सत्कार के योग्य। 'प्रबुद्ध' सत्कार्योऽयम्' मे वाक्य की द्विरावृत्ति प्रसन्नता के कारण हुई है। सम्भ्रान्तौ=हर्ष से व्याकुल हुये, कन्दरा मे बहुत दिन तक समाधिस्थ रहने के बाद मुनि बाहर आये है, अत दोनो बटु हर्षोद्रेक से व्याकुल हो गये।

अथ=तदनन्तर। समापितसन्ध्यावन्दनादिक्रिये=सन्ध्यावन्दनादि क्रिया को समाप्त कर चुके हुए, समापिता सध्यावन्दनादिक्रिया येन स तस्मिन् (ब० व्री०)। समायाते=आने पर, 'सम्+आ+√पा+क्त' (सप्त० ए० व०।) गुरौ=मुनि के। तदाज्ञया=मुनि की आज्ञा से, तस्य आज्ञया (तत्पु०)। नित्यनियम सम्पादनाय=स्नान सन्ध्यापूजन आदि नित्य कर्म करने के लिये। प्रयाते=चले जाने पर, प्र+√या+क्त (स० ए० व०)। गौरबटौ=गौरबटु के, 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी विभक्ति। छात्रगणसहकारेण=छात्रो के सहयोग से, छात्राणागण, तस्य सहकार तेन (तत्पु०)। प्रस्तुतासु=प्रस्तुत हो जाने पर। स्वागत-सामग्रीषु=स्वागत सामग्री के (उक्त नियम' से सप्तमी)। आगम्यताम्=आइये (भावकर्म, आत्मनेपद)। सनाथ्यताम्=अलकृत कीजिये, (पूर्वोक्त क्रिया)। इति=इस प्रकार। सप्रणामम्=प्रणाम पूर्वक। अभिगम्य=आकर, 'अभि+√गम्+ल्यप्'। वदत्सु=कहने पर, √'वद+शतृ (+स० ब० व०)'। निखिलेषु=सभी लोगो के (उक्त नियम से सप्तमी)। योगिराज=महामुनि, योग अस्ति अस्मिन् इति योगी, तेषा राजा, इति योगिराज 'राजाह सखिभ्यष्टच्' से 'टच्'। तन्निर्दिष्ट काष्ठपीठम्=मुनि के सकेतित चौकी पर, तेन निर्दिष्टम् काष्ठपीठम् (तत्पु०)। भास्वान् इव=सूर्य के समान। उदयगिरिम्=उदयाचल पर, जिस पर प्रात काल सूर्य

उदित होते हैं। आरुरोह=चढ़ गये, आ+√रुह्+लिट् (तिप्)। उपाविशत उप+आ+√विश+लङ्।

टिप्पणी—(i) बहुत काल की समाधि के बाद योगिराज के उठने पर आश्रमवासियों में प्रसन्नता की लहर छा गई।

(ii) चौकी पर बैठने वाले मुनि की उपमा उदयगिरि उदित होने वाले सूर्य से दी गई है, अत उपमा अलकार है।

तस्मिन् पूज्यमाने, "योगिराडुत्थित इति आयात, इति च" आकर्ण्य कर्णपरम्परया बहवो जना॰ परित स्थिता । सुघटित शरीरम्, सान्द्रा जटाम्, विशालान्यगानि, अङ्गारप्रतिमे नयने, मधुरा गम्भीराञ्च वाच वर्णयन्तश्चकिता इव सञ्जाता ।

हिन्दी अनुवाद—उनके (योगिराज के) पूजन के समय ही "योगिराज (समाधि से) उठ गये है और यहा आये हुए हैं" (यह समाचार) कर्णपरम्परा से (एक दूसरे से) सुनकर चारों ओर बहुत से लोग स्थित (जमा) हो गये। (उनके) सुघटित शरीर, घनी जटा, विशाल अगो, अगार के सदृश (तेजस्वी) नेत्र तथा मधुर और गम्भीर वाणी का वर्णन करते हुए (लोग) चकित से हो गये।

सस्कृत-व्याख्या—तस्मिन्=योगिराजि, पूज्यमाने=अर्च्यमाणे, 'योगिराड=महामुनि, उत्थित=अवबुद्ध, इति=एवम्, आयात इति च=अत्रागत इति च" आकर्ण्य=श्रुत्वा, कर्णपरम्परया=श्रुतिपरम्परया, बहवो जना=अनेके नरा, परित=समन्तात्, स्थिता=समुस्थिता । सुघटितम्=यथावस्थित शोभनावयवसस्थानम्, सान्द्रा=घनाम्, जटाम्=जटाम्, विशालान्यङ्गानि=नातिस्वह्लास्वावयवान्, अङ्गारप्रतिमेनेत्रे=स्फुलिङ्गसदृशे नयने, मधुरा=मृद्वीम् गम्भीराम्=ओजस्वनीम्, च, वाणी=वचनम्, वर्णयन्त=प्रशसयन्त, चकिता=आश्चर्यान्विता, इव, सञ्जाता=बभूवु ।

हिन्दी-व्याख्या—पूज्यमाने=पूजा के समय ही, 'पूज्+य+शानच्'। योगिराड्=महामुनि। उत्थित=उठ गये हैं, 'उत्+स्था+क्त'। आयात=आये हुये है। आकर्ण्य=सुनकर। कर्णपरम्परया=क्रमश एक दूसरे से। बहव=बहुत अधिक। परित=चारो ओर, स्थिता=एकत्र हो गये। सुघटितम्=सुगठित, यथास्थितिशोभन अवयवो वाला। सान्द्राम्=घनी। जटा=बालो को। विशालान्यगानि—विशाल अगो को। अगारप्रतिमे=अगार के समान। नयने=नेत्रो को। वर्णयन्त=प्रशसा करते हुए। चकिता इव—आश्चर्यचकित से। सञ्जाता॰=हो गये।

टिप्पणी—(i) अगार के प्रतिम, (समान) नेत्र थे, यहाँ प्रतिम शब्द उपमावाची है, अत उपमा अलकार है ।

(ii) 'चकिता इव' चकित से हो गये । यहा इव शब्द उत्प्रेक्षावाची है। अत उत्प्रेक्षा अलकार है।

अथ योगिराज सम्पूज्य यावदीहित किमपि आलपितुम्, तावत् कुटीरात् अश्रूयत तस्या एव बालिकाया सकरुण-रोदनम् ।

तत "किमिति ? कुत इति ? केयमिति ? कथमिति ?' पृच्छा परवशे योगिराजे ब्रह्मचारिगुरूणा बालिका सान्त्वयितु श्यामबटुमादिश्य कथितम्—

हिन्दी अनुवाद—तदनन्तर योगिराज की सम्यक् पूजा करके जैसे ही (ब्रह्मचारी के गुरू ने) कुछ कहने की इच्छा की वैसे ही कुटी से उस बालिका का करुण क्रन्दन सुनाई पडा। तब योगिराज के "यह क्या है ? कहा से (आई है ?) यह कौन है ? यह कैसे (आई) ?" यह पूछने पर ब्रह्मचारी के गुरू ने श्यामबटु को बालिका को शान्त कराने के लिये आदेश देकर कहना आरम्भ किया—

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तत, योगिराजम् = महामुनिम, सम्पूज्य = पूजा कृत्वा, यावत् = यदैव किमपि = किञ्चित्, आलपितुम = कथयितुम्, ईहीतम् = चेष्टितम्, तावद = तदैव, कुटीरात् = उटजात्, तस्या एव बालिकाया = पूर्वोक्ताया कन्याया, सकरुणरोदनम् = करुणक्रन्दनम्, अश्रूयत = आकर्णयत । तत = तदनन्तरम् किमिति = किमिदम्, कुत इति = कुत्रत्य इति, केयमिति = कास्ति एषा, कथमिति = कथमायातेति, पृच्छा परवशे = प्रश्नपरतन्त्रे, योगिराजे महामुनौ, ब्रह्मचारिगुरुणा = आश्रमवासि मुनिना, बालिका = कन्यकाम्, सान्त्वयितुम् = शान्त कर्तुं, श्यामबटुम् = श्यामब्रह्मचारिणम् आदिश्य = आदेश दत्वा, कथितम् = उक्तम् ।

हिन्दी-व्याख्या—सम्पूज्य = पूजा करके, सम् + √पूज् + ल्यप् । ईहितम् = इच्छा किया, 'ईह + इ + क्त' । किमपि = कुछ । आलपितुम् = कहने के लिये, 'आ + √लप् + तुम्' । कुटीरात् = कुटी से । अश्रूयत = सुनाई पडा । सकरुणरोदनम् = करुणाया सहितम् यद् रोदनम्, तत, करुणक्रन्दन । तत = उसके बाद । पृच्छापरवशे = पूछने की इच्छा से परवश होने पर, पृच्छया परवश, तस्मिन् । योगिराजे = योगिराज के । ब्रह्मचारिगुरुणा = ब्रह्मचारी के गुरु के द्वारा, ब्रह्मचारिण' गुरू, तेज (तत्पु०) । सान्त्वयितु = शान्त करने के

लिये। आदिश्य=आदेश देकर, आ+√'दिश+ल्यप्'। कथितम्=कहा, √'कथ्+इ+क्त'।

भगवन्! श्रूयताम् यदि कुतूहलम्। ह्य सम्पादित-सायन्तनकृत्ये, अत्रैव कुशास्तरणमधितिष्ठिते मयि, परित समासीनेषु छात्रवर्गेषु, धीरसमीर स्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी-कामिनी चन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदी कपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्ता शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतग कुलेषु, कैरव विकाश हर्षप्रकाश मुखरेषु चञ्चरीकेषु, अस्पष्टाक्षरम्, कम्पमान नि श्वासम्, श्लथत्कण्ठम्, घर्घरितस्वनम्, चीत्कारमात्रम्, दीनतामयम्, अत्यवधानश्रव्यत्वादनुमितदविष्ठतम् क्रन्दनमश्रौषम्।

हिन्दी अनुवाद—भगवन्! यदि (आपको इसका वृत्तान्त जानने की) उत्कठा है (तो) सुनिये। कल सायकालीन कृत्य सम्पादित करके मै यहीं कुशासन पर बैठा हुआ था, चारों ओर छात्रगण बैठे हुये थे, मन्द-मन्द वायु के स्पर्श से लताएँ धीरे-धीरे हिल रही थीं, निशा नायिका के चन्दन बिन्दु के समान चन्द्रमा (सोभित हो रहा था), चन्द्रिका (चादनी) के ब्याज से आकाश अमृत की धारा सी बरसा रहा था, मानो, हम लोगों की नीतिवार्ता को सुनने के लिये पक्षिकुलो ने मौन धारण कर लिये थे, कुमुदों के खिलने से हर्षातिरेक से भ्रमर गुञ्जार कर रहे थे, (उसी समय) अस्पष्ट अक्षरो वाला, प्रकम्पित नि श्वास वाला, रुधे हुए कठ वाला, घर्घर ध्वनि वाला, चीत्कार तथा दीनता से पूर्ण, बहुत ध्यान देने से सुनाई पड़ने के कारण जिसके बहुत दूर होने का अनुमान था, (ऐसा) करुण क्रन्दन मैंने सुना।

सस्कृत-व्याख्या—भगवन्! महर्षे!, यदि=चेत, कुतूहलम=कौतुकम्, (तर्हि) श्रूयताम् = आकर्ण्यताम्। ह्य=गतदिने, सम्पादितसायन्तकृत्ये= = कृत सायकालिककार्ये, अत्रैव = इहैव, कुशास्तरणम् = दर्भासनम्, अधितिष्ठिते=स्थिते, मयि=मुनौ, परित =समन्तात्, समासीनेषु=तिष्ठत्सु, छात्रवर्गेषु=शिष्यगणेषु, धीरसमीर स्पर्शेन = मन्दगतिवायुस्पर्शेन, मन्दम्-मन्दम्=शनैः शनै, व्रततिषु=लतासु, आन्दोल्यमानासु=सञ्चाल्यमानासु, समुदिते=उदय प्राप्ते, यामिनी = निशीथिनी, एव कामिनी = कान्ता, तस्याचन्दनबिन्दौ=ललाट तिलके, इव, इन्दौ=चन्द्रमसि, कौमुदी कपटेन=

चन्द्रिकाछलेन, सुधारमिव = अमृतस्यन्द इव, वर्षति = वृष्टि कुर्वति, गगने = आकाशे, अस्मन्नीतिवार्ता = अस्मन्नीतिमन्त्रणाम् शुश्रूषुप. = श्रोतुमिच्छु, इव, मौनम् = तूष्णीम्, आकलयत्सु = धारयत्सु, पतगकुलेषु = पक्षिसमूहेषु, कैरवविकासहर्षप्रकाशमुखरेषु = कैरवाणा = कुमुदाना, विकासेन = प्रफुल्लेन य. हर्षप्रकाश = प्रमोदाभिव्यक्ति, तेन मुखरेषु शब्दायमानेषु चञ्चरीकेषु = भ्रमरेषु, अस्पष्टाक्षरम् = अव्यक्तवर्णम्, कम्पमान नि श्वासम् = सोत्कम्पोच्छ्वासम्, श्लथत्कण्ठम् = स्तम्भितकण्ठम्, घर्घरितस्वनम् = घर्घरिति ध्वनि युक्तम्, चीत्कारमात्रम् = चीत्कारमयम्, दीनतामयम् = कातरतामयम्, अत्यवधानेन विशेषध्यानेन = श्रव्यत्वात् श्रोतव्यत्वात्, अनुमितदविष्ठत = विज्ञातातिदूरतम्, क्रन्दनम् = रोदनम, अश्रौषम् = अकर्णयम् ।

हिन्दी-व्याख्या—श्रूयताम् = सुने । कुतूहलम् = कौतुक अर्थात् समाचार जानने की उत्कण्ठा । ह्य = कल । सम्पादितसायन्तनकृत्ये = सायकालिक क्रियाओ को समाप्त कर चुकने पर, सम्पादितम् सायन्तनम् कृत्यम् येन स, तस्मिन् (ब० व्री०), सायन्तनम् = सायम् अव्यय पर 'घञ्' प्रत्यय करके 'साय' बनता है। तत 'साये भव' यहाँ भव (होने के) अर्थ मे 'सायम् चिरम् प्राह्णे प्रगेऽव्ययेभ्यष्ट्युट्युलौतुट् च' से टयु (यु) और तुट (त्) प्रत्यय होकर-'साय त् यु' तथा यु को 'अन्' और मान्तता के निपातन से 'सायन्तन' रूप बनता है-सायकाल मे होने वाला । कुशास्तरणम् = कुश का आसन, कुशानाम् आस्तरणम् इति, 'कुशास्तरणम्' मे अधिशीङ् स्थासा कर्म से अधि स्था' के योग मे द्वितीया विभक्ति हुई है । समासीनेषु = बैठे हुए । छात्रेषु छात्रो के, 'यस्य भावेन' से सप्तमी । धीरसमीरस्पर्शेन = मन्द-पवन स्पर्श से, धीरश्चासौ समीर, तस्य स्पर्श तेन (तत्पु०) । मन्द-मन्दमान्दोल्यमानासु = धीरे-धीरे हिलने वाली । व्रततिषु = लताओ के, 'वल्ली तु व्रततिर्लता' (अमरकोष) समुदिते = उदित होने, 'सम् + उद् + इ + क्त' । इन्दौ = चन्द्रमा के । यामिनी कामिनी चन्दनबिन्दौ इव = रात्रि रूपी नायिका के चन्दन बिन्दु के समान, यामिनी एव कामिनी, तस्या चन्दन बिन्दु, तस्मिन् (तत्पु०) । कौमुदी कपटेन = चन्द्रमा के बहाने, कौमुदया कपटेन । गगने = आकाश के । सुधाधाराम् = अमृत की धारा, सुधाया धाराम् (तत्पु०) । वर्षति इव = मानो वर्षा कर रहा हो । अस्मन्नीतिवार्ता = हम लोगो की नीति सम्बन्धी चर्चा को, अस्माकम् नीते वार्ताम् । शुश्रूषुषु = सुनने की इच्छा वाले, √श्रू + सन् +

उ' (धातु को द्वित्व सप्तमी ब० व०)। इव=मानो। पतग कुलेषु=पक्षियो के कुलो के, पतङ्गाना कुलानि तेपु (तत्पु०)। मौनम्=शान्ति। आकलयत्सु=धारण किये हुए, आ+कल+शतृ (सप्तमी)। कैरवविकाशहर्षप्रकाशमुखरेषु =कुमुदो के खिलने की प्रसन्नता की अभिव्यक्ति के कारण मुखरित होने पर, कैरवाणा विकाशेन हर्षस्य प्रकाश, तेन मुखरिता तेषु (तत्पु०)। चञ्चरीकेषु=भ्रमरो के, 'इन्दिन्दिरोमधुकरश्चञ्चरीकोमधुव्रत।' अस्पष्टाक्षरम्=अव्यक्त अक्षरो वाला, अस्पष्टानि अक्षरानियस्मिंस्तत्, (ब० व्री०)। कम्पमाननि. श्वासम्=कम्पमान निश्वास यस्य तत्, कपती हुई श्वास वाला कम्प+शानच्। श्लथत्कण्ठम्=श्लथनकण्ठ यस्मिन् तत्, रुधे हुए गले वाला। घर्घरितस्वनम्=घर्घरिता=घर्घरितास्वना, यस्मिस्तत्, 'घरघर' शब्द से युक्त। चीत्कार मात्रम्=चिल्लाना मात्र था जिसमे। दीनतामयम्=दीनता से पूर्ण, 'दीनता+मयट्'। अत्यवधानश्रव्यत्वात्=विशेष ध्यान से सुनाई पडने के कारण, अत्यव ध्याने श्रव्य, तस्य भाव, तस्मात् श्रव्यत्वात='श्रु+तव्य+त्व' (पचमी हेतु के अर्थ मे)। अनुमित दविष्ठतम्=बहुत दूर होने का अनुमान् किया जाने वाला, अनुमिता दविष्ठता यस्य तत्, (ब० व्री०), दविष्ठता=अतिशयेन दूर दविष्ठम्, तस्य भाव दविष्ठता, 'दूर+इष्ठन्+ता'। क्रन्दनम्=विलाप को। अश्रौषम्=सुना, श्रु+लुङ् (मिप्)।

टिप्पणी—(१) 'समुदिते पतगकुलेषु' मे आये हुए 'इव' उत्प्रेक्षावाचक है, चन्द्रमा मे चन्दन विन्दु की आकाश से अमृतधार वरसने तथा पक्षियो मे नीतिवार्ता के सुनने की सम्भावना की गई है, अत उत्प्रेक्षा अलकार है।

(२) 'यामिनी कामिनी' मे यहाँ यामिनी का आरोप किया गया है, अत. रूपक अलकार है।

(३) पूर्व की पक्तियो मे प्रसाद गुण तथा शान्त रस है। अन्त मे करूण रस है।

(४) 'नीतिवार्ता शुश्रूषुपु' से यह व्यक्त होना है कि आश्रमो मे नीति सम्वन्धी मन्त्रणाये हुआ करती थी और अल्पकाल मे ऋषिमुनि ब्रह्मचारी सभी सुरक्षात्मक व्यवस्था के प्रति सचेष्ट हो जाते थे।

(५) 'अस्पष्टाक्षरम् • दविष्ठतम्' ये सात विशेषण क्रन्दन के अत्यन्त स्वाभाविक विशेषण है।

तत्क्षणमेव च "कुत इदम् ? किमिदमिति दृश्यताम् ज्ञायताम्" इत्यादिश्य छात्रेषु विसृष्टेषु, क्षणानन्तर छात्रेणैकेन भयभीता सवेगमत्युष्ण दीर्घं नि श्वसती, मृगीव व्याघ्राऽऽघ्राता, अश्रुप्रवाहे स्नाता, सवेपथुः कन्यकैका अङ्के निधाय समानीता। चिरान्वेपणेनापि च तस्या॰ सहचरी सहचरो वा न प्राप्त । ताञ्च चन्द्रकलयेव निर्मिताम् नवनीतेनेव रचिताम्, मृणालगौरीम् कुन्दकोरकाग्रदतीम् सक्षोभ रुदतीमवलोक्यास्म भिरपि न पारित प्रिरोद्धु नयन वाष्पाणि ।

हिन्दी अनुवाद—उसी समय, "यह (करुण क्रन्दन) कहा से ? क्या (कारण) है ? यह देखकर पता लगाओ" ऐसा आदेश देकर मेरे (द्वारा) छात्रो के भेजने पर, क्षण भर बाद ही एक छात्र, भयभीत, वेग से उष्ण और दीर्घ (लम्बी) सास लेती हुई, व्याघ्र (बाघ) से सू घी हुई मृगी के मकान, आसुओ की धारा से स्नान की हुई तथा कापती हुई एक कन्या को गोद मे रखकर लाया। बहुत देर तक ढूढने के बाद भी उसका साथी या कोई सखी नहीं प्राप्त हुई। चन्द्रमा की कलाओ से रची गई के समान नवनीन (मक्खन) से बनाई गई के समान, कमल नाल के समान गोरी तथा कुन्द कलिका के अग्रभाग के समान दाँतो वाली उस कन्या को व्याकुलता से युक्त, रोते देखकर हम लोग भी अपने आंसू रोक नहीं सके ।

सस्कृत-व्याख्या—तत्क्षणमेव = सपद्येव, च कुत इदम् = कुत्रत्य इदम् रोदनम, किमिदम् किं कारम्, इति - एतत् सर्वम्, दृश्यताम् = अवलोकय, ज्ञायताम् = जानीहि, इति = एवम्, आदिश्य = आज्ञाप्य, छात्रेषु = शिष्येपु, विसृष्टेपु = प्रेषितेषु, क्षणानन्तरम = किंचित्कालानन्तरम्, छात्रेणैकेन = शिष्यैकेन, भयभीता = भयक्रान्ता, सवेगम् = तीव्रम्, अत्युष्णम् = सतप्तम्, दीर्घम् = विलम्बायितम्, च, नि श्वसती = श्वास गृहणन्ती, मृगी = हरिणी, इव, शार्दूलाक्रान्ता, अश्रु प्रवाहे —नेत्रवाष्पै, स्नाता = ससिक्ता, सवेपथु = सकम्पा, कन्यकैका = एका बालिका, अके = क्रोडे, निधाय = निक्षिप्य, समानीना, चिरान्वेषणेनापि = चिर यावत् अनुसन्धानेनापि, च तस्या = बालिकाया, सहचरी = सखी, सहचरोवा = सखा वा, न प्राप्त = न दृष्ट । ताम = बालिकाम्, च चन्द्रकलया = इन्दु प्रभया, इव, निर्मिताम् = सम्पादिनाम्, नवनीनेनेव = हैयङ्गवीनेनेव, रचिनाम् = विनिर्मिताम्, मृणालगौरीम् = कमल-दण्डसिताम् कुन्दकोरकाग्रदतीम् = सुदतीम्, सक्षोभम =ससाध्वसम् रुदतीम् = विलम्पन्तीम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, अस्माभि = आश्रमवासिभि, अपि, न, पारितम् = शक्तम्, निरोद्धु = अवरोद्धु, नेत्र वाष्पाणि = अश्रूणि ।

हिन्दी व्याख्या—तत्क्षणमेव = उसी समय । दृश्यताम् = देखिये । जायताम् = जानिये । इत्यादिश्य = इस प्रकार आदेश देकर । विसृष्टेषु = भेजने पर । छात्रेषु = छात्रो के, 'यस्यभावेन से सप्तमी । भीता = डरी हुई, √'भी + क्त + टाप्' । सवेगम् = जल्दी-जल्दी, वेगेन सहितम्, सवेगम् । निश्वसती = सास लेती हुई, 'निर् + √श्वस् + शतृ (स्त्री)' मृगीव = हरिणी के समान । व्याघ्राघ्राता = वाघ से सूँघी हुई, व्याघ्रेण आघ्राता (तत्पु०) । अश्रुप्रवाहै = आँसुओ के प्रवाह से, अश्रूणाम् प्रवाहै (तत्पु०)। स्नाता = नहाई हुई, '√स्ना + क्ता + टाप्' । सवेपथु = काँपती हुई, 'स + √वेपृ (कम्पने) + अथुच्' । निधाय = रखकर, नि + धा√ + ल्यप् । समानीता = लाई गई, 'सम् + आ √नी + क्ता + टाप्' । चिरान्वेषणेनापि = चिरकाल तक ढूंढने से भी । सहचरी = सखी, सह चरतीति—सह + √चर + अच् + (स्त्रिया डीष्) अर्थात् साथ चलने वाली । सहचर = साथी । न प्राप्त = नही प्राप्त हुआ, प्र + √अप् + क्त । ताम् = उस कन्या को । चन्द्रकलया = चन्द्रमा की कला से, चन्द्रस्य कला, तया (तत्पु०)। निर्मिताम् = बनी हुई । नवनीतेन = मक्खन से । मृणालगौरीम् कमलनाल के समान गोरी, मृणालस्य इव गौरीम् । कुन्दकोरकाग्रदतीम् = कुन्द (पुष्प) कली के अग्रभाग के समान दातो वाली, कुन्दस्य कोरकाणाम् अग्राणि इव दन्ता यस्या सा, ताम् (ब० व्री०), "अग्रान्तशुद्धशुभ्रवृषवराहेभ्यश्च" सूत्र से 'दन्त' 'दतृ' आदेश तथा डीप् (उगितत्वात्) होता है-दन्त→दतृ (ऋ इत्)→ दत् + डीप् = दती । सक्षोभ = व्याकुलतापूर्ण । रुदती = रोती हुई √ रुद् + शतृ + डीप् (स्त्रियाम्) । अवलोक्य = देखकर, 'अव + √लोक् + ल्यप्' । अस्माभि = हम लोगो के द्वारा । नयन बाष्पाणि = आँसुओ को, नयनस्य वाष्पाणि (तत्पु०)। निरोद्धु = रोकने के लिये, 'नि + √रुध् + तुमुन्' नपारितम् = समर्थ नही हुये ।

टिप्पणी—(१) 'चन्द्र कलयेव निर्मिताम्, नवनीते व रचिताम्' मे चन्द्रकला अथवा मक्खन से बनी हुई होने की सम्भावना की गई है । अत उत्प्रेक्षा अलकार है ।

(२) 'मृणाल के समान गोरी तथा कुन्द कलिका के अग्रभाग के समान दाँतो वाली मे लुप्तोमालकार है ।

अथ कन्यके। मा भैषी, पुत्रि ! त्वाम् मातु. समीपे प्रापयिष्यामः, दुहितः। खेद मा वह, भगवति। भुङ्क्ष्व किञ्चित्, पिब पय., एते तव भ्रातर., यत् कथयिष्यसि, तदेव करिष्याम. मा स्म रोदनैः प्राणान् सशय-पदवीमारोपय, मास्मकोमलमिदं शरीर शोकज्वालावलीढ कार्षी." इति सहस्त्रधा बोधनेन कथमपि सम्बुद्धा किञ्चिद् दुग्ध पीतवती। ततश्च मया क्रोशे उपवेश्य, "बालिके ! कथय क्व ते पितरौ ? कथमेतस्मिन्नाश्रमप्रान्ते समायाता ? किं ते कष्टम् ? कथमारोदी ? किं वाञ्छसि ? किं कुर्म ?" इति पृष्टा मुग्धतया अपरिकलित वाक्पाटवा, भयेन विशिथिलवचन-विन्यासा, लज्जया अतिमन्दस्वरा, शोकेन रुद्धकण्ठा, चकितचकितेव कथ कथमपि अबोधयदस्मान् यदेषा अस्मिन्नेदीयस्येग्रामे वसतः कस्यापि ब्राह्मणस्य तनयाऽस्ति।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद "पुत्रि ! डरो मत, बच्ची ! तुम्हे माता-पिता के पास पहुचा देंगे, बेटी दु ख मत करो, देवि ! कुछ खाओ, दूध पिओ, ये सब तुम्हारे भाई हैं, जो कहोगी वही करेंगे, रोने से अपने प्राणो को सन्देह मे मत डालो, शोक ज्वाला से अपने कोमल शरीर को मत झुलसाओ" इस तरह हजारो प्रकार से समझाने से किसी प्रकार शान्त हुई और थोडा सा दूध पिया। उसके बाद उसे मैंने अपनी गोद मे बैठाकर "बालिके कहो, तुम्हारे माता-पिता कहाँ रहते हैं ? कैसे इस आश्रम मे (प्रान्त मे) तुम आई ? तुम्हे क्या कष्ट है ? तुम क्यो रोती थी ? क्या चाहती हो ? (हम सब) क्या करें ?" इस प्रकार पूछने पर भोलेपन के कारण भाषण की चतुरता से अनभिज्ञ, भय के कारण अस्त-व्यस्त शब्दो मे बोलने वाली, लज्जा से धीमे स्वरो वाली, शोक से रुंधे हुए गले वाली, भयभीत हुई सी किसी प्रकार हमे बताया कि वह इसी अति समीप के ही गाँव मे रहने वाले किसी ब्राह्मण की पुत्री है।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तत, "कन्यके = पुत्रि, मा भैषी = भय मा वह, पुत्रि = कन्यके, त्वाम् = बालिकाम्, मातु = जनन्या, समीपे, अन्तिके, प्राप-

यिष्याम = प्रेपयिष्याम, दुहित = पुत्रि, खेद = दुखम, मा वह = मा कुरु, भगवति = देवि, भुङ्क्ष्व = अशान, किञ्चित् = ईषत्, पिब पय = दुग्धम् पिब, एते = अश्रत्या, तव भ्रातर, = बन्धव, यत् कथयिष्यसि = यत् वदिष्यसि, तदेव, करिष्याम, रोदनै = विलपनै, प्राणान् = असून्, सशयपदवीम् = सन्देहाव-स्थाम्, आरोपय = प्राप्नुहि, कोमलम् = सुकुमारम्, इदम् शरीरम् = एतत्तनुम्, शोकज्वालावलीढम् = शोकसतप्तम्, मास्मकार्षी = मा कुरु," इति = एवम्, सहस्रधा = अनेकधा, बोधनेन = सान्त्वना प्रदानेन, कथमपि, सम्बुद्धा = बोधिता, किञ्चिद् = ईपद्, दुग्धम् = क्षीरम्, पीतवती = अपिबत्, ततश्च = तदनन्तरम्, मया = मुनिना, क्रोडे = अङ्के, उपवेश्य = पस्थाप्य, बालिके = पुत्रि । कथय = वद, क्व = कुत्र, ते = तव, पितरौ = जनकौ, कथम्, एतस्मिन्नाश्रमप्रान्ते = इहतपो-वने, समायाता = आगता, किं ते = किम् तव, कष्टम् = दुखम्, कथमारोदी रोदनमकरो, कि वाञ्छसि = किमिच्छसि, किं कुर्म = किं कुर्याम, इति = एवम्, पृष्टा = पृष्टे सति, मुग्धतया = सरलतया, अपरिकलितवाक्पाटवा = अविज्ञात भाषणचातुर्यं, भयेन = भीत्या, विशिथिलवचनविन्यासा = अस्तव्यस्तभाषणा, लज्जया = ह्रिया, अति मन्दस्वरा = अनुच्चगिरा, शोकेन = चिन्तया, रुद्धकण्ठा = कलुषित कण्ठा, चकितचकितेन = अतिभीतेव, कथकथमपि = येनकेनापि प्रकारेण, अवोचयत = अज्ञापयत्, अस्मान् = आश्रमवासिन, यत् एषा = बालिका, अस्मिन् = एतस्मिन्, नेदीयसि, अतिसमीपे, एव, ग्रामे = पुरे, निवसत, कस्यापि = कस्य-चित्, ब्राह्मणास्य = विप्रस्य, तनय = पुत्री, अस्ति ।

हिन्दी-व्याख्या-मा भैषी = मत डरो । प्रापयिष्याम = भेज दूँगा, 'प्र + क्ष्व + √अप् + णिच् + लृट् (मिप्)" । दुहित = पुत्रि । मा वह = मत करो, यहाँ 'मा' निषेधा-र्थक है, 'माङ्' का 'मा' नही है, अत लोट् लकार का पयोग हुआ है । भुङ्क्ष्व = खाओ, √'भुज् + लोट्'—'भुज्' धातु भक्षण के अर्थ मे आत्मनेपद तथा अन्य अर्थ मे परस्मैपद होता है । संशयपदवीम् = संशय पदवी को ।आरोप्य = प्राप्त करो, 'मा' के योग के कारण लङ् लकार हुआ है । शोकज्वालावलीढम् = शोकाग्नि से व्याप्त, शोक एव ज्वाला तया व्याप्तम (तत्पु०), अवलीढम = व्याप्त । कार्षी = करो, मास्म के योग मे 'लुङ्' लकार । बोधनेन = समझाने से । सम्बुद्धा = आश्वस्त हुई । पीतवती = पी, 'पा + क्तवतु + ङीप्' (स्त्री०) । क्रोडे = गोद

मे। उपवेश्य=बैठाकर। अरोदि=रोई। पृष्टा=पूछी गई। मुग्धतया=बालस्वभाव के कारण। अपरिकलितवाक्पाटवा=भाषण चातुरी से रहित, 'अपरिकलितम् वाक्पाटवम् यया सा। विशिथिलवचनविन्यासा=लडखडाते हुए शब्दो मे बोलने वाली=विशिथिल वचनविन्यास यस्या सा (ब० व्री०)। अतिमन्दस्वरा=अत्यन्त धीमे स्वरो वाली। रुद्धकण्ठा=रुँधे हुए गले वाली, 'रुध्+क्त'=रुद्ध (रुँधा हुआ)। चकितचकिता=अत्यन्त चकित हुई। नेदयसि अतिनिकट के ही (गांव का विशेषण)। अतिशये ग्न्तिकमिति नेदीयान्, 'अन्तिक→नेद+इयसुन् 'अन्तिकबाढयोर्नेदसाधौ' से 'अन्तिक' के 'नद' आदेश तथा इयसुन् प्रत्यय हुआ है। वसत=निवास करने वाले (ब्राह्मण का विशेषण। तनया=पुत्री।

टिप्पणी—(१) शोकज्वालावलीढम्'—शोकरुप ज्वाला से व्याप्त। यहाँ रूपक अलकार है।

(२) भगाकुरा बालिका का सुन्दर नि्ाण किया गया है।

एना च सुन्दरीमाकलय्य कोऽपि यवनतनयो नदीतटान्मातुर्हस्तादाच्छिद्य क्रन्दन्ती नीत्वाऽपरासार। तत किञ्चिदध्वानमतिक्रम्य यावदसिधेनुका सन्दर्श्य बिभीषकयाऽस्या क्रन्दनकोलाहल शमयितुमिमेष, तावदकस्मात्कोऽपि काल-कम्बल इव भल्लूको वनान्तादुपजगाम। दृष्ट्वैव यवनतनयोऽसो तत्रैव त्यक्त्वा कन्यकामिमा शाल्मलितरुमेकमारुरोह। विप्रतनया चेय पलाशपलाशिश्रेण्या प्रविश्य घुणाक्षरन्यायेन इत एव समायाता यावद् भयेन पुनारोदितुमारब्धवती, तावदस्मच्छात्रेणैवाऽनीतेति।'

हिन्दी अनुवाद—इसे सुन्दरी को देखकर एक कोई मुसलमान का लडका नदी के किनारे से माता के हाथ से (इसे) छीन कर रोती हुई लेकर भागा। तब कुछ दूर जाकर, जब (उसने) छुरा दिखाकर भय से इसके क्रन्दन कोलाहल (रोने के शब्द) को शान्त करना चाहा, तभी अकस्मात् काल-कम्बल के समान एक रीछ जगल के किनारे से आ पहुचा। उसे देखते ही वह मुसलमान बालक उस (कन्या) को वहीं छोडकर एक शाल्मली (सेमर) के पेड पर चढ गया। यह ब्राह्मण पुत्री पलाशवृक्षों की श्रेणी (झुरमुट) में प्रवेश करके घुणाक्षर

न्याय से इसी ओर आई (और) जब भय के कारण पुन रोना प्रारम्भ किया, मेरे छात्र के द्वारा (यहाँ) लाई गई।

सस्कृत-व्याख्या—एनां = इमाम् कन्यकाम्, सुन्दरी सौन्दर्यशीला, आकलय्य = निश्चित्य, कोऽपि = कश्चिदपि, यवनतनय = यवनपुत्र नदीतटात् = सरित्तीरात्, मातु = जनन्या, हस्तात् = करात्, आच्छिद्य = अपहृत्य क्रन्दन्तीम् = रुदतीम्, नीत्वा = उपगृह्य, अपससार = पलायितवान्। तत = तदनन्तरम्, कञ्चित् = ईषद्, अध्वानम् = मार्गम्, अतिक्रम्य = गत्वा, यावत् = यदैव, असिधेनुकाम = छुरिकाम्, सन्दर्श्य = दर्शयित्वा, बिभीषकया = भयदर्शनेन, अस्या = बालिकाया, क्रन्दनकोलाहलम् = रुदनशब्दम्, शमयितुम् = शान्त कर्तुम्, इयेष = इच्छाञ्चकार, तावत्, अकस्मात् = सहसैव, कोऽपि, कालकम्बल = यमकम्बल, इव, भल्लूक = रीच्छ, वनान्तात् = अरण्यप्रान्तात्, उपजगाम = समीपमाजगाम। दृष्ट्वैव = अवलोक्यैव, असौ = अयम्, यवनतनय = यवनपुत्र, इमाम्, कन्यकाम् = बालिकाम्, तत्रैव = तस्मिन्नेव स्थाने, त्यक्त्वा = परित्यज्य, एकम्, शाल्मलीतरुम् = शाल्मलीवृक्षम्, आरुरोह = आरोहितवान्। विप्रतनया = ब्राह्मणपुत्री, च इयम्, पलाशपलाशिश्रेण्या = पलाशतरुपक्तौ, प्रविश्य = प्रवेश-कृत्वा घुणाक्षरन्यायेन = सयोगवशेन, इतएव = आश्रमाभिमुखमेव, समायाता = आगता, यावत्, भयेन = त्रासेन, पुन = भूय रोदितुम् = क्रन्दितुम्, आरब्धवती = आरेभे, तावत् एव, अस्मच्छात्रेण = मुनिशिष्येन, एव, आनीता = समानीता।

हिन्दी-व्याख्या—आकलय्य = जानकर, आ + √कल + ल्यप्। यवनतनय = मुसलमान का पुत्र। नदीतटात् = नदी के तट से, नद्या तटम्, तस्मात् (तत्पु०)। आच्छिद्य = छीनकर, आ + √छिद् + ल्यप्। क्रन्दन्तीम् = रोती हुई (बालिका को), क्रन्द √ + शतृ (द्वि० एकव०)। नीत्वा = लेकर नी + क्त्वा। अपससार = भागा, अप + √सृ + लिट् (तिप)। तत उसके बाद। अध्वानम् = रास्ता। अतिक्रम्य = जाकर, अति + √क्रम् + ल्यप। असिधेनुकाम् = छुरी को, "छुरि का चासिधेनुका" (अमरकोष)। सन्दर्श्य = दिखाकर, 'सम् + √दृश् + णि + ल्यप्'। बिभीषकया = भय से, '√भी + सन् + इ + क (स्त्रियाम्)। क्रन्दनकोलाहलम् = रोने के शब्द को, क्रन्दनस्य कोलाहलम्। शमयितुम् = शान्त करने के लिये, '√शम् + णि + तुमुन्'। इयेष = इच्छा की, "√इष्

(इच्छाया) + लिट् (तिपु)" कालकम्बल इव = काले कम्बल के समान अथवा यमराज के कम्बल के समान, काल = यमराज अथवा कृष्णवर्ण, कालश्चासौ कम्बल, काल कम्बल (कर्मधारय) अथवा कालस्य (यमस्य) कम्बल, काल-कम्बल (तत्पु०)। मल्लूक = भालू या रीछ। वनान्तात् = जगल के किनारे से, वनस्य अन्त, तस्मात्। उपजगाम = आया, 'उप + √गम् + लिट्'। त्यक्त्वा = छोडकर, '√त्यज् + क्त्वा' शाल्मलीतरुम् = सेमर के वृक्ष पर। आरुरोह = चढ गया, आ + √रुह + लिट् (तिप्)। विप्रतनया = ब्राह्मण की लडकी, विप्रस्य तनया। पलाशपलाशिश्रेण्याम् = पलाश (छिडल) वृक्षो के बीच मे, पलाशाश्च ते पलाशिन (वृक्षा) तेषा श्रेणी, तस्याम् (तत्पु०), पलाश = किंशुक, पलाशी = वृक्ष, पलाशा पत्राणि सन्ति यस्मिन् स, 'पलाश (पत्रे) + इनि'। प्रविश्य = घुसकर, 'प्र + √विश् + ल्यप्'। घुणाक्षरन्यायेन = सयोगवश, जिस प्रकार घुन (घुण सस्कृत मे), एक प्रकार का काष्ठ भेदन करने वाला कीडा, जब लकडी का भेदन करता है तो कभी-कभी उसकी पक्तियाँ अक्षर (क-ख) के रूप मे बन जाती है, उसी प्रकार से बिना सोचे हुए काम के अकस्मात् हो जाने को घुणाक्षर-न्यायकहते है। समायाता = आई, सम् + आ + √या + क्त (टाप्)। पुनारोदितुम् = पुन रोने के लिये, 'पुन के विसर्ग का सन्धिनियम 'रोरि' से लोप होकर 'न' को से 'ढ्रलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽण' से दीर्घ हो गया है। रोदितुम् = √'रुद् + इ + तुमुन्'। आरब्धवती = प्रारम्भ किया, आ + रभ् + √क्तवतु + ङीप् (स्त्रियाम्)। अस्मच्छात्रेण = मेरे छात्र द्वारा। आनीता = लाई गई, आ + √नी + क्त (टाप्)।

टिप्पणी—"पलाशपलाशिश्रेण्याम्" मे यमक अलकार है।

तदाकर्ण्य कोप ज्वालाज्वलित इव योगी प्रवोच—"विक्रमराज्येऽपि कथमेष पातकमयो दुराचारणामुपद्रव ?" तत स उवाच—

महात्मन्! क्वाधुना विक्रमराज्यम्? वीरविक्रमस्य तु भारतभुव विरहय्य गतस्य वर्षाणां सप्तदश-शतकानि व्यतीतानि। क्वाधुना मन्दिरे-मन्दिरे जय-जय ध्वनि ? क्व सम्प्रति तीर्थे-तीर्थे घण्टानाद ? क्वापि मठे-मठे वेदघोषा ? अद्य हि वेदा विच्छिद्य वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्म-शास्त्राण्युद्धूय धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यन्ते, "क्वचिन्मन्दिराणि भिन्द्यन्ते

क्वचित्तुलसी वनानि छिन्धन्ते, क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद्धनानि-लुण्ठ्यन्ते, क्वचिदार्तनादा, क्वचिदरुधिरधारा, क्वचिद्ग्निदाह, गृह-निपात" इत्येव श्रूयतेऽवलोक्यते च परित ।

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर क्रोधाग्नि की ज्वाला से प्रज्वलित होते हुए से योगिराज बोले—"विक्रमराज्य मे भी इस प्रकार दुराचारियो का पापमय उपद्रव कैसे ?" तब वे (ब्रह्मचारी के गुरु) बोले—

महात्मन् ! अब विक्रम का राज्य कहाँ है ? वीर विक्रम को तो भारत-भूमि छोडकर गये हुए सत्रह सौ वर्ष बीत गये । इस समय मन्दिरो मे जय-जय की ध्वनि कहाँ ? तीर्थो मे इस समय घण्टा का नाद कहाँ ? मठो मे आज वेदध्वनि कहाँ ? आज तो वेद फाडकर वीथियो (मार्गो) मे बिखेरे जा रहे हैं, धर्मशास्त्रो को उछालकर आग मे झोका जाता है, पुराणो को पीसकर पानी मे फेंका जाता है, भाष्यो नष्ट करके भाडो मे झोके जाते हैं, कहीं पर मन्दिर तोडे जाते हैं, कहीं तुलसी के जगल काटे जाते हैं, कहीं स्त्रियो का अपहरण किया जाता है, कही रुधिर की धारा, कहीं अग्निदाह है तो कहीं घर गिराये जाते हैं" चारो ओर यही सुनाई देता है और यही दिखाई देता है ।

सस्कृत-व्याख्या—महात्मन् = महानुभाव ! क्वाधुना = क्वेदानीम्, विक्रम-राज्यम् = वीरविक्रमादित्यस्य राज्यम्, वीरविक्रमस्य = एतन्नामकस्य राज्ञ, तु, भारतभुवम् = एतद्देशम्, विरहय्य = परित्यज्य, गतस्य, यातस्य वर्षाणा = सवत्सराणाम्, सप्तदशशतकानि = सप्तदशशतसस्यापरिमितानि, व्यतीतानि = जातानि, क्वाधुना = क्वेदानीम्, मन्दिरे-मन्दिरे = प्रतिमन्दिर, जय जय ध्वनि = जयजय-कार, क्व सम्प्रति = इदानीम्, तीर्थे-तीर्थे = प्रतितीर्थे, घण्टानाद = घण्टाध्वनि, क्व, अद्यापि = इदानीमपि, मठे-मठे = प्रतिमठम्, वेद-घोष = वेद-पाठ, अद्य हि = इदानीन्तु, वेदा = निगमा, विच्छिद्य = विपाट्य, वीथीषु = पथिषु, विक्षिप्यन्ते = विकीर्यन्ते, धर्मशास्त्राणि = धर्मग्रन्थान्, उद्धूय = उत्तोल्य, धूम-ध्वजेषु = अग्निषु, ध्मायन्ते = ज्वाल्यन्ते, पुराणानि = श्रीमद्भागवतादीनि पुराणानि, पिष्ट्वा = चूर्णीकृत्य, पानीयेषु = जलेषु, पात्यन्ते = निक्षिप्यन्ते, भाष्याणि = मन्त्रव्याख्यानानि महाभाष्यादीनि, भ्र शयित्वा = चूर्णयित्वा, भ्राष्ट्रेषु = भर्जनेषु, भर्ज्यन्ते = प्रज्वाल्यन्ते, क्वचिद्, मन्दिराणि = देवालयान्, भिद्यन्ते =

विनश्यन्ते, क्वचिद्, तुलसीवनानि = तुलसीवृक्षा छिद्यन्ते = कर्त्यन्ते, क्वचिद्, दारा = भार्या, अपह्रियन्ते = लुण्ठ्यन्ते, क्वचित्, धनानि = सम्पद, लुण्ठ्यन्ते = चोर्यन्ते, क्वचिद्, आर्तनादा = करुणक्रन्दनानि, क्वचित्, रुधिरधारा रक्त-धारा, क्वचिद्, अग्निदाह = अग्निकाण्डम्, क्वचित् गृहनिपात = सद्मध्वसनम्, इत्येव, श्रूयते - आकर्ण्यते, अवलोक्यते = दृश्यते, च, परित = चतुर्दिक्षु।

हिन्दी-व्याख्या — **तदाकर्ण्य** = वह सुनकर। **कोपज्वालाज्वलित इव** = कोप (क्रोध) की ज्वाला से ज्वलित हुए के समान, कोपस्य ज्वालया ज्वलित (तत्पु०)। **प्रोवाच** = वोले। **विक्रमराज्ये** = विक्रमादित्य के राज्य मे। **पातकमय** = पापमय, 'पातक + मयट्'।

महात्मन् = महानुभाव, महान् आत्मा यस्य स, तत्सम्बुद्धौ-महात्मन्। **भारतभुवम्** = भारत की पृथ्वी, भारतस्य भू, ताम्। **विरहय्य** = छोडकर, 'वि + √रह + ल्यप्' **गतस्य** = गये हुए का, √गम् + क्त (षष्ठी)। **सप्तदशश-कानि** = सत्रह सौ। **व्यतीतानि** — वीत गये, वि + √अत + क्त (नपु०)। **मन्दिरे-मन्दिरे** = प्रत्येक मन्दिर मे। **मठे-मठे** = प्रत्येक मठो मे, 'मठ' गुरुकुल के आश्रमो को कहा जाता था 'मठश्छात्रादिनिलय' (अमरकोष)। **वेद-घोष** = वेदो का पाठ। **विच्छिद्य** = फाडकर, 'वि + √छिद् + ल्यप्'। **वीथीषु** = मार्गो मे। **विक्षिप्यन्ते** = फेंके जाते हैं। **उद्धूय** = उडाकर, 'उद् + √धूञ् + ल्यप्'। **धूमध्वजेषु** = अग्नि मे धूम ध्वजा यस्य स तेषु (ब० व्री०)। **ध्मायन्ते** = झोंके जाते हैं, '√ध्मा' शब्दाग्निसयोगयो ये भावकर्म, लट्। **पिष्ट्वा** = पीसकर (फाडकर), √पिष् + क्त्वा'। **पात्यन्ते** = डाले जाते है। **भाष्याणि** = भाष्यो को, सूत्रात्मक शैली मे लिखे गये ग्रन्थो विस्तृत व्याख्या को भाष्य कहा जाता है जैसे—महाभाष्य, वात्स्यायन भाष्य आदि। **ध्वंशयित्वा** = नष्ट करके। **भ्राष्ट्रेषु** = भाडो मे। **भर्ज्यन्ते** = जलाये जाते है, '√भृजी (भर्जने) + यक् (भाव-कर्म) + लट्'। **भिद्यन्ते** = तोडे जाते है, √ भिद् + यक् + लट्। **छिद्यन्ते** = काटे जाते हैं। **दारा** = स्त्री, √"दृ' (विदारणे) + णि + घञ्' दारयति हृदयम् इति दारा' (हृदय को विदीर्ण करने वाली), 'दारा' शब्द का प्रयोग नित्य बहुवचन मे होता है—"दाराक्षतलाजासूना बहुत्वम्"। **लुण्ठ्यन्ते** = लूटे जाते हैं। **आर्त-नादा** = करुणक्रन्दन। **रुधिरधारा** = खून की धारा। **अग्निदाह** = अग्निकाण्ड।

गृहनिपात = घरो का विध्वस। इत्येव = यही। श्रूयते = सुनाई पडता है। अवलोक्यते -- दिखाई पडता है।

टिप्पणी—(१) 'कोपज्वालाज्वलित इव' मे उत्प्रेक्षा अलकार है। (२) प्रसाद गुण हे। (३) वैदर्भी रीति है।

तदाकर्ण्य दुखितश्चकितश्च योगिराडुवाच—"कथमेतत्? ह्य एव पर्वतीयाञ्छकान् विनिर्जित्य महता जयघोषेण स्वराजधानीमायात श्रीमानादित्यपदलाञ्छनो वीरविक्रम। अद्यापि तद् विजयपताका मम चक्षुपोरग्रत इव समुद्धूयन्ते, अधुनाऽपि तेषा पटहगोमुखादीना निनाद कर्णशष्कुली पूरयतीव, तत्कथमद्य वर्षाणाम् सप्तदशशतकानि व्यतीतानि" इति?

तत सर्वेषु स्तब्धेषु च ब्रह्मचारिगुरुणा प्रणम्य कथितम्—

हिन्दी अनुवाद—(योगिराज के (ये वचन सुनकर) दुखित और चकित होते हुये बोले—यह कैसे? अभी तो कल ही आदित्य पद विभूषित श्रीमान् वीर विक्रमादित्य पर्वतीय शको को जीतकर बहुत बडे जय घोष के साथ अपनी राजधानी (उज्जयिनी) को आये हैं। आज भी उनकी विजयिनी पताकाएँ मेरे नेत्रो के सामने फहरा सी रही हैं, इस समय भी उनके नगाडे और तुरही आदि बाजों की ध्वनि मेरे कानो के छिद्र को पूरित सी कर रही है, तो कैसे आज सत्रह सौ वर्ष बीत गये?

(योगिराज के ये वचन सुनकर) सभी के स्तब्ध और चकित हो जाने पर, ब्रह्मचारी के गुरु ने प्रणाम करके कहा—

सस्कृत-व्याख्या—तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, दुखित = व्यथित, चकित = आश्चर्यान्वित, च, योगिराट् = महामुनि, उवाच = जगाद,-"कथमेतत् = कथमिद जातम्? ह्य एव = पूर्वदिने एव, पर्वतीयान = पर्वतनिवासिन, शकान् = शकजाती, विनिर्जित्य = विजय कृत्वा, महता = अत्युन्नतेन, जयघोषेण = जयजयकारेण, (सह) स्वराजधानीम् उज्जयिनीम्, आयात = समागत, श्रीमान् = शोभावान्, आदित्यपदलाञ्छन = आदित्यपदवीक., वीरविक्रम = शूर विक्रमा-

विनश्यन्ते, क्वचिद्, तुलसीवनानि = तुलसीवृक्षा छिद्यन्ते = कर्त्यन्ते, क्वचिद्, दारा = भार्या, अपह्रियन्ते = लुण्ठ्यन्ते, क्वचित्, धनानि = सम्पद, लुण्ठ्यन्ते = चोर्यन्ते, क्वचिद्, आर्तनादा = करुणक्रन्दनानि, क्वचित्, रुधिरधारा रक्त-धारा, क्वचिद्, अग्निदाह = अग्निकाण्डम्, क्वचित् गृहनिपात = सद्मध्वसनम्, इत्येव, श्रूयते - आकर्ण्यते, अवलोक्यते = दृश्यते, च, परित = चतुर्दिक्षु।

हिन्दी-व्याख्या — तदाकर्ण्य = वह सुनकर। कोपज्वालाज्वलित इव = कोप (क्रोध) की ज्वाला से ज्वलित हुए के समान, कोपस्य ज्वालया ज्वलित (तत्पु०)। प्रोवाच = बोले। विक्रमराज्ये = विक्रमादित्य के राज्य मे। पातकमय = पापमय, 'पातक + मयट्'।

महात्मन् = महानुभाव, महान् आत्मा यस्य स, तत्सम्बुद्धौ-महात्मन्। भारतभुवम् = भारत की पृथ्वी, भारतस्य भू, ताम्। विरहय्य = छोडकर, 'वि + √रह + ल्यप्' गतस्य = गये हुए का, √गम् + क्त (षष्ठी)। सप्तदशत-कानि = सत्रह सौ। व्यतीतानि — बीत गये, वि + √अत + क्त (नपु०)। मन्दिरे-मन्दिरे = प्रत्येक मन्दिर मे। मठे-मठे = प्रत्येक मठो मे, 'मठ' गुरुकुल के आश्रमो को कहा जाता था 'मठश्छात्रादिनिलय' (अमरकोष)। वेद-घोष = वेदो का पाठ। विच्छिद्य = फाडकर, 'वि + √छिद् + ल्यप्'। वीथीषु = मार्गों मे। विक्षिप्यन्ते = फेंके जाते है। उद्धूय = उडाकर, 'उद् + √धूञ् + ल्यप्'। धूमध्वजेषु = अग्नि मे धूम ध्वजा यस्य स तेषु (ब० व्री०)। ध्मायन्ते = झोंके जाते है, '√ध्मा' शब्दाग्निसयोगयो ये भावकर्म, लट्। पिष्ट्वा = पीसकर (फाडकर), √पिष् + क्त्वा'। पात्यन्ते = डाले जाते है। भाष्याणि = भाष्यो को, सूत्रात्मक शैली मे लिखे गये ग्रन्थो विस्तृत व्याख्या को भाष्य कहा जाता है जैसे—महाभाष्य, वात्स्यायन भाष्य आदि। भ्रशयित्वा = नष्ट करके। भ्राष्ट्रेषु = भाडो मे। भर्ज्यन्ते = जलाये जाते है, '√भृजी (भर्जने) + यक् (भाव-कर्म) + लट्'। भिद्यन्ते = तोडे जाते है, √भिद् + यक् + लट्। छिद्यन्ते = काटे जाते है। दारा = स्त्री, √"दृ' (विदारणे) + णि + घञ्' दारयति हृदयम् इति दारा.' (हृदय को विदीर्ण करने वाली), 'दारा' शब्द का प्रयोग नित्य बहुवचन मे होता है—"दाराक्षतलाजासूना बहुत्वम्"। लुण्ठ्यन्ते = लूटे जाते हैं। आर्त-नादा. = करुणक्रन्दन। रुधिरधारा. = खून की धारा। अग्निदाह = अग्निकाण्ड।

गृहनिपात = घरो का विध्वस। इत्येव = यही। श्रूयते = सुनाई पडता है। अवलोक्यते - दिखाई पडता है।

टिप्पणी—(१) 'कोपज्वालाज्वलित इव' मे उत्प्रेक्षा अलकार है। (२) प्रसाद गुण है। (३) वैदर्भी रीति है।

तदाकर्ण्यं दुखितश्चकितश्च योगिराडुवाच—"कथमेतत्? ह्य एव पर्वतीयाञ्छकान् विनिर्जित्य महता जयघोषेण स्वराजधानीमायात श्री-मानादित्यपदलाञ्छनो वीरविक्रम। अद्यापि तद् विजयपताका मम चक्षुपोरग्रत इव समुद्धूयन्ते, अधुनाऽपि तेषा पटहगोमुखादीना निनाद कर्णशष्कुली पूरयतीव, तत्कथमद्य वर्षाणाम् सप्तदशशतकानि व्यतीतानि" इति?

तत सर्वेषु स्तब्धेषु च ब्रह्मचारिगुरुणा प्रणम्य कथिप्तम्—

हिन्दी अनुवाद—(योगिराज के (ये वचन सुनकर) दुखित और चकित होते हुये बोले—यह कैसे? अभी तो कल ही आदित्य पद विभूषित श्रीमान् वीर विक्रमादित्य पर्वतीय शको को जीतकर बहुत बडे जय घोष के साथ अपनी राज-धानी (उज्जयिनी) को आये हैं। आज भी उनकी विजयिनी पताकाएँ मेरे नेत्रो के सामने फहरा सी रही हैं, इस समय भी उनके नगाडे और तुरही आदि बाजो की ध्वनि मेरे कानो के छिद्र को पूरित सी कर रही है, तो कैसे आज सत्रह सौ वर्ष बीत गये?

(योगिराज के ये वचन सुनकर) सभी के स्तब्ध और चकित हो जाने पर, ब्रह्मचारी के गुरु ने प्रणाम करके कहा—

सस्कृत-व्याख्या—तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, दुखित = व्यथित, चकित = आश्चर्यान्वित, च, योगिराट् = महामुनि, उवाच = जगाद,-"कथमेतत् = कथमिद जातम्? ह्य एव = पूर्वदिने एव, पर्वतीयान = पर्वतनिवासिन, शकान् = शक-जाती, विनिर्जित्य = विजय कृत्वा, महता = अत्युन्नतेन, जयघोषेण = जयजय-कारेण, (सह) स्वराजधानीम् उज्जयिनीम्, आयात = समागत, श्रीमान् = शोभावान्, आदित्यपदलाञ्छन = आदित्यपदवीक, वीरविकम = शूर विक्रमा-

दित्य । अद्यापि, तद्विजयपताका = विक्रमविजयध्वजा, मम = योगिराज चक्षुषो = नयनयो अग्रत इव = पुरत इव, समुद्धूयन्ते = कम्पमानाविराजन्ते, अधुनाऽपि = इदानीमपि, तेषा = विक्रमाणाम्, पटहगोमुखादीना = वाद्यविशेषा-णाम्, निनाद = ध्वनि, कर्णशष्कुलीम् = श्रोत्ररन्ध्रम्, पूरयतीव = पूर्णकरोतीव, तत्कथम्, अद्य = इदानीम्, वर्षाणा = सवत्सराणा, सप्तदशशतकानि = एतत् सख्या परिमितानि, व्यतीतानि = जातानि," इति (पृष्टवान्) । तत तदनन्तरम्, सर्वेषु = जनेषु, स्तब्धेषु = शान्तेषु चकितेषु = गाश्चर्यभूतेषु, च ब्रह्मचारि-गुरुणा — आश्रमस्थगुनिना, प्रणम्य = नमस्कृत्य, कथितम् = उक्तम् ।

हिन्दी-व्याख्या—तदाकर्ण्य = वह सुनकर । पर्वतीयान् = पर्वतनिवासियो को, पर्वते भवा पवतीया, 'पर्वत + छ (ईय)' । शकान् = शकवशी राजाओ को । विनिर्जित्य = जीतकर, 'वि + निर् + √जी + ल्यप्' । महता = बहुत अधिक । जयघोषेण = जयघोष के साथ । स्वराजधानीम् = अपनी राजधानी को, स्वस्य राजधानीम, (तत्पु०) । आदित्यपदलाञ्छन = आदित्य पद से विभू-षित, "कलङ्काङ्कौ लाञ्छन च लक्षणम्" (अमरकोष) । तद्विजयपताका = उनकी विजय पताकाये, तेषा विजयस्य पताका (तत्पु०) । चक्षुषो = नेत्रो के । अग्रत = सामने । समुदधूयन्ते = फहरा रही है, 'सम् + √उद् + धूञ + लट् (आत्म०)' । पटहगोमुखादीना = नगाडा और तुरही आदि की । निनाद = ध्वनि । कर्णशष्कुलीम् = कान के छिद्रो को, कर्णयो शष्कुली, ताम् । पूरयतीव = मानो भर रहे हैं । सर्वेषु स्तब्धेषु = सभी के शान्त हो जाने पर । प्रणम्य = प्रणाम करके कहा ।

टिप्पणी—(१) योगिराज जो राजा विक्रमादित्य के राज्य मे समाधि लगाये थे और यवन साम्राज्य मे जगे थे । राजा विक्रमादित्य ने शक जातियो के राजाओ को जीत लिया था । इसी का निर्देश किया गया है ।

(२) "अद्यापि पूरयतीव" 'आज भी उनकी विजय पताकाएँ मेरे नेत्रो के सामने फहरा सी रही है, तथा उनके नगाडो और तुरही का निनाद मानो मेरे कर्ण-छिद्रो को भर रहा है' यहाँ पर उत्प्रेक्षा अलकार है । ●

भगवन् ? बद्ध सिद्धासनैर्निरुद्ध-निश्वासै प्रबोधितकुण्डलिनीकैर्वि-जितदशेन्द्रियैरनाहतनाद—तन्तुमवलम्ब्याज्ञाचक्र सस्पृश्य, चन्द्रमण्डल

भित्वा, तेज पुञ्जमविगणय्य, सहस्त्रदलकमलस्यान्त प्रविश्य, परमात्मान साक्षात्कृत्य, तत्रैव रमगाणैंमृत्युमृत्युञ्जयैरानन्दमात्रस्वरूपैध्यानावस्थितैर्भवादृशैर्न ज्ञायते कालवेग । तस्मिन् समये भवता ये पुरुषा अवलोकिता तेपा पञ्चादशत्तमोऽपि पुरुषो नावलोक्यते । अद्य न तानि श्रोतासि नदीनाम, न सा सस्था नगराणाम्, आकृतिर्गिरीणाम, न सा सान्द्रता विपिनानाम् । किमधिक कथयामो भारतवर्पमधुना अन्यादृशमेव सम्पन्नमस्ति ।

हिन्दी अनुवाद—"भगवन् ! सिद्धासन बाँधकर, सास रोककर, कुण्डलिनी जगाकर, दशो इन्द्रियो को जीतकर, अनाहत नाद के तन्तु का अवलम्बन करके, आज्ञाचक्र को ध्यान का लक्ष्य बना करके, चन्द्र-मण्डल का भेदन करके, तेज-पुञ्ज (चन्द्र-चक्रवर्ती महाप्रकाश) का तिरस्कार करके, सहस्त्रार चक्र के अन्दर प्रवेश करके, परमात्मा को साक्षात्कार करके उसी मे रमण करने वाले, मृत्यु को जीतने वाले आनन्दमात्र स्वरूप वाले तथा ध्यान मे स्थित रहने वाले आप जैसे (महात्माओ) के द्वारा समय का वेग नहीं जाना जाता है । इस समय आप ने जिन पुरुषो को देखा था, अब उनका पचासवां (पचासवीं पीढी का) पुरुष भी नही दिखाई पडता है । आज नदियो की वे धारायें नहीं हैं, नगरो की वह स्थिति नही है, पर्वतो की वह आकृति नहीं है, जगलो की वह सान्द्रता (सघनता) नहीं है । और अधिक क्या कहे ? भारतवर्ष इस समय दूसरे ही प्रकार का हो गया है ।"

सस्कृत-व्याख्या—भगवन् = महात्मन्, वद्धसिद्धासनै = गृहीतासन विशेषै, निरुद्धनि श्वासै = अन्तर्नियमित प्राणै प्रवोधित कुण्डलिनी कै = उद्योतित कुण्डलिनीकै, विजितदशेन्द्रियै = जितेन्द्रियै, अनाहतनादतन्तुम् = सुषुम्णामध्येस्थितात् तुरीयपद्मादुत्पन्नो नाद, तस्य तन्तुम्, अवलम्ब्य = आश्रित्य, आज्ञाचक्रम् = भ्रुवोर्मध्ये द्विवलात्मक चक्रम्, सस्पृश्य = उपस्पृश्य, चन्द्रमण्डल = पोडशदलात्मक चक्रम्, भित्त्वा = उद्भिद्य, तेज पुञ्जम = सोमचक्रिवर्तिनम् महाप्रकाशम्, अविगणय्य = तिरस्कृत्य, सहस्त्रदलकमलस्यान्त = सहस्त्रारचक्रस्यान्त, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, परमात्मानम् =

परब्रह्म, साक्षात्कृत्य=प्रत्यक्षीकृत्य, तत्रैव=ब्रह्मणि- रममाणै=विहरद्भि, मृत्युञ्जयै=स्वायत्तीकृत कालवृत्तिभि, आनन्दमात्रस्वरूपै=ब्रह्मरूपै, ध्यानावस्थितै=आबद्धध्यानै, भवादृशै=भवत्सदृशै, कलिवेग=समयचक्र, न ज्ञायते=प्रतीयते । तस्मिन् समये–तत्काले, भवता=योगिराजा, ये पुरुषा=मनुष्या, अवलोकिता=दृष्टा, तेषा=तत्पुरुषाणाम्, पञ्चाशत्तम=पञ्चाशत् सख्यापूरक, अपि पुरुष=व्यक्ति, न अवलोक्यते=न दृश्यते । अद्य=अधुना, न तानि, स्रोतासि=धारा, नदीनाम्=सरिताम्, न, सा=पुरावर्तिनी, सस्था=स्थिति, नगराणाम्–जनपदानाम्, न सा, आकृति=स्वरूप, गिरीणाम्=पर्वताणाम्, न सा, सान्द्रता=सघनता, विपिनानाम्=अरण्यानाम्, किमधिक=कि बहुतर कथयाम=गदाम, अधुना=इदानीम्, भारतवर्षम्=भारतदेश, अन्यादृशम=अन्यप्रकारम्, एव, सम्पन्नम्=जातम्, अस्ति=भवति ।

हिन्दी-व्याख्या—बद्धसिहासनै=सिद्धासन बाँधने वाले, बद्धम् सिद्धासन यैस्तै (ब० व्री०), सिद्धासन=योगशास्त्र मे वर्णित समाधि से सम्बन्धित, एक विशेष प्रकार का आसन (बैठने का ढङ्ग)। निरुद्धनिश्वासै=सास को रोकने वाले, निरुद्धा निश्वासा यै, तै (ब० व्री०), ध्यान की दशा मे सासो को रोक लिया जाता है, निरुद्ध='नि + √ रुध् + क्त'। प्रबोधितकुण्डलिनीकै=कुण्डलिनी को जगाने वाले, प्रबोधिताकुण्डलिनी यै, तै, कुण्डलिनी=पराशक्ति से अभिहित एक नाडी सस्थान है। विजितदशेन्द्रियै=दशो इन्द्रियो को जीतने वाले (पाँच कर्मेन्द्रिया और पाँच ज्ञानेन्द्रिया)। अनाहतनादतन्तुम्=अनाहत नाद के तन्तु को, अनाहतश्चासौ नाद, तस्य तन्तु, तम्, अनाहतनाद=सुषुम्ना नाडी के मध्य मे स्थित एक तुरीय (चतुर्थ) कमल है, जिसे योगशास्त्र के अनुसार *'अनाहत' कहा जाता है, उसी कमल से उत्पन्न नाद को अनाहत नाद कहते हैं।* आज्ञाचक्रम्=आज्ञा चक्र की, दोनो भृकुटियो मे मध्य मे एक दो दलो वाला कमल है उसे योगशास्त्र के अनुसार आज्ञाचक्र कहा जाता है, योगी लोग उसी को लक्ष्य करके ध्यान करते है। सस्पृश्य=ध्यान का अवलम्बन करके, 'सम् + √स्पृश् + ल्यप्'। चन्द्रमण्डल=चन्द्रमण्डल को, आज्ञा चक्र से भी परे सोलह *दलो वाला कमल चक्र। भित्त्वा=भेदन करके। तेज पुञ्जम्=चन्द्रमण्डल चक्र* से सम्बद्ध महाप्रकाश को। अविगण्य=तिरस्कार करके, 'अ + वि + √गण् +

ल्यप्' । सहस्त्रदलकमलस्यान्त =सहस्त्र दल कमल के अन्दर, पूर्व चक्र से भी परे एक सहस्त्रार चक्र होता है, जहाँ मधु की वर्षा होती है, उसी सहस्त्रार चक्र के अन्दर । प्रविश्य=प्रवेश करके । परमात्मानम्=ब्रह्म को, परमश्चासौ आत्मा, तम् । साक्षात्कृत्य=साक्षात्कार करके । रममाणं =रमण करने वाले √'रम्+शानच्' । मृत्युञ्जयं =मृत्यु को जीतने वाले, मृत्युम् जयतीति मृत्युञ्जय । आनन्दमात्रस्वरूपं =आनन्दस्वरूप, जो ब्रह्म मे लीन हो जाता है, वह उसमे लीन होने के कारण ब्रह्मस्वरूप हो जाता है और ब्रह्म आनन्दरूप है। अत वह भी आनन्दरूप हो जाता है । ध्यानावस्थितं =ध्यान (समाधि) मे स्थित होने वाले, ध्याने अवस्थिता तं । भवादृशै =आप जैसो के द्वारा न ज्ञायते=नहीं जाना जाता है। कालवेग =समय की गति। अवलोकिता = देखे थे । पञ्चाशतमोऽपि=पचासवाँ भी अर्थात् आप के द्वारा देखे गये पुरुष की पचासवी पीढी का भी पुरुष । न अवलोक्यते=नही दिखाई पडता । स्रोतासि=धारायें । सस्था=स्थिति । सान्द्रता=गहनता, सान्द्रस्य भाव, 'सान्द्र+तरम्' (स्त्रियाटाप्) । अन्यादृशम्=अन्य प्रकार का । सम्पन्नमस्ति= हो गया है ।

टिप्पणी—(१) पूर्व की पक्तियो मे योग के अनुसार समाधि की व्यावहारिक प्रक्रियाओ का वर्णन किया गया है ।

(२) यहाँ पर लेखक ने गौडी रीति को स्वीकार किया है ।

(३) शब्दयोजना और भावात्मकता दोनो ही दृष्टि से गद्य मे विशेष प्रवाह है।

इदमाकर्ण्य किञ्चित्स्मित्वैव परितोऽवलोक्य च योगी जगाद—"सत्य न लक्षितो मया समयवेग । यौधिष्ठरे समये कलित समाधिरह वैक्रम समये उदस्थाम् । पुनश्च वैक्रमसमये समाधिमाकलय्य अस्मिन् दुराचार-मये समयेऽहमुत्थितोऽस्मि । अह पुनर्गत्वा समाधिमेव कलयिष्यामि किन्तु तावत् सक्षिप्य कथ्यतां का दशा भारतवर्षस्येति ।"

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर कुछ मुस्कराते हुये से, चारो ओर देखकर योगिराज बोले—'सत्य है, मैंने समय के वेग को नहीं देखा । युधिष्ठिर के समय में समाधि लगाकर विक्रमादित्य के समय में उठा और पुन विक्रमादित्य

के समय मे समाधि लगाकर दुराचारमय समय मे उठा हू। मै पुन. जाकर समाधि ही लगाऊंगा, किन्तु तब तक सक्षेप मे बताइये कि भारतवर्ष की क्या दशा है।"

सस्कृत-व्याख्या—इदम् = एतत्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, किञ्चित् = ईषद्, स्मित्वा = विहस्य, इव, परित = समन्तात्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, योगी = महामुनि', जगाद = उवाच—"सत्यम् = युक्तम्, न लक्षित = न परिज्ञात, मया = योगिराजेण, समयवेग = काल प्रवाह, यौधिष्ठरे = युधिष्ठिरस्य, समये = काले, कलितसमाधि = समाधिस्थ, अहम् = योगी, वैक्रम-समये = विक्रमादित्यस्य काले, उदस्थाम् = उत्थित, पुनश्च = भूयोऽपि, वैक्रमसमये = तत्काले, समाधिम् = ध्यानम्, गाकलय्य = आबद्ध्य, अस्मिन् — एतस्मिन्, दुराचारमये = अत्याचारात्मके काले, अहम् योगी, उत्थित = जागृत, अस्मि। अहम् = योगिराड्, पुन = भूय, गत्वा = शैलशिखरमुपेत्य, समाधिमेव = ध्यानमेव, कलयिष्यामि = धारयिष्यामि, किन्तु = परञ्च, तावत् = किञ्चित्कालेन, भारतवर्षस्य = अस्मद्देशस्य, का दशा = कीदृशी अवस्था, इति = एतत्, सक्षिप्य = अनतिविस्तरेण, कथ्यताम् = ज्ञाप्यताम् ?

हिन्दी-व्याख्या—किञ्चित् स्मित्वा इव = मानो कुछ मुस्करा करके। अवलोक्य = देखकर, 'अव + √लोक + ल्यप्'। जगाद = बोले, '√गद् (व्यक्तायां वाचि) + लिट् = तिप्'। न लक्षित = नही समझा। समयवेग = कालचक्र को, समयस्य वेग (तत्पु०), योगि लोग समाधि के द्वारा काल को भी स्थिर कर देते है, अर्थात् काल जनित क्रियाये उनमे नही होती। अत साधारण जन के लिये होने वाले इस दुरति कालक्रम का उनके लिये कोई विशेष महत्त्व नही होता। इसीलिये योगिराज समय चक्र की नही जान पाये। यौधिष्ठिरे = युधिष्ठिर के अर्थात् युधिष्ठिर से सम्बद्ध, युधिष्ठिरस्य अयम्-यौधिष्टिर, (युधिष्ठिर + अण्) तस्मिन् = यौधिष्ठिरे। कलित समाधि = समाधि लगाये हुये, कलित समाधि येन स (ब०व्री०), योगिराज का विशेषण। वैक्रमसमये = विक्रमादित्य के समय मे, विक्रमस्य अयम् = वैक्रम, स चासौ समय, वैक्रम-समय, तस्मिन्। समाधिम् = समाधि को। आकलय्य = लगाकर, 'आ + कल + ल्यप्'। दुराचारमये = अत्याचार से युक्त, दुराचारेण युक्त, दुराचारमय

तस्मिन्, 'दुराचार+मयट्' (स० ए० व०)। उत्थित = उठा हूँ, 'उद्+√स्था +इट्+क्त'। कलयिष्यामि = लगाऊँगा, '√कल+लृट् (मिप्)'। संक्षिप्य = संक्षिप्त करके। कथ्यताम् = कहिए।

तत्सश्रुत्य भारतवर्षीयदशास्मरण संजातशोको हृदयस्थ प्रसाद सम्भारोद्गिरणश्रमेणेवानिमन्थरेण स्वरेण "मा स्म धर्मध्वंसन घोषणैर्योगिराजस्य धैर्यमवधीरय" इति कण्ठं रुन्धतो वाष्पानविगणय्य, नेत्रे प्रमृज्य, उष्णं निश्वस्य कातराभ्यामिव नयनाभ्याम् परितोऽवलोक्य, ब्रह्मचारिगुरु प्रवक्तुमारभत—'भगवन्! दम्भोलिघटितेय रसना, या दारुणदानवोदन्तोदीरणैर्न दीर्य्यते, लौहसारमयम् हृदयम्, यत्सम्भृत्य यावनान्परस्सहस्त्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान्, येऽद्यापि जीवाम, श्वसिम, विचराम, आत्मन आर्य्यवंश्याश्चाभिमन्यामहे"—

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर, भारतवर्ष की दशा के स्मरण से उत्पन्न हुये शोक वाले, मानो हृदय में स्थित प्रसन्नता को व्यक्त करने के श्रम से अति मन्द स्वर से "धर्म-विध्वंस की कथाओं से योगिराज के धैर्य को मत डिगाओ', इस प्रकार (कहते हुये) गले को रुंधने वाले आँसुओं की चिन्ता न करके, नेत्रों को पोंछकर, गरम सांस लेकर, कातर हुये समान नेत्रों से चारों ओर देखकर ब्रह्मचारी के गुरु ने कहना आरम्भ किया— "भगवन्! यह (मेरी) जिह्वा वज्र से बनी है, जो कि दारुण (भीषण) दानवों (यवनों) के वृत्तान्त के वर्णन से विदीर्ण (फट)' नहीं हो जाती, हृदय लोहे का बना हुआ है, जो यवनों के हजारों दुराचारों का स्मरण करके टुकड़े-टुकड़े नहीं हो जाता और जल कर राख नहीं हो जाता। हम सब को धिक्कार है, जो आज भी जी रहे हैं, सांस ले रहे हैं, विचरण कर रहे हैं और अपने को आर्यों का वंशज मान रहे हैं"।

संस्कृत-व्याख्या—तत्सश्रुत्य = एतच्छ्रुत्वा, भारतवर्षीयाया = भारतवर्ष सम्बन्धिन्याः, दशाया = अवस्थाया, संस्मरणेन = स्मृत्या, संजात = उत्पन्न, शोकः = चिन्ता, यस्य सः। हृदयस्य = चित्तस्य, यः प्रसाद = प्रसन्नता, तस्य

के समय मे समाधि लगाकर दुराचारमय समय मे उठा हूँ। मैं पुन जाकर समाधि ही लगाऊँगा, किन्तु तब तक सक्षेप मे बताइये कि भारतवर्ष की क्या दशा है।"

सस्कृत-व्याख्या—इदम् = एतत्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, किञ्चित् = ईषद्, स्मित्वा = विहस्य, इव, परित = समन्तात्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, योगी = महामुनि, जगाद = उवाच—"सत्यम् = युक्तम्, न लक्षित = न परिज्ञात, मया = योगिराजेण, समयवेग = काल प्रवाह, यौधिष्ठिरे = युधिष्ठिरस्य, समये = काले, कलितसमाधि = समाधिस्थ, अहम् = योगी, वैक्रम-समये = विक्रमादित्यस्य काले, उदस्थाम् = उत्थित, पुनश्च = भूयोऽपि, वैक्रमसमये = तत्काले, समाधिम् = ध्यानम्, आकलय्य = आबद्ध्य, अस्मिन् = एतस्मिन्, दुराचारमये = अत्याचारात्मके काले, अहम् = योगी, उत्थित = जागृत, अस्मि। अहम् = योगिराड्, पुन = भूय, गत्वा = शैलशिखरमुपेत्य, समाधिमेव = ध्यानमेव, कलयिष्यामि = धारयिष्यामि, किन्तु = परञ्च, तावत् = किञ्चित्कालेन, भारतवर्षस्य = अस्मद्देशस्य, का दशा = कीदृशी अवस्था, इति = एतत्, सक्षिप्य = अनतिविस्तरेण, कथ्यताम् = ज्ञाप्यताम् ?

हिन्दी-व्याख्या—किञ्चित् स्मित्वा इव = मानो कुछ मुस्करा करके। अवलोक्य = देखकर, 'अव + √लोक + ल्यप्'। जगाद = बोले, '√गद् (व्यक्ताया वाचि) + लिट् = तिप्'। न लक्षित = नही समझा। समयवेग = कालचक्र को, समयस्य वेग (तत्पु०), योगि लोग समाधि के द्वारा काल को भी स्थिर कर देते है, अर्थात् काल जनित क्रियाये उनमे नही होती। अत साधारण जन के लिये होने वाले इस दुरति कालक्रम का उनके लिये कोई विशेष महत्त्व नही होता। इसीलिये योगिराज समय चक्र को नही जान पाये। यौधिष्ठिरे = युधिष्ठिर के अर्थात् युधिष्ठिर से सम्बद्ध, युधिष्ठिरस्य अयम्-यौधिष्ठिर, (युधिष्ठिर + अण्) तस्मिन् = यौधिष्ठिरे। कलित समाधि = समाधि लगाये हुये, कलित समाधि येन स (ब०व्री०), योगिराज का विशेषण। वैक्रमसमये = विक्रमादित्य के समय मे, विक्रमस्य अयम् = वैक्रम, स चासौ समय, वैक्रमसमय, तस्मिन्। समाधिम् = समाधि को। आकलय्य = लगाकर, 'आ + कल + ल्यप्'। दुराचारमये = अत्याचार से युक्त, दुराचारेण युक्त, दुराचारमय

तस्मिन्, 'दुराचार+मयट्' (स० ए० व०)। उत्थित =उठा हूँ, 'उद्+√स्था +इट्+क्त'। कलयिष्यामि=लगाऊँगा, '√कल+लृट् (मिप्)'। सक्षिप्य =सक्षिप्त करके। कथ्यताम्=कहिए।

तत्सश्रुत्य भारतवर्षीयदशानुस्मरण मजातशोको हृदयस्थ प्रसाद सम्भारोद्गिरणश्रमेणेवातिमन्थरेण स्वरेण "मा स्म धर्मध्वंसन घोषणै-र्योगिराजस्य धैर्यमवधीरय" इति कण्ठ रुन्धतो वाष्पानविगणय्य, नेत्रे प्रमृज्य, उष्णं नि श्वस्य कातराभ्यामिव नयनाभ्याम् परितोऽवलोक्य, ब्रह्मचारिगुरु प्रवक्तुमारभत—'भगवन्! दम्भोलिघटितेय रसना, या दारुणदानवोदन्तोदीरणैर्न दीर्य्यते, लौहसारमयम् हृदयम्, यत्सम्भृत्य यावनान्परस्सहस्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान्, येऽद्यापि जीवाम, श्वसिम, विचराम, आत्मन आर्य्यवंश्या-श्चाभिमन्यामहे"—

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर, भारतवर्ष की दशा के स्मरण से उत्पन्न हुये शोक वाले, मानो हृदय मे स्थित प्रसन्नता को व्यक्त करने के श्रम से अति मन्द स्वर से "धर्म-विध्वस की कथाओ से योगिराज के धैर्य को मत डिगाओ', इस प्रकार (कहते हुये) गले को रुँधने वाले आँसुओ की चिन्ता न करके, नेत्रो को पोछकर, गरम सास लेकर, कातर हुये समान नेत्रो से चारो ओर देखकर ब्रह्मचारी के गुरु ने कहना आरम्भ किया— "भगवन्! यह (मेरी) जिह्वा वज्र से बनी है, जो कि दारुण (भीषण) दानवो (यवनो) के वृत्तान्त के वर्णन से विदीर्ण (फट)' नहीं हो जाती, हृदय लोहे का बना हुआ है, जो यवनो के हजारो दुराचारो का स्मरण करके टुकडे-टुकडे नही हो जाता और जल कर राख नहीं हो जाता। हम सब को धिक्कार है, जो आज भी जी रहे हैं, सास ले रहे है, विचरण कर रहे हैं और अपने को आर्यों का वंशज मान रहे है"।

सस्कृत-व्याख्या—तत्सश्रुत्य=एतच्छ्रुत्वा, भारतवर्षीयाया=भारतवर्ष सम्बन्धिन्या- दशाया=अवस्थाया, अनुस्मरणेन=स्मृत्या, सजात=उत्पन्न, शोक:=चिन्ता, यस्य स। हृदयस्य=चित्तस्य; य' प्रसाद'=प्रसन्नता, तस्य

सम्भारः = अतिशय , उद्गिरण = वमनम्, तस्मिन्, श्रम = खेद , तेन । इव = सम्भावनायाम् अति मन्थरेण = अतिमन्देन, स्वरेण = गिरया, "मास्म = इति निषेधे, धर्मविध्वसन घोषणै = धर्मोन्मूलनकथनै , योगिराजस्य = महामुने , धैर्यम् = धीरताम्, अवधीरय = विचालय", इति = एवम्, कण्ठम् = ग्रीवाम्, रुन्धत = स्तम्भयत , बाष्पान् = अश्रून्, अविगणय्य = अपरिकलय्य, नेत्रे = नयने, प्रमृज्य = परिमार्जन कृत्वा, उष्ण = अनतिशीतम्, नि श्वस्य = उच्छ्वस्य, कातराभ्याम् = दीनाभ्याम्, इव, नयनाभ्याम् = नेत्राभ्याम, परित = समन्तात्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, ब्रह्मचारिगुरु = आश्रमस्थो मुनि, प्रवक्तुम् = कथयितुम् = आरभत —"आरभे = भगवन् = महर्षे, दम्भोलिघटिता = वज्र निर्मिता, इयम् = एषा, रशना = जिह्वा, या, दारुणा = कठोरा , ये दानवा = म्लेच्छा , तेषाम् उदन्तस्य = वृत्तान्तस्य, उदीरणै = कथनै , न दीर्य्यते = न विभिद्यते, लोहसारमय = अयोनिर्मितम्, हृदयम् = चेत , यत्, यावनान् = यवनानामिमान्, परस्सहस्त्रान् = सहस्त्रादधिकान, दुराचारान् = अत्याचारान्, शतधा = खण्डश , न भिद्यते = न विदीर्य्यते, भस्मासान् = अग्निसारमिव, च न भवति = नोपयाति । धिक् अस्मान् = आर्यवशान् धिक्, ये = वयम्, अद्यापि = अस्मिन् कालेऽपि, जीवाम = जीवन धारयाम , श्वसिम = श्वासान् गृह्णाम , विचराम = चलाम , आत्मन = अस्मान्, आर्यवश्यान् - आर्यवशोद्भवान्, अभिमन्यामहे = कथयाम —" ।

हिन्दी व्याख्या—तत्सश्रुत्य = यह सुनकर । ' भारत शोक ' = भारत-वर्षीय-भारतवर्ष की, दशा = दशा के, सस्मरण = स्मरण से, सजात = उत्पन्न हो गया है, शोक = सोक जिसको (मुनि का विशेषण), भारतवर्षीया दशाया सस्मरणेन सजात = शोक यस्य (ब० ब्री०) । 'हृदयस्थ श्रमेण' = हृदयस्थ = हृदय मे स्थित, प्रसाद = प्रसन्नता के, सम्भार = अधिकता के, उद्गिरण = व्यक्त करने मे, श्रमेण = श्रम के कारण, 'हृदयस्थ य प्रसाद , तस्य सम्भारस्य उद्गिरेण य श्रमस्तेन (तत्पु०) उद्गिरण = 'उद् + √गृ + ल्युट्' । इव = उत्प्रेक्षावाचक । अतिमन्थरेण = अत्यन्त धीमे । स्वरेण = स्वर से । मा = निषेध सूचक अव्यय 'मा' के योग मे अट् अथवा आट् का आगम नही होता 'मा' के बाद 'स्म' के प्रयोग होने पर लुङ् अथवा लङ् लकार का प्रयोग होता है 'स्मोत्तरे लङ् च' । धर्मध्वसनघोषणै = धर्म के विध्वस की कथाओ से, धर्मस्य ध्वंसनम्, तस्य घोषणै ; धर्म = वेदस्मृत्यादि प्रतिपादित कर्त्तव्याकर्त्तव्य

विचार, ध्वसयतेऽनेनेति ध्वसनन्-√'ध्वस + ल्युट् (अन्), घोषणै = कथनो से, √'घुष् + ल्युट (अन्)' । अवधीरय = विचलित करो 'अव + √धृ + लोट्' । रून्धत = अवरुद्ध करने वाले, (वाष्पान् का विशेषण) । वाष्पान् = आँसुओ को । अविगणय्य = चिन्ता न करके, 'अ + वि + √गण + ल्यप्' । प्रमृज्य = 'प्र + √मृज् + ल्यप्' पोछकर । नि श्वस्य = सास लेकर 'निर् + श्वस् + ल्यप्' । कातराभ्याम् = कातर (दीन), नयन का विशेषण है । प्रवक्तुम् = कहने के लिये 'प्र + वच् + तुमुन्' । आरभत = आरम्भ किया, 'आ + √रभ् + लङ् (तिप्)' । दम्भोलिघटिता = वज्र से बनी, दम्भोलिना घटितेतिदम्भोलिघटिता' (तत्पु०) । दम्भोलि = वज्र, 'दम्भोलिरशनिर्द्वयो' (अमरकोप) । रसना = जिह्वा, रस्यते अनया इति रसना । दारुणदानवोदन्तोदीरणै = भीषण दानवो के वृत्तान्त के वर्णन से, दारुणा ये दानवा तेषाम् उदन्तस्य उदीरणै (तत्पु०), दारुण = भीषण, दानव = म्लेच्छ या यवन, उदन्त = वृत्तान्त 'वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्त उदान्त स्यात्' (अमर०), उदीरण = कथन, 'उद् + ईर् + ल्युट (अन्)' । दीर्य्यते = फटता है, √'दृ + भावकर्म यक् + लट् तिप्" । लोहसारमयम् = लोहे का बना हुआ, लोहसारस्य विकार = लोहसारमयम् विकार अर्थ मे मयट् प्रत्यय । सस्मृत्य = स्मरण करके यावनान् = यवनो के द्वारा किये जाने वाले, यवनस्य अय यावन — यवन + अण्' (द्वि० व०) । परस्सहस्रान् = हजारो से अधिक, सहस्रात् परा इति परस्सहस्रा, तान्, राजदन्तादित्वात् सहस्रशब्द का पर निपातन तथा सुट् होता है । दुराचारान् = दुराचारो को । शतधा = सैकडो टुकडो मे । भिद्यते = भिन्न हो जाता है । भस्मसात् = राख के समान, भस्मन = तुल्य-भस्मसात् । धिक् अस्मान् = हम सबको धिक्कार है, 'धिक्' के योग मे द्वितीया हुई हे । जीवाम = जीते हे । श्वसिम = श्वास लेते हैं, 'जीवाम' के वाद पुन 'श्वसिम' का कथन जीवन की व्यर्थता या घृणित जीवन की व्यञ्जना के लिये किया गया है । विचराम = घूमते है । आत्मनः = अपने को । आर्यवश्यान् = आर्यवश मे पैदा होने वाले, आर्याणाम् वशे भवा आर्यवश्या, तान् = 'भव' के अर्थ मे 'यत्' होकर आर्यवश्य वनता है । अभिमन्यामहे = मानता हूँ ।

टिप्पणी—(१) "हृदयस्थ श्रमेणैव" मे उत्प्रेक्षा अलंकार है ।

(२) 'कातराभ्यामिव' मे उपमा अलकार है, इव उपमावाचक है ।

(३) 'ये अद्यापि अभिमन्यामहे' मे दीपक अलकार है ।

(४) वाक्य सयोजन की दृष्टि मे लेखक ने पूर्वार्द्ध मे समास शैली त उत्तरार्द्ध मे व्यास शैली का प्रयोग किया है ।

उपक्रममुमाकर्ण्य अवलोक्य च मुनेर्विमनायमान हरिद्राद्रवक्षालित मिव वदनम्, निपतद्वारिविन्दुनी नयने, अञ्चितरोमकञ्चुक शरीरम् कम्पमानमधरम्, भज्यमानञ्चस्वरम्, अवागच्छत् "सकलानर्थमय, सकल वञ्चनामय, सकलपापमय, सकलोपद्रवमयश्चाय वृत्तान्त" इति, अत एव तत्स्मरणमात्रेणापि खिद्यत एव हृदये, तन्नाहमेन निरर्थ जिग्लापयि पामि, न वा चिखेदयिपामि" इति च विचिन्त्य—

"मुने ! विलक्षणोऽय भगवान सकल कला कलाप-कलन सकल-कालन• कराल काल । स एव कदाचित् पय पूर-पूरितान्यकूपारतलानि मरुकरोति । सिंह-व्याघ्र-भल्लूक-गण्डक-फेरु-शश-सहस्र व्याप्तान्यरण्यानि जनपदी करोति, मन्दिर-प्रासाद-हर्म्य-शृङ्गाटक-चत्वरोद्यान-तडागगोष्ठ-मयानि नगराणि च काननी करोति । निरीक्ष्यताम् कदाचिदस्मिन्नेव भारतेवर्षे यायजूकै राजसूयादियज्ञा व्ययाजिपत, कदाचिदिहैव वर्ष-वाताऽऽतप-हिम-सहानि तपासि अतापिपत । सम्प्रति तु म्लेच्छैर्गावो हन्यन्ते, वेदा विदीर्य्यन्ते, स्मृतय समुद्यन्ते, मन्दिराणि मन्दुरी क्रियन्ते, सत्य पात्यन्ते, सन्तश्च सन्ताप्यन्ते । सर्वमेतन्माहात्म्य तस्यैव महाकाल-स्येति कथ धीरधौरेयोऽपि धैर्य विधुन्यसि ? शान्तिमाकलय्याति सक्षेपेण कथय यवनराज वृत्तान्तम । न जाने किमित्यनावश्यकमपि शुश्रूपते मे हृदयम्" इति कथयित्वा तूष्णी मवतरस्थे ।

हिन्दी-अनुवाद—इस उपक्रम (भूमिका) को सुनकर और मुनि के हल्दी के रग से रगे हुए के समान (पीले) उदास चेहरे, आसू बहाते हुए नयनो, रोमाञ्चित शरीर, कम्पमान ओष्ठ तथा लडखडाते हुए स्वर को देखकर (योगिराज) जान गये कि "यह सम्पूर्ण वृत्तान्त समस्त (अतिशय) अनर्थो, वञ्चनाओं, पापों

तथा उपद्रवो से भरा है" इसलिये उसके स्मरण मात्र से इनका हृदय खिन्न हो रहा है, अत मै इनको व्यर्थ मे मलिन नहीं करूंगा और न ही दुखी करूंगा" यह सोचकर—

(योगिराज कहना प्रारम्भ किये) "मुने ! सम्पूर्ण कलाओ के निर्माता तथा सभी के सहारक भगवान् महाकाल अत्यन्त विलक्षण है । वे ही कभी जलप्रवाह से पूर्ण समुद्रतल को मरुभूमि बना देते है । सहस्त्रो सिंहो बाघो, भालुओ, गेंडो, शृगालो तथा खरगोशो से भरे हुए जगल को नगर बना देते हैं तथा मन्दिरो, महलो, अट्टालिकाओ, चौराहो, उद्यानो, तालाबो तथा गोशालाओ से युक्त नगरो को जगल बना देते हैं । देखिये, कभी-कभी भारतवर्ष मे याज्ञिको ने राजसूयादि यज्ञ किये थे, कभी यहीं वर्षा, आँधी धूप, शरदी (हिमपात) आदि को सहन करके तपस्यायें की गई थीं । इस समय ता यवनो के द्वारा गाये मारी जा रही हे, वेद की पुस्तकें फाडी जा रही हैं, स्मृतियाँ मर्दी जा रही हैं, मन्दिर घुडसाल बनाये जा रहे हैं, सती स्त्रियाँ पतिता बनाई जा रही हैं और सन्तो को सन्तप्त किया जा रहा है । यह सब कुछ उसी महाकाल का प्रभाव है (तब) आप धीर धुरीप होते हुए भी क्यो धैर्य खो रहे हैं ? शान्त होकर अतिसक्षेप से यवन राज्य के वृत्तान्त को कहिए । न जाने क्यो आवश्यक होते हुए भी मेरा मन (हृदय) इसे सुनने की इच्छा कर रहा है" यह कहकर (योगीराज) शान्त हो गये ।

सस्कृत-व्याख्या—अमुम = इमम्, उपक्रमम् = उपोद्घातम् आकर्ण्य = श्रुत्वा, अवलोक्य = दृष्ट्वा, च, मुने = ब्रह्मचारिगुरो, विमायमानम् = दुर्मनायमानम्, हरिद्राद्रवक्षालितमिव हरिद्रारसधौतमिव, वदनम् = मुखम्, निपतद्वारि विन्दुनी = स्खलदाश्रुकणे, नयने = नेत्रे, अञ्चितरोमकञ्चुकम् = सरोमाञ्चम्, शरीरम = तनु, कम्पमानम् = प्रकम्पितम् अनगम् = ओष्ठ, भज्यमानम्, स्वरम् = वचनम्, अवागच्छत = अजानात् "सकलानर्थमय = समस्तपापमय, च, अयम् = एष, वृत्तान्त = वक्तव्य, ' इति, अत एव = अस्माद्धेतो, तत्स्मरणमात्रेण = तत्स्मृत्यैव, अपि, खिद्यते = दुखम् अनुभवति, एप = मुनि, हृदये = मनसि, तत् = तस्मात्, अहम् = योगिराड्, एनम् = मुनिम्, न, निरर्थम् = निष्प्रयोजनम्, जिग्लापयि-

पामि = ग्लपयितुमिच्छामि, न वा, चिखेदयिषामि = खेदयितुमिच्छामि" इति च = एतच्च, विचिन्त्य = विचार्य ('योगिराड् उवाच' इति अग्रे योजयिष्यते)।

"मुने = महर्षे, अयम् = एष, भगवान् = सर्वसमर्थ, सकलकलाकलापकलन = समस्तकला समूहनिर्माता, सकलकालन = सकलजरयिता, विलक्षण = विचित्र, कराल काल = महाकाल। स एव, कदाचित् = कदापि, पयःपूरपूरितानि = जलप्रवातपूर्णानि, अकूपारतलानि = समुद्रतलानि, मरुकरोति = मरुतुल्यानि करोति। सिंह = मृगपति व्याघ्र = शार्दूल, भल्लूक = पशुविशेष, गण्डक = खड्गी, फेरु = शृगाल शश = हरिण, एषा सहस्राणि तै व्याप्तानि, अरण्यानि = काननानि, जनपदी करोति = नगरी करोति, मन्दिराणि = देवालय, प्रासादा = भूपतिनिवासा शृङ्गाटकानि = चतुष्पदानि, चत्वराणि = अजिराणि, उद्यानानि = वाटिका तडागा = जलाशयानि, गोष्ठानि = गोस्थानानि, तेषा प्राचुर्याणि (गोष्ठादिबहुलानि) नगरापि = जनपदानि, काननीकरोति = जगली करोति। निरीक्ष्यताम् = पश्यतु, कदाचिद्, अस्मिन्नेव = इहैव, भारतेवर्षे = देशे, यायजूकै = यज्ञशीलै, राजसूयादियज्ञा = विविधयज्ञा, व्ययाजिषत् = कृता, कदाचित् इहैव, वर्षवातातपहिमसहानि = वर्षानिलधर्मशीतमहानि, तपासि = तपस्या, अतापिषत् तप्तानि। सम्प्रतितु = इदानीन्तु, म्लेच्छै = यवनै, गाव = धेनव, हन्यन्ते = मीयन्ते, वेदा = श्रुतय, विदीर्यन्ते = छिन्द्यन्ते, स्मृतय = धर्मशास्त्राणि, समूह्यन्ते = कृष्यन्ते, मन्दिराणि = देवालय, मन्दुरीक्रियन्त = वाजिशालीक्रियन्ते, सत्य = पतिव्रता, पात्यन्ते = व्यभिचार्यन्ते, सन्त = साधव, च, सन्ताप्यन्ते = पीड्यन्ते। एतत् = इदम्, सर्वम् = निखिलम्, माहात्यम्यम् = गौरवम्, तस्यैव = पूर्वोक्तस्यैव, महाकालस्य = करालकालस्य, इति = एतस्मात्, कथम्, धैर्यधौरेयोऽपि = धीरधुरन्धरोऽपि, धैर्य = साहमम, विधुरयसि = विकलयसि ? (अत) शान्तिम् = धैर्यम्, आकलय्य = आश्रित्य, अतिसंक्षेपेण = समासेन, कथय = ज्ञापय, यवनराज वृत्तान्तम् = म्लेच्छराजकथाम्, न जाने = न जानामि (अह), किमिति = कथमेतत्, अनावश्यकमपि = निष्प्रयोजनमपि, मे = मम्, हृदयम् = चेत, शुश्रूषते = श्रोतुमिच्छति" इति = एतत्, कथयित्वा = उक्त्वा, तूष्णीम् = मौनम्, अवतस्थे = अवाप।

हिन्दी-व्याख्या—उपक्रमम् = भूमिका को। विमनायमानम् = उदास (मुख

का विशेषण) 'वि + मन + क्यच् + शानच्' । हरिद्राद्रवक्षालितम् = हल्दी के रस से धुले हुए, 'हरिद्राया द्रव -तेन क्षालितम्' (तत्पु०) । इव = समान । वदनम् = मुख को । निपतद्वारिबिन्दुनी - अश्रु कण प्रवाहित करने वाले (नेत्रों का विशेष) निपतन्त वारिविन्दव याभ्या ते (ब० व्री०) । अञ्चिरोमकञ्चुकम् = रोमाञ्चित (शरीर का विशेषण) अञ्चित रोमकञ्चुक यस्य तत् । कम्पमानम् अधरम् = काँपते हुए ओष्ठो को, '√कम्प + शानच्' । भज्यमानम् = टूटता हुआ '√भज् + यक् + शानच्' । अवागच्छत् = जान गये, 'अव + √गम् + लङ् (तिप्)' । सकलानर्थमय = सम्पूर्ण अनर्थों से युक्त, अनर्थ + मयट् (प्रत्यय युक्त के अर्थ मे) । सकलवञ्चनामय = सभी वञ्चनाओ से युक्त । सकलपापमय = सम्पूर्ण पापो से युक्त । सकलापद्रवमय = सम्पूर्ण उपद्रवो से युक्त । वृत्तान्त = घटना क्रम । ब्रह्मचारी के गुरु की मुखाकृति को देखकर योगिराज ने यह समझ लिया कि 'इनके द्वारा कहा जाने वाला वृत्तान्त सभी अनर्थों, वञ्चनाओ, पापो एव उपद्रवो से भरा हुआ है ।" तत्स्मरणमात्रेणापि = उस वृत्तान्त के स्मरण मात्र से भी, खिद्यते = दुखी हो रहे है । न जिग्लापयिषामि = मलिन नही करना चाहता हूँ, '√ग्लै + पुक् + णिच् + सन् + लट् (मिप्)' । न वा चिखेदयिषामि = न ही खिन्न करना चाहता हूँ, '√खिद् + णिच् + सन् (मिप्), 'सन्' प्रत्यय इच्छा के अर्थ मे होता है । विचिन्त्य = विचार करके ।

सकलकलाकलापकलन = समस्त कलाओ के निर्माता, सकला कला तासाम् कलाप तस्य कलन (तत्पु) । सकलकालन = सभी को नष्ट करने वाला, 'सकलान् कालयतीति' । काल = महाकाल 'कालो मृत्यौमहाकाले समये यमकृष्णयो' (अमरकोष) । पय पूरपूरितानि = जल प्रवाह से पूर्ण । अकूपार-तलानि = समुद्रतल 'समुद्रोऽब्धिरकूपार' (अमरकोप) । मरुकरोति = मरुस्थल के समान कर देता है 'अभूततद्भावेकर्त्तरि च्वि' से 'च्वि' प्रत्यय । 'सिंह व्याप्तानि' = सिंह, बाघ, भालू, गैंडा, फेरु (शृगाल), शश (खरगोश) आदि को हजारो की सख्या से युक्त (जगल का विशेपण) सिंहाश्च, व्याघ्राश्च, भल्लूकाश्च, गण्डकाश्च, फेरवश्च, शशाश्च, तेपा सहस्त्राणि, तै व्याप्तानि (तत्पु०) । जनपदीकरोति = जनपद (नगर) के समान बना देता है, जनपद से 'च्वि' प्रत्यय हुआ है । 'मन्दिरप्रासाद गोष्ठमयानि' = मन्दिरो, प्रासादो (राज-

महलो) हर्म्यं (महलो), "शृङ्गाटको (चौराहो), चत्वरो (प्रागणो), उद्यानो, तडागो (जलाशयो) एव गोष्ठो (गोशालाओ) आदि से युक्त (नगर का विशेषण)। काननीकरोति = जगल के समान कर देता है, 'कानन + च्वि' (अभूततद्भाव अर्थ मे)। नरीक्ष्यताम = देखिये । यायजूकै = याजिको के द्वारा, 'इज्याशीलो-यायजूक' (अमरकोप)। राजसूयादियज्ञा = राजसूय आदि यज्ञ, वेदो मे विविध यज्ञो का विविध इच्छाओ की पूर्ति हेतु विधान है। वर्षवाताऽऽतपहिमसहानि = वर्षा,वायु (आँधी), आतप (धूप) और हिमपातादि का जिसमे सहन किया जाता है (तपासि का विशेपण), वर्षाश्च वाताश्च आतयाश्च हिमाश्च ते, त एव सह्यन्ते येपु तानि । तपासि = तपस्योयवे । [प्रतापिपत तपी गई थी अर्थात् तपस्या की की गई थी, '√तप + लुङ् + झ' (भावकर्म)। सम्प्रति = इस समय । म्लेच्छै = यवनो के द्वारा। हन्यन्ते = मारी जा रही है, हन् + यक् (भाव कर्म) + लट् (झि) । विदीर्यन्ते = फाडे जा रही है, वि + √दृ + यक् + लट् (झि)'। समृद्यन्ते = कुचली जा रहे हैं । व्ययाजिषत = सम्पादित किए जाते थे, 'वि + √यज् + लुङ् (झ) । मन्दुरीक्रियन्ते = घुडसाल बनाए जा रहे है, मन्दुर = घुडसाल, 'वाजिशाला तु मन्दुरा' (अमरकोष) 'मन्दुरी' मे 'च्वि' प्रत्यय हुआ है। सत्य = सती स्त्रियाँ। सन्ताप्यन्ते = सतप्त किये जाते हैं। धीरधौरेय = धैर्य शालियो मे श्रेष्ठ, 'धीरेषु धौरेय' (तत्पु०) । विधुरयसि = छोड रहे हो। आकलय्य = धारण करके, 'आ + √कल + ल्यप' । यवनराजावृतान्तम् = यवन-राज्य के वृत्तान्त को, यवनाना राज्य तस्य वृत्तान्त, तम् (तत्पु०)। किमिति = क्यो यह । अनावश्यक म् अपि = अनावश्यक होते हुए भी । शुश्रूषते = सुनने की इच्छा कर रहा है, '√श्रु + सन् + त' तूष्णीम् = शान्त (चुप्पी) । अवतस्थे = धारण कर लिया,अव + स्थ + लिट् (त) ।

टिप्पणी—(१) 'हरिद्राद्रवक्षालितमिव' मानो हल्दी के रग से धुला हुआ हो, यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार है।

(२) 'सकलकला केलापकलन सकलकालन कराल काल' मे कला-कला, कल-कल तथा काल-काल मे सभग पद यमक है।

(३) 'सकल कला' से 'काननी करोति' एक अनुप्रास छटा आकर्पक है।

(४) लेखक 'सन् ' प्रत्ययान्त तथा भावकर्म को प्रयोग की ओर विशेष

झुका है। च्वि' प्रत्यय वाले शब्दो का विशेप प्रयोग किया गया हे। इससे लेखक के व्याकरण के विशेष ज्ञान का परिचय मिलता है। तथापि सरल शब्द-योजना के कारण गद्यप्रवाह तथा भावो को हृदयगम करने मे कोई वाधा नही आ सकी है अपितु उत्कृष्टता ही आई है।

(५) देश की पूर्व स्थिति और तत्कालीन स्थिति के सुन्दर वर्णन के साथ ही विषमालकार भी है।

अथ स मुनि —"भगवन्! धैर्येण, प्रसादेन, प्रतापेन, तेजसा, वीर्येण विक्रमेण, शान्त्या, श्रिया, सौख्येन, धर्मेण विद्यया च सममेव परलोक सनाथितवति तत्र भवति विक्रमादित्ये शनै शनै पारस्परिक विरोध-विशिथिलीकृतस्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनी-भ्रूभङ्ग-भूरिभाव-प्रभाव पराभूत वैभवेषु भटेपु स्वार्थ-चिन्ता-सन्तान-वितानैकतान्येष्वमात्यवर्गेषु, प्रशसामात्रप्रियेपु प्रभुषु, "इन्द्रस्त्व वरुणस्त्व कुबेरस्त्वम्" इतिवर्णनामात्र-सक्तेषु वुधजनेषु कश्चन गजनीस्थाननिवासी महामदो यवन ससेनः प्राविशद् भारतेवर्षे। स च प्रजा विलुण्ठय, मन्दिराणि निपात्य, मतिमा-विभिद्य पग्शशतान जनाश्च दासीकृत्य, शतश उष्ट्रेपु रत्नान्यारोप्य स्वदेश-मनैपीत्। एव स ज्ञातास्वाद पौन पुन्येन द्वादशवारमागत्य भारतमलुलु-ण्ठत्। तस्मिन्नेव च स्वसरम्भे एकदा गुर्जरदेश चूडायित सोमनाथ तीर्थ-मपि धूलीचकार।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद उन मुनि ने कहना आरम्भ किया—"भगवन्! धैर्य, प्रसन्नता, प्रताप, तेज, बल, विक्रम, शान्ति, लक्ष्मी, सुख, धर्म और विद्या के साथ ही श्रेष्ठ वीर विक्रमादित्य के परलोक को सनाथित करने पर (स्वर्ग चले जाने पर), धीरे-धीरे राजाओं के परस्पर विरोध के कारण स्नेह बन्धन के शिथिल (ढीले) हो जाने पर, वीरो के कामिनियो के कटाक्षो और हाव-भाव के प्रभाव मे आने से सम्पूर्ण सम्पत्ति के नष्ट कर देने पर, अमात्यो (मन्त्रियो) के एकमात्र स्वार्थ की चिन्ता मे परायण हो जाने पर (लग जाने पर), राजाओ के प्रशसामात्र के प्रेमी हो जाने पर और विद्वानो के "तुम इन्द्र हो, तुम वरुण

हो, तुम कुबेर हो" इस प्रकार के वर्णनो मे आसक्त हो जाने पर कोई गजिनी स्थान का निवासी महामदशाली (महमूद गजनवी नामक) यवन, सेना के सहित भारतवर्ष मे प्रवेश किया। वह प्रजा को लूटकर, मन्दिरो को गिराकर, प्रतिमाओ को तोडकर, सैकडो लोगो को दास बनाकर सैकडो ऊँटो पर रत्नो को लादकर अपने देश ले गया। इस प्रकार स्वाद को जानने वाला (वह यवनराज) बार-बार यहाँ आकर भारतवर्ष को बारह बार लूटा। अपने उन्हीं आक्रमणो मे एकबार उसने गुजरात देश के आभूषण के समान सोमनाथ तीर्थ को भी धूलि मे मिला दिया।

संस्कृत-व्याख्या—अथ-तदनन्तरम्, स मुनि = ब्रह्मचारिगुरु (अवदत् इति-शेष) "भगवन् = महामुने, धैर्येण = धीरतया, प्रसादेन = प्रसन्नतया, प्रतापेन = प्रभावेण, तेजसा = प्रभया, वीर्येण = बलेन, विक्रमेण = पराक्रमेण, शान्त्या = शमेन, श्रिया = शोभया, सौख्येन = घनेन- धर्मेण = सदाचारेण, विद्यया = वेद-शास्त्रादिना, च, समम् एव = सहैव, तत्रभवति = श्रेष्ठे, वीरविक्रमादित्ये = एतन्नामके राज्ञि, परलोकम = स्वर्गम्, सनाथितवति = विराजितवति, शनै-शनै = कालक्रमेण, पारस्परिक = मिथ, विरोध तेन, विशिथिलीकृतानि = शिथिलतामापादितानि, स्नेहबन्धानि = स्नेह सूत्राणि यै तेपु, राजसु = नृपेषु, भामिनीनाम् = कामिनीनाम्, भ्रूभङ्गा = सकटाक्षेक्षणानि, भूरिभावा = हाव-भावाद्याश्च, तेषा, प्रभावेण - आसक्त्या, पराभूतानि = तिरस्कृतानि, वैभवानि = धनानि, येषा, तेपु, भटेषु वीरेपु, स्वार्थचिन्ता सन्तान-वितानैकतानेषु = स्वार्थ-चिन्तामात्रपरायणेपु, अमात्य वर्गेपु = मन्त्रि वर्गेषु, प्रशसामात्रप्रियेषु = आत्म-श्लाघा प्रियेपु, प्रभुपु = राजसु, "इन्द्रस्त्वम् = इन्द्रोभवान्, वरुणस्त्वम् = भवान वरुण, कुबेरस्त्वम् = धनदोभवान्" इति = एवम्, वर्णनमात्रसक्तेषु = वर्णन ससक्तेपु बुधजनेपु = विद्वत्सु, कश्चन = कोऽपि, गजिनीस्थाननिवासी = गजिनी वास्तव्य, महामद = महमूद नामक, यवन = म्लेच्छ, ससैन = चमूभि सहित, भारतवर्षे = इहदेशे, प्राविशत् = प्रवेश कृतवान्। स च = महमूद प्रजा जनान्, विलुण्ठ्य = लुण्ठयित्वा, मन्दिराणि = देवालयान्, निपात्य = पातयित्वा, प्रतिमा = मूर्ती विभिद्य = विदीर्य, पराशतान = शताधिकान् जनान = देश-वासिन, दासीकृत्य = भृत्यीकृत्य, शतश = उष्ट्रेपु, रत्नानि = रत्नराशी,

आरोप्य = स्थापयित्वा, स्वदेश = गजिनीम्, अनैपीत = प्रापयत्। एव = इत्थम्, स = महमूद, ज्ञातास्वाद = गृहीतरस पौन पुन्येन अनेकावृत्या, द्वादश-वारम्, आगत्य = प्राप्य, भारतम् = एतद्देशम्, अलुलुण्ठत् लुण्ठितवान्। तस्मिन् एव = उक्त एव, स्वसरम्भे = स्वकीये आक्रमणे, एकदा = एकवारम्, गुर्जरदेश-चूडायितम् = गुर्जरदेशचूडाभूतम्, सोमनाथतीर्थम् = एतन्नामक तीर्थम्, अपि, धूली चकार = नाशयामास।

हिन्दी-व्याख्या—अथ = योगिराज के शान्त हो जाने पर। समुनि = ब्रह्म-चारी गुरु ने ('कहना आरम्भ किया' यह आगे से जोडा जायगा)। भगवन = योगिराज का सम्बोधन। धैर्येण = धैर्य से। प्रसादेन = प्रसन्नता से, 'प्रसादस्तु प्रसन्नता'। तेजसा = क्षात्र तेज से। 'धैर्येण' से 'विद्यया' तक सभी पदो मे तृतीया विभक्ति 'समम्' के योग मे हुई है। समम् एव = साथ ही। परलोकम् स्वर्गलोक को (मृत्यु के लिये आता है)। तत्र भवति = श्रेष्ठ, (यस्य भावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी विभक्ति), तत्र भवान्' का प्रयोग श्रेष्ठ के अर्थ मे होता है। वीरविक्रमादित्ये = वीरविक्रमादित्य के। सनाथितवति = सनाथित होने पर। 'पारस्परिक बन्धनषु' = पारम्परिक विरोध के कारण शिथिल कर दिया गया है स्नेह बन्धन जिनका ऐसे (राजसु का विशेषण), पारस्परिक. विरोध तेन विशिथिलीकृतानि स्नेहबन्धनानि यैस्तेपु (ब० वी०)। राजसु = राजाओ के। 'भामिनी वैभवेषु' = कामनियो के कटाक्ष तथा हाव भाव के प्रभाव से सम्पूर्ण सम्पत्ति समाप्त कर देने पर ('भटेषु' का विशेषण) 'भामिनीनाम् भ्रूभङ्गा भूरिभावाश्च तेपा प्रभावेण पराभूतानि वैभवानि येषा तेषु तादृशेपु' (ब० ब्री०)। भटेषु = वीरो के। अमात्यवर्गेषु = अमात्यो (मन्त्रियो) स्वार्थचिन्तासन्तानवितानैकतानेषु = स्वार्थ की चिन्ता मे ही लगे होने पर, 'स्वार्थे चिन्ता, तस्या सन्तानवितानैकताना येपा तेषु'। प्रभुषु = राजाओ के। प्रशसामात्रप्रियेषु = प्रशसा मात्र के प्रेमी हो जाने पर, प्रशसामात्रम् प्रियम् येपा, तेपु'। इन्द्रस्त्वम = तुम इन्द्र हो। वरुणस्त्वम् = तुम वरुण हो। कुबेरस्त्वम् = तुम कुवेर हो। इति = इस प्रकार के। वर्णनमात्रसक्तेषु = वर्णन (कथन) मे ही आसक्त हो जाने पर। बुधजनेपु = विद्वानो के। गजिनीस्थाननिवासी = गजिनी मे रहने वाला। महामद = महामदशाली अर्थात् 'महमूद' 'महमूद

गजनवी' इतिहास का प्रसिद्ध राजा है। उसने भारत पर बारह बार आक्रमण करके देश को लूटा है।

ससेन =सेना के साथ, सेनया सहित, ससेन । प्राविशत् =प्रवेश किया, प्र+ √विश+लङ् (तिप्) । प्रजा =प्रजाओ को । विलुण्ठ्य =लूटकर, 'वि √लुण्ठ+ल्यप्' । निपात्य =गिराकर । विभिद्य =भेदन करके (तोड करके), 'वि+ √भिद्+ल्यप्' । परश्शतान् =सैकडो । दासीकृत्य =दास बनाकर, 'दास' से 'च्वि' प्रत्यय हुआ है । उष्ट्रेषु =ऊँटो पर । रत्नानि =विविध प्रकार के रत्नो को । आरोप्य =लादकर, 'आ+ √ रोप्+ल्यप्' । प्रनैषीत =ले गया, √णीञ्(प्रापणे)+लुङ् (तिप)' । ज्ञातास्वाद =स्वाद को जान लेने वाला, "ज्ञात आस्वाद येन स' । पौनपुन्येन =बार-बार करके । अलुलुण्ठत् =लूटा √'लुण्ठ+लङ् (तिप्)' । स्वसरम्भे —अपने आक्रमण मे । गुर्जरदेश चूडायितम् =गुजरात प्रदेश के चूडामणि (शाभूषण) के समान, चूडा इव जात मिति चूडायितम्-'चूडा+क्यच्+इ+क्त' । धूलीचकार. =धूलि मे मिला दिया ।

टिप्पणी—(१) "अथ स मुनि भारतवर्षे' मुनि योगिराज से बता रहे हैं कि अनेक सद्गुणो के वीर विक्रमादित्य के मर जाने पर, राजाओ मे आपसी फूट हो गई, भोग-विलास मे लिप्त रहने लगे, चाटुकारिता के प्रेमी हो गये और अमात्य वर्ग भी स्वार्थ की ही चिन्ता मे रहने लगे । ये सब ऐसे दुर्गुण है जिनसे किसी भी राजा, राष्ट्र, समाज या व्यक्ति की पराजय या विनाश हो सकता। इसी का परिणाम था कि यवन राज महमूद गजनवी अपनी सेना के साथ आक्रमण करके यहाँ के सभी राजाओ को जीत लिया । भारवि ने भी लिखा है—

"सदानुकूलेषु हि कुर्वते रति
नृपेष्वमात्येषु च सर्व सम्पद ।"

(२) 'धैर्य-प्रसाद' आदि के साथ ही विक्रमादित्य ने स्वर्गलोक को अलकृत किया है, अत सहोक्ति अलकार है ।

(३) 'गुर्जर तीर्थम्' गुजरात मे सोमनाथ का एक मन्दिर था जिसमे प्रभूत रत्न था, वह मन्दिर गुजरात प्रदेश के शिरोमणि के समान था । महमूद गजनवी उस मन्दिर को भी तोडकर सब धन उठा ले गया ।

अद्य तु तत्तीर्थस्य नामापि केनापि न स्मर्यते, पर तत्समये तु लोकोत्तर तस्य वैभवमासीत। तत्र हि महार्हं वैदूर्य पद्मराग-माणिक्य-मुक्ता फलादि-जटितानि कपाटानि, स्तम्भान्, गृहावग्रहणी, भित्ती, वलभी निटङ्कानि च निर्मथ्य, रत्ननिचयमादाय, शतद्वयमणसुवर्ण-शृङ्खलावलम्बिनी चञ्च-च्चाकचक्य-चकितीकृतावलोचक-लोचन-निचया महाघण्टा प्रमह्य सगृह्य, महादेवमूर्तावपि गदामुदतूतुलत्।

हिन्दी-अनुवाद—आज तो उस तीर्थ का नाम भी किसी के द्वारा स्मरण नहीं किया जाता, किन्तु उस समय तो उसका वैभव लोकोत्तर था। वहाँ पर बहुमूल्य वैदुर्य (मूगा), पद्मराग, हीरे और मोतियो से जडे किवाडो को तथा खम्बो, देहलियो, दीवारो, वल्लिगो और विटङ्को (कबूतरो के दरबो) को मथ कर (सम्पूर्ण) रत्नराशि को लेकर, दो सौ मन सोने की जजीर मे लटकने वाले तथा देदीप्यमान चाकचिक्य से दर्शको के नेत्रो को चकाचौंध कर देने वाले महाघंटा को भी बलात् (जबर्दस्ती) प्राप्त करके महादेव की मूर्ति पर भी (उस महमूद ने) गदा उठाई।

संस्कृत-व्याख्या—अद्य तु = इदानीन्तु, तत्तीर्थस्य = सोमनाथ तीर्थस्य नामापि = अभिधानमपि, केनापि = केनचिदपि, न, स्मर्यते = गृह्यते, परम् = किन्तु, तत्समये = तत्काले, तु तस्य = मन्दिरस्य, वैभवम् = सम्पत्, लोकोत्तरम् = अपरिमितम् आसीत्। तत्र हि = तस्मिन् मन्दिरे, महार्हाणि = बहुमूल्यानि, वैदूर्या = वैदूर्य मणय, पद्मरागा, माणिक्या मुक्ताफलानि चेत्यादय मणिविशेपा, तै जटितानि = प्रयुक्तानि, कपाटानि = द्वाराणि, स्तम्भान् = दण्डविशेपान्, गृहावग्रणी = देहली, भित्ती = कुड्यानि, वलभी = गोपानसी, विटकानि = कपोतवास्तव्यानि, च, निर्मथ्य = सम्यगन्विष्य, रत्ननिचय = रत्नराशिम्, आदाय = गृहीत्वा, शतद्वयमणसुवर्णशृङ्खलावलम्बिनीम् = शतद्वय हेमनिर्मित शृङ्खलायाम् अवलम्बिनीम्, चञ्चत् = समुच्छलत्, चाकचक्यम् = चमत्कार, तेनचकितीकृत = विस्मेरीकृत अवलोचकलोचनाना द्रष्टृजननेत्राणाम् निचय यया सा ताम महाघण्टाम् = महाध्वनिकाम् प्रमह्य = बलात् सगृह्य = गृहीत्वा, महादेवमूर्तौ = शकर प्रतिमायाम् अपि, गदाम् = शस्त्र विशेपाय, उदतूतुलत् = उदतिष्ठियत्।

हिन्दी-व्याख्या—तत्तीर्थस्य = सोमदेव तीर्थ का । स्मर्यते = स्मरण किया जाता है, '√स्मृ + लट् (त)' । लोकोत्तरम् अति प्रचुर । वैभवम् = सम्पत्ति । महार्ह जटितानि' बहुमूल्य मूगें, पद्मराग, हीरे और मोतियो से जडा हुआ, महार्हा वैदूर्या पद्मरागा, माणिक्या मुक्ताफलानि च ते, तै जटितानि (तत्पु०) । कपाटानि = किवाडो को । स्तम्भान् — खम्भो को । गृहावग्रणी = देहली को । भित्ती = दीवारो को । वलभी = वल्ली या छज्जा को, "गोपावसी तु वलभीच्छादने वक्रदारुणी" (अमरकोष) । विटङ्कानि = कबूतरो के दरबों को । निर्मथ्य = मथकर 'निर् + √मथ + ल्यप्' । रत्न निचयम् = रत्न राशि को, रत्नाना निचय तम् । आदाय = लेकर । शतद्वयमणसुवर्णशृंखलावलम्बिनीम् = दो सौ मन सोने की जजीर मे लटकने वाले, मण = 'मन' एक प्रकार तौल । चञ्चत् निचया' = समुच्छलित चाकचिक्य से दर्शको के नेत्रो को चकित कर देने वाले, 'चञ्चता चाकचाक्येन् तेन चकितीकृतः अवलोचकाना लोचनानि तेपा निचय, यया सा ताम् (व० व्री०) । महाघण्टाम् = महाघण्टा को । प्रसह्य = बलपूर्वक, 'प्र + √सह + ल्यप्' । सग्रह्य = लेकर । उदतूतुलत् = उठाई, 'उत् + √तुल (माने, चुरादि) + लुङ् (तिप्) ।

टिप्पणी—(१) सोमनाथ मन्दिर के वैभव का वर्णन करने से उदात्तालकार है ।

(ii) 'चञ्चत् निचयाम्' मे अनुप्रास की छटादर्शनीय है ।

अथ "वीर ! गृहीतमखिल वित्त, पराजिता आर्यसेना, बन्दीकृता, वयम्, सचितममल यश, इतोऽपि न शाम्यति ते क्रोधश्चेदस्मास्ताडय, मारय, छिन्धि, भिन्धि पातय, मज्जय, खण्डय, कर्तय, ज्वलय, किन्तु त्यजेमामकिंचित्करी जडामहादेव-प्रतिमाम् । यद्येवं न स्वीकरोषि तद् गृहाणास्मत्तोऽन्यदपि सुवर्णकोटिद्वयम्, त्रायस्व, मैना भगवन्मूर्ति स्प्राक्षी" इति साम्रेड कथयत्सु रुदत्सु पतत्सु विलुण्ठत्सु प्रणमत्सु च पूजकवर्गेषु, 'नाह मूर्तीर्विक्रीणामि, किन्तु भिनद्मि' इति सगर्ज्य जनताया हाहाकार-कल-कलमाकर्णयन् घोरगदया मूर्तिमतुत्रुटत् । गदा-

पातसमकालमेव चानेकार्बुदयद्मसुद्रामूल्यानि रत्नानि मूर्तिमध्यादुच्छलितानि परितोऽवाकीर्यन्त । स चदग्धमुख तानि रत्नानि मूर्तिखण्डानि च क्रमेलकपृष्ठेष्वारोप्य सिन्धुनदमुत्तीर्य स्वकीया विजयध्वजिनी गजिनी नाम राजधानी प्राविशत् ।

हिन्दी-अनुवाद—इसके बाद—"हे वीर ! तुमने सब धन ले लिया, आर्य सेना को पराजित कर दिया, हम सब को बन्दी बना लिया, निर्मल यश अर्जित कर लिया, यदि इतने पर भी तुम्हारा क्रोध शान्त नहीं हुआ तो हम सब को पीटो, मारो, चीर डालो, काट डालो, (पहाड से) नीचे गिरा दो, (समुद्र मे) डुबो दो, टुकडे-टुकडे कर डालो, कतर डालो, जला दो, किन्तु इस कुछ न करने वाली महादेव की जड प्रतिमा को छोड दो। यदि ऐसा भी स्वीकार न हो तो हम से दो करोड स्वर्ण मुद्रायें और ले लो, रक्षा करो, इस भगवान् शकर की मूर्ति का स्पर्श मत करो" इस प्रकार (मन्दिर के पुजारियो के) वार-बार कहने पर रोने पर (पैरो) पडने पर, (भूमि मे) लोटने पर और प्रणाम करने पर "मैं मूर्ति बेंचता नहीं हूँ किन्तु तोडता हूँ" इस प्रकार गरजकर जनता के हाहाकार के कोलाहल को सुनता हुआ (अपनी) भीषण गदा से (महमूद गजनवी) ने मूर्ति को तोड दिया। गदा के प्रहार के साथ ही अनेक अरब पद्म मुद्रा के मूल्य के रत्न मूर्ति के मध्य से उछले और चारो ओर फैल गये। और वह दग्धमुख (मुह जला) उन रत्नो और मूर्ति के टुकडो को ऊँट की पीठ पर लाद कर सिन्धु नदी उतर कर अपनी विजय-पताका वाली 'गजिनी' राजधानी मे प्रवेश किया।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = अनन्तरम्, "वीर = सुभट ! गृहीतम् = आदत्तम्, अखिलम् = सम्पूर्णम्, वित्तम् = धनम्, पराजिता = विजिता, आर्यसेना = मतसेना, वन्दीकृता = निरुद्धा, वयम् = आर्या सञ्चितम् = सगृहीतम्, अमलम् निर्मलं, यश = कीर्ति, इतोऽपि = एतावतापि, न शाम्यति = न शान्तो भवति, ते = तव, कोप = रोष, चेत् = यदि, अस्मान् = पूजकान्, ताडय = प्रताडय, मारय = दण्डय, छिन्धि = विदारय, भिन्धि = भेदय, पातय = प्रक्षिपतु, मज्जय = जललीन कुरु, खण्डय = खण्ड खण्ड कुरु, कर्तय = कर्त्तन कुरु ज्वलय = अग्नौ प्रज्वलय; किन्तु = परञ्च, इमाम् = एपाम्, अकिञ्चित् करीं = न किञ्चित्

कुर्वाणाम्, जडा = निश्चेष्टाम्, महादेव प्रतिमाम् = शङ्कर मूर्तिम्, त्यज = मुञ्च। यदि एव = यदि तत् न स्वीकरोपि = न मन्यसे, तद् = तर्हि, अस्मत्त = अस्मत्, अन्यदपि = एतदधिकमपि, सुवर्णकोटिद्वयम् = कोटिद्वयसुवर्णमुद्राम्, गृहाण = प्राप्नुहि, त्रायस्व = रक्ष, एना = इमाम्, भगवन्मूर्तिम् = ईश्वर प्रतिमाम्, मा स्प्राक्षी = न स्पर्शं कुरु, इति = एवम्, साम्रेडम् = बहुश, कथयन्सु = विनयत्सु, रुदत्सु = विलपत्सु, पतत्सु = पादयो गच्छत्सु, विलुण्ठत्सु = धरणा प्राप्तत्सु, प्रणमत्सु = नमत्सु, पूजकवर्गेपु = अर्चक समूहेषु, 'अहम् = महमूद मूर्ती = प्रतिमा, विक्रय करोमि, किन्तु, (ता)। भिनद्मि = खण्डयामि," इति = एवम् सगर्ज्य = गर्जन कृत्वा जनताया लोकस्य, हाहाकार कलकलम् = हाहे'ति व रण कोलाहलम्, आकर्णयन् = शृण्वन्, घोरगदया = भीषणगदया = मूर्तिम् = प्रतिमाम् अतुत्रुटत् = तुत्रोट, गदापात समकालमेव = गदाप्रहारसममेव, च अनकाव्दपद्ममुद्रामूल्यानि = एतत्पर्याप्तानि, रत्नानि = विविध-मण्यादीनि, मूर्तिमध्याद् = मूर्त्यन्तरात्, उच्छलितानि = उत्पतितानि, परित = इतस्तत, अवाकीर्यन्त = विकीर्णितानि। स च = महमूदश्च, दग्धमुख = दुष्ट, तानि विकीर्णितानि, रत्नानि = धनानि, मूर्तिखण्डानि = प्रतिमाशकलानि, च, क्रमेलक पृष्ठेपु = उष्ट्रेपु, आरोप्य = स्थापयित्वा, सिन्धुनदी = सिन्धु नामक सरित्, उत्तीर्य = तीर्त्वा, स्वकीया = निजा, विजयध्वजिनीम् = विजयध्वजवतीम्, गजिनी = नामाख्याम्, राजधानीम् = राजपुरम्, प्राविशत् = प्रविवेश।

हिन्दी-व्याख्या—गृहीतम् = ले लिया। अखिलम् = सम्पूर्ण। वित्तम् = धन को। पराजिता = हरा दी गई, 'पर + आ + √जि + क्त'। आर्यसेना = हिन्दुओं की सेनाएँ। बन्दीकृता = बन्दी बना लिये गये, 'बन्द + च्वि + √कृ + क्त' (स्त्री०)। सञ्चितम = सञ्चय किया। अमलम् = निर्मल। यश = कीर्ति को। इतोऽपि = इतने से भी। शाम्यति = शान्त होता है। अस्मान् = हम सबको। ताडय = पीटो। मारय = मारो। छिन्धि = चीर डालो,'√छिद् + लोट् (सिप्)'। भिन्धि = काट डालो,√भिदि + लोट् (सिप्)। पातय = गिरा दो (अर्थात् पहाड़ आदि से ढकेल दो)√'पत + णिच् + लोट (सिप्)। मज्जय = डुबा दो (जल मे डूबा दो)। खण्डय = टुकडे-टुकडे कर डालो। कर्तय = कतर डालो। ज्वलय = जला दो। अकिञ्चित्करीम् = कुछ न करने वाली, 'किञ्चि-

त्करोति इति किञ्चित्करा, न किञ्चित्करा इति अकिञ्चित्करा, ताम्। जडाम् जड, (ये दोनो पद मूर्ति के विशेषण है), इन दोनो विशेषणो से यह सकेत किया गया है कि न तो मूर्ति कुछ करने वाली हे और न ही जड (चेतना शून्य) होने के कारण उस मूर्ति के लिये ही कुछ किया जा सकता है। **स्वीकरोषि**=स्वीकार करते हो। **ग्रहाण**=ले लो। **अस्मत**=हमसे। **अन्यदपि**=और अधिक। **सुवर्णकोटिद्वयम्**=कोटीना द्वयम इति कोटिद्वयम्, सुवर्णस्य कोटिद्वयम् इति (तत्पु०), अर्थात् दो करोड स्वर्णमुद्रा। **त्रायस्व**=रक्षा करो। **भगवन्मूर्तिम्**=ईश्वर (शकर) की मूर्ति को। **मा स्प्राक्षी**=मत छुओ, 'स्पृश + लुङ् (सिप्)' 'माङ् (मा)' के योग के कारण लुङ् लकार हुआ हे किन्तु आट् नही हुआ। **साम्रेडम्**=बार-बार। **पूजकवर्गेषु**=पुजारियो के। **कथयत्सु**= कहने पर (शतृ + प्रत्यय। अग्रिम चार पदो मे भी 'शतृ' प्रत्यय है)। **रुदत्सु**= रोने पर। **पतत्सु**=पैरो पडने पर। **विलुण्ठत्सु**=भूमि मे लोटने पर। **प्रणमत्सु**=प्रणाम करने पर। **विक्रीणामि**=वेचता हूँ। **भिनद्मि**=तोडता हूँ। **सगर्ज्य**=गर्जना करके। **अतुत्रुटत**=तोड दिया। **गदापातसमकालमेव**=गदा के गिरने के साथ ही, 'गदाया पात तस्य समकालम्। **अनेकार्बुदपद्ममुद्रा-मूल्यानि**=अनेक अरब पद्म मुद्रा के मूल्य वाले। **मूर्तिमध्यात्**=मूर्ति के मध्य से। **उच्छलितानि**=उछल पडे (निकले)। **अवाकीर्यन्त**=फैल गये, अव + $\sqrt{}$कृ (विक्षेपे) + लङ् (झ) **दग्धमुख**=दुष्ट, दग्धम् मुखम् यस्य स अर्थात् 'मुँह-जला'। इसका प्रयोग दुष्ट या नीच व्यक्ति के लिये होता हे। **क्रमेलकपृष्ठेषु**= ऊँट के पीठ पर, 'क्रमेलकाना पृष्ठेषु इति (तत्पु०), 'उष्ट्रे क्रमेलकमयमहाङ्का" (अमरकोष)। **आरोप्य**=लादकर। **उत्तीर्य**=उतरकर 'उद् + $\sqrt{}$तॄ + ल्यप्' **विजयध्वजिनीम्**=विजयपताका से युक्त। **प्राविशत्**=प्रवेश किया, प्र + विश् $\sqrt{}$ + लङ् तिप्)।

टिप्पणी—पराजित हिन्दुओ की दुर्दशा के साथ ही महमूद की क्रूरता और हठता का वर्णन किया गया हे।

अथ कालक्रमेण सप्ताशीत्युत्तरसहस्त्रमे (१०८७) वैक्रमाब्दे सशोक संकष्टञ्च प्राणास्त्यक्तवति महामदे, गोरदेशवासी कश्चित् शहाबुद्दीन-

नामा प्रथम गजिनीदेशमाक्रम्य, महामदकुल धर्मराजलोकाध्वन्यध्वनीन विधाय, सर्वा प्रजाश्च पशुमार मारयित्वा तद्रुधिरार्द्रमृदा गोरदेशे वहून् गृहान् निर्माय चतुरङ्गिण्यानीकिन्या भारतवर्षंप्रविश्य, शीतलशोणितानप्यसयन् पञ्चाशदुत्तर द्वादशशतमितेऽब्दे (१२५०) दिल्लीमश्वयाम्बभूव।

हिन्दी अनुवाद—तदनन्तर, कालक्रम से विक्रम संवत् १०८७ में कष्ट और शोक के साथ महमूद के प्राण त्याग देने पर 'गोर देश' निवासी कोई शहाबुद्दीन नामक (यवन) पहले गजिनी देश पर आक्रमण करके महमूद (गजनवी) के वंशजों को धर्मराज के लोक के पथ का पथिक बनाकर, सभी प्रजाजनों को पशुओं के समान मारकर, उन्हीं के रुधिर से गीली मिट्टी से गोरदेश में बहुत से घर बनाकर, चतुरङ्गिणी सेना के साथ भारतवर्ष में प्रवेश करके शीतल रक्त वाले (युद्ध की इच्छा न रखने वाले भारतीयों को भी) तलवार का निशाना बनाते हुए १२५० में दिल्ली को अश्वारोहियों से घेर लिया।

संस्कृत-व्याख्या—अथ = तदनन्तरम्, कालक्रमेण = काल महिम्ना, सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे शताब्दे = एतस्मिन् संवत्सरे, सशोकम् शोकान्वितम्, सकष्टम् = सखेदम् च प्राणान् = असून, त्यक्तवति = मुक्तवति, महामदे = महमूदे, गोरदेशवासी = गोरदेशवास्तव्य, कश्चित् = एक, शहाबुद्दीन नामा = तन्नामक, प्रथमम् = आदौ, गजिनीदेशम् महमूदराजधानीम्, आक्रम्य = सरम्भ्य, महामदकुलम् = महमूद वंशजम्, धर्मराज लोकाध्वनि = यमलोकमार्गे, अध्ववीनम् = पान्थम्, विधाय = सम्पाद्य, सर्वा प्रजा = तद्देशनिवासिन, पशुमारम्, पशुवत् मारम् मारयित्वा = निहत्य, तद्रुधिरार्द्रमृदा = निहतजनरक्तासिक्तमृत्तिकया, गोरदेशे, स्वदेशे वहून = प्रचुरान् गृहान् = हर्म्यान्, निर्माय = निर्माण कृत्वा, चतुरङ्गिण्या = चतुर्भिरङ्गैः सहितया, अनीकिन्या = सेनया, भारतवर्षम् = ध्यन्, पञ्चा-आगत्य, शीतलशोणितानपि = अयुयुत्सून् अपि, असयन् = असिना एतददेशम्, प्रविश्य = शदुत्तरद्वादशशतमितेऽब्दे = एतस्मिन् संवत्सरे, दिल्ली = भारतस्य राजधानीम्, अश्वयाम्बभूव = अश्वैः अतिचक्राम।

हिन्दी-व्याख्या—कालक्रमेण = समय के फेर से। सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे = एक हजार सत्तासी, सप्ताशीति = सात + अस्सी = सत्तासी उत्तरं सहस्रतमे

=अधिक हजार से अर्थात् १०८७ मे। वैक्रमाब्दे=विक्रमादित्य के द्वारा चलाये गये सवत् मे। प्राणान्=प्राणो को, 'प्राण' शब्द का प्रयोग बहुवचन मे ही होता है। गोरदेशवासी=गोरदेश मे रहने वाला, सिन्धु नदी से पश्चिम यवनो का देशविशेष है। शहाबुद्दीन नामा=शहाबुद्दीन गोरी नामक एक यवन राजा था। आक्रम्य=आक्रमण करके, 'आ+क्रम+ल्यप्'। धर्मराजलोकध्वनि =धर्मराज के लोक के मार्ग पर, 'धर्मराजस्य लोक तस्य अध्वनि (तत्पु०)'। अध्वनीनम्=पथिक। पशुमारम्=पशु के समान मौत से। मारयित्वा=मार-कर। तद्रुधिरार्द्रमृदा=उन्ही रुधिर से गिली मिट्टी से, तेपा रुधिरेण आर्द्रा मृत् तया (तत्पु०)। निर्माय=बनाकर। चतुरङ्गिण्या=चतुरङ्गिणी (सेना का विशेषण) पहले सेना के चार अग होते थे—गजारोही, अश्वारोही, रथी तथा पदाति (पैदल) 'हस्त्यश्वरथपादात सेनाङ्गम् स्याच्चतुष्टयम्' (अमरकोप)। अनीकिन्या=सेना के साथ, अनीका सन्ति अस्यामिति अनीकिनी (सेना), तया, 'विनापितद्योग तृतीया' सह का योग न होने पर भी उस अर्थ की प्रतीति के कारण तृतीया हुई है। प्रविश्य=प्रवेश करके। शीतलशोणितान्=ठडे खून वाले (भारतीयो को), 'शीतल शोणितम् येपा तान्' (न० ब्री०)। भावार्थ हुआ युद्ध की इच्छा न रखने वालो को। असयन=तलवार के घाट उतारते हुए। अश्वायाम्बभूव=अश्वो से युक्त कर दिया अर्थात् अश्वारोहियो से घेर लिया, 'अश्वै अति चक्राम इति' अतिक्रमण अर्थ मे 'तेनातिक्रामति' से 'णिच्' और 'भू' प्रयोग होकर यह रूप बनता है।

टिप्पणी—(१) 'पशुमारम् मारयित्वा' मे लुप्तोपमा अलकार है।

(२) लेखक ने काल-क्रम से भाग्यचक्र के परिवर्तन का सकेत किया है—"चक्रारपक्तिरिव गच्छति भाग्य पंक्ति"।

ततो दिल्लीश्वर पृथ्वीराज कान्यकुब्जेश्वर जयचन्द्रश्च पारस्परिक-विरोध-ज्वर-ग्रस्त विस्मृत राजनीति भारतदर्पदुर्नग्यायमाणमाकलय्या-नायासेनोभावपि विशस्य, वाराणसीपर्यन्तमखण्डमण्डलमकण्टकोटकिट्ट महारत्नमिव महाराज्यमङ्गीचकार। तेन वाराणस्यामपि वहवोऽस्थिगिरय

प्रचिता रिङ्गत्तरङ्ग-भङ्गा-गङ्गाऽपि शोणितशोणा शोणीकृता, परस्सहस्र-देवमन्दिराणिभूमिसात्कृतानि ।

स एव प्राधान्येन भारते यावनराज्याङ्कुराऽऽरोपकोऽभूत् । तस्यैव च कश्चित् क्रीतदास कुतुबुद्दीननामा प्रथम भारतसम्राट् सजात ।

हिन्दी अनुवाद—तत्पश्चात् दिल्ली के राजा पृथ्वीराज और कन्नोज के राजा जयचन्द्र को पारस्परिक विरोधज्वर से ग्रस्त, राजनीति को भूले हुए तथा भारतवर्ष के आने वाले दुर्भाग्य को समझकर अनायास ही, दोनों को (पृथ्वीराज और जयचन्द्र को) मारकर, वाराणसी तक अखण्ड, निष्कण्टक तथा कीट और मल से रहित, महारत्न के समान (इस) महाराज्य को अपने अधिकार मे कर लिया । उसने वाराणसी मे भी हड्डियो के अनेको पहाड बना दिए । चचल तरगो वाली गगा को भी रक्त से रग कर लाल (रक्त) वर्ण का कर दिया और हजारो देव-मन्दिरो को धूलि मे मिला दिया ।

उसने ही मुख्यत भारतवर्ष मे यवन-राज्य का बीजारोपण किया । और उसी का ही कोई एक 'कुतुबुद्दीन' नामक गुलाम भारतवर्ष का प्रथम सम्राट् हुआ ।

सस्कृत-व्याख्या—तत = तत्पश्चात्, दिल्लीश्वरम्, दिल्लीनरेश पृथ्वीराजम् = एतन्नामक राजानम्, कान्यकुब्जेश्वर = कान्यकुब्जनरेश, जयचन्द्रम् = एतन्नामक नृपतिम्, पारस्परिकविरोधज्वरग्रस्तम् = पारस्परिककलह दोषदूषितम्, विस्मृतराजनीतिम् = राजनीतिज्ञानशून्य, भारतवर्षदुर्भाग्यायमाणम् = भारतवर्षस्य आयान्तम् दुर्भाग्यम्, आकलय्य = ज्ञात्वा, अनायासेन = सहजेन, उभौ अपि = पृथ्वीराज-जयचन्द्रावपि, विशस्य = घातयित्वा, वाराणसी पर्यन्तम् = वाराणसी यावत्, अखण्डमण्डलम् = समग्रमण्डलम्, अकण्टकम् = निर्विघ्नम्, अकीटकिट्टम् = कीटकिट्टविरहितम्, महारत्नमिव = महार्हशिलाखण्डमिव, महाराज्यम् = विस्तृत राज्यम्, अङ्गीचकार — अधिकृतवान् । तेन = शहाबुद्दीनेन, वाराणस्यामपि = एतन्नामकनगर्यामपि, बहव अत्यधिका, अस्थिगिरय = अस्थिसमूह, प्रचिता = निर्मिता, रिङ्गत्तरग भगा = चलदूर्मिभङ्गा, गङ्गाऽपि = सुरसरिदपि, शोणितशोणा = रक्त-रञ्जिता, शोणीकृता = शोणनदतां प्रापिता, परस्सहस्राणि = अनेक-सहस्राणि,

देवमन्दिराणि = देवालया, भूमिसात्कृतानि = धूलिसात्कृतानि । स एव = शहावुद्दीन एव, प्राधान्येन = प्रमुखतया, भारते = इह देशे, यवनराज्याङ्कुरारोपक = यवनराज्यस्य बीजारोपक, अभूत् = आसीत् । तस्यैव = शहावुद्दीनस्यैव, कश्चित् = एक, क्रीतदास = सेवक, कुतुबुद्दीननामा = एतन्नामक, प्रथमभारतसम्राट् = आदि भारतपति मजात = अभूत ।

हिन्दी-व्याख्या—पारस्परिकविरोधज्वरग्रस्तम् = आपसी फूट के ज्वर से ग्रस्त, पारस्परिक विरोध एव ज्वर तेन ग्रस्त तम् (तत्पु०) ।" विस्मृतराजनीतिम् = राजनीति को भूले हुए, पृथ्वीराज आदि राजा इस राजनीति को भूल गये थे कि अपने देश मे भले ही हम सब पृथक्-पृथक् हो, किन्तु बाहरी आक्रमण पर हम सब मिलकर एक हो जायेंगे तो हमारी शक्ति बढ जायगी, विस्मृता राजनीति येन तम्, "वय पञ्च वय पञ्च वय पञ्च शतञ्च ते । परैं साकम् विवादे तु वय पञ्चोत्तर शतम्" । (युधिष्ठिर नीति) । भारतवर्षदुर्भाग्यायमाणम् = भारतवर्ष की आने वाली दुर्दशा को । आकलय्य = समझकर । अनायासेन = बिना अधिक प्रयास के ही । विशस्य = मारकर । अकण्टम् = अकण्टक (निर्विघ्न), 'नास्ति कण्टका यस्मिस्तत्' । अकीटकिट्टम् = कीडे और मल से रहित अथवा कीडे के मल से रहित, न सन्ति कीटा किट्टम च यस्मिन् तत् अथवा नास्ति कीटानाम् किट्टम् यस्मिस्तत् (ब० ब्री०) । महारत्नमिव = महारत्न के समान । अङ्गीचकार = अधिकार कर लिया—'अङ्क + च्वि + कृ + लिट् (तिप्)' । अस्थिगिरय = हड्डियो के पहाड, हड्डियो के समूह के गिरि शब्द का प्रयोग बहुत बडे मानव-विनाश की सूचना के लिये किया गया है । प्रचिता = बना दिये गये । रिङ्गत्तरगभगा = चचल तरगो वाली, रिङ्गन्त तरङ्गा, तेपा भङ्गा यस्या सा (ब ब्री०) । शोणितशोणा = रक्त मे रगी हुई, शोणितेन शोणा । शोणीकृता = शोणनद के रूप मे बना दी गई, मेकल गिरि से निकली हुई शोण नदी है जिसका जल रक्त के समान लाल है । उसी प्रकार रक्त प्रवाह से गगा नदी भी बना दी गई । परस्सहस्राणि = हजारो । देवमन्दिराणि = देवताओ के मन्दिरो को । भूमिसात्कृतानि = भूमि मे मिला दिया गया । प्राधान्येन = मुख्य रूप मे । यवनराज्याङ्कुरारोपक = मुसलमानो के राज्य का बीजारोपण करने वाला, "यवनराज्यस्य अङ्कुरस्य आरोपक' (तत्पु०)" । क्रीतदास = खरीदा हुआ

दास अर्थात् गुलाम। प्रथमभारतसम्राट् = भारत का पहला सम्राट्, 'प्रथम भारतस्य सम्राट् इति'। सञ्जात = हुआ।

टिप्पणी— (१) हिन्दुओं के पराजय का सबसे मुख्य कारण था आपसी फूट। आपसी विरोध भाव, विनाश का कारण होता है।

(२) 'महारत्नमिव' मे उपमा अलकार है। 'अस्थिगिरय' यहां पर रूपक अलकार है। रिङ्गत्तरङ्ग देव मन्दिराणि' मे अनुप्रास का सुन्दर सन्निवेश है।

तमारभ्याद्यावधि राक्षसा एव राज्यमकार्षु । दानवा एव च दीना-नदीदलन । अभूतकेवल अकबरशाह-नामा यद्यपि गूढशत्रुभारतस्य-तथापि शान्तिप्रियो विद्वत्प्रियश्च । अस्यैव प्रपौत्रो मूर्तिमदिव कलियुग गृहीतविग्रह इव चाधर्म, आलमगीरोपाधिधारी अवरङ्गजीव सम्प्रति दिल्ली वल्लभता कलङ्कयति । अस्यैव पताका केकयेषु, मत्स्येषु, मगधेषु, अङ्गेषु वङ्गेषु कलिङ्गेषु च दोधूयन्ते, केवल दक्षिणदेशेऽधुनाऽप्यस्य परिपूर्णो नाधिकार सवृत्त ।

हिन्दी अनुवाद—उसी से लेकर आज तक राक्षसो ने ही राज्य किया। दानवो ने ही दीनो की हत्या की। केवल अकबर नामक बादशाह, यद्यपि भारत-वर्ष का गूढ़ शत्रु था, तथापि वह शान्तिप्रिय और विद्वानो का आदर करने वाला था। उसी का प्रपौत्र मूर्तिमान कलियुग के समान तथा साक्षात् शरीरधारी अधर्म के समान आलमगीर की उपाधि को धारण करने वाला 'अवरङ्गजेब' इस समय दिल्ली के शासन को कलकित कर रहा है। इसी की पताका पजाब, राज-पूत, मगध, अङ्ग, बङ्ग और कलिङ्ग मे फहरा रही है। केवल दक्षिण मे इस समय भी इसका पूरा अधिकार नहीं हुआ है।

सस्कृत-व्याख्या —तमारभ्य = आकुबुद्दीनात्, अद्यावधि = इदीन यावत्, राक्षसा = म्लेच्छा, एव, च, दीनान् = दुखितान्, अदीदलन् = अजीघतन । केवल = एकाकी, अकबरशाहनामा = एतन्नामक राजा, यद्यपि, भारतवर्षस्य = अस्य देशस्य, गूढशत्रु = गुप्तरिपु, अभूत् = आसीत्, तथापि (स) शान्तिप्रिय = शान्तस्वभाव, विद्वत्प्रियश्च = विबुधप्रिय, च (अभूत्)। अस्यैव = अकबर शाहस्यैव, प्रपौत्र' = पुत्रस्य पुत्र, मूर्तिमदिव = साक्षात् मूर्तिधारी, कलियुगमिव

=कालिकालमिव, गृहीतविग्रह=धृतशरीर, अधर्म इव=पाप इव, च, आलगीरोपाधिधारी – एतदुपाधि विशिष्ट अवरङ्गजीव=औरङ्गजेब इति नामक, सम्प्रति इदानीम्, दिल्ली वल्लभता=दिल्ली पतित्वम्, कलकयति= कलङ्कित करोति। अस्यैव=औरङ्गजेवस्यैव, पताका=विजयध्वजा, केकयेषु पजावदेशेषु, मत्स्येषु=राजपूतेषु, मगधेषु=विहारस्यदक्षिण भागेषु, अङ्गेषु= विहारस्यपूर्वभागेषु, वङ्गेषु=बङ्गालप्रान्तेषु, कलिङ्गेषु=उडीसाप्रान्तेषु च दोधूयन्ते=उद्धूयन्ते, केवल=एकम्, दक्षिणदेशे=दक्षिणप्रान्ते, अधुनापि= इदानीमपि, न, परिपूर्ण=समग्रतया, अधिकार.=आधिपत्यम्, सवृत्त= सञ्जात ।

हिन्दी-व्याख्या—तमारभ्य=कुतुबुद्दीन से लेकर। अद्यावधि=आज तक। अकार्षु=किये, "√कृ+लुङ् (झि)।" अदीदलन्=दलित किया (हिंसा की), 'दल+लङ् (झि)'। गूढशत्रु=गुप्तशत्रु। शान्तिप्रिय=शान्तिप्रेमी, 'शान्तिः प्रिया यस्मै स।' विद्वत्प्रिय=विद्वानो का सम्मान करने वाला, विद्वास प्रिया यस्य स'। अस्यैव=अकबरशाह का ही। प्रपौत्र=प्रपोत्र अर्थात् पुत्र का पुत्र (नाती)। मूर्तिमत्=मूर्तिमान्। कलियुगमिव=कलियुग के समान। गृहीत-विग्रह=शरीरधारी, 'गृहीत विग्रह येन स (ब० व्री०), विग्रह=शरीर। अधर्म=पाप। आलमगीरोपाधिधारी=आलमगीर की पदवी को धारण करने वाला। अवरङ्गजीव=औरङ्गजेब। सम्प्रति=इस समय। दिल्लीवल्लभता= दिल्ली के स्वामित्व को (शासन को), दिल्ल्या वल्लभ–दिल्ली वल्लभ, तस्य भाव–ताम्। कलङ्कयति=कलङ्कित कर रहा है। पताका=झण्डे। केकयेषु =केकय अर्थात् पञ्जाब देश मे, झेलम और चनाव के मध्य भाग को केकय कहा जाता था। भरत की माता 'केकयी' की जन्मभूमि यही थी। यवन काल मे इसे 'जलालपुर' कहा जाता था। मत्स्येषु=मत्स्यदेश मे, इन्द्रप्रस्थ से पश्चिम, दृष्द्वती मे दक्षिण तथा रेगिस्तान से पूर्व का भाग 'मत्स्य देश' कहलाता था। साम्प्रतिक नाम राजपूताना है। मगधेषु=दक्षिणी विहार मे, विहार प्रान्त का दक्षिणी भाग (गया आदि का भाग) मगध कहलाता था। अङ्गेषु= अङ्ग प्रान्त मे, पूर्वी विहार अर्थात् 'भागलपुर' का क्षेत्र 'अङ्ग' कहा जाता था। वगेषु=वङ्गाल मे। कलिङ्गेषु=कलिङ्ग मे, साम्प्रतिक नाम 'उडीसा' है।

दास अर्थात् गुनाम। प्रथमभारतसम्राट् = भारत का पहला सम्राट्, 'प्रथम भारतस्य सम्राडिति'। सञ्जात = हुआ।

टिप्पणी—(१) हिन्दुओं के पराजय का सबसे मुख्य कारण था आपसी फूट। आपसी विरोध भाव, विनाश का कारण होता है।

(२) 'महारत्नमिव' मे उपमा अलकार है। 'अस्थिगिरय' यहाँ पर रूपक अलकार है। रिङ्गत्तरङ्ग देव मन्दिराणि' मे अनुप्रास का सुन्दर सन्निवेश है।

तमारभ्याद्यावधि राक्षसा एव राज्यमकार्षु । दानवा एव च दीना-नदीदलन । अभूतकेवल अकबरशाह-नामा यद्यपि गूढशत्रुभारतस्य-तथापि शान्तिप्रियो विद्वत्प्रियश्च। अस्यैव प्रपौत्रो मूर्तिमदिव कलियुग गृहीतविग्रह इव चाधर्म, आलमगीरोपाधिधारी अवरङ्गजीव सम्प्रति दिल्ली वल्लभता कलङ्कयति। अस्यैव पताका केकयेषु, मत्स्येषु, मगधेषु, अङ्गेषु वङ्गेषु कलिङ्गेषु च दोधूयन्ते, केवल दक्षिणदेशेऽधुनाऽप्यस्य परिपूर्णो नाधिकार सवृत्त ।

हिन्दी अनुवाद—उसी से लेकर आज तक राक्षसो ने ही राज्य किया। दानवो ने ही दीनो की हत्या की। केवल अकबर नामक बादशाह, यद्यपि भारत-वर्ष का गूढ शत्रु था, तथापि वह शान्तिप्रिय और विद्वानो का आदर करने वाला था। उसी का प्रपौत्र मूर्तिमान कलियुग के समान तथा साक्षात् शरीरधारी अधर्म के समान आलमगीर की उपाधि को धारण करने वाला 'अवरङ्गजेब' इस समय दिल्ली के शासन को कलकित कर रहा है। इसी की पताका पजाब, राज-पूत, मगध, अङ्ग, वङ्ग और कलिङ्ग मे फहरा रही है। केवल दक्षिण मे इस समय भी इसका पूरा अधिकार नहीं हुआ है।

सस्कृत-व्याख्या—तमारभ्य = आकुतुबुद्दीनात्, अद्यावधि = इदीन यावत्, राक्षसा = म्लेच्छा, एव, च, दीनान् = दुखितान्, अदीदलन् = अजीघतन। केवल = एकाकी, अकबरशाहनामा = एतन्नामक राजा, यद्यपि, भारतवर्षस्य = अस्य देशस्य, गूढशत्रु = गुप्तरिपु, अभूत् = आसीत्, तथापि (स) शान्तिप्रिय = शान्तस्वभाव, विद्वत्प्रियश्च = विबुधप्रिय, च (अभूत्)। अस्यैव = अकबर शाहस्यैव, प्रपौत्र = पुत्रस्य पुत्र, मूर्तिमदिव = साक्षात् मूर्तिधारी, कलियुगमिव

=कालिकालमिव, गृहीतविग्रह=धृतशरीर, अधर्म इव=पाप इव, च, आलगीरोपाधिधारी – एतदुपाधि विशिष्ट अवरङ्गजीव =औरङ्गजेव इति नामक, सम्प्रति इदानीम्, दिल्ली वल्लभता=दिल्ली पतित्वम्, कलकयति= कलकित करोति। अस्यैव=औरङ्गजेवस्यैव, पताका = विजयध्वजा, केकयेषु पजावदेशेपु, मत्स्येपु=राजपूतेपु, मगधेपु = विहारस्यदक्षिण भागेपु, अङ्गेपु= विहारस्यपूर्वभागेपु, वङ्गेपु=वङ्गालप्रान्तेपु, कलिङ्गेपु– उडीसाप्रान्तेपु च दोधूयन्ते=उद्धूयन्ते, केवल=एकम्, दक्षिणदेशे=दक्षिणप्रान्ते, अधुनापि= इदानीमपि, न, परिपूर्ण =समग्रतया, अधिकार =आधिपत्यम्, सवृत्त = सञ्जात ।

हिन्दी-व्याख्या—तमारभ्य=कुतुबुद्दीन से लेकर। अद्यावधि=आज तक। अकार्षु =किये, "√कृ+लुङ् (झि)।" अदीदलन्=दलित किया (हिंसा की), 'दल+लङ् (झि)'। गूढशत्रु =गुप्तशत्रु। शान्तिप्रिय =शान्तिप्रेमी, 'शान्ति प्रिया यस्मै स।' विद्वत्प्रिय =विद्वानो का सम्मान करने वाला, विद्वास प्रिया यस्य स'। अस्यैव=अकबरशाह का ही। प्रपौत्र =प्रपोत्र अर्थात् पुत्र का पुत्र (नाती)। मूर्तिमत्=मूर्तिमान्। कलियुगमिव=कलियुग के समान। गृहीत-विग्रह =शरीरधारी, 'गृहीत विग्रह येन स (व० ब्री०), विग्रह=शरीर। अधर्म=पाप। आलमगीरोपाधिधारी=आलमगीर की पदवी को धारण करने वाला। अवरङ्गजीव =औरङ्गजेव। सम्प्रति=इस समय। दिल्लीवल्लभता= दिल्ली के स्वामित्व को (शासन को), दिल्ल्या वल्लभ–दिल्ली वल्लभ, तस्य भाव–ताम्। कलङ्कयति=कलङ्कित कर रहा है। पताका =झण्डे। केकयेषु =केकय अर्थात् पञ्जाब देश मे, झेलम और चनाव के मध्य भाग को केकय कहा जाता था। भरत की माता 'केकयी' की जन्मभूमि यही थी। यवन काल मे इसे 'जलालपुर' कहा जाता था। मत्स्येषु=मत्स्यदेश मे, इन्द्रप्रस्थ से पश्चिम, दृपद्वती मे दक्षिण तथा रेगिस्तान से पूर्व का भाग 'मत्स्य देश' कहलाता था। साम्प्रतिक नाम राजपूताना है। मगधेषु=दक्षिणी विहार मे, विहार प्रान्त का दक्षिणी भाग (गया आदि का भाग) मगध कहलाता था। अङ्गेषु= अङ्ग प्रान्त मे, पूर्वी विहार अर्थात् 'भागलपुर' का क्षेत्र 'अङ्ग' कहा जाता था। वगेषु=वङ्गाल मे। कलिङ्गेषु=कलिङ्ग मे, साम्प्रतिक नाम 'उडीसा' है।

दो धूयन्ते = फहरा रहे है । दक्षिणदेशे = महाराष्ट्रादि प्रान्तो में । अधुनापि = इस समय भी । पूरिपूर्ण पूर्ण रूप से । न सवृत - नहीं हो पाया है ।

टिप्पणी—(१) 'मूर्तिदिव कलियुगम्'='मानो कलियुग की मूर्ति हो' यहाँ उत्प्रेक्षा अलकार हे । मूर्तिमान कलियुग की सम्भावना की गई हे ।

(२) 'गृहीत विग्रह इव चाधर्म' अधर्म के शरीर धारण की सम्भावना की गई है, अत यहाँ पर उत्प्रेक्षा अलकार है ।

दक्षिणदेशो हि पर्वतबहुलोऽस्ति अरण्यानीसङ्कुलश्चास्तीति चिरोद्योगेनापि नायमशकन्महाराष्ट्रकेशरिणो हस्तयितुम्। साम्प्रतमस्यैवाऽऽत्मीयो दक्षिण-देशशाशकत्वेन "शास्तिखान" नामा प्रेष्यत इति श्रूयते । महाराष्ट्रदेशरत्नम्, यवन-शोणित-पिपासाऽऽकुलकृपाण, वीरता-सीमन्तिनी-सीमन्त-सुन्दर-सान्द्र-सिन्दूर-दान देदीप्यमान-दोदण्ड, मुकुटमणिर्महाराष्ट्राणाम, भूपण भटाना, निधिनीर्नीतानाम्, कुलभवनम कौशलानाम पारावार परमोत्साहानाम् कश्चन प्रात स्मरणीय स्वधर्माऽऽग्रह-गृह-गृहिल, शिव इव धृतावतार शिववीरश्चास्मिन् पुण्यनगरान्नेदीयस्येव सिंहदुर्गेससेनो निवसति। विजयपुराधीश्वरेण साम्प्रतमस्य प्रवृद्ध वैरम् । "कार्यं वा साधयेय देह वा पातयेयम" इत्यस्य सारगर्भा महती प्रतिज्ञा । सतीनाम्, सताम, त्रैवीर्णकस्य आर्यकुलस्य धर्मस्य, भारतवर्षस्य च आशा-सन्तान-वितानस्यायमेवाऽऽश्रय इयमेव वर्तमानादशा भारतवर्षस्य । किमधिकम् विनिवेदयामो योगवलावगतमकलगोप्यतम-वृत्तान्तेपु योगिराजेषु" इति कथयित्वा विरराम ।

हिन्दी अनुवाद—दक्षिण प्रदेश मे पर्वतो की अधिकता है, घने और बडे जगलों से व्याप्त है, इस कारण बहुत अधिक प्रयास करने के बाद भी महाराष्ट्र केशरी को (वह) जीत नहीं सका । 'इसी समय उसी का आत्मीय 'शाइस्त खाँ' दक्षिण प्रदेश के शासक के रूप मे भेजा जा रहा है' ऐसा सुना जाता है । महाराष्ट्र देश के रत्न, यवनो के खून की प्यासी तलवार वाले, वीरता रूपी नायिका के माँग मे सुन्दर और घना सिन्दूर दान करने से देदीप्यमान भुजाओ वाले,

मराठो के मुकुटमणि, वीरो के भूषण, नीतियो के निधि, निपुणताम्रो के कुलगृह परम उत्साह के सागर, प्रात स्मरणीय, अपने धर्म (सनातन धर्म) के पालन मे दृढ, अवतार धारण किये हुए शिव के समान महाराज शिवाजी पूना नगर के समीप ही 'सिहदुर्ग' मे सेना सहित रह रहे हे। इस समय विजयपुर के राजा से इनकी शत्रुता बढी हुई है। 'या कार्य सिद्ध होगा अथवा शरीर नष्ट होगा' इस प्रकार इनकी सारगर्भित महती प्रतिज्ञा है। पतिव्रता स्त्रियो, सज्जनो, द्विजो, आर्यो, धर्म और भारतवर्ष की एकमात्र आधार ये ही हैं। यही भारतवर्ष की वर्तमान दशा है। योगबल से रहस्यात्मक वृत्तान्तो को भी जानने वाले योगिराज से मैं क्या अधिक निवेदन करूँ" इतना कहकर मुनि (ब्रह्मचारी के गुरु) चुप हो गये।

सस्कृत-व्याख्या—दक्षिण देश = दक्षिण देशस्थ = प्रान्त, हि, पर्वतबहुल = पर्वताधिक्य, अस्ति = विद्यते, अरण्यानी सकुल = महदरण्यव्याप्त, च, अस्ति = विद्यते, इति = अस्माद्धेतो, चिरोद्योगेनापि = चिरप्रयासेनापि, अयम् = औरङ्ग-जेब, महाराष्ट्रकेशरिण = महाराष्ट्रसिहान, हस्तयितुम् = अविकर्त्तुम्, न अशकत् = न समर्थो बभूव। साम्प्रतम् = इदानीम्, अस्यैव = औरङ्गजेबस्यैव, आत्मीय = स्वकीय, दक्षिणदेश शासकत्वेन = दक्षिणप्रान्ताधीश्वरत्वेन, 'शास्ति-खान' नामा = शाइस्ता खाँ नामक, प्रेष्यते = गमयिष्यते, इति = एव, श्रूयते = आकर्ण्यते। महाराष्ट्र देशरत्नम् = तद्देशचूडामणिम्, यवनाना = मोहमदाना, शोणितस्य = रक्तस्य, पिपासायाम् = पातु मिच्छायाम् आकुल = उत्कण्ठित, कृपाण = असि, यस्य स, वीरता = शूरता, एव, सीमन्तिनी = ललना, तस्या, सीमन्ते = केशवेशे, सुन्दर = अच्छ, सान्द्रम् = घनम्, यत् सिन्दूरदानम् तेन देदीप्यमानो = प्रकाशमानो, दोर्दण्ड = बाहुदण्ड यस्य स, मुकुटमणि = शिरोभूषणमणि, महाराष्ट्राणाम् = एतद्देशाना, भूषणम् = अलकार, भटाना = शूराणाम्, निधि = निधानम्, नीतिनाम् = राजनीतीनाम्, कुलभवनम् = कुल-गृहम्, कौशलानाम् = दक्षाणाम्, पारावार = समुद्र, परमोत्साहनाम् = अतिशय साहसानाम्, कश्चन = कोऽपि, प्रात स्मरणीय = कल्ये नमस्करणीय, स्वधर्मा-ग्रहग्रहग्रहिल = सनातनधर्मदृढपरिपालक, शिव इव = शङ्कर इव, धृतावतार = गृहीतावतार, शिववीर = 'शिवाजी'ति नाम्ना विख्यात, अस्मिन् = इह, पुण्य=

नगरात् = 'पूना' इति ख्यातात् नगरात्, नेदीयसि एव = अति समीपे एव, सिंहदुर्गे = सिंहगढे, ससेन = पताकिन्या सहित, निवसति = वसति । साम्प्रतम् = इदानीम्, विजयपुराधीश्वरेण = बीजापुरनरेशेन, अस्य = शिववीरस्य, वैरम् = शत्रुत्वम्, प्रवृद्धम् = वृद्धि गतम् । "कार्यम् = कर्म, वा = अथवा, साधयेयम् = सिद्धि कुर्यात्, देहम् = शरीरम्, वा, पातयेयम् – नाशयेयम्" इत्यस्य = एतस्य, सारगर्भा = ससारा, महती = भीषणा, प्रतिज्ञा – सकल्प । सतीनाम् = प्रतिव्रताना, सताम् = सज्जानाम्, त्रैवर्णिकस्य = द्विजस्य, आर्यकुलस्य = आर्यपरिवारस्य, धर्मस्य = सत्कर्मण , भारतवर्षस्य = एतद्देशस्य, च, आशासन्तानवितानस्य = आशासूत्र विस्तारस्य, अयमेव = एप एव, आश्रय = आधार, इयमेव = एषैव, भारतवर्षस्य = एवद्देशस्य, वर्तमाना = आधुनिकी, दशा = अवस्था (अस्तीति शेष) ।

हिन्दी-व्याख्या—दक्षिणदेश = महाराष्ट्र देश । पर्वतबहुल = अधिक पर्वतो वाला । अरण्यानी सकुल = घने तथा बडे-बडे जगलो से व्याप्त, महद् अरण्यम = अरण्यानी, अरण्य + आनुक् + ङीप् (स्त्रियाम्), बडे जगल को 'अरण्यानी' कहते है । चिरोद्योगेनापि = चिर उद्योग से भी अर्थात् बहुत दिनो के प्रयास के बाद भी । अशकत् = समर्थ हुआ । महाराष्ट्रकेशरिण = महाराष्ट्र केशरियो को अर्थात् सिंह के समान मराठो को, 'केशरी' पद यहाँ श्रेष्ठता का वाचक है— "स्युरुत्तरपदे व्याघ्र पुङ्ग वर्षभकुञ्जरा । सिंहशार्दूल नागाद्या पुसि श्रेष्ठार्थगोचरा ।" (अमरकोप)। हस्तयितुम् = हस्तगन करने के लिये, हस्ते कर्तुमिति 'हस्त + य + तुमुन्' । आत्मीय = स्वजन । दक्षिणदेशशासकत्वेन = दक्षिण देश के शासक के रूप मे । महाराष्ट्रदेशरत्नम् = महाराष्ट्र देशरत्नरूप (शिवाजी के विशेषण) 'रत्न' शब्द नित्य ही नपुसकलिंग होता है । यवन कृपाण = यवनो के खून की प्यास से व्याकुल कृपाण वाले, (यहाँ से आगे शिवाजी के दश विशेपण दिये गये हैं), यवनाना शोणितस्य पिपासायामाकुल कृपाण यस्य स (ब०व्री०), पिपासा = पीने की इच्छा, 'पा + सन्' । वीरता दोर्दण्ड' = वीरतारूपी नायिका की माँग मे सुन्दर घना सिन्दूर लगाने से देदीप्यमान, 'वीरता एव सीमन्तिनी तस्या सीमन्ते सुन्दर सान्द्र यत् सिन्दूरदान तेन देदीप्यमान दोर्दण्ड यस्य स (ब० व्री०) । 'सीमन्त केशवेशेस्यात्' केशवेशको

सीमन्त कहते है। मुकुटमणि = मुकुट की मणि । महाराष्ट्राणाम् = मराठिग्रो के। पारावार = समुद्र । स्वधर्माग्रहग्रहग्रहिल = ग्रपने धर्म को हठ से भी पालन मे दृढतर, 'स्वधर्मस्य आग्रहग्रह तस्मिन् ग्रहिल' (तत्पु०), स्वधर्म = सनातनधर्म, ग्रहिल = दृढतर । धृतावतार = ग्रवतार धारण किये हुये, 'धृत अवतार येन स'। पुण्यनगरात् = पूना नगर से । नेदीयसि = ग्रति समीप मे, 'ग्रतिशयेन ग्रन्तिक इति नेदीमान्, तस्मिन् । सिंहदुर्गे = सिंहगढ मे । विजयपुराधीश्वरेण = बीजापुर के राजा के साथ । प्रवृद्धम् = बढा हुआ है,'प्र + √वृध् + क्त'। 'कार्यं वा साधयेय देह वापातयेयम्' = या तो कार्य सिद्ध होगा या शरीर नष्ट होगा। यह उक्ति है। इसका आशय है दृढ प्रतिज्ञा करना। सारगर्भा = सारगर्भित अर्थात् महत्त्वपूर्ण । त्रैवर्णिकस्य = द्विज के। आशासन्तानवितानस्य = आशा सूत्र के विस्तार के, आशाया सन्तानम् तस्य वितानम्, तस्य, सन्तान = परम्परा, वितान = विस्तार । किमधिकम् = क्या अधिक । विनिवेदयाम = निवेदन करे । 'योग वृत्तान्तेषु = योगबल से अवगत है सकल गोप्य वृत्तान्त जिन्हे, 'योगबलेन अवगन सकल गोप्यतम यैस्तेपु (ब० ब्री०)'। अवगत = ज्ञात, गोप्यतम् = रहस्यात्मक, (यह योगिराज का विशेषण है)। कथयित्वा = कहकर । विरराम = शान्त हो गये, वि + √रम + लिट् (तिप्)।

टिप्पणी—(१) 'वीरता दोर्दण्ड' वीरता रूपी नायिका के माँग मे सिन्दूर लगाया है। 'वीरता' मे नायिका का आरोप किया गया है। अत रूपक अलकार है। इस पद मे श्रुत्यनुप्रास भी है।

(२) 'शिव इव धृतावतार' मे उत्प्रेक्षा अलकार है।

तदाकर्ण्य विविध-भाव-भङ्ग-भासुर-वदनो योगिराजो मुनिराज तत्सहचरश्चि निपुण निरीक्ष्य, तेषामपि शिववीरान्तरङ्गतामङ्गीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन स्वधर्मरक्षाव्रतिनश्चोरीकृत्य "विजयता शिववीर सिद्ध्यन्तु भवता मनोरथा" इति मन्द व्याहार्षीत ।

हिन्दी अनुवाद—यह वृत्तान्त सुनकर विविध भावो के भङ्ग से भासुर (दीप्तिमत्) मुख वाले योगिराज, मुनिराज तथा उनके सहचरो को भली-भाँति देखकर, उन लोगो (मुनि तथा उनके साथियो को) को भी 'शिवराज' के अन्तरङ्ग (सहायक) समझकर तथा मुनिवेश के बहाने अपने धर्म की रक्षा के व्रती

नगरात् = 'पूना' इति ख्यातात् नगरात्, नेदीयसि एव = अति समीपे एव, सिंहा दुर्गे = सिंहगढे, मसेन = पताकिन्या सहित, निवसति = वसति । साम्प्रतम् = इदानीम्, विजयपुराधीशवर्गेण = वीजापुरनरेशेन, अस्य = शिववीरस्य, वैरम् = शत्रुत्वम्, प्रवृद्धम् = वृद्धि गतम् । "कार्यम् = कर्म, वा = अथवा, साधयेयम् = सिद्धि कुर्यात्, देहम् = शरीरम्, वा, पातयेयम् — नाशयेयम्" इत्यस्य = एतस्य, सारगर्भा = समारा, महती = भीपणा, प्रतिज्ञा — राकल्प । सतीनाम् = प्रतिव्रताना, सताम् = सज्जानाम्, त्रैवर्णिकस्य = द्विजस्य, आर्यकुलस्य = आर्य-परिवारस्य, धर्मस्य = सत्कर्मण, भारतवर्षस्य = एतद्देशस्य, च, आशासन्तान वितानस्य = आशासूत्र विस्तारस्य, अयमेव = एप एव, आश्रय = आधार, इयमेव = एपैव, भारतवर्षस्य = एवद्देशस्य, वर्तमाना = आधुनिकी, दशा = अवस्था (अस्तीति शेप) ।

हिन्दी-व्याख्या—दक्षिणदेश = महाराष्ट्र देश । पर्वतबहुल = अधिक पर्वतो वाला । अरण्यानी सकुल = घने तथा वडे-वडे जगलो से व्याप्त, महद् अरण्यम = अरण्यानी, अरण्य + आनुक् + ङीष् (स्त्रियाम्), वडे जगल को 'अरण्यानी' कहते है । चिरोद्योगेनापि = चिर उद्योग से भी अर्थात् बहुत दिनो के प्रयास के वाद भी । अशकत् = समर्थ हुआ । महाराष्ट्रकेशरिण = महाराष्ट्र केशरियो को अर्थात् सिंह के समान मराठो को, 'केशरी' पद यहाँ श्रेष्ठता का वाचक है— "स्युरुत्तरपदे व्याघ्र पुङ्ग वर्पभकुञ्जरा । सिंहशार्दूल नागाद्या पु सि श्रेष्ठार्थ गोचरा ।" (अमरकोप) । हस्तयितुम् = हस्तगन करने के लिये, हस्ते कर्तुमिति 'हस्त + य + तुमुन्' । आत्मीय = स्वजन । दक्षिणदेशशासकत्वेन = दक्षिण देश के शासक के रूप मे । महाराष्ट्रदेशरत्नम् = महाराष्ट्र देशरत्नरूप (शिवाजी के विशेषण) 'रत्न' शब्द नित्य ही नपु सकलिंग होता है । यवन कृपाण = यवनो के खून की प्यास से व्याकुल कृपाण वाले, (यहाँ से आगे शिवाजी के दश विशेपण दिये गये हैं), यवनाना शोणितस्य पिपासायामाकुल कृपाण यस्य स (ब०व्री०), पिपासा = पीने की इच्छा, 'पा + सन्' । वीरता दोर्दण्ड' = वीरतारूपी नायिका की माँग मे सुन्दर घना सिन्दूर लगाने से देदीप्यमान, 'वीरता एव सीमन्तिनी तस्या सीमन्ते सुन्दरं सान्द्र यत् सिन्दूरदान तेन देदीप्यमान दोर्दण्ड यस्य स (ब० व्री०) । 'सीमन्त केशवेशेस्यात्' केशवेशको

सीमन्त कहते है। मुकुटमणि = मुकुट की मणि। महाराष्ट्राणाम् = मराठिओ के। पारावार = समुद्र। स्वधर्माग्रहग्रहग्रहिल = अपने धर्म को हठ मे भी पालन मे दृढतर, 'स्वधर्मस्य आग्रहग्रह तस्मिन् गहिल' (तत्पु०), स्वधर्म = सनातनधर्म, ग्रहिल = दृढतर। धृतावतार = अवतार धारण किये हुये, 'धृत अवतार येन स'। पुण्यनगरात् = पूना नगर से। नेदीयसि = गति समीप मे, 'अतिशयेन अन्तिक इति नेदीमान्, तस्मिन्। सिंहदुर्गे = सिंहगढ मे। विजयपुराधीश्वरेण = बीजापुर के राजा के साथ। प्रवृद्धम् = बढा हुआ है,'प्र + √वृध् + क्त'। 'कार्यं वा साधयेय देह वापातयेयम्' = या तो कार्य सिद्ध होगा या शरीर नष्ट होगा। यह उक्ति है। इसका आशय है दृढ प्रतिज्ञा करना। सारगर्भा = सारगर्भित अर्थात् महत्त्वपूर्ण। त्रैवर्णिकस्य = द्विज के। आशासन्तान वितानस्य = आशा सूत्र के विस्तार के, आशाया सन्तानम् तस्य वितानम्, तस्य, सन्तान = परम्परा, वितान = विस्तार। किमधिकम् = क्या अधिक। विनिवेदयाम = निवेदन करे। 'योग वृत्तान्तेषु = योगबल से अवगत है सकल गोप्य वृत्तान्त जिन्हे, 'योगबलेन अवगत सकल गोप्यतम यैस्तेषु (ब० व्री०)'। अवगत = ज्ञात, गोप्यतम् = रहस्यात्मक, (यह योगिराज का विशेषण है)। कथयित्वा = कहकर। विरराम = शान्त हो गये, वि + √रम + लिट् (तिप्)।

टिप्पणी—(१) 'वीरता दोर्दण्ड' वीरता रूपी नायिका के माँग मे सिन्दूर लगाया है। 'वीरता' मे नायिका का आरोप किया गया है। अत रूपक अलकार है। इस पद मे श्रुत्यनुप्रास भी है।

(२) 'शिव इव धृतावतार' मे उत्प्रेक्षा अलकार है।

तदाकर्ण्य विविध-भाव-भङ्ग-भासुर-वदनो योगिराजो मुनिराज तत्सहचरांश्च निपुण निरीक्ष्य, तेषामपि शिववीरान्तरङ्गतामङ्गीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन स्वधर्मरक्षाव्रतिनश्चोरीकृत्य "विजयता शिववीर सिद्ध्यन्तु भवता मनोरथा" इति मन्द व्याहार्षीत।

हिन्दी अनुवाद—यह वृत्तान्त सुनकर विविध भावो के भङ्ग से भासुर (दीप्तिमत्) मुख वाले योगिराज, मुनिराज तथा उनके सहचरो को भली-भाँति देखकर, उन लोगो (मुनि तथा उनके साथियो को) को भी 'शिवराज' के अन्तरङ्ग (सहायक) समझकर तथा मुनिवेश के बहाने अपने धर्म की रक्षा के व्रती

जानकर, "वीर शिवाजी विजयी हो, आप के मनोरथ सिद्ध हो" धीरे से ऐसा कहा ।

संस्कृतव्याख्या—तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, विविध भावभङ्गभासुरवदन = अनेक भावभङ्गप्रकाशितमुख, योगिराज = स महर्षि, मुनिराज = ब्रह्मचारि-गुरुम्, तत्सहचरान् = तत्सहायकान्, च, निपुणम् - सम्यक्, निरीक्ष्य = वीक्ष्य, तेषामपि = आश्रमवासिनामपि, शिववीरान्तरगताम् = शिववीरस्य सहायकत्वम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, मुनिवेशव्याजेन = मुनिवेशछद्मना, स्वधर्मरक्षाव्रतिन = स्वधर्मपालनपरायणान्, च, उररीकृत्य = हृदयगम कृत्वा, "विजयताम् = जयतु, शिववीर = शिवाजी इति, सिध्यन्तु = सफलीभवन्तु, भवताम् = युष्माकम्, मनोरथा" इति = एव, मन्द = अनुच्चै व्याहार्षीत् = हर्षितवान् ।

हिन्दी व्याख्या—विविधभावभङ्गभासुरवदन = अनेक भावभङ्गियो से प्रसन्न मुख वाले, विविधा भावभङ्गा तै भासुर वदन यस्य स' (ब० व्री०)। तत्सहचरान् = उनके साथियो को, 'सहचरन्तीति सहचरा, तेषा सहचरा तान्'। निपुण = भली-भाँति । निरीक्ष्य = देखकर । शिववीरान्तरङ्गता = शिवा जी की अन्तरगता को, शिववीरस्य अन्तरगता, ताम्' । अङ्गीकृत्य = स्वीकार करके । मुनिवेशव्याजेन = मुनिवेश के वहाने मे । स्वधर्मरक्षाव्रतिन = अपने धर्म की रक्षा मे कटिवद्ध । उररीकृत्य = जानकर । व्याहार्षीत् = प्रसन्नता व्यक्त की ।

अथ किमपि पिपृच्छिषामीति शनैरभिधाय बद्धकरसम्पुटे सोत्कण्ठे जटिलमुनौ "अवगतम यवन युद्धे विजय एव, दैवादापद्ग्रस्तोऽपि खिचस साहाय्येनात्मानयुद्धरिष्यति" इति समभाणीत् । मुनिश्च गृहीतमित्युदीर्य, पुन किञ्चिदविचार्य्येव, स्मृत्वेव च, दीर्घमुष्ण नि श्वस्य रोरुध्यमानैरपि किञ्चिदुद्गतैर्बाष्पबिन्दुभिराकुलनयनो "भगवन् ! प्रायो दुर्लभोयुष्माद्दृक्षाणा साक्षात्कार इत्यपरापि पृच्छा आच्छादयति माम्" इति न्यवेदीत् । स च "आम् ! ऊरीकृतम, जीवति स, सुखनैवास्ते" इत्युदतीतरत् । अथ "त कदा द्रक्ष्यामि" इति पुन पृष्टवति "तद्विवाह गमये द्रक्ष्यासि" इत्य-

भिधाय, बहूनिमान्त्वना वचनानि च गम्भीरस्वरेणोक्त्वा,मपदि उपत्यकाम्, गण्डशैलान, अधित्यकाञ्चा रुह्य पुनस्तस्मिन्नेव पर्वतकन्दरे तपस्तप्तु जगाम।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद 'मै कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूँ' ऐसा धीरे से कहकर जटाधारी मुनि के उत्कठापूर्वक हाथ जोडने पर योगिराज बोले—'जान लिया यवन के युद्ध मे (शिवाजी की) विजय ही होगी, दैववश (भाग्यवश) आपद् ग्रस्त होकर भी मित्रो की सहायता से अपने को उद्धृकर (उबार) लेंगे।' तब मुनि ने 'समझ लिया' ऐसा कहकर फिर कुछ मानो विचार कर के, मानो स्मरण करके और दीर्घ तथा उष्ण सांस रोकर रोके जाने पर भी कुछ निकल आये हुए अश्रु-कणो से व्याकुल नेत्रो वाले मुनि ने निवेदन किया—"भगवन्! प्राय आप जैसे महात्माओ का दर्शन दुर्लभ है, अत एक दूसरे प्रश्न की इच्छा भी मुझे आच्छादित कर रही है अर्थात् एक दूसरा प्रश्न भी पूछने की इच्छा हो रही है। (तब) योगिराज ने उत्तर दिया—"हाँ! समझ लिया, वह जीवित है, सुख पूर्वक है।" मुनि के पुन पूछने पर कि—"कब देखूँगा उसे ?" "उसके विवाह के समय मे देखोगे" ऐसा कहकर, और बहुत से सान्त्वना वचनो को गम्भीर स्वर से कहकर, शीघ्र ही पर्वत की घाटी (उपत्यका), पर्वतो से घिरे हुए पर्वत-खण्डो और पर्वत की पहाडियो पर चढकर पुन उसी पर्वत की गुफा मे तपस्या करने के लिये चले गए।

संस्कृत-व्याख्या—अथ = तत, किञ्चदपि, पिपृच्छिषामि = प्रष्टुमिच्छामि, इति = एवम्, शनै = मन्द, अभिधाय = कथयित्वा, बद्धकर सम्पुटे = बद्धाञ्जलौ, सोत्कण्ठे = जिज्ञासमाने, जटिलमुनौ = जटाधारि मुनौ, "अवगतम् = ज्ञातम्, यवन युद्धे = मोहमयसग्रामे, विजय एव = जय एव, दैवात् = दुर्भाग्यात्, आपद-ग्रस्त = आपन्निमग्न, अपि, सखिसाहाय्येन = मित्रसहायतया, आत्मानम् = स्वम्, उद्धरिष्यति = उद्धार करिष्यति,' इति = एवम्, समभाणीत् = समवादीत्, मुनिश्च = ब्रह्मचारिगुरुश्च, गृहीतम् = अवगतम्, इति, उदीर्य = उक्त्वा, पुन भूय, किञ्चिद् = किमपि, विचार्य = विचिन्त्य इव, स्मृत्वेव = स्मरणमिव कृत्वा, च, दीर्घम् = अनिकालिकम्, उष्णम् = अनतिशीतम्, नि श्वस्य = उच्छ्वस्य, रोरुध्यमानै = भृश वार्यमाणै, अपि, किञ्चिदुद्गतै = किञ्चिन्नि सृतै, वाष्प-

जानकर, "वीर शिवाजी विजयी हो, आप के मनोरथ सिद्ध हो" धीरे से ऐसा कहा ।

संस्कृतव्याख्या—तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, विविध भावभङ्गभासुरवदन = अनेक भावभङ्गप्रकाशितमुख, योगिराज – म गर्हपि, मुनिराज – ब्रह्मचारि-गुरुम्, तत्सहचरान् = तत्सहायकान्, च, निपुणम् सम्यक्, निरीक्ष्य = वीक्ष्य, तेपामपि = आश्रमवासिनामपि, शिववीरान्तरगताम् = शिववीरस्य सहायकत्वम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, मुनिवेशव्याजेन = मुनिवेशच्छद्मना, स्वधर्मरक्षाव्रतिन = स्वधर्मपालनपरायणान्, च, उररीकृत्य = हृदयगम कृत्वा, "विजयताम् = जयतु, शिववीर = शिवाजी इति, सिध्यन्तु = सफलीभवन्तु, भवताम् = युष्माकम्, मनोरथा " इति = एव, मन्द = अनुच्चै व्याहार्षीत् = हर्षितवान् ।

हिन्दी व्याख्या—विविधभावभङ्गभासुरवदन = अनेक भावभङ्गियो से प्रसन्न मुख वाले, विविधा भावभङ्गा तै भासुर वदन यस्य स' (ब० व्री०)। तत्सहचरान् = उनके साथियो को, 'सहचरन्तीति सहचरा, तेपा सहचरा तान्'। निपुण = भली-भाँति । निरीक्ष्य = देखकर । शिववीरान्तरङ्गता = शिवा जी की अन्तरगता को, शिववीरस्य अन्तरगता, ताम्' । अङ्गीकृत्य = स्वीकार करके । मुनिवेशव्याजेन = मुनिवेश के बहाने से । स्वधर्मरक्षाव्रतिन = अपने धर्म की रक्षा मे कटिबद्ध । उररीकृत्य = जानकर । व्याहार्षीत् = प्रसन्नता व्यक्त की ।

अथ किमपि पिपृच्छिषामीति शनैरभिधाय बद्धकरसम्पुटे सोत्कण्ठे जटिलमुनौ "अवगतम यवन युद्धे विजय एव, दैवादापद्ग्रस्तोऽपि खिचस साहाय्येनात्मानयुद्धरिष्यति" इति समभाणीत। मुनिश्च गृहीतमित्युदीर्य, पुन किञ्चिदविचार्य्येव, स्मृत्वेव च, दीर्घमुष्ण नि श्वस्य रोरुध्यमानैरपि किञ्चिदुद्गतैर्बाष्पबिन्दुभिराकुलनयनो "भगवन् ! प्रायो दुर्लभोयुष्माद्दृ-क्षाणा साक्षात्कार इत्यपरापि पृच्छा आच्छादयति माम्" इति न्यवेदीत् । स च "आम् ! ऊरीकृतम, जीवति स, सुखनैवास्ते" इत्युदतीतरत् । अथ "त कदा द्रक्ष्यामि" इति पुन पृष्टवति "तद्विवाह समये द्रक्ष्यामि" इत्य-

भिधाय, बहूनिसान्त्वना वचनानि च गम्भीरस्वरेणोक्त्वा,मपदि उपत्यकाम्, गण्डशैलान, अधित्यकाञ्चा रुह्य पुनरतस्मिन्नेव पर्वतकन्दरे तपस्तप्तु जगाम।

हिन्दी ग्रनुवाद—इसके बाद 'मै कुछ प्रश्न पूछना चाहता हू' ऐसा धीरे से कहकर जटाधारी मुनि के उत्कण्ठापूर्वक हाथ जोडने पर योगिराज बोले—'जान लिया यवन के युद्ध मे (शिवाजी की) विजय ही होगी, दैववश (भाग्यवश) ग्रापद् ग्रस्त होकर भी मित्रो की सहायता से अपने को उद्धृकर (उबार) लेंगे।' तब मुनि ने 'समझ लिया' ऐसा कहकर फिर कुछ मानो विचार कर के, मानो स्मरण करके और दीर्घ तथा उष्ण साँस रोकर रोके जाने पर भी कुछ निकल आये हुए अश्रु-कणो से व्याकुल नेत्रो वाले मुनि ने निवेदन किया—"भगवन्! प्राय आप जैसे महात्माग्रो का दर्शन दुर्लभ है, अत एक दूसरे प्रश्न की इच्छा भी मुझे आच्छादित कर रही है अर्थात् एक दूसरा प्रश्न भी पूछने की इच्छा हो रही है। (तब) योगिराज ने उत्तर दिया—"हाँ! समझ लिया, वह जीवित है, सुख पूर्वक है।" मुनि के पुन पूछने पर कि—"कब देखूँगा उसे?" "उसके विवाह के समय मे देखोगे" ऐसा कहकर, और बहुत से सान्त्वना वचनो को गम्भीर स्वर से कहकर, शीघ्र ही पर्वत की घाटी (उपत्यका), पर्वतो से घिरे हुए पर्वत-खण्डो और पर्वत की पहाडियो पर चढकर पुन उसी पर्वत की गुफा मे तपस्या करने के लिये चले गए।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तत, किञ्चदपि, पिपृच्छिषामि = प्रष्टुमिच्छामि, इति = एवम्, शनै = मन्द, अभिधाय = कथयित्वा, बद्धकर सम्पुटे = बद्धाञ्जलौ, सोत्कण्ठे = जिज्ञासमाने, जटिलमुनौ = जटाधारि मुनौ, "अवगतम् = ज्ञातम्, यवन युद्धे = मोहमयसगामे, विजय एव = जय एव, दैवात् = दुर्भाग्यात्, आपद-ग्रस्त = आपन्निमग्न, अपि, सखिसाहाय्येन = मित्रसहायतया, आत्मानम् = स्वम्, उद्धरिष्यति = उद्धार करिष्यति,' इति = एवम्, सममाणीत् = समवादीत्, मुनिश्च = ब्रह्मचारिगुरुश्च, गृहीतम् = अवगतम्, इति, उदीर्य = उक्त्वा, पुन भूय, किञ्चिद् = किमपि, विचार्य्य = विचिन्त्य इव, स्मृत्वेव = स्मरणमिव कृत्वा, च, दीर्घम् = अतिकालिकम्, उष्णम् = अनतिशीतम्, नि श्वस्य = उच्छ्वस्य, रोरुध्यमानै = भृश वार्यमाणै, अपि, किञ्चिदुद्गतै = किञ्चिन्निसृतै, वाष्प-

विन्दुभि = अश्रुकणैं, आकुलनयन = व्याकुलनेत्र, "भगवन् = महात्मन् ! प्राय = साधारणतया, युष्मादृक्षाणा = भवत् सदृशाना, साक्षात्कार = दर्शनम्, दुर्लभ एव = अप्राप्य एव (भवति), इति = अस्माद्धेतो, अपराऽपि = अन्याऽपि, पृच्छा = प्रश्नेच्छा, आच्छादयति = आवृणुते, माम् = मुनिम्" इति = एव, न्यवेदीत् = निवेदितवान्। स च = योगिराज, आम् = स्वीकारे, ऊरीकृतम् = विज्ञातम्, जीवति स = स जीवन धारयति, सुखेनैव = सुखपूर्वकेणैव, आस्ते = अस्ति" इति, उदतीतरत् = उत्तर दतवान्। अथ = तत, "त कदा = कस्मिन् समये, द्रक्ष्यामि = अवलोकयिष्यामि," इति पुन = भूय, पृष्टवति = पृष्टे सति, "तद्विवाहसमये = तदुद्वाहकाले, द्रक्ष्यसि = अवलोकयिष्यसि," इति = एव, अभिधाय = उक्त्वा, बहूनि = अनेकानि, सान्त्वनावचनानि = आश्वासनानि च, गम्भीरस्वरेण = धीरवचसा, उक्त्वा = कथयित्वा, सपदि = तत्क्षणमेव, उपत्यकाम् = अधोऽध पर्वतम्, गण्डशैलान = पर्वतात् विच्युतस्थूलपाषाणान्, अधित्यकाम् = उपर्युपरि पर्वतम्, च, आरुह्य = उद्गम्य, पुन = भूयोऽपि, तस्मिन्नेव = पूर्वोक्त एव, पर्वत कन्दरे = शैलगुहायाम्, तपस्तप्तुम् = तपस्याकर्त्तुं, जगाम = अगच्छत्।

हिन्दी व्याख्या—पिपृच्छिषामि = पूँछना चाहता हूँ, "पृच्छ + सन् + लट (मिप्)" (इच्छा अर्थ मे सन् प्रत्यय हुआ है)। अभिधाय = कहकर। बद्धकर सम्पुटे = हाँथ जोड लेने पर, 'बद्ध करयो सम्पुट येन स तस्मिन्', (मुनि का विशेषण)। सोत्कण्ठे = उत्कण्ठा से युक्त, 'उत्कण्ठयासहित सोत्कण्ठ तस्मिन्'। जटिलमुनौ = जटाधारी मुनि के, जटिल = जटाधारी, 'जटा + इलच्'। दैवात् = दुर्भाग्य से। आपद्ग्रस्त = आपत्ति मे पडकर, 'आपदि ग्रस्त इति'। सखिसाहाय्येन = मित्रो की सहायता से। उद्धरिष्यति = उबार लेगा, "उद् + √हृ + णिच + लृट् (तिप्)"। समभाणीत् = बोले, "सम् + भण् + लुङ् (तिप्)"। उदीर्य = कहकर। विचारय्येव = जैसे कुछ विचार करके। स्मृत्वेव = जैसे कुछ स्मरण करके। दीर्घमुष्णम् = दीर्घ और गरम। नि श्वस्य = साँस लेकर, दीर्घ और उष्ण सास लेना गम्भीर शोक का द्योतक है। रोरुध्यमानैरपि = बहुत अधिक रोकने पर भी, "√रुध् + शानच्" यहाँ 'भृशम्' के अर्थ 'यङ' तथा धातु को द्वित्व हुआ है। उद्गतै = निकले हुये, 'उद् + गम् + क्त (तृ० व०)'।

वाष्पबिन्दुभि =आँसुओ की बूदो से। आकुलनयन =व्याकुल नेत्रो वाले (मुनि, का विशेषण)। युष्मादृक्षाणाम् =आप जैसो का। पृच्छा=प्रश्न की इच्छा 'पृच्छ् + सन + टाप् (स्त्री०)।' आच्छादयति=घेर रही है, 'आ + छद् + लट् (तिप्)'। न्यवेदीत=निवेदन किया, 'नि + विद् + लुङ् (तिप्)'। उरीकृतम्= समझ लिया, 'उरसि कृतम्' 'उरस् + च्वि + क्त्वा'=उरीकृत्वा "ऊर्यादि च्वि डाचश्च' से गति सज्ञा और समास होकर वनता है ऊरीकृतम्, (उररीकृतम्= हृदयगत कर लेना। उदतीतरत्=उत्तर दिया, 'उद् + √तॄ + लुङ् (तिप्)'। द्रक्ष्यामि=देखूँगा। अभिधाय=कह कर। सान्त्वनावचनानि=सान्त्वना वचनो को। सपदि=तुरन्त ही। उपत्यकाम् =पर्वत की घाटी, (पर्वत के समीप की नीचे की भूमि)। गण्डशैलान् —पर्वत के गिरे हुए वडे-वडे टुकडे "गण्डशैलास्तु च्युता स्थूलोपला गिरे' (अमरकोप)। अधित्यकाम् =पर्वत के ऊपर की भूमि, उपत्यकाद्रेरासन्नाभूमिरुर्ध्वमधित्यका" (अमरकोप)। आरुह्य=चढकर। तपस्तप्तुम् =तपस्या करने के लिये। जगाम=चले गये।

टिप्पणी—विचार्य्येव, स्मृत्वेव मे उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

तत शनै शनैर्नियतिष्वपरिचित जनेषु, सवृत्ते च निर्मक्षिके, मुनि- गौरबटुमाहूय, विजयपुराधीशाज्ञया शिववीरेण सह योद्धु ससेन प्रस्थित- स्य अफजलखानस्य विषये यावत् किमपि प्रष्टुमियेष, तावत् पादचारध्वनि- मेव कस्याप्यश्रोपीत्। तमवधार्यान्यमनस्के। इव मुनौ गौरबटुरपितेनैव ध्वनिना कर्णयो कृष्ट इव समुत्थाय, निपुण परितो निरीक्ष्य पर्यट्य, कोऽयम्' ? इति च साम्रेड व्याहृत्य, कमप्यनवलोक्य, पुनर्निवृत्य, मन्ये मार्जार कोऽपि" इति मन्द-मन्द गुरवे निवेद्य पुनस्तथैवोपविवेश। मुनिश्च 'मा स्म कस्चिदितर श्रोषीत्" इति सशङ्क क्षण विरम्य पुनरुपन्यस्तु- मारेभे।

हिन्दी अनुवाद—तब, धीरे-धीरे अपरिचित लोगो के चले जाने पर, जन- शून्य हो जाने पर मुनि ने गौर ब्रह्मचारी को बुलाकर, बीजापुर के राजा की आज्ञा से शिवाजी के साथ लडने के लिये सेना के साथ प्रस्थान किये हुए 'अफ जल खाँ' के विषय में कुछ पूछना चाहा, तभी किसी के पैरो की ध्वनि सुनाई

पडी । उसे सुनकर मुनि के उदास से हो जाने पर (वह) गौर ब्रह्मचारी भी उसी ध्वनि से कानों को आकृष्ट किये जाते हुए के समान उठकर, चतुरता से चारो ओर देखकर, घूमकर 'कौन है' इस प्रकार बार-बार कहकर, किसी को भी न देखकर, पुन लौटकर, 'ऐसा लगता है कि कोई बिल्ली है' यह धीरे से गुरुजी से कहकर, पुन वैसे ही बैठ गया । मुनि ने 'कोई दूसरा न सुन ले' इस आशका से थोडी देर रुक कर, पुन कहना आरम्भ किया ।

सस्कृत-व्याख्या—तत = तदनन्तरम्, शनै शनै — मन्द मन्द, निर्यातिपु = गतेपु, अपरिचित जनेपु = अज्ञातजनेपु, निर्मक्षिके च = जनशून्ये च, सवृत्ते = जाते, मुनि = ब्रह्मचारिगुरु, गौरवटुम् = गौरब्रह्मचारिणम्, आहूय = आमन्त्र्य, विजयपुराधीशाज्ञया = तद्देशनरेशाज्ञया, शिववीरेण सह = महाराष्ट्राधीश्वरेण सह, योद्धुम् = युद्ध कर्त्तुम्, ससेन = सेनया युक्तम्, प्रस्थितस्य = प्रस्थान कुर्वत, अफजलखानस्य = एतन्नामकस्य, विपये = सम्बन्धे, यावत् = यदव, किञ्चिद् = किमपि, प्रष्टुम् = प्रज्ञातु, इयेप = इच्छितवान्, तावत् = तदैव, पादचारध्वनिम् = चरणोद्भूतरवम, इव, कस्यापि, अश्रौषीत् = अशृणोत् । तम् = ध्वनिम् अवधार्य = सगृहीत्य, अन्यमनस्के = निरुत्साहिते, इव, मुनौ = ब्रह्मचारिगुरौ (सजाते), गौरवटु = गौरबालक, अपि, तेनैव = पूर्वोक्तेणैव, ध्वनिना = शब्देन, कर्णयो = श्रोत्रयो, कृष्ट इव = आकृष्ट इव, समुत्थाय = उत्तिष्ठितो भूत्वा, निपुण = सम्यक्, परित = समन्तात्, निरीक्ष्य = वीक्ष्य, पर्य्यट्य = परिभ्रम्य, "कोऽयम् ? = कोऽस्ति, इति च, साम्रेडम् = बहुवारम्, व्याहृत्य = उक्त्वा, कमपि = कञ्चिदपि, अनवलोक्य = अदृष्ट्वा पुनर्निवृत्य = पुन प्रत्यागत्य, 'मन्ये = जाने, मार्जार = विलाड, कोऽपि, इति = एव, मन्दम् = नम्र गिरा, गुरवे = मुनये, निवेद्य = कथयित्वा, पुन = भूय, तथैव = पूर्वोक्त विधिना, उपविवेश = समुपाविशत्, मुनि = ब्रह्मचारिगुरु, "मा स्म = इति निपेधे, कश्चिदितर = कोऽप्यन्य, श्रौपीत् = आकर्णयतु, इति = एतस्मात्, सशङ्क = आशङ्कित सन् क्षणम् — किञ्चित्कालम्, विरम्य = स्थिरीभूय, पुन = भूय उपन्यस्तुम् = वक्तुम्, आरेभे = आरभत् ।

हिन्दी-व्याख्या—निर्यातेषु = चले जाने पर, 'निर्√+या+क्त (स० ब०)' । अपरिचितजनेषु = अपरिचित लोगों के, 'यस्य भावेन भावलक्षणम्' से

सप्तमी विभक्ति । सवृत्ते = हो जाने पर । निर्मक्षिके = एकान्त, भक्षिकाणाम् अभाव निर्मक्षिकम्, तस्मिन् (अव्य०) मक्षिका मानव सञ्चार देश मे रहती है, अत उनके अभाव मे जनशून्यता द्योतित होती है । यह ग्रौपलक्षणिक शब्द है । इसका भावार्थ है—मनुष्यो से शून्य स्थान (एकान्त) । आहूय = बुला कर । विजयपुराधीशाज्ञाया = बीजापुरनरेश की आज्ञा से । योद्धु = युद्ध करने के लिये, '√युध् + तुमुन्' । ससेनम् = सेना सहित, सेनया सहितम्' (अव्ययी०) । प्रस्थितस्य = प्रस्थान किये हुए (अफजलखा का विशेषण है), प्र√स्थ + क्त' (षष्ठी०) । प्रष्टुम् = पूछने के लिये । ईयेष = इच्छा किया, '√इष्' + लिट् (तिप्)' । पादचारध्वनिम् = पैरो के चलने की ध्वनि, 'चरतीति चर, चर एव चार (√चर + अच् + अण्), पादयो चार तस्य ध्वनि तम् । अश्रौषीत् = सुनी, '√श्रु + लुङ् (तिप्)' । अवधार्य = जानकर, 'अव + √धृ + ल्यप्' । अन्यमनस्के इव = अन्यमनस्क से हुए । कर्णयो = कानो के । कृष्ट इव = आकृष्ट हुए के समान, 'कृष + क्त' । समुत्थाय = उठकर । पर्य्यट्य = टहल कर, 'परि + √अट् + ल्यप्' । साम्रेडम् = बार-बार । व्याहृत्य = कहकर, 'वि + आ + हृ + ल्यप्' । अननलोक्य = न देखकर, 'अन + अव + लोक + ल्यप्' । निवृत्य = लौटकर । 'मन्येमार्जार कोऽपि' = मालूम होता है कि कोई बिल्ली है' । तथैव = उसी प्रकार । उपविवेश = बैठ गया, उप + विश + ल्यप्' । कश्चित् = कोई । इतर = दूसरा । मा श्रौषीत् = न सुन ले, '√श्रु + लुङ् (तिप्)', 'माङ्' के योग मे 'लुङ्' का प्रयोग तथा 'अट्' का निषेध । सशङ्क = शङ्कित हुए, 'शकया सहित सशङ्क' । विरम्य = रुक कर । उपन्यस्तुम् = कहने के लिए । आरेभे = आरम्भ किया, 'आ + √रभ् + लिट्' ।

टिप्पणी—"अन्यमनस्के इव मुनौ' मे उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

"वत्स गौरसिंह ! अहमत्यन्त तुष्यामि त्वयि, यस्त्वनेकाकी अफजलखानस्य त्रीनश्वान् तेन दासीकृतान् पञ्च ब्राह्मण तनयाश्च मोचयित्वा आनीतवानसीति । कथ न भवेरीदृश ? कुलमेवेदृश राजपुत्रदेशीय क्षत्रियाणाम्" । तावत् पुनरश्रूयत मर्मर पादक्षेपश्च । ततो विरम्य, मुनि स्वयमुत्थाय, प्रोच्च शिलापीठमेकमारुह्य, निपुणतया परित पश्यन्नपि

कारण किमपि नावलोकयामास चरणाक्षेप शब्दस्य। अत पुनरेकतानेन निपुण निरीक्षमाणेन गौरसिंहेन दृष्टम्, यत् कुटीर निकटस्थ निष्कुटक-कदलीकूटे द्वित्रास्तरवोऽतितरा कम्पन्ते इति।

हिन्दी अनुवाद—पुत्र गौरसिंह ! मै तुम पर बहुत प्रसन्न हू, जो कि तुमने अकेले ही अफजल खाँ के तीन घोडो तथा उसके द्वारा दास बनाये गये पाँच ब्राह्मण पुत्रो को छुडाकर ले आये हो। (तुम) एसे क्यो न हो ? "राजपूताने के क्षत्रियो का कुल ही ऐसा है।' तभी पुन मर्मर ध्वनि तथा पैरो की आहट सुनाई पडी। तब रुककर, मुनि स्वय उठकर, एक ऊँचे शिलापीठ पर चढकर निपुणता के साथ चारो ओर देखते हुए भी पैरो की आहट का कोई कारण नहीं देखा। इसीलिये एकाग्र मन से भलीभाँति देखते हुए गौरसिह ने देखा, कि कुटी के समीप की गृहवाटिका के केलो की झुरमुट मे दो या तीन पेड़ अधिक कप रहे है।

सस्कृत-व्याख्या—वत्स = पुत्र गौरसिह। अहम् = मुनि, अत्यन्तम् = अधिकम्, तुष्यामि = तुष्टोऽस्मि, त्वयि = भवति, यत्, त्वम् = भवान्, एकाकी = केवल, अफजलखानस्य = तन्नामकस्य, त्रीनश्वान् = घोटकत्रयम्, तेन = अफजलखानेन, दासीकृतान् = भृत्यीकृतान्, पञ्च ब्राह्मणतनयान् = पञ्चविप्र-सुतान्, च, मोचयित्वा = मोक्ष कारयित्वा, आनीतवानसि = अनैषी, इति। कथम् न, भवे = स्या, ईदृश = एतादृश ? कुलम् = वश, एव, ईदृशम् = एवम्, राजपुत्रदेशीय क्षत्रियाणाम् = तद्देशक्षत्राणम्। तावत् = तदा, पुन = अश्रूयत् = सश्रुत, मर्मर = शुष्क पर्णध्वनि पादक्षेपश्च = चरणचापश्च। तत = किञ्चिद कालानन्तरम्, मुनि = ब्रह्मचारिगुरु, स्वयमुत्थाय = मुनिरेवोत्थाय, प्रोच्च = अत्युन्नत, एकम् = केवलम्, शिलापीठम् = पर्वतखण्डम्, आरुह्य = आरोहण कृत्वा, निपुणतया = सम्यक्, परित = समन्तात्, पश्यन्नपि = अवलोकयन्नपि, चरणाक्षेपशब्दस्य = चरणनिक्षेपध्वने, किमपि किञ्चिदपि कारणम्, न, अवलोकयामास = अपश्यत्। अत = तेन, पुन, एकतानेन = एकचित्तेन, निपुण = सम्यक्, निरीक्षमाणेन = दृश्यमाणेन, गौरसिंहेन = तद्वटुना, दृष्टम् = प्रदर्शि, यत्, कुटीरनिकटस्थ निष्कुटककदलीकूटे = कुटीरान्तिक गृहवाटिकाकदली-

कदम्बेऽद्वित्रा = द्वौ, त्रयो वा, तरव = वृक्षा, अतितरा = अधिकतरा, कम्पन्ते = प्रस्फुरन्ति, इति ।

हिन्दी व्याख्या—तुष्यामि = प्रसन्न हूँ । एकाकी = अकेले । त्रीन अश्वान् = तीन घोडो को । ब्राह्मणतनयान् = ब्राह्मण के पुत्रो को । मोचयित्वा = छुडाकर '√मुच् + णिच् + क्त्वा' । आनीतवानसि = ले आये हो, 'आ + √नी + क्तवतु' । ईदृश = इस प्रकार । राजपुत्रदेशीयक्षत्रियाणाम् = राजपूत देश के क्षत्रियो को । अश्रूयत = सुना । मर्मर = मर्मर ध्वनि, 'अथ मर्मर । स्वनिते वस्त्र पर्णानाम्' (अमरकोप), वस्त्र अथवा पत्तो के शब्द को 'मर्मर' कहते हैं । पादक्षेप = पैरो की चाप (ध्वनि) । विरम्य रुककर, 'वि + रम् + ल्यप्' । प्रोच्चम् = उन्नत । शिलापीठम = शिलाखण्ड पर । आरुह्य = चढकर । निपुणतया = चतुरता के साथ । पश्यन् = देखता हुआ । अवलोकयामास = देखा । चरणाक्षेप शब्दस्य = पैरो के आहट के शब्द का, 'चरणाना आक्षेप, तस्य शब्द तस्य' । एकतानेन = एकाग्रचित्त से । निरीक्षमाणेन = देखने वाले (गौरसिंह का विशेपण) । 'निर् + ईक्ष + शानच् (तृ०) ।' दृष्टम् = देखा, 'दृश् + क्त' । कुटीर-निकटस्थ निष्कुटक कदलीकूटे = कुटी के समीप मे स्थित गृहवाटिका के केलो के समूह (झुरमुट) मे, कुटीरस्य निकटे स्थिता योनिष्कुटका तेपु य कदलीनाम् कूट तस्मिन्' (तत्पु०) निष्कुट = गृहवाटिका, निष्कुटा एव निष्कुटका, "गृहारामास्तु निष्कुटा" (अमरकोष), कूट = समूह । द्वित्रा = दो-तीन, 'द्वौ वा त्रयो वेति द्वित्रा' अतितराम् = अधिकतर, अति + तरप्' । कम्पन्ते = कप (हिल) रहे हैं ।

टिप्पणी—(१) आश्रम वासी मुनियो तथा ब्रह्मचारियो सतर्कता, राजनीतिज्ञता तथा वीरता का दिग्दर्शन होता है ।

(२) राजपूत के क्षत्रियो की वीरता से गौरसिह की वीरता का प्रतिपादन किया गया हे, अत अप्रस्तुत प्रशसा है ।

तदेव सशयस्थानमित्यङ्गुल्या निर्दिश्य कुटीरवलीके गोपयित्वा स्थापितानामसीनामेकमाकृष्य, रिक्तहस्तेनैव मुनिना पृष्ठतोऽनुगम्यमान, कपोलतलविलम्बमानान् चक्षुश्चुम्बिन; कुटिलकचान् वामकराङ्गुलि-

भिरपसारयन्, मुनिवेषोऽपि किञ्चित् कोपकषायितनयन, करकम्पितकृपाकृपणकृपाणो महादेवमाराधयिपुरतपस्विवेषोऽर्जुन इव शान्तवीररसद्वयस्नात सपदि ममागतवान् तन्निकटे, अपश्यच्चलता-प्रतान-वितान-वेष्टित-रम्भा-स्तम्भात्रितयस्य मध्ये नीलवस्त्रखण्ड वेष्टित मूर्द्धान हरितकञ्चुक श्यामवसनानद्ध कटितटकर्बुराधोवसनम, काकासनेनोपविष्टम्, रम्भालवाललग्नाधोमुखखड्गत्सरुन्यस्त विपर्यस्त हस्त युगलम्, लशुनगन्धिभिर्निश्वासै कदली किसलयानि मलिना यतम्, नवङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन कन्यकापहरण पङ्क कलङ्क पङ्क कलङ्कितााननम्, विंशतिवर्ष कल्प यवन-युवकम्। तत परस्परम् चाक्षुषे सम्पन्ने दृष्टोऽहमिति निश्चित्य, उत्प्लुत्य, कोशात् कृपाणमाकृष्य, युयुत्सु सोऽपि सम्मुखमवतस्थे। ततस्तयो रेव सजाता परस्परमालापा ।

हिन्दी-अनुवाद—'वही सशय का स्थान है' ऐसा अँगुली से निर्देश करके कुटीर की वल्ली (पटल प्रान्त) मे छिपा कर रखी हुई तलवारो मे से एक को खींच कर, खाली हाथ वाले मुनि से अनुगम्यमान होता हुआ, कपोलो तक लटकने वाले तथा नेत्रो को चुम्बित करने वाले घुंघराले बालो को बाँये हाथ की अगुलियो से दूर हटाता हुआ, मुनिवेष मे होते हुए भी कुछ क्रोध के कारण लाल नेत्रो वाला, हाथ मे कम्पित, निर्दय तलवार को लिये हुए, महादेव की आराधना के इच्छुक तपस्विवेष वाले अर्जुन के समान शान्त और वीर दोनो रसो मे स्नान किये हुए गौरसिह तुरन्त ही उसके (निर्दिष्ट स्थान के) समीप पहुचा और वहाँ लताओ के विस्तृत तन्तुओ (बेलो) से वेष्टित केले के तीन स्तम्भो (पेडो) के बीच मे नीले वस्त्र के टुकडे से वेष्टित शिखा ले, हरित वर्ण के कञ्चुक (कुर्त्ता) वाले, श्याम (नीले) वस्त्र मे कटितट को बाधे हुए, चितकबरे रग का अधोवस्त्र पहने हुए, काकासन से बैठे हुए, केले के आलवाल पर अधोमुख रखी हुई तलवार की मूठ पर दोनो हाथो को उलटे रखे हुए, लहसुन की दुर्गन्ध युक्त नि.श्वासो से केले के कोमल पत्तो को मलिन करते हुए, नवाङ्कुरित श्मश्रु (मूँछ) की रेखा के बहाने कन्या के अपहरण रूप कीचड के कलक पक से कलंकित मुख

वाले लगभग बीस वर्ष वाले (एक) मुसलमान युवक को देखा । तब आपस मे दोनो की आंखे मिल जाने पर—"मै देख लिया गया हू" ऐसा निश्चय करके, उछल कर, म्यान से तलवार को खीच कर, लडने की इच्छा से (यवन युवक) भी सामने खडा हो गया । तब दोनो मे परस्पर इस प्रकार बात चीत हुई ।

सस्कृत-व्याख्या—तदेव = एतदेव सशयस्थानम् = सदेहस्थलम्, इति = एवम्, अगुल्या = करजेन, निर्दिश्य = निर्दिश कृत्वा, कुटीरवलीके = उटजपटले, गोपयित्वा = गोपन कृत्वा, स्थापितानाम् = स्थानीकृतानाम्, असीनाम् = कृपाणानाम्, एकम् = केवलम्, आकृष्य = निष्कृष्य, रिक्तहस्तेनैव = शून्यकरेणैव, मुनिना = गुरुणा, पृष्ठतोऽनुगम्यमान = पृष्ठतोऽनुसृत सन्, कपोलतलविलम्बमानान् = गण्डसलग्नान्, चक्षुश्चुम्बिन -- नेत्रमस्पशकान्, कुटिलकचान् = कुटिलकुन्तलान्, वामकराङ्गुलिभि = वामहस्ताङ्गुलिभि, अपसारयन् = दुरीकुवन्, मुनिवेपोऽपि = साधुवेपोऽपि, किञ्चित् कोपकपायित नयन = ईपत् क्रोधकलुपित लोचन, करकम्पितकृपाकृपणकृपाण = हस्तोद्वेजितदयाशून्यकृपाण, महादेव = शकरम्, आरिराधयिपु = सेवितुमिच्छु, तपस्विवेप = मुनिस्वरूप अर्जुन इव = पार्थं इव, शान्तवीररसद्वयस्नात = शान्तवीरभयरससिक्त, सपदि = तत्क्षण एव, समागतवान् = समागच्छन्, तन्निकटे = निर्दिष्टस्थानसमीपे, अपश्यत्, च = अलोकयत् च, लतानाम् = वल्लीनाम्, प्रतानानि = सूक्ष्मतन्तवस्तेपा, वितानम् = विस्तार तेन, वेष्टितम् = वलयितम्, रम्भास्तम्भाना त्रितयम् = कदलीस्तम्भत्रयम् तस्य, मध्ये = अन्तरे, नीलवस्त्र खण्डवेष्टिमूर्द्धानम् = नीलपटखण्डवलयितशिरम्, हरित् कञ्चुकम् = हरिद्वर्णोर्ध्ववस्त्रम्, श्यामवसनेन = कृष्णपटेन, आनद्धम् = आच्छादितम्, कटितटे = मध्यभागे, कर्बुरम् = अनेकवर्णम्, अधोवसनम् = नाभ्यूरुजङ्घाच्छादनम्, यस्य तम्, काकासनेनोपविष्टम् = एतदासनविशेषेणोपविष्टम्, रम्भाया = कदल्या, आलवाले = आवापे, अधोमुखस्य = निम्नाननस्य, खड्गस्य = कृपाणस्य, त्सरौ = मुष्टौ, न्यस्तम् = स्थापितम् विपर्यस्तम् = न्यञ्जीभूतम्, हस्तयुगलम् = करद्वयम्, यस्य तम्, लशुनगन्धिभि = लशुनवासै, नि श्वासै = श्वासै, कदली किसलयानि = रम्भादलानि, मलिनयन्तम् = मलिनीकुर्वन्तम्, नवाङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन = नवस्फुरितश्मश्रुराजिव्याजेन, कन्यकाया = बालिकाया, अपहरणरूपं यत् पङ्कम् = पापम्, तस्य य कलङ्क स एव पङ्क =

कर्दम, तेन कलङ्कितम् = भ्रष्टम्, आननम् = मुखम्, यस्य तम् विंशतिवर्षकल्पम् = विंशतिवर्षदेशीयम्, यवनयुवकम् -- यवनयुवानम्। तत -तदा, परस्पर = = अन्योन्यम्, चाक्षुपे - नेत्रप्रत्यक्षे,सम्पन्ने - जाते, दृष्टोऽहम् = ज्ञातोऽहम् इति = एव, निश्चित्य = निश्चय कृत्वा, उत्प्लुत्य = उत्पत्य, कोशात् = कृपाणाच्छादनात्, कृपाणम् = असिम्, आकृष्य, युयुत्सु = योद्धुमिच्छु, सोऽपि = यवनयुवकोऽपि, सम्मुखम् समक्षम्, अवतस्थे = स्थितवान्। तत तदनन्तरम्, तयो = यवनयुवक = गौरसिंहयो, एवम् = इत्थम्, परस्परम् = मिथ, आलापा = वार्ता, सजाता = कृता।

हिन्दी-व्याख्या—तदेव = वही। सशयस्थानम् = सदेह का स्थान (है)। निर्दिश्य = निर्देश करके, 'निर् + √ दिश् + ल्यप्'। कुटीरवलीके = कुटीर की ओरी मे, "वलीकनीध्रे पटल प्रान्ते" (अमर कोष)। गोपयित्वा = छिपाकर 'गुप् + णिच् + क्त्वा'। स्थापितानाम् = रखी हुई। असीनाम् = तलवारो मे से। आकृष्य = खीचकर। रिक्तहस्तेन = खाली हाथ। पृष्ठत = पीछे पीछे, अनुगम्यमान. = अनुगमन किये जाते हुए (पीछा किये जाते हुए), 'अनु + गम् + णिच् + शानच्'। कपोलतलविलम्बमानान् = गालो तक लटकने वाले ('वालो' का विशेषण। चक्षुश्चुम्बिन = नेत्रो को स्पर्श करने वाले। कुटिलकचान् = टेढे-मेढे बालो को, 'कुटिला कचा, तान्' वामकराङ्गुलिभि = बाँये हाथ की अँगुलियो से। अपसारयन् = दूर करता हुआ (पीछे करता हुआ), 'अप + √सृ + णिच् + शतृ'। किञ्चितकोपकषायितनयन = कुछ क्रोध से लाल नेत्रो वाला, 'किञ्चित् कोपेन कषायिते नयने यस्य स' (ब० व्री)। करकम्पितकृपाकृपण-कृपाण = हाथ मे कम्पित एव निर्दय तलवार को लिये हुए, 'करे कम्पित कृपा-कृपण. कृपाण यस्य स' (ब० व्री०) अर्थात् इधर उधर हिलाता हुआ क्रूरकृपाण को हाँथ मे लिये हुए। आरिराधयिषु = आराधना करने की इच्छा वाले, 'आ + √राधि + सन् + उ'। तपस्विवेषोऽर्जुनइव = तपस्वी के वेष वाले अर्जुन के समान, शकर की आराधना के लिये अर्जुन (पाण्डव) ने धनुष् लिये हुए तपस्या की थी' महाभारत की कथा है। जिस प्रकार अर्जुन वीर और तपस्वी दोनो के वेष मे, उसी प्रकार गौरसिंह भी हाथ मे तलवार लिये मुनिवेष मे था, अत एव अर्जुन के समान वीर और शान्त दोनों रसों से युक्त था—"शान्तवीररस-

द्वयस्नात" आगे लिखा गया है। सपदि=तुरन्त ही। तन्निकटे=(जहाँ पर केले के पेड हिल रहे थे उसके निकट। समागतवान्=आया। अपश्यच्च= और देखा। लताप्रतानवितानवेष्टितरम्भा स्तम्भत्रितयस्य=लताओ की विस्तृत बेलो से आच्छादित केले के तीन पेडो के, 'लताना प्रतानानि तेपा वितानम् तेन वेष्टितम् रम्भास्तम्भाना त्रितयम्' इति (तत्पु०), प्रतान=सूक्ष्म तन्तु, वितान= विस्तार, वेष्टित=आच्छादित, रम्भा=केला। नीलवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्द्धानम् =नीले वस्त्र के टुकडे शिर लपेटे हुए, नील यत् वस्त्र खण्ड तेन वेष्टितोमूर्धा यस्य स तम्' (कमधारय गर्भ ब० व्री०), (यवनयुवक का विशेपण)। हरित-कञ्चुक=हरे रग का कुर्त्ता पहने हुए। श्यामवसनानद्धकटितटकर्बुराधोवसनम्= काले कपडे को कमर मे बाँधे हुए था और उसके नीचे चितकबरे रग का अधोवस्त्र (लुङ्गी) पहने हुए था, 'श्यामवसनेन आनद्धम् कटितटे कर्वुरम् यस्य तम्, (ब० व्री०), श्यामवसन=काला कपडा, "वस्त्रमाच्छादन वासश्चैल वसनमं-शुकम् (अमर कोष), आनद्ध=आच्छादित, 'आ+$\sqrt{}$नध+क्त'। कर्बुर= चितकबरा (अनेक वर्ण)' "चित्रकिर्मीर कल्माष शबलैताश्च कर्वुर" (अमर कोष), अधोवसन=नाभि से नीचे का आच्छादकवस्त्र प्रकृत मे इसका आशय-'तहमत' या 'लुङ्गी' से है। काकासेनेनोपविष्टम्=काक-आसन से बैठे हुए, काकासन= दोनो घुटनो के बीच मे चिबुक (ठोढी) डाल कर बैठने को काकासन कहते है। रम्भालवाललग्नाधोमुखखड्गत्सरुन्यस्तविपर्यस्तहस्तयुगलम्=केले के आलवाल (थाल्हा) पर नीचे मुख वाली रखी हुई तलवार पर की मुट्ठी पर दोनो हाथो को उलटे रखे हुए, 'रम्भाया आलवालेलग्न अधोमुख य खड्ग तस्य त्सरौ न्यस्तम् विपर्यस्तम् हस्तयुगलम् यस्य स तम्' (ब० व्री०), आलवाल=आवाप (हिन्दी मे 'थाल्हा' या 'ओटा'), वृक्ष के चारो ओर जल के रुकने के लिये बनाए गये घेरे को आलवाल' कहते है–'स्यादालवालमावाप' (अमरकोप)। त्सरु= मुष्टि (तलवार की मूँठ)–'त्सरु खड्गादिमुष्टौ स्यात्') (अमरकोष), न्यस्त= रखे हुए, विपर्यस्त=उलटे (न्युब्जीकृत)। लशुनगन्धिभि=लहसुन की गन्ध वाले (श्वास का विशेपण)। मलिनयन्तम्=मलिन करने वाले। नवाङ्कुरित-श्मश्रुश्रेणिच्छलेन=थोडे-थोडे से निकलने वाले मूँछो की पक्तियो के ब्याज से, नवङ्कुरिताया श्मश्रुश्रेण्या छलेन (तत्पु०), श्मश्रु=मूँछ। कन्यकापहरण-

पङ्ककलङ्कपङ्ककलङ्कितााननम्=कन्या के अपहरणरूप कीचड के कलङ्करूप पङ्क से कलङ्कित मुख वाले, पङ्क=कीचड–"पङ्कोऽस्त्री शादकर्दमौ" (अमरकोष)। विंशतिवर्षकल्पम्=लगभग बीस वर्ष की अवस्था वाले। यवनयुवकम्=मुसलमान के लडके को। चाक्षुषे=दृष्टिगोचर (दर्शन), चक्षुषा भवम्, चाक्षुषम् तस्मिन्। सम्पन्ने=हो जाने पर। निश्चित्य=निश्चय करके। उत्प्लुत्य=उछल कर, 'उत्+√प्लुङ्+ल्यप्'। युयुत्सु=युद्ध करने की इच्छा वाला, √'युध्+सन्+उ'। सम्मुखम्=सामने। अवतस्थे=स्थित हो गया, 'अव+√स्थ+लिट्'। तयौ=उन दोनो मे (मुसलमान युवक और गौरसिंह मे)। परस्परम्=आपस मे। आलापा=बात चीत। सजाता=हुई।

टिप्पणी—(१) आश्रमवासी तपस्वी भी धर्म और देश की रक्षा के लिये युद्ध करने को तैयार रहते थे।

(२) गौरसिंह का अत्यन्त सटीक चित्र खीचा गया है। खड्ग धारण करने से वीरता और वेग से शान्ति की प्रतीति होती है। अत एव वीर और शान्त रस दोनो से युक्त बताया गया है।

(३) गौरसिंह की उपमा अर्जुन से दी गई है, अत उपमा अलकार है।

(४) इस खण्ड मे अनेकत्र अनुप्रास का सुन्दर चित्रण है, इससे चित्रात्मकता द्योतित होती है।

(५) 'कन्यका ·· आननम्' मे सभङ्ग पद यमक अलकार है।

गौरसिंह—कुतो रे यवन कुलकलङ्क।

यवनयुवक—आ। वयमपि कुत इति प्रष्टव्या? भारतीयकन्दरि-कन्दरेष्वपि वय विचराम, शृङ्खलाङ्गूलविहीनाना हिन्दुपदव्यवहार्या-णाञ्च युष्मादृक्षाणा पशूनामखेटक्रीडया रमामहे।

गौरसिंह—[सक्रोध विहस्य] वयमपि स्वाङ्कागतसत्त्ववृत्तय शिवस्य गणा अत्रैव निवसाम। तत्सुप्रभातमद्य, स्वयमेव त्व दीर्घदाव-दहने पतङ्गायितोऽसि।

यवन युवक—अरे रे वाचाल! हो रात्रौ युष्मत् कुटीरे रुदती समायाता ब्राह्मणतनया सपदि प्रयच्छथ, तदा कदाचिद् दयया

जीवतोऽपि त्यजेयम्, अन्यथा मदसि भुजङ्गिन्या दष्टा क्षणात् कथावशेषा सवत्स्यंथ ।

हिन्दी अनुवाद—गौरसिंह—रे यवन कुलकलङ्क । कहाँ से (आया)।

यवन युवक—अरे । हम भी कहाँ से (आये हैं), यह पूंछना है । भारत की पर्वत गुफाओ मे भी विचरण करते है, (तथा) सीग-पूंछ से रहित तथा कथित हिन्दू नामधारी तुम जैसे पशुओ के शिकार से आनन्द मनाते हैं ।

गौरसिंह—(क्रोध के साथ हस कर) अपने गोद (पास) मे आये हुए (दुष्ट) प्राणियो के ऊपर ही जीवित रहने वाले शिव के गण, हम सब भी तो यहीं रहते हैं, तो आज का प्रभात शुभ रहा, (क्योकि) तुम स्वय ही तीव्र दावानल मे पतग के समान (जलने के लिये) आ गये हो ।

यवन युवक—अरे-रे वाचाल ! कल रात्रि मे तुम्हारी कुटी मे रोती हुई जो ब्राह्मण की पुत्री आई थी, तुरन्त (उसे) दे दो । तब कदाचित (शायद) दया करके तुम जीवित भी छोड दिये जाओ, नहीं तो क्षणभर मे ही मेरे इस सर्पिणी सी तलवार के द्वारा डॅसे जाने पर (तुम्हारी) कथामात्र अवशेष रह जायगी ।

सस्कृत-व्याख्या—गौरसिंह—रे यवनकुलकलङ्क ! कुत =कुत्रत्य अत्र आगतोऽसि ।

यवनयुवक—आ ! वयमपि=यवना अपि, कुत इति=कुत्रत्य इति, प्रष्टव्या =प्रश्नस्य विपया सन्तीति ? भारतीयकन्दरिकन्दरेपु=भारतीयपर्वत-गुहासु, अपि, वयम्=यवना , विचराम =पर्यटाम , शृङ्गलाङ्गूलविहीनाना= विपाणलाङ्गूलरहिताना, हिन्दुपदव्यवहार्याणाम=हिन्दुपदवाच्याना, युष्मादृक्षा-णाम्=भवत्सदृशानाम् पशूनाम्=चतुष्पदानाम्, आखेटक्रीडया=मृगयाखेलया, रमामहे=मनोरञ्जन कुर्म ।

गौरसिंह—[सकोप हसित्वा] वयमपि तु=आश्रमनिवासिनोऽपितु, स्वाङ्क-गतमत्त्ववृत्तय =स्वक्रोडागतप्राणिवृत्तय, शिवस्य=शकरस्य, गणा =रुद्रादय, अत्रैव=इहैव, निवसाम =वसाम, तत्सुप्रभातमद्य=सुदिवसोऽद्य, स्वयमेव, त्व=यवनयुवक, दीर्घदाववहने=तीव्रदावानले, पतङ्गायितोऽसि=पतङ्गमि-वाचरसि ।

(२) मदसिभुजङ्गिन्या = 'मेरी तलवाररूपी सर्पिणी से' यहाँ तलवार मे र्पिणी का आरोप किया गया है, अत रूपक अलकार है।

कलकलमेतमाकर्ण्य श्यामवटुरपि कन्या समीपादुत्थाय दृष्ट्वा च हन्तुमेत यवनवराक पर्याप्तोऽय गौरसिह इति मा स्म गमदन्योऽपि कश्चित् कन्यकामपजिहीर्षुरिति वलीकादेक विकटखड्गमाकृष्य त्सरौ गृहीत्वा कन्यका रक्षन् तदध्युषितकुटीर निकट एव तस्थौ।

गौरसिहस्तु "कुटीरान्त कन्यकाऽस्ति, सा च यवनवधव्यसनिनि मयि जीवति न शक्या द्रष्टुमपि, नाम किं स्प्रष्टुम् ? तथयावत्तव कवोष्णशोणित तृषित एष चन्द्रहासो न चलति, तावत् कूर्द न वा उत्फाल वा यच्चिकीर्षसि तद्विधेहि" इत्युक्त्वा व्यालीढमर्य्यादया सज्ज समतिष्ठत।

हिन्दी अनुवाद—इस कोलाहल को सुनकर, श्यामवटु भी कन्या के समीप से उठकर और देखकर, दुष्ट यवन युवक को मारने के लिये गौरसिंह अकेला पर्याप्त है, यह समझकर, कन्या का अपहरण करने के लिये अन्य कोई (यवन) न आ जाय, इसलिये छज्जे से एक भयकर तलवार खींचकर उसकी मूठ पकडकर कन्या की रक्षा करता हुआ—कन्या जिसमे स्थित थी उसी कुटी के निकट खडा हो गया।

गौर सिंह ने—"कुटी के अन्दर कन्या है, और वह यवनो के वध के व्यसनी मेरे जीते जी छूने को कौन कहे ? उसे कोई देख भी नहीं सकता। जब तक तुम्हारे कुछ-कुछ गरम खून को प्यासी यह तलवार नहीं चलती है, तब तक ही तुम जो कुछ भी उछल-कूद करना चाहते हो, वह कर लो" यह कहकर पेंतरा बनाकर तैयार हो गया।

सस्कृत-व्याख्या—एतत् = इदम्, कलकलम् = कोलाहलम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, श्यामवटु = द्वितीय ब्रह्मचारी, अपि, कन्यासमीपात् = बालिकान्तिकात्, उत्थाय, दृष्ट्वा = अवलोक्य, च, हन्तु = मारयितुम्, एतम् = इमम्, यवनवराकम् = क्षुद्रयवनम्, पर्याप्त = अलम्, अयम्, गौरसिह, इति = एतद्विचार्य, अन्योऽपि = इतरोऽपि, कश्चित् = कोऽपि, कन्यकाम् = बालिकाम्, अपजिहीर्षु = अपहरण

कर्तुमिच्छु, इति = एतस्मात्, वलीकात् = पटलप्रान्तात्, एकम् = केवलम्, विकट खड्गम् = भयकर कृपाणम्, आकृष्य = निष्काष्य, त्सरौ = मुष्टौ, गृहीत्वा = सगृह्य, कन्यकाम् = बालिकाम्, रक्षन् = रक्ष्यमाण, तदध्युपितस्य = कन्यया सेवितस्य, कुटीरस्य निकटे = उटजस्य समीपे, एव, तस्थौ = स्थित ।

गौरसिंहस्तु = एतन्नामक ब्रह्मचारीतु "कुटीरान्त = कुटीरमध्ये, कन्यकाऽस्ति = बालिकाऽस्ति, सा = बालिका, च, यवनवधव्यसनिनि = म्लेच्छवधव्यसनिनि, मयि = गौरसिंहे, जीवति = जीविते सति, द्रष्टुमपि = अवलोकयितुमपि न शक्या = न क्षमा, किं नाम, स्प्रष्टुम् = स्पर्शकर्त्तुम् ? तद् = तस्मात्, यावत् = यावत्-कालम्, कवोष्ण शोणित तृपित = कोष्णरक्त पिपासित, एप = अयम्, चन्द्रहास = कृपाण, न चलति = न स्फुरति, तावत् = तावत्काल यावत्, कूर्दनम् = उच्च-लनम्, वा = अथवा, उत्फालम् = उत्प्लवनम्, वा, यत् चिकीर्षसि = कर्त्तुमि-च्छसि, तद्विधेहि = तत्कुरु" इत्युक्त्वा = एव कथयित्वा, व्यालीढमर्य्यादया = युद्धावस्थान विशेपमर्यादया, सज्ज = उद्यत समतिष्ठत् = स्थितवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—कलकलम् = कोलाहल को । कन्यासमीपात् = कन्या के समीप से । उत्थाय = उठ कर । हन्तुम् = मारने के लिये । यवनवराकम् = क्षुद्र यवन को । पर्याप्त = पूर्ण समर्थ है । मास्मगमत् = न पहुँच जाय, 'स्म' के योग मे लङ् लकार तथा 'मा' के योग मे 'अट्' का निषेध । अपजिहीर्षु = अपहरण करने की इच्छा वाला, 'अप + √हृ + सन् + उ' । वलीकात् = छप्पर की ओरी से । विकटखड्गम् = भयकर तलवार को । त्सरौ = तलवार की मूँठ को । गृहीत्वा = पेकडकर । रक्षन् = रक्षा करता हुआ, '√रक्ष + शतृ' । तदध्युषित कुटीर निकटे = उस (कन्या) से युक्त कुटीर के निकट, 'तया अध्युषि-तस्य कुटीरस्य निकटे' (तत्पु०), अध्युषित = 'अधि + √वस् (व = उ सम्प्रसारण) + क्त', कुटीर = कुटी । तस्थौ = स्थित हो गया, '√स्था + लिट्' ।

कुटीरान्त = कुटी के मध्य मे । यवनवधव्यसनिनि = यवनो के वध के व्यसनी ('मयि' का विशेषण), 'यवनाना वध एव व्यसनम् यस्य स तस्मिन् । जीवति = जीवित रहने पर । न शक्या = सम्भव नही है, '√शक् + यत् + टाप् (स्त्री०) । द्रष्टुम् = देखने के लिये । किं नाम स्प्रष्टुम् = छूने की क्या बात ? अर्थात् किसी के छूने का प्रश्न ही नहीं उठता । कवोष्णशोणिततृषित = कुछ-

कुछ गरम खून की प्यासी, 'कवोष्णस्य शोणितस्य तृषित (तत्पु०)', कवोष्ण = ईषद् उष्ण, 'ईषद उष्णम् कवोष्णम्' (अव्ययी०), इसके विकल्प मे कोष्ण, तथा कदुष्ण रूप भी बनते हैं—"कोष्ण कवोष्णम् मन्दोष्णाम् कदुष्ण त्रिषुतद्वति" (अमरकोष), तृषित = प्यासी, शोणित = खून । चन्द्रहास = तलवार—"खड्गे तु निस्त्रिंशचन्द्रहासासि रिष्टय" (अमरकोष)। कूर्दनम् = कूदना । उत्फालम् = उछलना । चिकीर्षसि = करना चाहते हो, '√कृ + सन् + लट् (सिप्)' । विधेहि = करो । व्यालीढमर्यादया = युद्धावस्थान के विशेष ढङ्ग से (पैंतरे आदि के साथ), 'व्यालीढस्य मर्यादा तया' । सज्ज = तैयार । समतिष्ठत = स्थित हो गया, 'सम् + स्थ + ल०् (तिप्)' ।

टिप्पणी—गौरसिंह और श्याम वटु दोनो के शौर्य और विवेक का दिग्दर्शन कराया गया है।

ततो गौरसिंह दक्षिणान् वामाश्च परश्शतान कृपाणमार्गानङ्गीनकृत-वत, दिनकरस्पर्शचतुर्गुणीकृत चाकचक्यै चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कारै श्चक्षूंषि मुष्णत, यवनयुवकहतकस्य, केनाप्यनुलक्षितोद्योग, अकस्मादेव स्वासिना कलितक्लेदसजातस्वेदजलजाल विशिथिलकचकुलमाल भग्न-भ्रूभयानक भाल शिरश्चिच्छेद ।

हिन्दी अनुवाद—तब गौरसिंह ने दांये-बांये सैंकडो कृपाण मार्ग को अङ्गीकार करने वाले, सूर्य की किरणो के स्पर्श से चौगुनी किये गये चाक-चिक्य वाले, चलती हुई तलवार के चमत्कार से चौंधियाई हुई आँखो वाले उस दुष्ट यवन युवक के, श्रमजनित स्वेद कण से व्याप्त, अस्त-व्यस्त बालो वाले तथा विच्छिन्न भौंहो से भयानक भाल वाले शिर को अपनी तलवार से एकाएक (इस प्रकार) काट डाला कि उसका उद्योग किसी के द्वारा देखा नहीं जा सका ।

सस्कृत-व्याख्या—तत = तदनन्तरम्, गौरसिंह = गौरवटु, दक्षिणान् = सव्यान्, वामान् = अपसव्यान्, परश्शतान् = शताधिकान्, कृपाणमार्गान् = कृपाण युद्धपथान्, अङ्गीकृतवत = स्वीकृतस्य, दिनकर करस्पर्शचतुर्गणीकृतचाक-चक्यै = सूर्यकिरणस्पर्शसवर्द्धित प्रतिभासविशेषै, चञ्चच्चन्द्रहास चमत्कारै =

सञ्चरत् कृपाणचमत्कारै, चक्षूंषि = नेत्रान्, मुष्णत = चोरयत, यवनयुवक हतकस्य = दुष्टम्लेच्छयुवकस्य, केनापि, अनुपलक्षितोद्योग = अदृष्टप्रयत्न, अकस्मादेव = सहसैव, स्वासिना = स्वकृपाणेन, कलितक्लेद सजातस्वेदजलजालम् = व्याप्तश्रमजनितस्वेदजलसमूहम्, विशिथिलकचकुल मालम् = शिथिलकेश समूहराजिम्, भग्नभ्रूभयानकभालम् = विच्छिन्न भ्रूभीषणललाटम्, शिर = मुण्डम्, चिच्छेद = अच्छिदत् ।

हिन्दी-व्याख्या—दक्षिणान् = दाये । वामान् = बाँये । परश्शतान् = सैकडो । कृपाणमार्गान् = तलवार चलाने के मार्ग (गतिविधियो को) या 'पैंतरो' को; (इसके पूर्व के तीनो द्वितीयान्त पद इसी के विशेषण हैं) । अङ्गीकृतवत = अङ्गीकार करने वाले (यवन युवक का विशेषण), इस प्रकार पूरे का आशय हुआ—'दाहिने-बायें, सैकडो पैंतरे बदलने वाले (यवन युवक के) । दिनकर चाकचक्यै = सूर्य की किरणो के स्पर्श से चौगुना कर दिया गया है चाकचक्य जिसका (चमत्कार का विशेषण है) । चलती हुई स्वच्छ तलवार पर सूर्य की किरणो के पडने से उसका चाकचक्य (प्रतिभास या निकलने वाली किरणें) और अधिक बढ गया है । दिनकरस्य कराणाम् स्पर्शेन चतुर्गुणीकृतम् चाकचक्यम् यैस्तै' (ब० व्री०), चतुर्गुणीकृतम् = चौगुना कर दिया गया है । चाकचक्यम् = प्रतिभास । चञ्चच्चन्द्रहास चमत्कारै = चलती हुई तलवार के चमत्कार से, चञ्चत् = सचरणशील, चन्द्रहास = तलवार । चक्षूंषि = नेत्रो को । मुष्णत = चौंधियाने वाले (देखने की शक्ति जिसकी नही रह गई है, (यवनयुवक का विशेषण है) । यवनयुवकहतकस्य = दुष्ट यवनयुवक के, हतक = दुष्ट । अनुपलक्षितोद्योग = जिसका परिश्रम (उद्योग) नही देखा गया, "अनुपलक्षित उद्योग यस्य स (ब० व्री०) । स्वासिना = अपनी तलवार से । कलितक्लेद सजातस्वेदजलजालम् = परिश्रम के कारण उत्पन्न पसीने की बूंदो से व्याप्त (शिर का विशेषण है), 'कलितेन क्लेदेन सजातस्य स्वेदजलस्य जाल यस्मिन्, तत् (ब० व्री०), कलित = व्याप्त, क्लेद = श्रम । विशिथिल कचकुलमालम् = बिखरे हुए बालो वाले, विशिथिल = अस्तव्यस्त, कच = बाल, कुल = समूह, माला = पक्ति, 'विशिथिला कचाना कुलस्य माला यस्मितत्' (ब० व्री०), (शिर का विशेषण है) । भग्नभ्रूभयानकभालम् = विच्छिन्न भौंहो से भयानक भाल वाले अर्थात्

छिन्न-भिन्न या टेढी-मेढी भौंहो के कारण ललाट भयानक हो गया है। चिच्छेद =काट दिया।

टिप्पणी—(१) लेखक समास शैली की ओर उन्मुख है।

(२) अनुप्रास की छटा तथा चित्रात्मकता द्रष्टव्य है।

अथ मुनिरपि दाडिम कुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव गाढरुधिर-दिग्धाया ज्वलदङ्गारचिताया चितायामिव वसुधाया शयान वियुज्यमान भारतभुव-मालिङ्गन्तमिव निर्जीवीभवदङ्गबन्धचालनपर शोणितसङ्घात व्याजेनान्त स्थित रजोराशिमिवोदगिरन्त कलितसायन्तन घनाडम्बर विभ्रम सतत-ताम्रचूडभक्षणपातकेनेव ताम्रीकृत छिन्नकन्धर यवनहतकमवलोक्य सहर्षं साधुवाद सरोमोद्गमञ्च गौरसिंहमाश्लिष्य, भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन भृत्येन मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णोदिकमन्विष्यनीतम पत्रमेकमादाय सगण स्वकुटीर प्रविवेश।

इति प्रथमो नि श्वास।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद अनार के फूलो के आस्तरण (विस्तर) से युक्त हुई सी, गाढे खून से लिप्त तथा जलते अगारो वाली चिता के समान पृथ्वी मे सोने वाले (पडे हुए), वियुक्त होती हुई भारतभूमि का आलिङ्गन करते हुए से, निर्जीव होने वाले अङ्ग बन्धो को हिलाते हुए, रक्तराशि के व्याज से अन्त-स्थित रजोगुण की राशि को उगलते हुए से, सायकालिक मेघाडम्बर के विभ्रम को धारण किये हुए, मानो मुर्गा खाने के पाप से लाल हुए और कटे हुए शिर वाले दुष्ट यवन को मुनि ने देखकर, हर्षपूर्वक (गौरसिंह को) साधुवाद देते हुए, रोमाञ्च से युक्त होकर (मुनि ने) गौरसिंह को आलिङ्गन करके, भ्रूभङ्ग से ही आदिष्ट हुए भृत्य के द्वारा मृतक के कुर्त्ते (चोगा), कटिबन्ध (कमरबन्द) तथा पगडी का अन्वेषण करके लाये गये एक पत्र को लेकर, (अपने) गणो के सहित अपनी कुटी मे प्रवेश किया।

संस्कृत-व्याख्या—अथ=तदनन्तरम्, मुनिरपि=ब्रह्मचारिगुरुरपि, दाडिम-

कुसुमास्तरणाच्छन्नायाम् - अनारपुष्पविष्टर युक्तायाम्, इव, गाढरुधिरदिग्धायाम् =गाढरक्तप्रसिक्तायाम्, ज्वलदङ्गारचितायाम् - प्रज्वलत्स्फुलिङ्गव्याप्तायाम्, चितायाम् = चितौ, इव, वसुधायाम् = पृथिव्याम्, शयानम् = लुण्ठन्, वियुज्यमान भारतभुवमालिङ्गन्तम् = वियुज्यमानभारतवसुन्धरम् सश्लिष्टम्, इव निर्जीभव-दङ्गबन्धचालनपरम् = निष्प्राणीभवत् सन्धिबन्धस्फुरणनिरतम्, शोणितसङ्घात-व्याजेन = रुधिरप्रवाहच्छलेन, अन्त स्थितरजोराशिमिव = अन्त स्थितरजोगुण-समूहमिव, उद्गिरन्तम् वमन्तम्, कलिनगाग ाघनाग्नर निभ्रमम् = धारित सायकाग्निमेघ त्रिडगबनत्रिनामगम्, रतन ताम्रचूडभक्षणपातकेनेव = निरन्तर-कुक्कुटाशनपापेनेव, ताम्रीकृतम् = रक्तीकृतम्, छिन्न कन्धरम् = कृत्तग्रीवम्, यवनहतकम् = दुष्टयवन युवकम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, सहर्षम् = सानन्दम्, ससाधुवादम् = प्रशसन्, सरोमोद्गमञ्च = सरोमाञ्चितम्, गौरसिंहम् = तद्ब्रह्म-चारिणम्, आश्लिष्य = समालिङ्ग्य, भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन = अक्षि निकोचसकेतितेन, मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णादिकम् = यवनयुवक कञ्चुकजघनपट्टिकोष्णीपादिकम्, अन्विष्य = अन्वेपणम् कृत्वा, आनीतम् = प्रस्तुतम्, एक पत्रम् = लेखनमेकम्, आदाय = गृहीत्वा, सगण = सपरिवार, स्वकुटीरम् = स्वोटजम्, प्रविवेश = प्रवेशयामास ।

हिन्दी-व्याख्या—**दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नायाम्** = अनार के फूलो के आस्तरण (बिछौने) से युक्त (पृथिवी का विशेषण), दाडिम = अनार, आस्तरणा = बिछौना, "दाडिमस्य कुसुमानाम् आस्तरण तेनाच्छन्नायाम् (तत्पु०) ।" **आच्छन्न** = 'आ + √ छद् + क्त' (युक्त) । **गाढरुधिरदिग्धायाम्** = गाढे खून से सनी हुई (पृथ्वी का विशेषण), दिग्ध = लिप्त । गाढेनरुधिरेण लिप्तायाम् (तत्पु०) । **ज्वलदङ्गारचितायाम्** = जलते हुए अङ्गारो से व्याप्त, ज्वलत् = जलते हुए, अङ्गार = स्फुलिङ्ग, चित = व्याप्त । "ज्वलन्त आङ्गारास्तै चितायाम्" । **चितायाम्** = चिता मे, "चिताचित्याचिति स्त्रियाम्" (अमरकोष) । **शयानम्** = सोते हुये, '√शीङ् + शानच्' । **वियुज्यमानभारतभुवम्** = अलग होती हुई भारत वसुन्धरा को, वियुज्यमाना चासौ भारतस्य भू ताम्," 'वि + √ युज् + शानच्' (अलग होती हुई) । **आलिङ्गन्तम्** = आलिङ्गन करते हुए (यवन युवक का विशेषण) । **निर्जीवीभवदङ्गबन्धचालनपरम्** = निर्जीव हो रहे सन्धिबन्धों को

हिलाते हुए (यवनयुवा का विशेषण), निर्जीवी भवत् = निर्जीव होने वाले, 'निर् + जीव + च्वि + भू' । अङ्गबन्ध = अङ्गो के जोड चालनपरम = चलाने मे लगे हुए । "निर्जीवीभवन्त अङ्गबन्धास्तेपा चालने पर तम्" । शोणित-सङ्घातव्याजेन = रक्तराशि के व्याज (बहाने) से, 'शोणितस्य सङ्घात तस्य व्याज तेन' । अन्त स्थितरजोराशिम् = अन्त करण मे स्थित रजोगुण के समूह को । उद्गिरन्तम् = उगलते हुए, "उद् + गिर् + शतृ" । कलितसायन्तन-घनाडम्बरविभ्रमम् = सायकालिक मेघ के विभ्रम को धारण करने वाले । कलित = धारण किये हुए, सायन्तन = सायकालीन, घनाडम्बर = मेघो की विडम्बना, विभ्रम = विलास । "कलित सायन्तनस्य घनाडम्बरस्य विभ्रम येन स तम्" (ब० ब्री०) । सायन्तन = 'साये भव' इस व्युत्पत्ति मे 'सायञ्चिरम्—' सूत्र 'तुट' 'ट्यु' और मान्त होकर—"सायम् = तुट (त्) + ट्यु (अन्) 'सायन्तन' बनता है । ताम्रचूडभक्षणपातकेन = मुर्गा खाने के पाप से, ताम्रचूड = मुर्गा—"कृकवाकस्तु ताम्रचूड कुक्कुटचरणायुध" (अमरकोप) । "ताम्र-चूडस्य भक्षणेन पातकस्तेन" (तत्पु०) । ताम्रीकृतम् = लाल हो गये, 'ताम्र + च्वि + कृतम्' । छिन्नकन्धरम् = कटे हुये शिर वाले । ससाधुवादम् = प्रशसा करते हुये । सरोमोद्गमञ्च = रोमाञ्चित होते हुये । आश्लिष्य = आलिङ्गन करके, "आ + √श्लिप् + ल्यप्' । भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन = भृकुटी के सकेतमात्र से आदिष्ट हुए । भृत्येन = सेवक के द्वारा । मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णीषादिकम् = मृतक के कुर्त्ते, कटिबन्ध (कमरबन्द) तथा पगडी आदि को (अन्विष्य = ढूंढकर (तलाशी लेकर) । आनीतम् = लाये गये । आदाय = लेकर । सगण = सपरिवार । स्वकुटीरम् = अपनी कुटी मे । प्रविवेश = प्रवेश किया ।

इति प्रथम निश्वास समाप्त

अथ द्वितीयो निश्वासः

राात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पङ्कजश्री ।
इत्थ विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे,
हा हन्त ! हन्त !! नलिनी गज उज्जहार ॥ (स्फुटकम्)

हिन्दी अनुवाद—"रात्रि जायगी, सबेरा होगा, सूर्य उदित होगा और कमल खिलेगा' कमल कलिका के अन्दर बन्द हुआ भ्रमर इस प्रकार सोच ही रहा था—दु ख है, कि उसी समय कमल को हाँथी ने उखाड दिया ।

सस्कृत-व्याख्या—कमलकोश सम्पुटितो भ्रमरश्चिन्तयति,—"यद्धि निशा यास्यति, प्रातर्भविष्यति, सूर्योदयो भविष्यति, तदा कमल विकासकालेऽहम् बहिर्भविष्यामीति"—हा कष्टम । भ्रमरे इत्थ चिन्तयति एव एको हस्तिः आगत्य तत्कमलमुत्पाटयामास ।

हिन्दी-व्याख्या—उदेष्यति = उदित होगा । प्रङ्कजश्री = कमल की शोभा, पङ्कात् जात तङ्कज तस्य श्री, 'पङ्कज' शब्द योगरूढ शब्द है । इत्थम् = इस प्रकार । द्विरेफे = भ्रमर के, कुछ आचार्यों के अनुसार 'द्विरेफ' पद लाक्षणिक है । 'द्वौ रेफौ यस्मिन्निति द्विरेफ—अर्थात् दो 'र कार' वाले पद को द्विरेफ कहते हैं--इस प्रकार द्विरेफ से भ्रमर का बोध होता है और भ्रमर से 'भौंरा' का अर्थबोध होता है । कुछ आचार्य द्विरेफ को योगरूढ पद मानते हैं और यह सीधे ही भ्रमर का अर्थबोध कराता है, जैसा कि कोश का निर्देश है—"द्विरेफ पुष्प लिड्भृङ्गषट्पदभ्रमरालय" । उज्जहार = उखाड दिया, 'उत् + √हृ + लिट् (तिप्)' ।

टिप्पणी—प्रस्तुत पद स्फुटक है । इसके भाव मे द्वितीय नि श्वास की कथा प्रतिबिम्बित होती हे । अतएव व्यास जी ने इसको यहाँ पर उद्धृत किया है । इस पद को वस्तु निर्देशात्मक मगलपरक भी माना जा सकता है—'ग्रन्थादौ, ग्रन्थमध्ये, ग्रन्थान्ते च मङ्गलमाचरणीयम्' इस सिद्धान्त के अनुसार ।

इतस्तु स्वतन्त्र-यवनकुल-भुज्यमान-विजयपुराधीश-प्रेपित- पुण्यनगरस्य समीपे एव प्रक्षालित-गण्डशैल-मण्डलाया, निर्झरवारिधारा-पूर-पूरित-प्रवल-प्रवाहाया, पश्चिम-पारावार-प्रान्तप्रसूत-गिरि-ग्राम-गुहा-गर्भ-निर्गताया अपि प्राच्यपयानिधि चुम्वन चञ्चुगया, रिङ्गत्-तरङ्ग-भङ्गोद-भूतावर्त्त-शत-भीमाया, भीमाया नद्या, अनवरत-निपद्वकुल-कुल-कुसुम-कदम्व-सुरभीकृतमपि नीर वगाहमान-मत्त-मतङ्गज-मद-धाराभि-कटूकुर्वन्, हय-हेषा-ध्वनि-प्रतिध्वनि-वधिरीकृत-गव्यूति-मध्यगाध्वनीन-वर्गं, पट-कुटीर-कूट-विहित-शारदाम्भोधर-विडम्बन, निरपराधभारता-भिजन-जनपीडन-पातक-पटलैरिव समुद्धूयमान-नीलध्वजै-रुपलक्षित, विजयपुरस्यान्यतम सेनानी अपजलखान प्रतापदुर्गादविदूर एव शिव-वीरेण सहाऽऽहवद्यूतेन चिक्रीडिषु ससेनस्तिष्ठति स्म ।

हिन्दी अनुवाद—इधर तो यवनकुल से शासित विजयपुर नरेश के द्वारा प्रेषित, पूना नगर के समीप ही बडे-बडे पर्वतखण्डो को प्रक्षालित करने वाली, झरनो की जलधाराओ से पूर्ण प्रबल प्रवाह वाली, पश्चिमी समुद्र के तटवर्ती पर्वत श्रेणियो की गुफाओ के मध्य से निकली हुई भी पूर्वी समुद्र को चूमने के लिये उतावली, (ऊँची-ऊँची) उठने वाली लहरो के भङ्ग से (उत्पन्न) सैकडो भँवरो (आवर्तो) से भीषण 'भीमा' (नामक) नदी के—अनवरत गिरने वाले बकुलो के पुष्प समूह से सुगन्धित जल को भी जलक्रीडा करने वाले मद से मतवाले हाथियो की मद-धारा से कटु बनाता हुआ, घोडो के हिनहिनाहट की ध्वनि की प्रतिध्वनि से दो कोस के मध्य के यात्रियो को बहरा कर देने वाला, वस्त्रकुटीर समूह (कपडे के तम्बू) से शरद के बादलो को विडम्बित करने वाला, निरपराध भारतीय जनता के उत्पीडन से उत्पन्न पापसमूह के समान फहराने वाली नीली पताकाओ से पहचाना जाने वाला, बीजापुरनरेश का अन्यतम सेनानी अफजल खाँ शिववीर के साथ युद्धरूपी जुआ खेलने की इच्छा से प्रताप दुर्ग के निकट ही सेना सहित रुका हुआ था।

संस्कृत-व्याख्या—इतस्तु = द्वितीयतस्तु, स्वतन्त्रम् = स्वच्छन्दम्, यद् यवन-

कुल = गोत्रकुल, तेन, भुज्यमानस्य - पाल्यमानस्य, विजयपुरस्य = यन्नामक-नगरस्य, अधीश्वरेण = स्वामिना, प्रेषित = प्रहित, पुणनगरस्य = पूनानगरस्य, समीपे एव = निकटे एव, प्रक्षालितगण्डशैल मण्डलाया = धौत गिरिच्युत स्थूलशिला मण्डलाया, निर्झराणाम् = स्रोतसाम्, वारिधारापूरै = जलधारासमूहै, पूरित = भरित, प्रवल = वेगवान्, प्रवाह = प्रवहणम्, यस्यास्तस्या, पश्चिमपारावार = पश्चिमसमुद्र, तस्य, प्रान्ते = निकटे, य गिरीणा = पर्वतानाम्, ग्राम = समूह, तस्य, गुहाना = गह्वराणाम्, गर्भत = मध्यत, निर्गताया = समुत्पन्नाया, अपि, प्राच्य पयोनिधे = प्राच्य समुद्रस्य, चुम्बने = सश्लेपणे, चञ्चुराया = चञ्चलाया, रिङ्गताम् = चलताम्, तरङ्गाणाम् - ऊर्मीणाम्, भङ्गै - छेदे, उद्भूता = सञ्जाता, ये आवर्तशता = विभ्रमशता, तै, भीमाया = भीपणाया, भीमाया = 'भीमा' इति नाम्न्या, नद्या = सरित, अनवरतम् = निरन्तरम्, निपतताम् = प्रच्यवताम्, बकुलकुलकुसुमानाम् = वञ्जुलकुल पुष्पाणाम्, कदम्बेन = समूहेन्, सुरभीकृतम् = सुगन्धायितम्, अपि, नीरम् = जलम्, वगाहमान मत्त-मतङ्गज मदधाराभि = निमज्जन्मत्तकरिदानवारिधाराभि, कटूकुर्वन् = तिक्तीकुर्वन्, हयनाम् = अश्वानाम्, हेपाध्वनि = 'हिन-हिने'ति रवस्तस्य, प्रतिध्वनि = प्रतिनि स्वनस्तेन, वधिरीकृत = श्रुतिशक्तिविकलीकृत, गव्यूति मध्यग = गव्यूत्यन्तर्वर्त्ती, अध्वनीनवर्ग = पथिक समूह, येन स, पटकुटीरकूटै = उपकारिका समूहै, विहित = सम्पादिता, शारदाम्भोधराणाम् = शरन्मेघानाम्, विडम्बना = अनुकृति, येन स, निरपराधभारताभिजन जनपीडनपातकपटलै = निर्दोषभारतीयजनोत्पीडनपापराशिभि, इव, समुद्धूयमान नीलध्वजै = प्रकम्प-माननीलपताकाभि, विजयपुरेश्वरस्य = बीजापुरनरेशस्य, अन्यतम = अनेकेष्वेक, सेनानी = चमूपति, अपजलखान' = 'अफजलखाँ' नामक, प्रतापदुर्गात् = सिंह-दुर्गात्, अविदूरे एव = निकटे एव, शिववीरेण सह, आहवद्यूतेन = युद्ध दुरोदरेण, चिक्रीडिषु = कर्त्तुमिच्छु, ससेन = सेनायुक्त, तिष्ठति स्म = अतिष्ठत् ।

हिन्दी-व्याख्या—स्वतन्त्रयवनकुलभुज्यमानविजयपुराधीशप्रेषित = स्वेच्छाचारी यवन कुल के द्वारा शासित विजयपुरनरेश के द्वारा प्रेषित (अफजलखाँ का विशेपण)। स्वतन्त्रम् यद् यवनकुलम् तेन भुज्यमानस्य विजयपुरस्य अधीशेन प्रेषित' (तत्पु०) 'भुज्यमान = '√भुज् + शानच्' = भोग क्रिया जाता हुआ।

पुण्यनगरस्य-पूनानगर के । प्रक्षालित गण्डशैलमण्डलाया =पर्वत से टूटकर गिरे हुए शिलाखण्डो को प्रक्षालित करने वाली (नदी का विशेपण), प्रक्षालित= धोये गये, गण्डशैल=पर्वत से गिरे हुए बडे-वडे पत्थर ।'प्रक्षालितानि गण्डशैल-नाम् मण्डलानि यया तस्या (व० व्री०)' । निर्भरवारिधारापूरपूरितप्रवल-प्रवाहाया =भरनो की जलधारा समूह से पूर्ण प्रवल प्रवाह वाली (नदी का विशेपण) । निर्भराणाम् वारिधारापूरै पूरित प्रवल प्रवाह यस्यास्तस्या (व व्री०) । पश्चिमपारावार प्रान्तगिरिग्राम गुहागर्भनिर्गताया =पश्चिमी समुद्र के किनारे पर्वत श्रेणियो की गुफाश्रो के मध्य मे निकलने वाली (नदी का विशेपण), पारावार=समुद्र, प्रान्त=तट पर, ग्राम=समूह, गुहा=गुफा, गर्भ =मध्य, निर्गता=निकली हुई । पश्चिमश्चासौ पारावर तस्य प्रान्ते गिरीणा ग्रामस्तस्य गुहा तासा गर्भत निर्गताया (तत्पु०) । प्राच्यपयोनिधिचुम्वन चञ्चञ्चुराया = पूर्वी समुद्र के चुम्वन के लिये उतावली । 'प्राच्य पयोनिधि स्तस्य चुम्वने चञ्चुराया' (तत्पु०), प्राच्य =प्राच्या भव प्राच्य (पूर्व मे स्थित), पयोनिधि=समुद्र, पयसाम् निधि पयोनिधि । चञ्चुरा=चञ्चल (उतावली) । रिङ्गत्तरङ्गभङ्गोद्भूतावतशतभीमाया =चञ्चल तरङ्गो के भङ्ग मे उत्पन्न सैकडो आवर्तो (भँवरो) के कारण भयानक (नदी का विशेपण), रिङ्गत्=सञ्चरणशील, तरङ्ग=लहर, भङ्ग=टूटने से, उद्भूत=उत्पन्न, आवर्त=भँवर, शत=सैकडो, भीमा=भयानक । 'रिङ्गताम् तरङ्गाणाम् भङ्गै उद्भूता आवर्ताना शतास्तै भीमाया' (तत्पु०) । 'अनवरत सुरभीकृतम्'= निरन्तर गिरने वाले वकुल पुष्प समूह से सुगन्धित, अनवरत निपतताम् वकुल कुलस्य कुसुमाना कदम्वेन सुरभीकृतम् (तत्पु०) । वगाहमानमत्तमतङ्गजमद-धाराभि =जलक्रीडा (स्नान) करने वाले मतवाले हाँथियो की मदधारा से, वगाहमान=जलक्रीडा करने वाले, 'अव+$\sqrt{}$गाहू (विलोडने)+शानच्' 'अव' के 'अ' का विकल्प से लोप हो जाता है—"वष्टिभागुरिरल्लोपमवाप्यो रूप-सर्गयो । मतङ्गज=हाँथी । मद=हाथी से वहने वाला जल । "वगाहमानानाम् मत्तमदङ्गजाना मदधाराभि (तत्पु०) । कटूकुर्वन्=कटु वनाता हुआ । 'हयहेषा वर्ग'=घोडो की हिनहिनाहट की ध्वनि की प्रतिध्वनि से वहरा कर दिया गया हैं दो कोस के मध्य के यात्रियों का वर्ग जिसके द्वारा (अफजलखाँ

कुल = म्लेच्छ कुलम्, तेन, भुज्यमानस्य - शास्यमानस्य, निजयपुरस्य = यन्नामक-नगरस्य, अधीश्वरेण = स्वामिना, प्रेषित = प्रहित, पुण्यनगरस्य = पूनानगरस्य, समीपे एव = निकटे एव, प्रक्षालितगण्डशैल मण्डलाया = धौत गिरिच्युत स्थूलशिला मण्डलाया, निर्झराणाम् = स्रोतसाम्, वारिधारापूरैः = जलधारासमूहे, पूरित = भरित, प्रबल = वेगवान्, प्रवाह = प्रवहणम्, यस्यास्तस्या, पश्चिमपारावार = पश्चिमसमुद्र, तस्य, प्रान्ते = निकटे, य गिरीणा = पर्वतानाम्, ग्राम = समूह, तस्य, गुह्राना = गह्वराणाम्, गर्भत = मध्यत, निर्गताया = समुत्पन्नागा, अपि, प्राच्य पयोनिधे = प्राच्य समुद्रस्य, चुम्बने = सश्लेषणे, चञ्चुराया = चञ्चलाया, रिङ्गताम् = चलताम्, तरङ्गाणाम् = ऊर्मीणाम्, भङ्गैः = छेदे, उद्भूता = सञ्जाता, ये आवर्तशता = विभ्रमशता, तैः, भीमाया = भीपणाया, भीमाया = 'भीमा' इति नाम्न्या, नद्या = सरित, अनवरतम् = निरन्तरम्, निपतताम् = प्रच्पवताम्, बकुलकुलकुसुमानाम् = वञ्जुलकुल पुष्पाणाम्, कदम्बेन = समूहेन्, सुरभीकृतम् = सुगन्धायितम्, अपि, नीरम् = जलम्, वगाहमान मत्त-मतङ्गज मदधाराभि = निमज्जन्मत्तकरिदानवारिधाराभि, कटूकुर्वन् = तिक्तीकुर्वन्, हयनाम् = अश्वानाम्, हेपाध्वनि = 'हिन-हिने'ति रवस्तस्य, प्रति-ध्वनि = प्रतिनि स्वनस्तेन, बधिरीकृत = श्रुतिशक्तिविकलीकृत, गव्यूति गव्यग = गव्यूत्यन्तर्वर्त्ती, अध्वनीनवर्ग = पथिक समूह, येन स, पटकुटीरकूटं = उप-कारिका समूहै, विहित = सम्पादिता, शारदाम्भोधराणाम् = शरन्मेघानाम्, विडम्बना = अनुकृति, येन स, निरपराधभारताभिजन जनपीडनपातकपटलै = निर्दोपभारतीयजनोत्पीडनपापराशिभि, इव, समुद्धूयमान नीलध्वजैं = प्रकम्प-माननीलपताकाभि, विजयपुरेश्वरस्य = बीजापुरनरेशस्य, अन्यतम = अनेकेष्वेक, सेनानी = चमूपति, अपजलखान' = 'अफजलखाँ' नामक, प्रतापदुर्गात् = सिंह-दुर्गात्, अविदूरे एव = निकटे एव, शिववीरेण सह, आहवद्यूतेन = युद्ध दुरोदरेण, चिक्रीडिषु = कर्त्तुमिच्छु, ससेन = सेनायुक्त, तिष्ठनि स्म = अतिष्ठत् ।

हिन्दी-व्याख्या—स्वतन्त्रयवनकुलभुज्यमानविजयपुराधीशप्रेषित = स्वेच्छा-चारी यवन कुल के द्वारा शासित विजयपुरनरेश के द्वारा प्रेषित (अफजलखाँ का विशेपण)। स्वतन्त्रम् यद् यवनकुलम् तेन भुज्यमानस्य विजयपुरस्य अधीशेन प्रेषित' (तत्पु०) भुज्यमान = '√भुज् + शानच्' = भोग किया-जाता हुआ।

पुण्यनगरस्य-पूनानगर के । प्रक्षालित गण्डशैलमण्डलाया पर्वत से टूटकर गिरे हुए शिलाखण्डो को प्रक्षालित करने वाली (नदी का विशेषण), प्रक्षालित = धोये गये, गण्डशैल = पर्वत से गिरे हुए बडे-बडे पत्थर ।'प्रक्षालितानि गण्डशैल-नाम् मण्डलानि यया तस्या (ब० व्री०)' । निर्झरवारिधारापूरपूरितप्रबल-प्रवाहाया = झरनो की जलधारा समूह से पूर्ण प्रबल प्रवाह वाली (नदी का विशेषण) । निर्झराणाम् वारिधारापूरै पूरित प्रबल प्रवाह यस्यास्तस्या (ब व्री०) । पश्चिमपारावार प्रान्तगिरिग्राम गुहागर्भनिर्गताया = पश्चिमी समुद्र के किनारे पर्वत श्रेणियो की गुफाओ के मध्य मे निकलने वाली (नदी का विशेषण), पारावार = समुद्र, प्रान्त = तट पर, ग्राम समूह, गुहा = गुफा, गर्भ = मध्य, निर्गता = निकली हुई । पश्चिमश्चासौ पारावर तस्य प्रान्ते गिरीणा ग्रामस्तस्य गुहा तासा गर्भत निर्गताया (तत्पु०) । प्राच्यपयोनिधिचुम्बन चञ्चुराया = पूर्वी समुद्र के चुम्बन के लिये उतावली । 'प्राच्य पयोनिधि स्तस्य चुम्बने चञ्चुराया' (तत्पु०), प्राच्य = प्राच्या भव प्राच्य (पूर्व मे स्थित), पयोनिधि = समुद्र, पयसाम् निधि पयोनिधि । चञ्चुरा = चञ्चल (उतावली) । रिङ्गत्तरङ्गभङ्गोद्भूतावर्तशतभीमाया = चञ्चल तरङ्गो के भङ्ग से उत्पन्न सैकडो आवर्तो (भँवरो) के कारण भयानक (नदी का विशेषण), रिङ्गत् = सञ्चरणशील, तरङ्ग = लहर, भङ्ग = टूटने से, उद्भूत = उत्पन्न, आवर्त = भँवर, शत = सैकडो, भीमा = भयानक । 'रिङ्गताम् तरङ्गाणाम् भङ्गै उद्भूता आवर्ताना शतास्तै भीमाया' (तत्पु०) । 'अनवरत सुरभीकृतम्' = निरन्तर गिरने वाले बकुल पुष्प समूह से सुगन्धित, अनवरत निपतताम् बकुल कुलस्य कुसुमाना कदम्बेन सुरभीकृतम् (तत्पु०) । वगाहमानमत्तमतङ्गजमद-धाराभि = जलक्रीडा (स्नान) करने वाले मतवाले हाँथियो की मदधारा से, वगाहमान = जलक्रीडा करने वाले, 'अव + $\sqrt{}$गाह् (विलोडने) + शानच्' 'अव' के 'अ' का विकल्प से लोप हो जाता है—"वष्टिभागुरिरल्लोपमवाप्यो रुप-सर्गयो । मतङ्गज = हाँथी । मद = हाथी से बहने वाला जल । "वगाहमानानाम् मत्तमदङ्गजाना मदधाराभि (तत्पु०) । कटूकुर्वन् = कटु बनाता हुआ । 'हयहेषा वर्ग' = घोडो की हिनहिनाहट की ध्वनि की प्रतिध्वनि से बहरा कर दिया गया हैं दो कोस के मध्य के यात्रियों का वर्ग जिसके द्वारा (अफजलखाँ

का विशेपण), हेपा=घोडे की हिनहिनाहट (ध्वनि), प्रतिध्वनि=ध्वनि के कारण उठने वाली ध्वनि, बधिरीकृत=बहराकर दिया गया है, 'बधिर+च्वि +कृ+क्त', गव्यूति=दो कोस, 'गो+यूति' (निपातन से), मध्वग=मध्य के, मध्येगच्छतीति मध्यम, अध्वनीन=पथिक, वर्ग=समूह। हयाना हेपाध्वनि तेपा प्रतिध्वनिभि. बधिरीकृत गव्यूतिमध्यग अध्वनीनाना वर्गं येन स (ब० व्री०)। 'पटकुटीरविडम्बन'=वस्त्र की कुटी (तम्बू) के समूह से शरद के मेघो को विडम्बित कर दिया है जिसने (अफजल खाँ का विशेपण), पट-कुटीर=तम्बू या खेमा, कूट=समूह, शारद=शरत्कालीन, अम्भोधर=बादल, विडम्बना=उपहास। पटकुटीराणा कूटै विहिता शारदाना अम्भोधराणा विडम्बना येन स (ब० व्री०)। 'निरपराध पटलै'=निर्दोप भारत के अभिजन (निवासी) लोगो के उत्पीडन के पाप समूह के। निरपराधा—भारतताभिजना ये जना स्तेपा पीडनेन पातक पटलै (तत्पु०)। समुद्धूयमाननीलध्वजै=फहराने वाली नीली पताकाओ से। समुद्धूयमाना नीलध्वजा तै (कर्मधारय)। समुद्धूयमान='सम्+उत्+√धञ्+शानच्'। उपलक्षित=प्रतीत होने वाला। अन्यतम=अनेको मे एक। सेनानी-सेनापति, 'सेना+आनुक्+ङीप् (स्त्री)'। अविदूरे=समीप मे। आहवद्यूतेन=युद्धरूपी जुआ से। 'आहव एव द्यूतस्तेन, आहव=युद्ध। चिक्रीडिषु—खेलने की इच्छा वाला, '√क्रीड्+सन्+उ'। तिष्ठतिस्म=स्थित था, 'स्म' के योग मे 'लिट्' के स्थान पर 'लट्' का प्रयोग होता है 'लट् स्मे"।

टिप्पणी—(१) "निरपराध नीलध्वजै"—निरपराध भारतीयो के उत्पीडन से उत्पन्न पाप राशि की सम्भावना अफजल खाँ के नीलध्वज मे की गई है, अत उत्प्रेक्षा अलकार है।

(२) अनुप्रास अलङ्कार की समायोजना से वर्णन मे सजीवता है।

(३) भीमा नदी का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया है।

(४) 'पश्चिमी समुद्र के किनारे के पर्वतो से निकली नदी पूर्व के समुद्र के चुम्बन के लिये उतावली' इससे पाश्चात्य रमणियो का प्राच्य सम्पर्क रूप आधुनिक व्यवहार परिलक्षित होता है।

(५) 'हयहेपाध्वनिप्रतिध्वनि' मे यद्यपि 'हेपा' घोडे के शब्द को कहते है तथापि उसके पूर्व 'हय' शब्द का निर्देश स्पष्टार्थ साहित्यिक है, यथा—'सकीचकै-र्मारुतपूर्णरन्ध्रै" (रघुवश)।

अथ जगत प्रभाजालमाकृष्य, कमलानि सम्मुद्रय, कोकान् सकोशीकृत्य, सकल-चराचर-चक्षु मञ्चार-शक्ति शिथिली कृत्य, कुण्डलेनेव निज-मण्डलेन पश्चिमामाशा भूषयन्, वारुणी सेवने-नेव माञ्जिष्ठ-मञ्जिम-रञ्जित , अनवरत-भ्रमण-परिश्रम-श्रान्त इव सुषुप्सु, म्लेच्छ-गण-दुराचार-दु खाऽऽक्रान्त-वसुमती-वेदनामिव समुद्रशायिनि निविवेदयिपु, वैदिक-धर्म-ध्वस-दर्शन-मञ्जातनिर्वेद इव गिरिगहनेपु प्रविश्य तपश्चि-कीर्षु, घर्म-ताप-तप्त इव समुद्रजले सिस्नासु, साय समयमवगत्य सन्ध्यो-पासनमिव विधित्सु, "नास्ति कोऽपि मत्कुले, य सकण्ठग्रह धर्म-ध्वसिनो यवनहतकान् यज्ञियादस्माद् भारतगर्भान्निस्सारयेत्" इति चिन्ताऽऽक्रान्त इव कन्दरि-कन्दरेषु प्रविविक्षुर्भगवान् भास्वान्, क्रमश क्रूरकरानपहाय, दृश्य-परिपूर्ण-मण्डल सवृत्य, श्वेतीभूय, पीतीभूय, रक्तीभूय च गगन धरा-तलाभ्यामुभयत आक्रम्यमाण इवाण्डाकृतिम ङ्गीकृत्य, कलि-कौतुक-कवली-कृत-सदाचार-प्रचारस्य पातक-पुञ्ज-पिञ्जरित-धर्मस्य च यवन-गण-ग्रस्तस्य भारतवर्षस्य च स्मारयन, अन्धतमसे च जगत पातयन्, चक्षुपाम-गोचर एव मजात ।

हिन्दी-अनुवाद—इसके बाद जगत् के प्रकाश समूह को खींच करके, कमलो को सम्पुटित करके, चक्रवाको को शोकमग्न करके, सम्पूर्ण जड-चेतन के नेत्रो की सञ्चार शक्ति को शिथिल करके, कुण्डल के समान अपने मण्डल से पश्चिम दिशा को विभूषित करते हुए, मानो वारुणी (मन्दिरा तथा पश्चिम दिशा) के सेवन से मजीठी की लालिमा से लाल हुए, मानो निरन्तर भ्रमण से श्रान्त होकर सोने को इच्छुक, मानो म्लेच्छो के दुराचार के दुख से आक्रान्त पृथ्वी की वेदना को समुद्रशायी (भगवान्) से निवेदन करने के इच्छुक, मानो वैदिक

धर्म के ध्वस को देखकर निर्वेद (वैराग्य) भाव को प्राप्त होकर दुर्गम पर्वतो मे प्रवेश करके तपस्या करने के इच्छुक, मानो धूप से सतप्त हुए समुद्र-जल मे स्नान करने के इच्छुक, "मेरे कुल मे ऐसा कोई नहीं है, जो धर्मध्वसी इन दुष्ट यवनो को यज्ञ के योग्य इस भारत भूमि से गला पकड कर बाहर निकाल दे" इस चिन्ता से व्याकुल हुए से पर्वत की गुहाओ मे प्रवेश करने के इच्छुक, भगवान् सूर्य क्रमश कठोर किरणो को छोडकर, अपने सम्पूर्ण मण्डल को दृश्य बनाकर, (क्रमश) सफेद, पीला और फिर लाल होकर, आकाश और पृथिवी के द्वारा दोनो ओर से आक्रान्त हुए से अण्डाकार बनकर, कलियुग के प्रभाव से विनष्ट सदाचार वाले पाप पुञ्ज से पीले पडे हुए धर्म वाले तथा यवनो से ग्रस्त भारतवर्ष का स्मरण कराते हुए, ससार को घोर अन्धकार मे गिराते हुए नेत्रो से अदृश्य हो गये ।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तदनन्तरम्, जगत = ससारस्य, प्रभाजालम = दीप्तिसमूहम्, आकृष्य = आकुञ्च्य, कमलानि = सरसिजानि, सम्मद्र्य, कोकान् = चक्रवाकान् सशोकीकृत्य = दु खिनो विधाय, सकलचराचरचक्षु सञ्चारशक्तिम् = समस्तस्थावरजङ्गमनेत्रक्रियाशक्तिम्, शिथिलीकृत्य = अवरुद्धय, कुण्डलेन = कर्णाभरणेन, इव, निजमण्डलेन = स्वबिम्बेन, पश्चिमाम् = वारुणीम्, दिशाम् = आशाम्, भूषयन् = अलङ्कुर्वन् वारुणीसेवनेन = पश्चिमदिग्गमनेन- मदिरा सेवनेन वा, इव, माञ्जिष्ठमञ्जिम रञ्जित माञ्जिष्ठ रक्तिमारक्त, अनवरतभ्रमणपरिश्रमश्रान्त = सततसञ्चलनखेदखिन्न , इव सुषुप्सु = स्वप्तुमिच्छु , म्लेचछ-गणस्य = यवनसमूहस्य दुराचारै = अनाचारै , दु खाक्रान्ताया = व्यथाव्यथिताय , वसुमते = वसुन्धराया , वेदनाम् = पीडाम् इव समुद्रशायिनि = भगवति विष्णौ, निविवेदयिषु = निवेदन कर्त्तुमिच्छु , वैदिक-धर्मध्वसदर्शन- सञ्जातनिर्वेद = सनातन धर्मविनाशोत्पन्ननिर्वेद , इव, गिरिगहनेषु = पर्वतदुर्गमेषु, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, तपश्चिकीर्षु = तपष्कर्त्तुमिच्छु , घर्मतापतप्त = तपनतापपीडित , इव, समुद्रजले = पयोधिपयसि, सिस्नासु = स्नान कर्त्तुमिच्छु , सायम् समयम् = सूर्यास्तवेलाम्, अवगत्य = ज्ञात्वा सन्ध्योपासनमिव = सायन्तनम् पूजन कर्म इव, विधित्सु = चिकीर्षु नास्ति = न विधते, कोऽपि = कश्चिदपि, मत्कुले = अस्मत्कुटुम्बे, य सकण्ठेग्रहम् = कण्ठ गृहीत्वा, धर्मध्वसिन =

धर्मविनाशकान् यवनहतकान् = दुष्टम्लेच्छान्, यज्ञियात् = यज्ञसम्पादनयोग्यात्, अस्मात्, भारतगर्भात् = भारतभूमे, नि सारयेत् = वहि कुर्यात्, इति = एतत् चिन्ताक्रान्त = चिन्ताग्रस्त, इव, कन्दरिकन्दरेपु = पर्वतगुहासु, प्रविविक्षु = प्रवेष्टुमिच्छु, भगवान् भास्वान् = ऐश्वर्यशाली सूर्य, क्रमश = शनै शनै, क्रूरकरान् = तीव्रकिरणान्, अपहाय = परित्यज्य, दृश्यपरिपूर्णमण्डल = दृश्य सकलबिम्ब मवृन्य = सच्छाद्य, श्वेतीभूय = धवलीभूय, पीतीभूय = पीतवर्णीभूत्वा, रक्तीभूय - रुधिरवर्णीभूत्वा, च, गगनधरातलाभ्याम् = द्यावा-पृथिवीभ्याम्, उभयन, गाक्रम्यमाण इव = आक्रान्त इव, अण्डाकृतिम् = अण्डाकारम्, अङ्गीकृत्य = समेत्य, कलिकौतुक कवलीकृतसदाचारप्रचारस्य = कलिकौतूहल विनष्टसदाचारस्य, पातक पुञ्जपिञ्जरितधर्मस्य = अघौघपीतधर्मस्य, यवनगणग्रस्तस्य = म्लेच्छवृन्दाक्रान्तस्य, अन्धतमसे गाढान्धकारे, च जगत् = ससारम्, पातयन् = समानयन्, चक्षुपाम् = नेत्राणाम्, अगोचर = अदृश्य, एव, सजात = अभूत ।

हिन्दी-व्याख्या—प्रभाजालम् = दीप्ति समूह को । आकृष्य = खीचकर । सम्मुद्रय = सम्पुटित करके, 'सम् + √मुद् + ल्यप्' । कोकान् = चक्रवाको को । सशोकीकृत्य = शोकमग्न करके, 'स (सह) + शोक = च्वि + √कृ + ल्यप्' । सकलचराचरचक्षु सञ्चारशक्तिम् = सम्पूर्ण जड चेतन के नेत्रो की दर्शन शक्ति को, 'सकलस्य चराचरस्य चक्षुषाम् सञ्चारस्य शक्तिम् (तत्पु०) । शिथिलीकृत्य = शिथिल करके, 'शिथिल + च्वि + √कृ + ल्यप्' । निजमण्डलेन = अपने मण्डल से । पश्चिमाम् आशाम् = पश्चिम दिशा को, "दिशास्तु ककुभ काष्ठा आशाश्च हरितश्च ता" (अमरकोप) । भूपयन् = विभूपित करता हुआ, "√भूप् (अलकरणे) + णिच् + शतृ (प्रथमा ए० व०)" । वारुणी सेवनेन = पश्चिमदिशा मे जाने से अथवा मदिरा के सेवन से, 'वारुणी' = पश्चिमदिशा तथा मदिरा—'सुरा प्रत्यक् च वारुणी' (अमरकोप) । इसका आशय यह है कि सूर्य पश्चिम दिशा मे जाने से वैसे ही रक्ताभ हो रहा है मानो वह मदिरा (वारुणी) का सेवन किये हो । इव = उत्प्रेक्षावाचक । माञ्जिष्ठमञ्जिमरञ्जित = 'मजीठ' की लाली मे लाल । 'मञ्जिष्ठ' एक प्रकार के वृक्ष का द्रव है, जो लाल होता है । लोक मे इसे 'मजीठ' कहते हैं । मञ्जिष्ठाया अय माञ्जिष्ठ—'मञ्जिष्ठ + अण् ? 'माञ्जिष्ठश्चासौ मञ्जिमा तेन रञ्जित (तत्पु०) । मञ्जिम

=लालिमा, रञ्जित=रक्त। अनवरतभ्रमणपरिश्रमश्रान्त इव=निरन्तर परि-भ्रमण के परिश्रम से परिश्रान्त हुए से। 'अनवरत यत् भ्रमण तस्य परिश्रम-स्तेन श्रान्त' (तत्पु०) सुषुप्सु =सोने का इच्छुक। म्लेच्छगणदुराचारदुःखाक्रान्त-वसुमतीवेदनाम्=यवनो के दुराचारो से आक्रान्त पृथिवी की वेदना को। म्लेच्छगण=यवनो, दुराचार=अत्याचार, दुःखाक्रान्त=कष्ट से पीडित, वसुमती=पृथिवी, वेदना=पीडा। "म्लेच्छगणस्य दुराचारं दुःखाक्रान्ताया वसुमत्या वेदनाम् (तत्पु०)"। इव=मानो। समुद्रशायिनि=समुद्र मे शयन करने वाले, समुद्रे शेते इति समुद्रशायी तस्मिन्-समुद्र+√शीङ्+इन् (सप्तमी, ए० व०)। निविवेदयिषु =निवेदन करने का इच्छुक, 'नि+वि+√विद्+सन्+उ (प्रथमा, ए० व०)। वैदिकधर्मध्वसदर्शनसञ्जातनिर्वेद = वैदिकधर्म के विनाश के दर्शन से उत्पन्न वैराग्य वाला। निर्वेद=वैराग्य। "वैदिकधर्मस्य ध्वसस्तस्य दर्शनेन सञ्जात निर्वेद यस्य स" (ब० व्री०)। इव=उत्प्रेक्षा-वाचक। गिरिगहनेषु=दुर्गम पर्वतो मे। तपश्चिकीर्षु =तपस्या करने का इच्छुक। चिकीर्षु =करने का इच्छुक—"√कृ+सन+उ (प्रथमा ए० व०)"। घर्मतापतप्त =धूप की गर्मी से सतप्त। सिस्नासु =स्नान करने की इच्छा वाला, '√स्ना+सन्+उ (प्रथमा ए० व०)' अवगत्य=जानकर, 'अव+√गम्+ल्यप्'। विधित्सु =करने का इच्छुक 'वि+√धा+सन्+उ (प्रथमा)'। मत्कुले=मेरे कुल मे। सकण्ठग्रहम्=कण्ठग्रहणपूर्वक (अर्घ चन्द्र देकर), "कण्ठस्य ग्रहस्तेन सहितमिति (अव्य०)। धर्मध्वसिन =धर्म का विनाश करने वाले। यवनहतकान =दुष्ट यवनो को। यज्ञियात्=यज्ञ करने के योग्य 'यज्ञ+घ (इय)' "यज्ञर्त्विग्भ्या घखञौ" सूत्र से 'घ' प्रत्यय तथा 'घ' को 'इय' हुआ है। भारतगर्भात्=भारत के गर्भ (भूमि) से। निस्सारयेत्=निकाल दे,-'निस्+√सृ+णिच्+लिङ् (प्र० पु०, ए० व०),। कन्दरि कन्दरेषु=पर्वतो की गुफाओ मे। कन्दरिन्=पर्वत, 'कन्दरिणाम्=कन्दरेषु' (तत्पु०)। प्रविविक्षु = प्रवेश करने की इच्छा वाला, 'प्र+√विश्+उ (प्रथमा)'। भास्वान=सूर्य। क्रूरकरान=कठोर किरणो को। अपहाय=छोडकर। दृश्यपरिपूर्णमण्डल = देखने योग्य है सम्पूर्ण बिम्ब जिसका, 'दृश्यम् सम्पूर्णम् मण्डलम् यस्य स (ब० व्री०) श्वेतीभूय =सफेद होकर। पीतीभूय=लाल होकर। उक्त तीनो पदो मे 'च्वि'

प्रत्यय तथा 'ल्यप्' हुआ । आक्रम्यमाण इव = आक्रान्त हुए के समान, 'आ + √य + शानच् (प्रथमा) अण्डाकृतिम् = गोलाकार । अङ्गीकृत्य = अङ्गीकार करके । कलिकौतुक कवलीकृतसदाचारप्रचारस्य = कलियुग के प्रभाव से नष्ट कर दिया गया है सदाचार का प्रचार जिसके । कौतुक = कौतुहल, कवलीकृत = विनष्ट । "कलिकौतुकेन कवलीकृतस्य सदाचारस्य प्रचार यस्य स तस्य (ब० व्री०) । पातकपुञ्जपिञ्जरितधर्मस्य = पाप राशि से पीले किये गये धर्म वाले । पातक = पाप, पुञ्ज = समूह, पिञ्जरित = पीला किया गया । 'पातकाना पुञ्ज तेन पिञ्जरित धर्म यस्य स तस्य (ब० व्री०)' । यवनगणग्रस्तस्य = यवनो से ग्रस्त, यवनाना गणस्तेन ग्रस्तस्तस्य (तत्पु०) । स्मारयन् = स्मरण कराता हुआ, '√स्मारि + शतृ' । पातयन् = गिराता हुआ, '√पत् + णिच् + शतृ (प्रथमा) । अगोचर = अदृश्य, चरतीति चर, गवाम् (इन्द्रियाणाम्) चर गोचर, न गोचर इति अगोचर 'नञ् + गो + √चर् + अच् (प्रथमा) ।' सञ्जात = हो गया, 'सम् + जनि + क्त (प्रथमा ए० व०) ।

टिप्पणी—(१) सम्पूर्ण खण्ड अनुप्रास के चमत्कार से चमत्कृत है ।

(२) कवि की प्रतिभा आकलन कल्पना से होता है। उत्प्रेक्षा अलकार की मुख्य कल्पना होती है। "कुण्डेलेनेव प्रविविक्षु" मे मालोत्प्रेक्षा से काव्य अनुप्राणित होकर अत्यन्त रोचक एव मनोहारी है। 'वारुणी सेवनेनेव' मे श्लेषानुप्राणित उत्प्रेक्षा है। क्रमश क्ररकरान् अङ्गीकृत्य' मे सूर्य का स्वाभाविक चित्रण होने से स्वभावोक्ति अलकार है ।

(३) 'सन्नन्त' शब्दो का प्रयोग विशेष रूप से किया गया है ।

(४) पीडित पृथ्वी की वेदना उसके पति विष्णु से कहने की कल्पना मे 'पत्नी के दु ख को पति मे कहने का' भाव व्यजित होता है ।

(५) समास एव व्यास दोनो प्रकार के वर्णन मे व्यास जी पटु दिखाई पडते हैं ।

(६) सूर्यास्त का वर्णन अत्यन्त मनोहारी ढग से किया गया है ।

तत सवृत्ते किञ्चिदन्धकारे धूप-धूमेनेव व्याप्तासु हरित्सु भुशुण्डी स्कन्धे निधाय निपुण निरीक्षमाण, आगत-प्रत्यागतञ्च विदधान, प्रताप-दुर्ग-दौवारिक, कस्यापि पादक्षेप, ध्वनिमिवाश्रौषीत् । तत स्थिरीभूय

पुरत पश्यन् सत्यपि दीप-प्रकाशेऽवतमसवशादागन्तार कमप्यनवलोकयन्, गम्भीरस्वरेणैवमवादीत्—"क कोऽत्र भो ?" इति।

अथ क्षणानन्तर पुन स एव पादध्वनिरश्रावीति भूय साक्षेपमवोचत्—"क एष मामनुत्तरयन् मुमूर्षु समायाति बधिर ?"

हिन्दी अनुवाद—तदनन्तर, कुछ अधेरा हो जाने पर तथा मानो धूप से होने वाले धुंआ से दिशाओ के व्याप्त हो जाने पर, बन्दूक कन्धे पर रखकर इधर उधर टहलता हुआ, भली भांति (चारो ओर) देखता हुआ प्रताप दुर्ग के द्वारपाल ने किसी के पैरो की ध्वनि सुनी। तब रुककर, सामने देखता हुआ, दीपक का प्रकाश होने पर भी हल्का अधेरा होने के कारण किसी आने वाले को न देखकर (वह) गंभीर स्वर मे बोला अरे! कौन है यहाँ? अरे! कौन है यहाँ?"। एक क्षण के बाद पुन वही पाद ध्वनि सुनाई पडी। तब वह क्रोध-पूर्वक बोला—"यह कौन बहरा है, जो मुझे उत्तर न देता हुआ मरने की इच्छा से चला आ रहा है।

सस्कृत-व्याख्या—तत तदनन्तरम, किञ्चित्=ईषत्, अन्धकारे=तमसि, सवृत्ते=जाते, धूपधूमेनेव=ग्रीष्मधूमेनेव, हरित्सु=दिशासु, व्याप्ता=आच्छादितासु, भुशुण्डी=आग्नेयास्त्रम्, स्कन्धे=असदेशे, निधाय=स्थापयित्वा, निपुणम्=सम्यक्, निरीक्षमाण=समवलोकयन्, आगतप्रत्यागतञ्च=गमनागमञ्च, विदधान=कुर्वाण, प्रतापदुर्गदौवारिक—'प्रतापनाम्न दुर्गस्यद्वारपाल, कस्यापि=कस्यचिदपि पादक्षेपध्वनिम्=पादसङ्क्रमणशब्दम्, अश्रौषीत=अशृणोत्। तत=तदनन्तरम्, स्थिरीभूय=स्थित्वा, पुरत=अग्रे, पश्यन्=अवलोकयन्, दीपप्रकाशे=प्रदीपालोके, अवतमसवशात्=ईषदन्धकारवशात्, आगन्तारम्=आगन्तुकम्, कमपि=कञ्चिदपि, अनवलोकयन्=अपश्यन, गम्भीरस्वरेण=उच्चस्वरेण, अवादीत्=अवदत्, 'क कोऽत्र भो=कोऽस्त्यत्र भो, इति=एवम्। अथ=अनन्तरम्, क्षणानन्तरम्=किञ्चिद्-विलम्ब्य, पुन=भूय, स एव=पूर्वविध एव, पादध्वनि=चरणनिक्षेपशब्द, अश्रावि=श्रुत, इति, भूय=पुन, साक्षेप=सक्रोधम्, अवोचत्=अवादीत्,—"क एष, माम्=द्वारपालम्, अनुत्तरयत्=उत्तरमददन्, मुमूर्षु=मर्तुमिच्छु, बधिर=श्रोतुमशक्त, समायाति=समागच्छति ?"

हिन्दी-व्याख्या—सवृत्ते = हो जाने पर, 'सम् + √वृत् + क्त (सप्तमी)'। किञ्चिदन्धकारे = कुछ अन्धकार के, 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी विभक्ति। हरित्सु = दिशाओं के, "दिशस्तु ककुभ काष्ठा आशाश्च हरितश्चता" (अमरकोष), उक्त नियम से सप्तमी। भुशुण्डीम् = बन्दूक 卐। निधाय रखकर। निपुणम् = अच्छी तरह से। निरीक्षमाण = देखता हुआ, 'निर् + √ईक्ष + शानच्' (प्रथमा) आगतप्रत्यागञ्च = गमनागमन (गस्त लगाना)। विदधान = करता हुआ 'वि + √दध + शानच्'। प्रतापदुर्गदौवारिक = प्रताप नामक किले का द्वारपाल, "प्रताप दुर्गस्य दौवारिक (तत्पु०)"। पादक्षेपध्वनिम् = पैरो की आहट। अश्रौषीत् = सुना, 'श्रु + लुङ् (तिप्)'। स्थिरीभूय = रुककर, स्थिर से 'च्वि' प्रत्यय। पुरत = सामने। अवतमसवशात = धुंधलेपन के कारण, 'अवतमसस्य वशात्' (तत्पु०)। अवतमस् से समासान्त 'अच्' प्रत्यय हुआ है—'अवसमन्वेभ्यस्तमस' आगन्तारम् = आने वाले को, 'आ + √गम् + तृच्' (द्वितीया ए० व०)। अनवलोकयन् = न देखता हुआ, 'अन् + अव + √लोक + शतृ' (प्रथमा)। क्षणानन्तरम् = थोडी देर बाद। अश्रावि = सुनाई पडी। साक्षेपम् = क्रोधपूर्वक। अवोचत् = बोला। अनुत्तरयन् = उत्तर न देता हुआ, "अन् + उत् + √तर + शतृ (प्रथमा)"। मुमूर्षु = मरने की इच्छा वाला, 'म + सन् + उ (प्रथमा ए० व०)। समायाति = आ रहा है, "सम् + आ + √या + लट् (तिप्)।" बधिर = बहरा।

टिप्पणी—(१) 'धूपधूमेनेव' मे उत्प्रेक्षा अलकार है।

(२) द्वारपाल को अति सचेष्ट दिखाया गया है।

ततो "दौवारिक! शान्तो भव, किमिति व्यर्थं मुमूर्षुरिति बधिर इति च वदसि ?" इति वक्तारमपश्यतैवाऽऽकर्णि मन्द्रस्वरमेदुरा वाणी। अथ "तत्कि नाज्ञायि अद्यापि भवता प्रभुवर्य्याणामादेशो यद् दौवारिकेण प्रहरिणा वा त्रि पृष्ठोऽपि प्रत्युत्तरमददद् हन्तव्य इति" इत्येव भाषमाणेन द्वास्थेन "क्षम्यतामेष आगच्छामि, आगत्य च निखिल निवेदयामि" इति कथयन्, द्वादशवर्षेण केनापि भिक्षुबटुनाऽनुगम्यमान, कोपि काषायवासा, धृत-तुम्बी-पात्र, भस्मच्छुरित-ललाट, रुद्राक्ष-मालिका-सनाथित कण्ठ, भव्यमूर्त्ति सन्यासी दृष्ट। ततस्तयोरेवमभूदालाप।

हिन्दी अनुवाद—तब, 'द्वारपाल ! शान्त हो, क्यो व्यर्थ मे मरने वाला और बहरा कहते हो" इस प्रकार (द्वारपाल) बोलने वाले को बिना देखे ही गम्भीर स्वर मे स्निग्ध वाणी सुनी। इसके बाद (द्वारपाल ने कहा) 'तो क्या आप अभी तक महाराज शिवाजी के इस आदेश को नहीं जानते हैं कि द्वारपाल या पहरेदार के द्वारा तीन बार पूंछने पर भी उत्तर न देने वाले को गोली मार दी जाय।' द्वारपाल के इतना कहने पर—"क्षमा करो, यह मै आ रहा हूं, आकर सब कुछ बताऊँगा" ऐसा कहते हुए एक बारह वर्षीय भिक्षु बालक से अनुगम्यमान, कषाय वस्त्रधारी, तुम्बी पात्र लिये हुए, मस्तक पर भस्म लपेटे हुए, रुद्राक्ष की माला गले मे पहने हुए, भव्य मूर्ति वाले किसी सन्यासी को (द्वारपाल ने) देखा। तब दोनो मे इस प्रकार वार्तालाप हुआ।

संस्कृत-व्याख्या—तत =तदनन्तरम्, 'दौवारिक=द्वारपाल, शान्तो भव= तूष्णी भव, किमिति=कथम, व्यर्थम्=निष्प्रयोजनम्. मुमूर्षु =मर्तुमिच्छु, इति, बधिर इति=श्रवणासमर्थ इति, च वदसि=कथयसि।' इति, वक्तारम् =कथयितारम्=अपश्यता एव=अनवलोकयता एव, मन्द्रस्वरमेदुरा=गभीर-स्वरस्निग्धगिरा, आकर्णि=अश्रावि। अथ=तत, तत्किम्=इति प्रश्ने, किम् नाज्ञायि=किं न ज्ञात, भवता=त्वया, प्रभुवर्य्याणाम्=स्वामिमहाभागानाम्, आदेश =शासन, यत्, दौवारिकेण=द्वारपालेन, प्रहरिणा वा=यामिकेन वा, त्रि =वारत्रयम्, पृष्ठोऽपि=जिज्ञासितोऽपि, प्रत्युत्तरम्=प्रतिवचनम्, अददद् =अप्रयच्छन् हन्तव्य =हननीय इति," इत्येव=इत्थम्, भाषमाणेन=उच्य-मानेन द्वा स्थेन=द्वारस्थितेन, "क्षम्यताम्=क्षमा कर्त्तव्या, एष =अयम्, आगच्छामि =आयामि, आगत्य च=समेत्य च, निखिलम्=सकलम् (वृत्तम्) निवेदयामि -कथयामि" इति=एव, कथयन्=भाषमाण, द्वादशवर्षेण= द्वादशहायनेन, केनापि, भिक्षुबटुना=भिक्षुबालकेन, अनुगम्यमान =अनुसृत, कोऽपि=कश्चित्, कषायवासा =कषायवस्त्रधारी, धृततुम्बीपात्र गृहीत-तुम्बीक, भस्मच्छुरितललाट =भस्मशोभितमस्तक, रुद्राक्षमालिका-सनाथित-कण्ठ =रुद्राक्षस्रग्विभूषितकण्ठ, भव्यमूर्ति =भव्याकृति, सन्यासी=विरक्त साधु, दृष्ट अवलोकित। तत =तदनन्तरम्, तयो =द्वारपाल सन्यासिनो. एवम्=इत्थम्, आलाप =वार्ता, अभूत्=अभवत्।

हिन्दी-व्याख्या—दौवारिक=द्वारपाल, 'द्वारे भव दौवारिक—द्वार+ठञ् इक)'। 'दौवारिक वदसि' सन्यासी का वचन है, जो दिखाई नही पड रहा था। वक्तारम्=वक्ता को, 'वच्+तृच् (द्वितीया ए० व०)'। अपश्यता=न देखते हुए, 'नञ्+पश्य+शतृ (तृतीया ए० व०)'। आकर्णि=सुनी गई। मन्द्रस्वरमेदुरा=गभीर स्वर से स्निग्ध, मन्द्र=गम्भीर, मेदुरा=स्निग्ध या सान्द्रस्निग्धस्तु मेदुर" (अमरकोष)। 'मन्द्रस्वरेण मेदुरा, (तृ० तत्पु०)। न अज्ञायि=नही मालूम है, 'ज्ञा+लुङ् (भावकर्म प्रक्रिया)।" प्रभुवर्य्याणाम्=आदरणीय स्वामी का (आदर सूचक ब० व०)। प्रहरिणा=पहरेदार के द्वारा। त्रि=तीन वार। प्रत्युत्तरम्=उत्तर को। अददत्=न देने वाला। हन्तव्य=मार दिया जाना चाहिए, '√हन्+तव्यत् (प्रथमा ए० व०)।' भाषमाणेन=कहने वाले 'भाष्+शानच् (तृ० ए० व०)।' द्वास्थेन=द्वार पर स्थित (द्वारपाल का विशेषण)। क्षम्यताम्=क्षमा कीजिये। निखिलम्=सब कुछ। द्वादशवर्षेण=बारह वर्ष वाले। भिक्षुवटुना=भिक्षुबालक के द्वारा, 'भिक्षुश्चासौ वटुस्तेन'। अनुगम्यमान=पीछा किया जाता हुआ, 'अनु+√गम्+यक्+शानच्' (सन्यासी का विशेषण)। कषायवासा=कषाय वस्त्र धारण किये हुए। धृततुम्बीपात्र=तूम्बीपात्र को लिये हुए, 'धृतम् तुम्बी पात्रम् येन स (ब० व्री०)। भस्मच्छुरितललाट=मस्तक पर भस्म (राख) लगाये हुए। रुद्राक्षमालिका सनाथितकण्ठ=रुद्राक्ष की माला से विभूषित कण्ठ वाला, 'रुद्राक्षमालिकया सनाथित कण्ठ यस्य स (ब० व्री०)'। आलाप=परस्पर वार्तालाप। अभूत्-हुआ। तयो=सन्यासी और द्वारपाल का।

टिप्पणी—(१) क्लिष्ट शब्दो के प्रयोग न होने पर भी द्वारपाल और सन्यासी के परस्पर अभिभाषण को एक ही वाक्य मे समेटने के प्रयास से आशु-बोधिता नही रह सकी है।

(२) कर्मवाच्य का प्रयोग बहुलता से किया गया है।

सन्यासी—कथमस्मान् सन्यासिनोऽपि कठोरभाषणैस्तिरस्करोषि ?

दौवारिक—भगवन्! भवान् सन्यासी तुरीयाश्रमसेवीति प्रणम्यते, परन्तु प्रभूणामाज्ञामुल्लङ्घ्य निजपरिचयमददेवाऽयातीत्याक्रुश्यते।

सन्यासी—सत्य क्षान्तोऽयमपराध, परमद्यावधि, सन्यासिन., ब्रह्म-

चारिण, पण्डिता, स्त्रिय, बालाश्च न किमपि प्रष्टव्या, आत्मानमपरिज्ञापयन्तोऽपि प्रवेष्टव्या ।

दौवारिक—सन्यासिन् ! सन्यासिन् ! बहूक्तम्, विरम, न वय दौवारिका ब्रह्मणोऽप्याज्ञा प्रतीक्षामहे । किन्तु यो वैदिकधर्मरक्षाव्रती, यश्च सन्यासिना ब्रह्मचारिणा तपस्विनाञ्च सन्यासस्य ब्रह्मचर्यस्य तपश्चान्तराभाणा हन्ता, येन च वीर प्रसविनीममुच्यते कोङ्कणदेश भूमि, तस्यैव महाराज-शिववीरस्याऽऽज्ञा वय शिरसा वहाम ।

हिन्दी अनुवाद—सन्यासी—हम सन्यासियो को कठोर भाषण से तुम क्यो अपमानित करते हो ?

द्वारपाल—भगवन् ! आप सन्यासी हैं, चतुर्थ आश्रम के सेवी है, अत मैं आप को प्रणाम करता हू, परन्तु आप स्वामी के आदेश का उल्लघन करके अपना परिचय दिये बिना ही चले आ रहे हैं, इसलिये क्रुद्ध हो रहा हू ।

सन्यासी—सत्य है, (तुम्हारा) यह अपराध क्षमा किया, आज से सन्यासियो, ब्रह्मचारियो, पण्डितो, स्त्रियो, और बालको से कुछ भी नहीं पूँछना । अपना परिचय न देने पर भी उन्हे प्रवेश करने देना ।

द्वारपाल—सन्यासी ! सन्यासी ! बहुत कह चुके, अब रुको, हम द्वारपाल लोग ब्रह्मा की भी आज्ञा नहीं मानते है । किन्तु जो वैदिक धर्म के रक्षा के व्रती है, जो सन्यासियों, ब्रह्मचारियो और तपस्वियो के तथा सन्यास, ब्रह्मचर्य और तपस्या के विघ्नों के नाशक है, तथा जिसके द्वारा यह कोङ्कण देश की भूमि वीर प्रसविनी (वीरो को पैदा करने वाली) कही जाती है, उन्हीं महाराज वीर शिवाजी की आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं ।

सन्यासी—कथम् = किम्, अस्मान् सन्यासिनोऽपि = मादृशान् विरक्तान्नपि, कठोरभाषण = परुषवचनै, तिरस्करोपि = अपमन्यसे ?

दौवारिक—भगवन् = महाशय ! भवान् = त्वम्, सन्यासी = विरक्त, तुरीयाश्रमसेवी = चतुर्थाश्रमसेवी, इति = अस्माद्धेतो, प्रणम्यते = अभिवाद्यते, परन्तु, प्रभूणाम = स्वामिनाम्, आज्ञाम् = आदेशम्, उल्लङ्घ्य = उल्लघन कृत्वा, निजपरिचयम् = स्वाभिज्ञानम्, अददत् = अप्रयच्छन्, एव, आयाति = आगच्छति, इति = अस्मात्, आक्रुश्यते = आकुप्यते ।

सन्यासी—सत्यम् = यथार्थम्, क्षान्त = मर्षित, अयम्, अपराध = दोष, परम = किन्तु, अद्यावधि = अद्यत आरभ्य, सन्यासिन = तुरीयाश्रमस्था ब्रह्मचारिण = ब्रह्मचर्यवर्तिन, पण्डिता = विद्वांस, स्त्रिय = नार्य, बालाश्च = बालकाश्च, न किमपि = न किञ्चिदपि, प्रष्टव्या = प्रश्न कर्त्तव्या, आत्मानम् = स्वम्, अपरिचाययन्त परिचयमददत अपि, प्रवेष्टव्या = प्रवेश कर्त्तव्या ।

दौवारिक — सन्यासिन् ! सन्यासिन् बहूलम् = बहुभाषितम्, विरम = विश्रम, वयम्, द्वौवारिका = द्वारपाला, ब्रह्मण = विधातु, अपि, आज्ञाम् = आदेशम्, न प्रतीक्षामहे = न मन्ये । किन्तु, य = शिव., वैदिकधर्मरक्षाव्रती = वेदविहितधर्मरक्षक, यश्च, स यासिनाम् = तुरीयाश्रम सेविनाम्, = सन्यासिन् ! ब्रह्मचारिणाम् = बटूनाम्, तपस्विनाञ्च = तपस्तप्तानाम् च, सन्यासस्य = वैराग्यस्य, ब्रह्मचर्यस्य, तपस = तपस्याया, च, अन्तरायाणाम् = विघ्नानाम्, हन्ता = निवारयिता, येन = शिवेन, च, वीरप्रसविनि = वीरप्रसूता, इयम् = एषा, उच्यते = कथ्यते, कोङ्कणदेशभूमि = कोङ्कणदेशनाम्न वसुन्धरा, तस्यैव = एतद्विधस्यैव, महाराजशिवस्य = तत्रभवत शिववीरस्य, आज्ञा = आदेशम्, वयम् = दौवारिका, शिरसा = मस्तकेन, वहाम = धारयाम ।

हिन्दी-व्याख्या—कठोरभाषणै = कठोर वचनो से । तिरस्करोषि = तिरस्कृत करते हो । तुरीयाश्रमसेवी = चतुर्थ श्रेणी में रहने वाले, भारतीय सस्कृति के अनुसार १ ब्रह्मचर्य, २ गृहस्थ, ३ वानप्रस्थ और ४ सन्यास ये चार आश्रम है । इनमें चतुर्थ आश्रम सन्यास है । प्रणम्यते = प्रणाम किया जाता है । 'प्र + √नम् + य + त' । उल्लङ्घ्य = उल्लङ्घन करके, 'उत् + √लङ्घ + ल्यप । अददत् = न देते हुए । आक्रुश्यते = क्रुद्ध होता हूँ 'आ + √क्रुश् + य + त' । क्षान्त = क्षमा किया । अद्यावधि = आज से । अपरिचाययन्तमपि = परिचय न देने पर भी । प्रवेष्टव्या = प्रवेश करने देना चाहिये, प्र + √विश् तव्यत् (प्रथमा । ब० ब०) । बहूक्तम् = बहुत कह चुके । विरम् = रुकिये । प्रतीक्षामहे = प्रतीक्षा करता हूँ । वैदिकधर्मरक्षाव्रती = वैदिक धर्म के रक्षा व्रती, 'वैदिक धर्मस्य रक्षाया व्रती । (तत्पु०) । सन्यासिना, ब्रह्मचारिणा तपस्विनाञ्च का क्रम से सन्यास्य, ब्रह्मचर्यस्य तपसश्च के साथ अन्वय होता है । अन्तारायाणाम् = विघ्नो के, विघ्नोऽन्तराय प्रत्यूह' (अमरकोष) । वीरप्रसविनी = वीर पुत्र पैदा करने वाली । उच्यते = कही जाती है । वहाम = धारण करते हैं ।

टिप्पणी—(१) 'सन्यासिनाम् ' तपसश्च" मे यथासङ्ख्य' अलङ्कार है।

सन्यासी—अथ किमप्यस्तु, पन्थान निर्दिश, आवा शिववीर-निकटे जिगमिषाव ।

दौवारिक—अलमालत्यापि तत् प्राह्णे महाराजस्य सन्ध्योपासनसमये भवादृशाना प्रवेश-समयो भवति, न तु रात्रौ ।

सन्यासी—तत्कि कोऽपि न प्रविशति रात्रौ ?

दौवारिक—(साक्षेपम्) कोऽपि कथ न प्रविशति ? परिचिता वा प्राप्त-परिचयपत्रा वा आहूता वा प्रविशन्ति, न तु भवादृशा., ये तुम्बी गृहीत्वा द्वाराद् द्वारम्—इति कथयन्नेव तत्तेजसेव धर्षितो मध्य एव विरराम।

सन्यासी—(स्वगतम्) राजनीति-निष्णात शिववीर । सर्वथा दौवारिकता-योग्य एवाय द्वारपाल स्थापितोऽस्ति। परीक्षितमप्येनमेकस्मिन् विषये पुन परीक्षिष्ये तावत् । (प्रकटम्) दौवारिक ! इत आयाहि, किमपि कर्णे कथयिष्यामि ।

दौवारिक—(तथा कृत्वा) कथ्यताम् ।

हिन्दी अनुवाद—सन्यासी अच्छा, कुछ भी हो, रास्ता दिखाओ, हम दोनों शिववीर के पास जाना चाहते हैं।

दौवारिक—उसकी तो बात भी न करें, आप जैसे लोगो के मिलने का समय पूर्वाह्न मे महाराज के सन्ध्या-पूजन के समय होता है, रात्रि मे नहीं।

सन्यासी—तो क्या कोई भी रात्रि मे प्रवेश नहीं करता है ?

दौवारिक—(क्रोधपूर्वक) कोई क्यो नहीं प्रवेश करता ? परिचित, परिचय पत्र प्राप्त करने वाले अथवा आमन्त्रित (व्यक्ति) प्रवेश करते हैं, न कि आप जैसे, जो तुम्बी लेकर एक द्वार से दूसरे द्वार—इतना कहते ही मानो उस (सन्यासी) के तेज से घबड़ा कर बीच मे ही रुक गया ।

सन्यासी—(अपने मन मे) शिववीर राजनीति मे पारगत है। सब सर्वथा द्वार रक्षक के योग्य ही द्वारपाल नियुक्त किया है। यद्यपि इसकी परीक्षा ले

चुका हू तथापि एक और विषय मे पुन परीक्षा लूगा। (प्रकट रूप मे) दौवारिक यहां आओ, कुछ कान मे कहूगा ।

दौवारिक—(वैसा करके) कहिए ।

सस्कृत-व्याख्या—सन्यासी—अथ, किमप्यस्तु = किमपि भवतु, पन्थानम् = मार्गम् निर्दिश = ज्ञापय, आवाम् = वटु-सन्यासिनौ शिववीरनिकटे = शिववीर पार्श्वे, जिगमिषाव = गन्तुमिच्छाव ।

दौवारिक—तत् अलमालप्यापि = एतदालपनीयमपि नास्ति, प्राह्णे = पूर्वाह्णे, महाराजस्य = शिववीरस्य, सन्ध्योपासन समये = सन्ध्यापूजनावसरे, भवादृशा- नाम् = साधुसन्यासिनाम्, प्रवेशसमय = प्रवेशकाल, भवति, न तु रात्रौ = निशा- या प्रवेश समयो न भवति ।

सन्यासी—तत्किम् = तर्हिकिम्, कोऽपि = कश्चिदपि, रात्रौ = नक्तम्, न प्रविशति = न प्रविष्टोभवति ?

दौवारिक—(सक्रोधम्) कोऽपि = कश्चिदपि, कथम् = कस्मात्, न प्रविशति = प्रविष्टो भवति ? परिचिता = परिज्ञातजना, प्राप्तपरिचयपत्रा = प्राप्ताभिज्ञपत्रा, वा = अथवा, आहूता = आमन्त्रिता, प्रविशन्ति = प्रवेशकुर्वन्ति, न तु, भवादृशा - त्वत्सदृशा, ये, तुम्बीम् = तुम्बीपात्रम्, गृहीत्वा = सगृह्य, द्वाराद्द्वारम् = गृहादगृहम्, इति = एवम्, कथयन्नेव = भाषमाण एव, तत्तेजसा = सन्यासिदीप्त्या, धर्षित = भीत, मध्ये एव = अन्तरा एव, विरराम = तूष्णीमभूत ।

सन्यासी—(मनसि) राजनीतिनिष्णात = राजनीतिनिपुण, शिववीर = एतन्नामक नृपति, सर्वथा = सर्वप्रकारेण, दौवारिकतायोग्य = द्वारपाल कर्मो- चित, एव अयम्, द्वारपाल = दौवारिक, स्थापितोऽस्ति = नियुक्तोऽस्ति । परी- क्षितम् = परीक्षाकृताऽस्य, अपि एनम् = इमम्, एकस्मिन् = अन्यस्मिन्, विषये, पुन = भूय, परीक्षिष्ये = परीक्षा करिष्ये, तावत् । (प्रकटम् = प्रकाशम्) दौवा- रिक = द्वारपाल !, इत आयाहि = अत्र आगच्छ, किमपि = किञ्चिद्, कर्णे = श्रोत्रे, कथयिष्यामि = वदिष्यामि ।

दौवारिक—(तथाकृत्वा = समेत्य तम्) कथ्यताम् = उच्यताम् ।

हिन्दी-व्याख्या—निर्दिश = बताओ, 'निर् + √दिश + लोट (सिप्)' जिग- मिषाव = जाना चाहते हैं, 'गम + सन् + लट् (वस्)' । अलमालप्यापि = यह

टिप्पणी—(१) 'सन्यासिनाम्' '' तपसश्च" मे यथासङ्ख्य' अलङ्कार है।

सन्यासी—अथ किमप्यस्तु, पन्थान निर्दिश, आवा शिववीर-निकटे जिगमिषाव ।

दौवारिक'—अलमालत्यापि तत् प्राह्णे महारास्य सन्ध्योपासनसमये भवादृशाना प्रवेश-समयो भवति, न तु रात्रौ ।

सन्यासी—तत्किं कोऽपि न प्रविशति रात्रौ ?

दौवारिक —(साक्षेपम्) कोऽपि कथ न प्रविशति ? परिचिता वा प्राप्त-परिचयपत्रा वा आहूता वा प्रविशन्ति, न तु भवादृशा., ये तुम्बी गृहीत्वा द्वाराद् द्वारम्--इति कथयन्नेव तत्तेजसेव धर्षितो मध्य एव विरराम।

सन्यासी—(स्वगतम्) राजनीति-निष्णात शिववीर । सर्वथा दौवा-रिकता-योग्य एवाय द्वारपाल स्थापितोऽस्ति। परीक्षितमप्येनमेकस्मिन् विषये पुन परीक्षिष्ये तावत् । (प्रकटम्) दौवारिक ! इत आयाहि, किमपि कर्णे कथयिष्यामि ।

दौवारिक —(तथा कृत्वा) कथ्यताम् ।

हिन्दी अनुवाद—सन्यासी अच्छा, कुछ भी हो, रास्ता दिखाओ, हम दोनो शिववीर के पास जाना चाहते हैं।

दौवारिक—उसकी तो बात भी न करें, आप जैसे लोगो के मिलने का समय पूर्वाह्न मे महाराज के सन्ध्या-पूजन के समय होता है, रात्रि मे नहीं।

सन्यासी—तो क्या कोई भी रात्रि मे प्रवेश नहीं करता है ?

दौवारिक—(क्रोधपूर्वक) कोई क्यो नहीं प्रवेश करता ? परिचित, परिचय पत्र प्राप्त करने वाले अथवा आमन्त्रित (व्यक्ति) प्रवेश करते हैं, न कि आप जैसे, जो तूम्बी लेकर एक द्वार से दूसरे द्वार —इतना कहते ही मानो उस (सन्यासी) के तेज से घबडा कर बीच मे ही रुक गया ।

सन्यासी—(अपने मन मे) शिववीर राजनीति मे पारगत है। सब सर्वथा द्वार रक्षक के योग्य ही द्वारपाल नियुक्त किया है। यद्यपि इसकी परीक्षा ले

चुका हू तथापि एक और विषय मे पुन परीक्षा लूंगा। (प्रकट रूप मे) दौवारिक यहाँ आओ, कुछ कान मे कहूगा ।

दौवारिक—(वैसा करके) कहिए।

सस्कृत-व्याख्या—सन्यासी—अथ, किमप्यस्तु = किमपि भवतु, पन्थानम् = मार्गम् निर्दिश = ज्ञापय, आवाम् = वटु-सन्यासिनौ शिववीरनिकटे = शिववीर पार्श्वे, जिगमिषाव = गन्तुमिच्छाव ।

दौवारिक—तत् अलमालप्यापि = एतदालपनीयमपि नास्ति, प्राह्णे = पूर्वाह्णे, महाराजस्य = शिववीरस्य, सन्ध्योपासन समये = सन्ध्यापूजनावसरे, भवादृशानाम् = साधुसन्यासिनाम्, प्रवेशसमय = प्रवेशकाल, भवति, न तु रात्रौ = निशाया प्रवेश समयो न भवति।

सन्यासी—तत्किम् = तर्हिकिम्, कोऽपि = कश्चिदपि, रात्रौ = नक्तम्, न प्रविशति = न प्रविष्टोभवति ?

दौवारिक—(सक्रोधम्) कोऽपि = कश्चिदपि, कथम् = कस्मात्, न प्रविशति = प्रविष्टो भवति ? परिचिता = परिज्ञातजना, प्राप्तपरिचयपत्रा = प्राप्ताभिज्ञपत्रा, वा = अथवा, आहूता = आमन्त्रिता, प्रविशन्ति = प्रवेशकुर्वन्ति, न तु, भवादृशा - त्वत्सदृशा, ये, तुम्बीम् = तुम्बीपात्रम्, गृहीत्वा = सगृह्य, द्वाराद्द्वारम् = गृहादगृहम्, इति = एवम्, कथयन्नेव = भाषमाण एव, तत्तेजसा = सन्यासिदीप्त्या, धर्षित = भीत, मध्ये एव = अन्तरा एव, विरराम = तूष्णीमभूत।

सन्यासी—(मनसि) राजनीतिनिष्णात = राजनीतिनिपुण, शिववीर = एतन्नामक नृपति, सर्वथा = सर्वप्रकारेण, दौवारिकतायोग्य = द्वारपाल कर्मोचित, एव अयम्, द्वारपाल = दौवारिक, स्थापितोऽस्ति = नियुक्तोऽस्ति। परीक्षितम् = परीक्षाकृताऽस्य, अपि एनम् = इमम्, एकस्मिन् = अन्यस्मिन्, विषये, पुन = भूय, परीक्षिष्ये = परीक्षा करिष्ये, तावत्। (प्रकटम् = प्रकाशम्) दौवारिक = द्वारपाल!, इत आयाहि = अत्र आगच्छ, किमपि = किञ्चिद्, कर्णे = श्रोत्रे, कथयिष्यामि = वदिष्यामि।

दौवारिक—(तथाकृत्वा = समेत्य तम्) कथ्यताम् = उच्यताम्।

हिन्दी-व्याख्या—निर्दिश = बताओ, 'निर् + √दिश + लोट (सिप्)' जिगमिषाव = जाना चाहते हैं, 'गम + सन् + लट् (वस्)'। अलमालप्यापि = यह

कहने की भी बात नही है। सन्यागी की वार्ता के निपेध के लिये द्वौवारिक ने 'अलम्' का प्रयोग किया है, 'अलम्' के योग मे 'क्त्वा' प्रत्यय हुआ है—'आ+लप्+क्त्वा (ल्यप्)=आलप्य'–"अलखल्वो 'प्रतिपेधयो प्राचा क्त्वा" से क्त्वा प्रत्यय हुआ है। माघ ने भी ऐसा प्रयोग किया है–"आलप्याल-मिद वभ्रोर्यत्स दारानपाहरत्"। प्राह्णे = दिन के पूर्व भाग मे। तूम्बीम् = 'तूम्बी' को। प्रकृत मे 'तूम्बी' भिक्षापात्र के अर्थ मे प्रयुक्त है। प्राप्तपरिचयपत्रा. = परिचय पत्र प्राप्त करने वाले, 'प्राप्तम् परिचय पत्रम् यैस्ते। (ब० व्री०)'। आहूता =आमन्त्रित । तत्तेजसा=सन्यासी के तेज से। घर्षित=भयभीत हुआ। विरराम=रुक गया। राजनीति निष्णात =राजनीति मे कुशल, 'राज-नीतौ निष्णात (तत्पु०)'। निष्णात ='नि+√स्ना+क्त (प्रथमा)'। दौवा-रिकतायोग्य =द्वाररक्षक कर्म के लिये उचित। परीक्षिष्ये=परीक्षा करूँगा। स्वागतम्=मन मे सोचना। इत आयाहि=इधर आओ। प्रकटम्=प्रकट रूप मे।

टिप्पणी—(१) द्वारपाल एवम् सन्यासी का अत्यन्त रोचक वार्ता का सयोजन किया गया है। साथ ही द्वारपाल की कर्त्तव्य-परायणता निर्दिष्ट है।

(२) 'तत्तेजसेव घर्षित' मे उत्प्रेक्षा अलकार है।

सन्यासी—निरीक्षस्व त्वमधुना दौवारिकोऽसि, प्राणानगणयन् जीविका निर्वहसि, त्व सहस्र वाऽयुत वा मुद्रा राशीकृता कदापि प्राप्स्यसीति न कथमपि सभाव्यते।

दौवारिक —आम्, अग्रे कथ्यताम्।

सन्यासी—वयञ्च सन्यासिनो वनेषु गिरिकन्दरेषु च विचराम, सर्व रसायन्-तत्व विद्म।

दौवारिक —स्यादेवम्, अग्रे अग्रे?

सन्यासी—तद् यदि त्व मा प्रविशन्त न प्रतिरुन्धे तदधुनैव परिष्कृत पारद-भस्म-तुभ्य दद्याम्, यथा त्व गुञ्जामात्रेणापि द्वापञ्चाशतसङ्ख्याक-तुलापरिमित ताम्र जाम्बूनद विधातु शक्नुया।

हिन्दी अनुवाद—सन्यासी देखो, तुम इस समय द्वारपाल हो, प्राणों की

चिन्ता न करके जिविका प्राप्त करते हो, तुम हजार या दस हजार रुपये कभी भी इकट्ठा प्राप्त करोगे, यह किसी प्रकार से भी सम्भव नहीं है।

दौवारिक—ठीक, आगे कहिए।

सन्यासी—हम तो सन्यासी हैं, जगलो और पर्वत की गुफाओ मे विचरण करते हैं सभी रसायन तत्त्वो को जानते है।

दौवारिक—ऐसा हो सकता है, आगे-आगे कहिये।

सन्यासी—यदि तुम मुझको प्रवेश करने से न रोको, तो इसी समय तुम्हें परिष्कृत (शोधित) पारद भस्म दूं, जिससे तुम रत्ती भर से भी मनो तांबे को सोना बना सकते हो।

संस्कृत-व्याख्या—सन्यासी-निरीक्षस्व=अवलोकय, त्वम्=द्वारपाल !, अधुना=इदानीम्, दौवारिकोऽसि=द्वारपालोऽसि, प्राणान्=असून्, अगणयन्=अचिन्तयन्, जीविकाम्=जीवनवृत्तिम्, निर्वहसि=धारयसि, त्वम्, सहस्त्रवाऽयुत वा=अत्यधिकम्, मुद्रा =रूप्यकाणि, राशीकृता =सञ्चिता, कदापि, प्रापयसि=प्राप्तकरिष्यसि, इति=एतत्, कथमपि=केनापि प्रकारेण, न सम्भाव्यते=न सम्भवति।

दौवारिक —आम्=वाढम्, अग्रे कथ्यताम्=अग्रे वदतु।

सन्यासी—अञ्च सन्यासिन =वयम् विरक्ता, वनेषु=आरण्येषु, गिरिकन्दरेषु=पर्वत गुहासु, च, विचराम =भ्रमाम, सर्वम्=निखिलम्, रसायनतत्वम्=औषधिविशेषसामर्थ्यम्, विदम =जानीम।

दौवारिक —स्यादेवम्=भवेदेवम्, अग्रे-अग्रे=अग्रिमाग्रिम कथयतु।

सन्यासी—तत्=तर्हि, यदि=चेत्, त्वम्, माम्=सन्यासिनम्, प्रविशन्तम्=प्रवेश कुर्वन्तम्, न प्रतिरुन्धे =न प्रतिवारये, तत्=तर्हि, अधुनैव=इदानीमेव, परिष्कृतम्=शोधितम्, पारदभस्म=रसविशेषम्, तुभ्यम्=द्वारपालाय, दद्याम =प्रयच्छेयम्, यथा=येन, त्वम्=द्वारपाल, गुञ्जामात्रेण=गुञ्जापरिमितेन, अपि, द्वापञ्चाशतसङ्ख्यातुलापरिमितम्, ताम्रम्=धातुविशेषम् जाम्बूनदम्=सुवर्णम्, विधातुम्=निमातुम्, शक्नुया =समर्थ भवे।

हिन्दी-व्याख्या—निरीक्षस्व=देखो। दौवारिकोऽसि=द्वारपाल हो। प्राणान=प्राणो को, 'प्राण' शब्द नित्य बहुवचन होता है। अगणयन्=न गिनते हुए,

'नञ् + √गण् + शतृ (प्रथमा ए० व०)' । जीविकाम् = जीवन निर्वाहार्थ धन । निर्वहसि = प्राप्त करते हो । न सम्भाव्यते = संभव नहीं है । आम् = स्वीकृति सूचक । रसायनतत्वम् = रसायन तत्व को । 'रसायन' आयुर्वेदिक शब्द है । औषधियों से बनाये भस्म को रसायन कहते हैं । कुछ रसायन ऐसे भी होते हैं जिनसे तांबे आदि को सुवर्णादि के रूप में परिवर्तित किया जा सकता था । विद्म = जानते हैं । परिष्कृतम् = शोधित । पारदभस्म = विशेष प्रकार का रसायन । गुञ्जामात्रेण = रत्ती भर से ही, न प्रतिरुन्धे = नहीं रोकते हो, 'प्रति + √रुधिर् + विधिलिङ् (सिप्)' । जाम्बूनदम् = सुवर्ण । विधातुम् = बनाने में । शक्नुया = समर्थ हो सकते हो ।

टिप्पणी—(१) सन्यासी द्वारपाल की परीक्षा लेने के लिये सुवर्ण बनाने वाली पारद भस्म देने का लोभ देता है । यह राजनीति का एक अंग है ।

(२) 'दौवारिकोऽसि' से व्यंजित होता है कि तुम अत्यन्त कष्ट से जीविका प्राप्त करते हो ।

दौवारिक—हहो ! कपटसन्यासिन् ! कथं विश्वासघातं स्वामिवञ्चनञ्च शिक्षयसि ? ते केचनान्ये भवन्ति जार-जाता:, ये उत्कोच-लोभेन स्वामिनं वञ्चयित्वा आत्मानमन्धतमसे पातयन्ति, न वयं शिवगणास्तादृशा: । (सन्यासिनो हस्तं धृत्वा) इतस्तु सत्यं कथय कस्त्वम् ? कुत आयात: ? केन वा प्रेषित: ?

सन्यासी—(स्मित्वेव) अथ त्वं मां कं मन्यसे ?

दौवारिक—अहं तु त्वामस्यैव ससेनस्याऽऽयातस्य अपजलखानस्य—

सन्यासी—(विनिवार्य मध्य एव) धिग् धिग् !

दौवारिक—कस्याप्यन्यस्य वा गूढचरं मन्ये । तदादेशं पालयिष्यामि प्रभुवर्यस्य । (हस्तमाकृष्य) आगच्छ दुर्गाध्यक्ष-समीपे, स एवाभिज्ञाय त्वया यथोचितं व्यवहरिष्यति ।

तत: सन्यासी तु—"त्यज, नाहं पुनरायास्यामि, नाहं पुनरेवं कथयि-

प्यामि, महायोगिन्, दयस्व दयस्व" इति सहस्रधा समचकथत, तथापि दौवारिकस्तु तमाकृष्यनयननेव प्रचलित ।

हिन्दी अनुवाद—दौवारिक—अरे ! क्यो तू विश्वासघात और स्वामी के वञ्चना का उपदेश दे रहा है ? वे कोई और ही जार जात (स्वामी को धोखा देने वाले तथा 'घूस' लेने वाले) होते हैं, जो उत्कोच (घूस) के लोभ मे स्वामी को छल कर अपने को प्रगाढ नरक मे गिराते हैं, हम सब महाराज शिवाजी के गण (सेवक) ऐसे नहीं है । (सन्यासी का हाथ पकड कर) इधर आओ और सच-सच बताओ तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? अथवा किसके द्वारा भेजे गये हो ?

सन्यासी—(मुस्कराता हुआ सा) तो तुम मुझे क्या समझते हो ?

दौवारिक—मैं तो तुमको इसी सेना से सहित आये हुये अफजलखाँ का—

सन्यासी—(बीच मे ही रोककर) धिक्कार है, धिक्कार है !

दौवारिक—अथवा किसी अन्य का गुप्तचर समझता हू । तो मै अपने प्रभु के आदेश का पालन करूगा । (हाथ खींचकर) दुर्गाध्यक्ष के समीप आओ । वे तुम्हे पहिचान कर जैसा उचित समझेगा वैसा व्यवहार करेंगे ।

तब सन्यासी ने हजारो बार कहा—"छोड, मै पुन नहीं आऊगा, मै ऐसा फिर नहीं करूँगा, आप उदार हैं, दया करिये ! दया करिये ।" तब भी द्वारपाल उसे खींचकर ले जाने लगा ।

सस्कृत-व्याख्या—हहो = इति आश्चर्ये, कपट सन्यासिन् = प्रवञ्चकयोगिन्, कथम्, विश्वासघात = विश्वासविनाशम्, स्वामिवञ्चनञ्च = प्रभुप्रतारणम् च, शिक्षयसि = उपदिशसि ? ते केचन, अन्ये = अपरे, भवन्ति = जायन्ते, जारजाता स्वैरजाता, ये, उत्कोचलोभेन = कर्तव्यच्युतविधिनोपग्राह्यधनलोभेन, स्वामिनम् = प्रभुम्, वञ्चयित्वा = प्रतार्य, आत्मानम् = स्वम्, अन्धतमसे = घोरे नरके, पातयन्ति = प्रक्षिपन्ति, नवयम्, शिवगणा = शिववीरस्यचारा, तादृशा = तथाविधा । (सन्यासिन करमुपगृह्य) इतस्तु = इत आगच्छ, सत्यम् = अलीकम्, कथय = वद, कस्त्वम् = त्व कोऽसि ? कुत आयात = कुत्रस्य आगत ? वा = आहोस्वित्, केन प्रेषित = कस्य प्रेरणयागतोऽत्र ।

सन्यासी =(स्मित्वेव) अथ = तावत्, त्वम् = द्वारपाल , माम् = मन्यासिनम्, कम्, मन्यसे = जानासि ।

दौवारिक = अहं तु, त्वाम् = सन्यासिनम्, अस्यैव = निकटस्थयैव, आयातस्य = आगतस्य, अपजलखानस्य = एतन्नामकस्य ।

सन्यासी —(अवरुध्य मध्ये एव) विकृतम् ।

दौवारिक —कस्यापि = कस्यचिदपि, अन्यस्य = अपरस्य, वा = अथवा, गूढचरम् = गुप्तचरम्, मन्ये = जानामि, तदादेशम् = तर्हिणमादेशम्, पालयिष्यामि = पालन करिष्यामि, प्रभूवर्यस्य = श्रीमन स्वामिन । (करमाकृष्य) आगच्छ = आयाहि, दुर्गाध्यक्षसमीपे = दुर्गपतिपार्श्वे, स एव = दुर्गाध्यक्ष एव, अभिज्ञाय = अवगम्य, त्वया = सन्यासिना, यथोचितम् = शासनादेशपूर्वकम्, व्यवहरिष्यति = व्यवहार करिष्यति ।

तत = तत्पश्चात्, सन्यासी = परिवाद्, तु, "त्यज = मुञ्च, नाहम्, पुनरेव कथयिष्यामि = भूयरेव भणिष्यामि, महाशयोऽसि = उदारहृदयोऽसि, दयस्व-दयस्व = दया कुरु, दया कुर्विति ।" सहस्त्रधा = बहुधा, समचकथत् = समवोचत्, तथापि, दौवारिक = द्वारपाल , तु, तमाकृष्य = सन्यासिनमाकृष्य, नयन्नेव सकर्प नेव, प्रचालित = सचलित ।

हिन्दी-व्याख्या—हहो = आश्चर्य सूचक अव्यय । स्वामिवञ्चनञ्च = और स्वामी को ठगना । शिक्षयसि = सिखा रहे हो । जारजाता = हरामजादे, पति के जीवित रहने पर स्त्री जब दूसरे पुरुष से ससर्ग करती है, तो उससे उत्पन्न सतति 'जारजात' कहलाती है—"अमृते जारज कुण्डो मृते भर्त्तरि गोलक" । 'जारजात' स्वामिप्रवञ्चको एवम् उत्कोचलोभियो की निन्दा के लिये प्रयुक्त हुआ है । उत्कोचलोभेन = 'घूस' के लोभ से । वञ्चयित्वा = ठगकर के । आत्मानम् = अपने को । अन्धतमसे = घोर नरक मे, पुराणो मे अनेक प्रकार के नरको का वर्णन है, उनमे से 'अन्धतमस' भी अन्यतम नरक है, जहाँ प्राणी को अति घोर यातनायें दी जाती हैं । पातयन्ति = गिराते हैं । ससैनस्य = सेना के सहित, 'सेनया सहित तस्य (तत्पु०)' । आयातस्य = आये हुए (अफजलखान का विशेषण), 'आ + √या + क्त (षष्ठी ए० व०)' । विनिवार्य = रोक कर, 'वि + नि √वृ + क्त्वा (ल्यप्)' ।

(जानूम)। पातयिष्यामि = पातन [illegible]। दुर्गाध्यक्षसमीपे -- [illegible] के पास, दुर्ग (किला) की सम्पूर्ण [illegible] दुर्गाध्यक्ष होता था, वह अपने विषय पर पूर्ण [illegible]। अभिज्ञाय — जानकर, 'अभि + $\sqrt{}$ज्ञा + ल्यप्। व्यवहरिष्यति = [illegible]। त्यज छोड दो। आयास्यामि = आऊँगा। महाशयोऽस्मि - विशाल हृदय वाले [illegible]। दयस्व = दया करो। सहस्रधा = अनेकों बार। समचकथन् = [illegible]। नयन्नेव — ले जाता हुआ ही। प्रचलित = चल पडा।

टिप्पणी—(१) द्वारपाल के चरित्र को बहुत प्रभावशाली ढङ्ग से प्रस्तुत किया गया है। उसकी सजगता सराहनीय है। उसकी निर्भीकता प्रशंसनीय है।

(२) संवाद योजना अच्छी एव स्वाभाविक है।

अथ यावद् द्वारस्थ-स्तम्भोपरि सम्स्थापिताया काच-मञ्जूषाया जाज्वल्यमानस्य प्रबल-प्रकाशस्य दीपस्य समीपे समायात , तावत्सन्यासिनोक्तम्--"दौवारिक ! अपि मा पूर्वमपि कदाऽप्यद्राक्षी ?" ततो दौवारिक. पुनस्त निपुण निरीक्षमाणो मन्द्रेण स्वरेण, अरुणापाङ्गाभ्या लोचनाभ्याम, गौरतरेण वर्णेन चुम्बितयौवनेन वयसा, निर्भीकेण हारिणा च मुख-मण्डलेन पर्यचिनोत्। भुशुण्डी-समुत्तालेन-किण-कर्कश करग्रहमपहाय, सलज्ज इव च नम्रीभूय, प्रणमन्नुवाच्च—"आ ! कथ श्रीमान् गौरसिंह आर्य ? क्षम्यतामनुचितव्यवहार एतस्य ग्राम्य वराकस्य"। तदवधार्य तस्य पृष्ठे हस्त विन्यस्यन् सन्यासिरूपो गौरसिह समवोचत–दौवारिक ! मया बहुश परीक्षितोऽसि, ज्ञातोऽसि यथायोग्य एव पदे नियुक्तोऽसि चेति। त्वादृक्षा एव प्रभूणा पुरस्कारभाजनानि भवन्ति, लोकद्वयञ्च विजयन्ते। तव प्रामाणिकता जानीत एवात्रभवान् प्रभुवर्य्य , परमहमपि विशिष्य कीर्तयिष्यामि। निर्दिश तावत् कुत्र श्रीमान् ? किञ्चानुतिष्ठति ?

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद जब द्वार पर स्थित खम्बे के ऊपर रखी हुई काँच की पेटिका मे जल रहे तीव्र प्रकाश वाले दीपक के समीप मे आया, तब

सन्यासी ने कहा—"द्वारपाल ! क्या तुमने इसके पहले भी मुझको कभी देखा था ? तब द्वारपाल पुन उस (सन्यासी) को अच्छी प्रकार से देखकर, (सन्यासी) के गभीर स्वर से, रक्त नेत्र प्रान्त वाले नयनो से, अधिक गोरे रङ्ग से प्राप्त होने वाली युवावस्था से तथा निर्भीक और मनोहर मुखमण्डल से उसे पहचान लिया। बन्दूक के उठाने से पडे हुए घट्ठो से कठोर हाथ को (सन्यासी के हाथ से) अलग करके लज्जित हुआ सा नम्र होकर प्रणाम करते हुए बोला—"अरे ! क्या आप श्रीमान गोरसिह जी आर्य ? इस बेचारे गँवार के अनुचित व्यवहारों को क्षमा कीजिये।" यह सुनकर द्वारपाल की पीठ पर हाथ फेरता हुआ सन्यासी वेषधारी गौरसिह बोला—द्वारपाल ! मैंने तुम्हारी अनेक बार परीक्षा ले चुका और यह समझ लिया कि तुम यथायोग्य पद पर ही नियुक्त किये गये हो तुम्हारे समान लोग ही स्वामी के पुरस्कार प्राप्त करने वाले होते हैं और दोनो लोकों को जीतते हैं। तुम्हारी प्रामाणिकता को प्रभुवर शिवाजी से जानते ही हैं, फिर भी मैं विशेष रूप से तुम्हारी प्रशसा करूँगा। तो बताओ कहाँ है श्रीमान् ? और क्या कर रहे हैं ?

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तदनन्तरम्, यावद् = यदा, द्वारस्थस्तभोपरि= द्वारेस्थितस्य स्तम्भस्य उपरिभागे, सस्थापितायाम् = यिक्षिप्तायाम्, काचमञ्जूपायाम् = काचपेटिकायाम् जाज्वल्यमानस्य = प्रज्वलनशीलस्य, प्रबलप्रकाशस्य = तीव्रप्रकाशस्य, दीपस्य = प्रदीपस्य, समीपे = पार्श्वे, समायात = समागत तावत् = तदा, सन्यासिना = सन्यासि वेषधारिणा, उक्तम् = अभिहितम्, "दौवारिक = द्वारपाल, अपि किम्, माम् = सन्यासिनम्, पूर्वमपि = प्रागपि, कदापि कदाचित्, अद्राक्षी = अपश्य ?" तत = तदा, दौवारिक = द्वारपाल, पुन भूय, तम् = सन्यासिनम् निपुणम् = सम्यक्, निरीक्षमाण = पश्यन्, मन्द्रेण गम्भीरेण, स्वरेण = गिरा, अरुणापाङ्गाभ्याम् = रक्तनेत्रप्रान्तभागा[illegible] नाभ्याम् = नेत्राभ्याम, गौरतरेण = अतिगौरेण, वर्णेन = रागेण, [illegible] = स्पृष्ट यौवनेन, वयसा = अवस्थया, निर्भीकेण = भयरहितेन, [illegible] हारिणा, च, मुखमण्डलेन = वदनमण्डलेन, पर्यचिनोत् = [illegible]चितवा। [illegible] = आग्नेयास्त्रस्य, समुत्तोलनेन = उत्थापनेन, य[illegible], [illegible]किण = अङ्क, [illegible]करस्य = हस्तस्य, ग्रहम् = ग्रहण[illegible] त्यक्त्वा,

चित इव, च, नम्रीभूय = नत भूत्वा, प्रणमन् = अभिवदन्, उवाच = जगाद—
। कथम् = किम् श्रीमान् = श्री सम्पन्न, गौरसिंह आर्य = पूर्ववर्णित गौर-
ह्मचारिवटो (असि) ? तदवधार्य = तच्छ्रुत्वा, तस्य - द्वारपालस्य पृष्ठे =
ष्ठभागे, हस्तन् = करम्, विन्यस्यन् = सम्प्रसारयन्, सन्यासिरूप = सन्यासि
षधारी, गौरसिंह = एतन्नामक-बटु, समवोचत् = उवाच—दोवारिक =
ारपाल। मया = गौरसिंहेन, बहुश = अनेकश, परीक्षितोऽसि = सम्यग्वीक्षि-
ोऽसि, ज्ञातोऽसि = अवबुद्धोऽसि, यथायोग्ये = यथोचिते, एव, पदे = स्थाने,
ियुक्तोऽसि = स्थापितोऽसि, च इति। त्वादृक्षा एव = त्वत्सदृशा एव, प्रभूणाम्
= स्वामिनाम्, पुरस्कारभाजनानि = उपहारपात्राणि, भवन्ति = जायन्ते, लोक
ुयञ्च = ऐहिक पारलौकिकञ्च, विजयन्ते = विजय प्राप्नुवन्ति। तव = भवत,
ामाणिकताम् = वास्तविकताम्, जानीते = जानाति, एव, अत्रभवान् = श्रीमान्,
भुवर्य्य = स्वामिपाद, परम् = किन्तु, अहमपि = वटुरपि, विशेष्य = विशेष-
रूपेण, कीर्तयिष्यामि = प्रशसा करिष्यामि। निर्दिश = ज्ञापय, तावत्, कुत्र,
श्रीमान् = लक्ष्मीवान् शिववीर ? किञ्च अपरञ्च किम्, अनुतिष्ठति =
करोति।

हिन्दी-व्याख्या—द्वारस्थस्तम्भोपरि = द्वार पर स्थित खम्बे के ऊपर, स्तम्भ = 'खम्बा'। 'द्वारे स्थित य स्तम्भ तस्य उपरि'। सस्थापितायाम् = रखी हुई। काचमञ्जूषायाम् = काच की पेटिका अथवा बडी 'लालटेन' के समान दीपमञ्जूषा। जाज्वल्यमानस्य = जलने वाले, (दीपक का विशेषश)। '√ज्वल् + शानच्। (यङन्त, षष्ठी ए० व०)'। प्रबलप्रकाशस्य = तीव्र प्रकाश वाले, समायात = आया। अद्राक्षी = देखा था, '√दृश् + लुङ् (सिप्)'। निपुणम् = भली प्रकार से। निरीक्षमाण = 'निर + √ईक्ष + शानच्'। मन्द्रेण = गम्भीर। अरुणापाङ्गाभ्याम् = ईषद् रक्त नेत्र प्रान्त वाले (नेत्र का विशेपण), अरुणौ अपाङ्गौ ययोस्तौ, ताभ्याम् (ब० व्री०)'। गौरतरेण = अधिक गौर (वर्ण का विशेषण)। चुम्बितयौवनेन = यौवन के प्रारम्भिक (वयसा का विशेपण), 'चुम्बित यौवनम् येन, तत्, येन (ब० व्री०)'। वयसा = अवस्था से। निर्भीकेण = निडर, हारिणा = मनोहर, मुखमण्डलेन = मुखमण्डल से। पर्यचिनोत् = पहचान लिया, 'परि + √चिञ् (सज्ञाने) + लङ् (तिप्)'। भुशुण्डी समुत्तोलन

किणकर्कशकरग्रहम् = बन्दूक के उठाने से घने हुये चिह्न के कारण कठोर हाथ की पकड को भुशुण्डी = बन्दूक, समुत्तोलन = उठाना, किण = बने हुये घट्टे कर्कश = कठोर, करग्रह—हाथ की ग्रहण (पकड)। भुशुण्ड्या समुत्तोलनेन य किण तेन कर्कश य कर तस्य ग्रहम (तत्पु०)। सलज्ज इव = लज्जित हुए के समान। नम्रीभूय = नम्र होकर, नम्र से 'च्वि' प्रत्यय। प्रणमन् = प्रणाम करता हुआ, 'प्र + नम + शतृ'। क्षम्यताम् = क्षमा कीजिये। ग्राम्यवराकस्य = वेचारे गँवार का, 'ग्रामे भव ग्राम्या, ग्राम्यश्चासौ वराक, ग्राम्यवराक तस्य (तत्पु०)'। तदवधार्य = यह सुनकर 'अव + धृ + ल्यप्'। विन्यस्यन् = फेरता हुआ। समवोचत् = बोला, 'सम् + वच् लड् (तिप्)'। बहुश = अनेक बार। परीक्षितोऽसि = परीक्षित हो चुके हो। ज्ञातोऽसि = जान लिये गये हो। यथा योग्ये = यथोचित। नियुक्तोऽसि = नियुक्त किये गये हो। त्वादृक्षा = तुम्हारे समान। पुरस्कार भाजनानि = पुरस्कार प्राप्त करने वाले। लोकद्वयञ्च = इह लोक और परलोक दोनो को। विजयन्ते = जीतते है, 'वि + √जि + (झट (झ)'। 'वि' उपसर्ग के कारण आत्मनेपद हुआ है 'विपराभ्याजे'। विशिष्य = विशेष प्रकार से। कीर्तयिष्यामि = कहूँगा। निर्दिश = बताओ। अनुतिष्ठति कर रहे है।

टिप्पणी—(१) काचमञ्जूषा = शीशे की बनी हुई एक पेटिका होती है, जिसके अन्दर दीपक जलता रहता है, 'लैम्प' का बडा रूप समझा जा सकता है। द्वारपाल के फाटक पर खम्बे के ऊपर वही जल रहा था।

(२) गौरसिंह इसके पूर्व भी जा चुका था और परिचित था किन्तु इस समय वह केवल द्वारपाल की परीक्षा लेने के लिये सन्यासी का वेष धारण करके गया था और द्वारपाल उसकी परीक्षा मे पूरी तरह खरा उतरा। इसमे राजनीतिक भावना निहित है।

तत पुनर्वद्धाञ्जलेर्दौवारिकस्य किमपि कर्णे कथितमाकर्ण्य प्रधान-द्वारमुल्लङ्घ्य, नेदीयस्यामेकस्या निम्बतरु तल वेदिकाया सहचर समुप-वेश्य, तुम्बीमेकत सस्थाप्य, स्वाङ्गरक्षिकावरण-कापायवसन चैकतो निम्बशाखायामवलम्ब्य पट-खण्डेन पक्ष्मणो कपोलयो कर्णयोर्भ्रुवोश्च-

बुके नासाया केशप्रान्तेषु च क्षुरितामिव विभूतिं प्रोञ्छ्य, स्कन्धयो पृष्ठे च लम्बमानान् मेचकान् कुञ्चितान् कचानावध्य, सहचर पोटलिकात उष्णीषमादाय, शिरसि चाऽऽधाय, सुन्दरमुत्तरीय चैक स्कन्धयोर्निक्षिप्य, दौवारिक—निर्देशानुसार श्रीशिववीरालकृतामट्टालिका प्रति प्रतिष्ठित ।

हिन्दी अनुवाद—तदनन्तर हाँथ जोडे हुए द्वारपाल के द्वारा कान मे कुछ कही गई बात को सुनकर (गौरसिंह) प्रधान द्वार को लाँघकर पास के ही एक नीम के वृक्ष के नीचे चबूतरे पर (अपने) सहचर (बालक) को बैठाकर तूम्बी को एक ओर रखकर अपने अँगरखे को ढकने वाले कषाय (गेरुए) वस्त्र को एक ओर नीम की शाखा मे टाँगकर, रुमाल से पलको, गालो, कानो, भौंहो, दाढी, नासिका और बालो मे लगी हुई भस्म को पोछकर पीठ और कन्धो पर लटकते हुए काले-काले घु घराले बालो को सवार कर, सहचर की गट्ठर से एक पगडी निकालकर, शिर पर रखकर, एक सुन्दर उत्तरीय कन्धो पर डाल कर द्वारपाल के निर्देश के अनुसार श्री शिववीर के द्वारा अलकृत अट्टालिका की ओर चल दिया ।

सस्कृत-व्याख्या—तत = तदनन्तरम्, पुन = भूय, बद्धाञ्जले = करबद्धस्य, दौवारिकस्य = द्वारपालस्य किमपि = किञ्चित्, कर्णे = श्रोत्रे, कथितम् = अभिहितम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, प्रधानद्वारम् = मुख्यद्वारम्, उल्लघ्य = लङ्घयित्वा, नेदीयस्याम् = समीपवर्तिन्याम्, निम्बतरुतलवेदिकायाम = निम्बवृक्षाधश्चत्वरे, सहचरम् = सहयात्रिम्, समुपवेश्य = समुपस्थाप्य, तुम्बीम् = तुम्बीपात्रम्, एकत = भागैके, सस्थाप्य = निक्षिप्य, स्वाङ्गरक्षिकावरण काषायवसनम् = स्वकञ्चुकाच्छादनकाषायवस्त्रम्, च, एकत = एकस्मिन्, निम्बशाखायाम् - निम्बविटपे, अवलम्ब्य = अवलम्बित कृत्वा, पटखण्डेन = लघुवस्त्रेण, पक्ष्मणो = अक्षिलोम्नो, कपलयो = गण्डयो, कर्णयो = श्रोत्रयो, भ्रुवो = भ्रुकुट्यो, चिबुके = चिबुक प्रान्ते, नासायाम् = नासिकायाम्, केशप्रान्तेषु च = कुन्तलेषु च, क्षुरितामिव = सलग्नामिव, विभूतिम् = भस्म, प्रोञ्छ्य = परामृज्य, स्कन्धयो = असदेशयो, पृष्ठे = पृष्ठभागे, लम्बमानान् = अवलम्बितान् मेचकान् = कृष्णवर्णान्, कुञ्चितान् = कुटिलान्, कचान् = केशान्, आवध्य = सप्रमाध्य, सहचर पोटरिकात् = सहयात्रिपुटकात्, उष्णीषम् = शिरोवेष्टनम्, आदाय = गृहीत्वा, शिरसि =

मूर्ध्नि, च, आधाय = सस्थाप्य, एकम्, सुन्दरम् = अच्छम्, उत्तरीयम = आच्छादनपटम्, एकन्धयो = असयो, निक्षिप्य = स्थापयित्वा, दौवारिक निर्देशानुसारम् = द्वारपालकथनानुसारेण, श्रीशिववीरालकृताम् = श्रीशिववीरयुक्ताम्, अट्टालिकाम् = प्रासादम्, प्रति, प्रतिष्ठत = प्राचलत् ।

हिन्दी-व्याख्या—**बद्धाञ्जले** = हाथ जोडे हुए (द्वारपाल का विशेषण), 'बद्धा अञ्जलि येन स तस्य (ब० ब्री०)। **कथितम्** = कहे हुए को (द्वारपाल के कथन को)। **प्रधानद्वारम्** = मुख्य द्वार को। **उल्लङ्घ्य** = पार करके, 'उत् + √लघि + ल्यप्'। **नेदीयस्याम्** = अति निकट के ही। **निम्बतरुतलवेदिकायाम्** = नीम के पेड के नीचे के चबूतरे पर, 'निम्बस्य तरो तले या वेदिका तस्याम् (तत्पु०)'। **वेदिका** = चबूतरा। **सहचरम्** = साथ के बालक को, 'सह चरती सह चर तम्।' '√चर + अच्'। **समुपवेश्य** = बैठाकर, 'सम् + उप + √विश् + ल्यप्।' **एकत** = एक ओर। **सस्थाप्य** = रखकर, 'सम् + √स्थापि + ल्यप्'। **स्वाङ्गरक्षिकावरणकाषायवसनम्** = अपने अङ्गरक्षिका (अगरखा) को ढकने वाले गेरुए वस्त्र को। 'स्वस्य अङ्गरक्षिका तस्या आवरण रूप यत् काषायवसनम् तत् (तत्पु०)'। **निम्बशाखायाम्** = नीम की डाल मे। **अवलम्ब्य** = लटकाकर। **पटखण्डेन** = वस्त्रखण्ड (रूमाल) से। **पक्ष्मणो** = पलको के। 'अक्षिलोम्नी पक्ष्माक्षि लोम्नि' (अमरकोष)। **चिबुके** = ठोडी मे। **छुरितम्** = व्याप्त। **विभूतिम्** = भस्म को। **प्रोञ्छ्य** = पोछकर, 'प्र + √उञ्छि (उञ्छे) + ल्यप्'। **लम्बमानान्** = लटकने वाले (बालो का विशेषण)। **मेचकान्** = कृष्णवर्ण के, 'नीलसितश्यामकालश्यामल मेचका' (अमरकोष)। **कुञ्चितान्** = टेढे-मेढे या घु घराले। **कचान्** = वालो को। **आबध्य** = बाँधकर। **उष्णीषम्** = पगडी को। **आधाय** = रखकर या बाँधकर। **उत्तरीयम्** = दुपट्टे को। **निक्षिप्य** = डालकर, 'नि + √क्षिप + ल्यप्'। **दौवारिकनिर्देशानुसारम्** = द्वारपाल के निर्देश के अनुसार। **श्रीशिववीरालकृताम्** = श्रीवीर शिवाजी से अलकृत, 'श्री शिववीरेण अलकृताम्'। **अट्टालिकाम्प्रति** = अट्टालिका की ओर। **प्रतिष्ठत** = प्रस्थान कर दिया।

टिप्पणी—गौरसिंह सन्यासी के वेष के समग्र प्रसाधन को अलग करके

सह चर के साथ ही छोड दिया और स्वयम् साधुवेप मे शिववीर से मिलने के लिये चल पडा।

शिववीरस्तु कस्याञ्चिच्चन्द्रचुम्बिन्या सान्द्र-सुधासार-सलिप्त-भित्तिकाया धूपधूपिताया गजदन्तिकावलम्बित-विविध-च्छुरिकाखड्ग-रिष्टिकाया स्वर्ण-पिञ्जर-परिलम्वमान-शुक पिक-चकोर-सारिका कल-कूजितायामट्टालिकाया सन्ध्यामुपास्योपविष्ठ आसीत। परितश्च तस्यैव खर्वामप्यखर्व-पराक्रमा श्यामामपि यश समूह-श्वेतीकृत-त्रिभुवना कुशास-नाश्रयामपि सुशासनाश्रया पठन-पाठनादि-परिश्रमानभिज्ञामपि नीति-निष्णाता स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्म-दर्शना ध्वसकाण्डव्यसनिनीमपि धर्म-धौरेयी कठिनामपि कोमलाम् उग्रामपि शान्ता शोभित-विग्रहामपि दृढ-सन्धि-बन्धा कलित-गौरवामपि कलित लाघवा विशाल-ललाटा प्रचण्डबाहु-दण्डा शोणापाङ्गा कम्बुग्रीवा सुनद्धस्नायु वर्तुल-श्यामरमश्रु धारिताकृति-मिव वीरता विग्रहिणीमिव धीरता समासादित-समर-स्फूर्ति मूर्ति दर्शदर्श पर प्रसादमासादयन्तस्तस्य वयस्या कटानध्यवसन्।

हिन्दी अनुवाद—वीर शिवाजी किसी चन्द्रचुम्बिनी, गाढे चूने से लिपी दीवालों वाली, धूप से सुगन्धित, (दिवालो मे गडी हुई) खूँटियो मे अनेक प्रकार के छुरे, तलवार तथा रिष्टिका आदि लटक रहे थे जिसमे तथा सोने के पिंजडे मे लटक रहे शुक, कोयल, चकोरो और सारिकाओ के मधुर कूजन से व्याप्त अट्टालिका (प्रासाद) मे सन्ध्यापूजन करके बैठे हुए थे। उनके चारो ओर उन्हीं के साथी बैठे हुए थे, जो—अल्पकाय होती हुई भी महत्पराक्रमशालिनी, श्यामा होती हुई भी कीर्ति-समूह से समस्त त्रिभुवन को धवलित करने वाली, कुशासन पर बैठी हुई भी सु-शासन का आश्रय, पठन-पाठन आदि के परिश्रम से अनभिज्ञ होती हुई भी नीति मे पारगत, स्थूलदर्शनो वाली होती हुई भी सूक्ष्म दृष्टि वाली, (म्लेच्छों की) हिंसा व्यसनो वाली होती हुई भी धर्म के भार को धारण करने वाली, कठिन होती हुई भी कोमल, उग्र होती हुई भी शान्त, सुन्दर विग्रह (शरीर अथवा लडाई) वाली होती हुई भी दृढ सन्धिबन्धो वाली

गौरवशालिनी होती हुई भी लघु दर्शन वाली, विशाल ललाट वाली, प्रबल भुजाओ वाली, रक्त नेत्रो वाली, कम्बु (शख) सदृश कण्ठो वाली, सुगठित स्नायु (नसो) वाली, वर्तुलाकार श्यामल दाढ़ी मूँछो वाली, मूर्तिमती वीरता के समान, शरीर धारिणी वीरता के समान और समरभूमि मे स्फूर्ति प्रकट करने वाली मूर्ति (के समान देह को देख-देखकर प्रसन्न हो रहे थे।

हिन्दी-व्याख्या—शिववीरस्तु = शिववीर राजा तु, कस्याञ्चित्, चन्द्रचुम्बिन्याम् = अत्युच्छ्रायाम्, सान्द्रसुधासारसलिप्त भित्तिकायाम् = सघनश्वेत चूर्णद्रव्यरूषितभित्याम्, धूपधूपितायाम् = सुगन्धसुवासिताया, गजदन्तिकाम् = भित्तिशङ्कौ, अवलम्बिता = प्रलम्बिता विविधा = अनेकप्रकारा, छुरिकाखड्गरिष्टिका = विविधशास्त्राणि, यस्याम् सा, तस्याम्, सुवर्णपिञ्जरेषु = हैमनिर्मितपिञ्जरेषु, परिलम्बमानाम् = निवसताम्, शुकपिकचकोरसारिकाणाम् = विविधपक्षिणाम्, कलकूजितै = मधुरशब्दै, पूजिता = भूषिता या, अट्टालिका = प्रासाद, तस्याम् सन्ध्याम = सन्ध्यावन्दनादिकृत्यम्, उपास्य = सम्पाद्य, उपविष्ट = तिष्ठित आसीत्। परितश्च = समन्तात्, तस्यैव = शिववीरस्यैव, खर्वाम् = ह्रस्वाम्, अपि, अखर्वपराक्रमाम् = अतिशयपराक्रमाम्, श्यामामपि = कृष्णामपि, यश समूह-श्वेतीकृत्य त्रिभुवनाम् = कीर्तिकूटधवलित लोकत्रयाम्, कुशासनाश्रयामपि दर्भविष्टरस्थितामपि, सुशासनाश्रयाम् = सुराज्याश्रमाम्, पठनपाठनादिपरिश्रमानभिज्ञामपि = अध्ययनाध्यापनश्रमापरिचितामपि, नीतिनिष्णाताम् = नीतिमतीम्, स्थूलदर्शनामपि = विशालदर्शनवतीमपि, सूक्ष्मदर्शनाम् = कुशाग्रबुद्धियुक्ताम्, ध्वसकाण्डव्यसनिनीमपि = विधर्मिहिंसा व्यसनिनीमपि, धर्मधौरेयीम् = धर्मभारधारिणीम्, कठिनामपि,- कठोरामपि, कोमलाम् आक्लिष्टाम्, उग्रामपि = दुर्धर्षामपि, शान्ताम् = शान्तिमतीम् (दयादिगुणयुक्ताम्), शोभित-विग्रहामपि = सुशरीरामाहोस्वित् सुसमरवर्ताम्, अपि, दृढसन्धिबन्धाम् = दृढ-शरीरावयवसन्धानयुक्तामाहोस्वित् शत्रुभि सह स्थिर सन्धियुक्ताम्, कलितगौर-वामपि = गौरवान्वितामपि, कलितलाघवाम् = चातुर्यसम्पन्नाम्, विशालललाटाम् = आयतमस्तकाम्, प्रचण्डबाहुदण्डाम् = प्रबलभुजदण्डाम, शोणापाङ्गाम् = रक्तकटाक्षाम्, कम्बुग्रीवाम् = शखतुल्यकण्ठाम्, सुनद्धस्नायुम् = प्रश्लिष्ट स्नायुतन्तुम्, वर्तुलश्यामश्मश्रुम् = वर्तुलाकारकृष्णश्मश्रुम्, धारितक-

तिम् = गृहीताकृतिम्, इव, वीरताम् = शूरताम्, विग्रहिणीम् = शरीरवतोम्, धीरताम्, समासादितसमरस्फूर्तिम् = लब्धाध्वरस्फूर्तिम्, मूर्तिम् = आकृतिम्, दर्शम्-दर्शम् = दृष्ट्वा-दृष्ट्वा, परम् = उत्कृष्कम्, प्रसादम् = प्रसन्नताम्, आसादयन्त = प्राप्नुवन्त तस्य = शिववीरस्य, वयस्या = मित्राणि, कटान् = तृणनिर्मितोपवेशनानि, अध्यवसन् = आवसन् ।

हिन्दी—व्याख्या—चन्द्रचुम्बिन्याम् = चन्द्रमा को चूमने वाली अर्थात् अत्यन्त ऊँची । सान्द्रसुधासारसलिप्तभित्तिकायाम् = घने चूने से लिपी हुई दीवालो वाली (अट्टालिका का विशेषण) । सान्द्र = घना, सुधासार = सफेदी या चूना, सलिप्त = पुती हुई, भित्तिका = दीवाल । सान्द्रेण सुधासारेण सलिप्ता भित्तिका यस्याम् सा, तस्याम् (ब० व्री) । धूपधूपितायाम् = धूप से सुगन्धित । गजदन्तिकावलम्बितविविधच्छुरिकाखड्गरिष्टिकायाम् = खूँटियो मे टगे हुए थे अनेक प्रकार के छूरी, तलवार तथा रिष्टिका आदि शस्त्र जिसमे (अट्टालिका का विशेपण) । गजदन्तिका = खूँटी अवलम्बित = लटकी हुई, छुरिका = छूरी, खड्ग = तलवार, रिष्टिका = अस्त्रविशेष । 'गजदन्तिकायाम् अवलम्बिता विविधा छुरिका, खड्गा, रिष्टिकाश्च यस्याम् सा तस्याम् (ब० व्री०,' । 'सुवर्णपिञ्जर पूजितायाम्' = सोने के पिंजरे मे स्थित शुको, कोयलो, चकोरो और सारिकाओ के मधुर कूजन से युक्त अट्टालिका का विशेपण) । 'सुवर्ण पिञ्जरेपु परिलम्बमानाना शुक पिक चकोर सारिकाणा कलकूजितै पूजितायाम् (तत्पु०)' । अट्टालिकायाम् = प्रासाद मे । सन्ध्याम् = सध्यापूजन आदि (को) । उपास्य = सम्पादित करके, 'उप + √आस् + ल्यप्' । उपविष्ट = बैठे हुए, 'उप + √ विश् + क्त' । खर्वाम् अपि = ह्रस्व (लघु) होती हुई भी । यहाँ से 'मूर्ति' तक सभी स्त्रीलिङ्ग द्वितीयान्त शब्द शिवा जी की मूर्ति के विशेषण हैं । अखर्वपरिक्रमाम् = अत्यधिक पराक्रम वाली । अखर्व पराक्रम यस्याम् ताम् (ब० व्री०) 'अखर्वस्य पराक्रम अस्याम्' इस विग्रह मे विरोध अभासित होती है क्योकि खर्व मे अखर्व का पराक्रम कैसे हो सकता है ? अत प्रथम विग्रहा (अखर्व पराक्रम यस्याम्) से परिहार हो जाता है । श्यामाम् अपि यश समूह श्वेतीकृतत्रिभुवनाम् = श्यामल होती हुई भी कीर्ति समूह से तीनो लोको को धवलित करने वाली । श्यामलता से धवलित से धवलित नही किया जा सकता

(विरोध), कीर्ति समूह की श्वेतिमा से धवलित किया गया है (विरोध परिहार)। 'यश समूहेन श्वेतीकृत त्रिभुवनम् यया सा ताम् (ब० व्री०)'। श्वेतीकृत् = अश्वेत को श्वेत कर दिया गया है—'श्वेत से 'च्वि' प्रत्यय हुआ है। कुशासनाश्रयाम् अपि सुशासनाश्रयाम् = कु (खराब) शासन का आश्रय होती हुई भी सु (सुन्दर) शासन का आश्रय है (विरोध), कुश के आसन के आश्रय वाली होती हुई भी सु शासन का आश्रय (विरोध परिहार)। इसी क्रम मे विग्रह— 'कुत्सितम् शासनम् आश्रयो यस्य यस्या, सा ताम् = कुशासनीश्रयाम् (ब० व्री०)। (पक्ष मे) कुशानाम् आसनम् आश्रयो यस्या सा ताम्। शोभनम् शासनम् आश्रयो यस्या सा ताम् (ब० व्री०)। शासनम् = शास्यते अनेने निशासनम् '√शास् + घञ।' पठनपाठनादिपरिश्रमानभिज्ञामपि = पठन-पाठन आदि के परिश्रम से अनभिज्ञ होती हुई भी। 'पठन-पाठनादीनाम् परिश्रमेण अनभिज्ञा या सा ताम् (तत्पु०)। नीतिनिष्णाताम् = नीति मे निष्णात, 'नीतौ निष्णाता ताम्'। बिना पठन-पाठन के नीति मे निष्णात कैसे ? 'विरोध) पठन-पाठन रूप कर्म (ब्राह्मण कर्म) न करते हुए भी नीति मे निष्णात है (विरोध परिहार)। निष्णात = 'नि + √स्ना + क्त (टाप्-स्त्री लि०)'। स्थूलदर्शनाम् अपि = देखने मे स्थूल होने पर भी, 'स्थूलम् दर्शनम् यस्या सा ताम् (ब० व्री०)। सूक्ष्मदर्शनाम् = सूक्ष्म दृष्टि वाली अर्थात् कर्त्तव्या-कर्त्तव्य विचार वाली। स्थूल दर्शन (नेत्र) वाली सूक्ष्म दर्शन वाली कैसे हो सकती है ? (विरोध) ?। देखने मे स्थूल अथवा स्थूल (विशाल) नेत्रो वाली तथा सूक्ष्म दृष्टि (अति तीक्ष्ण बुद्धि) वाली (विरोध परिहार)। ध्वसकाण्डव्यसनिनीम् अपि = हिंसा आदि के व्यसन से युक्त होती हुई भी (विरोध), विधर्मियो या अनार्यो की हिंसा की व्यसनी होती हुई भी (विरोध परिहार) 'ध्वसकाण्डस्यव्यसनम् अस्ति यस्या तादृशीम् (ब० व्री०)। 'व्यसन + इन्' = व्यसनिन् = अभ्यस्त। धर्मधौरेयीम् = धर्म के भार को धारण करने वाली। धौरेयीम् = 'धुर + ढ्चञ् + ङीप् (स्त्रियाम्)'। कठिनाम् अपि कोमलाम् = कठिन होती हुई भी कोमल है। कठिन और कोमल का विरोध स्वाभाविक है क्योकि दुर्घर्षमय कठिन और नर्म विभूषित कोमल होता है, अत विरोध स्पष्ट है। इसका परिहार इस प्रकार है—शरीर का स्पर्श अतिकठोर है तथा हृदयगत भाव अत्यन्त कोमल हैं। उग्राम् अपि शान्ताम्

=उग्र होती हुई भी शान्त। उग्र और शान्त का भी स्वाभाविक विरोध है। दुर्धर्षो अत्याचारियो और विर्धामियो के लिये उग्र स्वभाव वाली तथा सदाचारियो और धर्मानुयायिओ के लिये शान्त (दयामय) है। शोभितविग्रहाम् अपि =सुन्दर सग्राम वाली होती हुई भी (विरोध), सुन्दर शरीर वाली (विरोध परिहार), विग्रह=युद्ध अथवा शरीर 'शोभित विग्रह यस्या सा, ताम् (ब० व्री०)'। दृढसन्धिबन्धाम्=सुदृढ सन्धिबन्धो वाली। सन्धिबन्ध=अवयव सन्धान अथवा मैत्री सम्बन्ध। सुन्दर सग्राम वाली है तो दृढसन्धि (मैत्री) बन्ध वाली कैसे हो सकती है (विरोध)? सुन्दर शरीर वाली तथा दृढ अवयव सन्धानो वाली (विरोध परिहार)। कलितगौरवाम् अपि=गौरवशालिनी होती हुई भी। कलितम् गौरवम् यया सा ताम् (ब० व्री०)'। कलितलाघवाम्= लघुता से युक्त है (विरोध पक्ष), चतुरता से युक्त है (विरोध परिहार)। गौरव लाघव का विरोध स्पष्ट होते हुए भी गौरव से गम्भीरता और लाघव से चतुरता का अर्थ करने पर विरोध का परिहार हो जाता है। यहाँ तक सन्नावित विरोध का कथन किया गया है। विशालललाटात्=विशाल ललाट वाली। प्रचण्डबाहुदण्डाम्=प्रबल भुजदण्डो वाली। शोणापाङ्गाम्=रक्तिम नेत्रो वाली, शोणे अपाङ्गे यस्या सा ताम् (ब० व्री०) कम्बुग्रीवाम्=शख तुल्य कठ वाली। 'कम्बु इव ग्रीवा यस्या सा ताम्'। सुनद्धस्नायुम=सुसश्लिष्ट नसो वाली। वर्तुलश्यामश्मश्रु म्=गोल और काली दाढी मूँछो वाली। वर्तुल=गोला, श्मश्रु=दाढी-मूँछ। 'वर्तुल श्याम च श्मश्रु म् यस्या सा ताम् (ब० व्री०)। धारिताकृतिम्=आकृति को धारण करने वाली, 'धारिता आकृति यया सा ताम् (ब० व्री०)। धारित=√'धृ+णिच्+क्त (स्त्रीलिङ्ग-टाप्)'। विग्रहिणीम्= शरीर धारिणी। समासादितसमरस्फूर्तिम्=समर भूमि मे स्फूर्ति प्राप्त करने वाली। समासादित=प्राप्त कर लिया है, 'सम्+आ√षद्+क्त'। समर= युद्ध, स्फूर्ति=फुर्ती। 'समासादिता समरे स्फूर्ति यया ताम् (ब० व्री०)'। दर्शं दर्शम्=देख-देखकर। प्रसादम्=प्रसन्नता को। आसादयन्त=प्राप्त करने वाले, 'आ+√पद्+शतृ (प्रथमा, ब० व०), वयस्या=मित्रगण, वयसिभवा वयस्या 'वयस्+यत्'। कटान्=चटाइयो पर, "उपान्वध्याड्वस" से 'अधिवस्' के योग मे द्वितीया हुई है। अध्यवसन्=बैठे थे, अधि+√वस्+लङ् (झि)।"

नामाद्यतनसमये वक्तव्य श्रोतव्यश्च वृत्तान्त—ऋते दुराचारात् स्वच्छन्दानामुच्छृङ्खलामुच्छिन्नसच्छीलाना म्लेच्छ-हतकानाम्" इति कथयामास । ततश्च तेषामेवमभूदालाप ।

हिन्दी अनुवाद—उसे (गौरसिंह को) देखते ही—"इधर-इधर गौरसिंह ! बैठो, बैठो । बहुत समय बाद दिखे हो, कुशल तो है ? तुम्हारे सहवासी सकुशल तो हैं ? तुम लोग स्वीकृत महाव्रत का निर्वाह तो कर रहे हो ? कोई नया समाचार है ?" इस प्रकार फूलो की वर्षा सी करते हुये, अमृत प्रवाह से सींचते हुए से महाराज शिवाजी के मृदुवचन से समादृत होता हुआ गौरसिंह तीन बार प्रणाम करके, जिस पर मित्रमण्डली बैठी थी, उसी चटाई पर बैठकर, हाथ जोडकर कहा—"भगवन् ! प्रभु के अनुग्रह से हम सभी पूर्णरूप से कुशल हैं और हमारे स्वीकृत महाव्रत मे किसी प्रकार का विघ्न न हो, यही भगवान् भूतनाथ (शङ्कर) से प्रार्थना किया करते हैं । आजकल नया अथवा पुराना वृत्तान्त क्या कथनीय अथवा श्रवणीय हो सकता है-केवल स्वच्छन्द, उच्छृङ्खल, शील और सदाचार से रहित दुष्ट म्लेच्छो के दुराचार के अतिरिक्त ।" उसके बाद मे उनमे इस प्रकार वार्तालाप हुआ ।

संस्कृत-व्याख्या—तम्=गौरसिंहम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, एव, इत इते, गौरसिंह=अत्रागच्छ गौरसिंह, उपविश-उपविश=तिष्ठ-तिष्ठ, चिराय =चिरकालात्, दृष्टोऽसि=अवलोकितोऽसि, अपि कुशल कलयसि ?=किमसि कुशली ? अपि कुशलिनस्तव सहवासिन=किं ते सहचरा कुशलिन सन्ति, अपि=इति प्रश्ने, अङ्गीकृतमहाव्रतम्=स्वीकृतमहाव्रतम्, निर्वहथ=निर्वाहम् कुरुथ, यूयम्=भवन्त ? अपि कश्चिन्नूतनोवृत्तान्त=किमस्ति कश्चिदभिनव-प्रवृत्ति ? इति=एतत्, कुसमानीव=पुष्पाणीव, वर्षता=वृष्टि कुर्वता, पीयूष-प्रवाहेणेव=अमृतप्रवाहेणेव, सिञ्चता=सरसी कुर्वता, मृदुना=कोमलेन, वचनजातेन=गिरोद्भवेन, तत्रभवता=माननी येन, शिववीरेण=राज्ञा, आद्रियमाण=समादृतवन्त आपृच्छ्यमानश्च-पृष्ट सन्, त्रि=वारत्रयम्, प्रणम्य=प्रणाम कृत्वा, अन्तरङ्गमण्डलीजुष्टकटे=स्वजनवृन्दमध्युषितकटे, समुप-विश्य=स्थितोभूत्वा, करौ=हस्तौ, सम्पुटीकृत्य=एकीकृत्य, भगवन्=श्रीमन्, —सर्वम्, कुशलम्=अनामयम्, प्रभूणाम्=स्वामिनाम्, अनुग्रहेण=

कृपया, अस्माकम् = आश्रमवासिनाम्, अखिलानाम् = सर्वेषाम्, अङ्गीकृतमहाव्रते = स्वीकृतमहाव्रते, च पदम् = स्थानम्, मास्म धात = मा स्मभूत, कश्चन् = कोऽपि, अन्तराय = विघ्न, इत्येव = एतदेव, सदा = सर्वदा, प्रार्थ्यते = अभिलष्यते, भगवान् भूतनाथ = भगवान् शङ्कर । नूतन = अभिनव, प्रत्नश्च = पुरातनश्च, को नाम, अद्यतनसमये = सम्प्रति, वक्तव्य = वक्तु योग्य, श्रोतव्यश्च = श्रोतु योग्यश्च, वृत्तान्त = वार्ता, ऋते = विना, दुराचारात् = दुराचारात्, स्वच्छन्दानाम् = स्वतन्त्राणाम्, उच्छृङ्खलानाम् = उद्दण्डानाम्, उच्छिन्नसच्छीलानाम् = सदाचार विरहितानाम्, म्लेच्छहतकानाम् = दुष्टयवनानाम्, इति = एवम्, कथयामास = अकथयत् । ततश्च = तदनन्तरम्, तेषाम् = गौरसिंहशिववीरादीनाम्, एवम् = इत्थम्, आलाप = वार्तालाप अभूत् = अभवत् ।

हिन्दी-व्याख्या—कलयसि = अनुभव करते हो, '√कल + लट् (सिप्)' । अपि = क्या, प्रश्न वाचक है । कुशलिन = कुशलपूर्वक, 'कुशल + इन्' । सहवासिन = साथ मे रहने वाले । अङ्गीकृतमहाव्रतम् = स्वीकार किये हुए महाव्रत को । निर्वहथ = निर्वाह कर रहे हो, 'निर् + √वह + लट् (थ)' । वृत्तान्त = समाचार, 'वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्त' (अमरकोष) । वर्षता = वर्षा करते हुए, '√वृषु + शतृ (तृतीया ए० व०)' । पीयूषप्रवाहेण = अमृत प्रवाह से, 'पीयूषस्य प्रवाहस्तेन' (तत्पु०) । इव = उत्प्रेक्षावाचक । सिञ्चता = सीचते हुए । मृदुनावचनजातेन = मृदु वचनो से । आद्रियमाण = समादृत होता हुआ, 'आ + √दृङ् + शानच्' । आपृच्छ्यमान = पूछा गया (गौरसिंह का विशेषण), 'आ + √पृच्छ् + शानच्' । त्रि = तीन बार । अन्तरङ्गमण्डलीजुष्टकटे = अन्तरङ्गमण्डली के द्वारा सेवित चटाई पर । अन्तरङ्गमण्डली = आत्मीय जनो की मण्डली, जुष्ट = सेवित, "√जुषी (प्रीति सेवनयो) + क्त," कट = चटाई । 'अन्तरङ्गाणा मण्डल्या जुष्ट कटस्तस्मिन् (तत्पु०) । समुपविश्य = बैठकर, 'सम् + उप + विश + ल्यप् ।' सम्पुटीकृत्य = सम्पुटित करके (जोडकर), मास्मघात् = न आवे, 'डुधाञ् लुङ्' 'मा' के योग से अट् नही हुआ । अन्तराय = विघ्न । प्रार्थ्यते = प्रार्थना की जाती है । भूतनाथ = शङ्कर । प्रत्न = पुरातन "पुराणेप्रतनप्रत्नपुरातनचिरन्तना ।" (अमरकोष) । अद्यतनसमये = आजकल ।

वक्तव्य = कहने योग्य '√वच् + तव्यत्' । श्रोतव्य = सुनने योग्य, 'श्रु + तव्यत्' । ऋते दुराचारात् = दुराचार के अतिरिक्त । स्वच्छन्दानाम् - स्वच्छन्द, उच्छृङ्खलानाम् = उच्छृङ्खल, और--उच्छिन्नसच्छीलानाम् = शील और सदाचार से विरहित (म्लेच्छहतक' का विशेषण है), उच्छिन्न = नष्ट हो गया है, सत् = सदाचार, शील = दया भाव । 'उच्छिन्नम् सत् शीलश्च येषा तेषाम् । म्लेच्छ-हतकानाम् = दुष्ट यवनो के । कथयामास = कहा । आलाप = वार्तालाप ।

टिप्पणी—'कुसुमानि इव वर्षता' फूलो की वर्षा सी करते हुए तथा 'पीयूष प्रवाहेणेव सिञ्चता' अमृत प्रवाह से सीचते हुए के समान ? यहाँ पर फेलो की वर्षा और अमृत से सीचने की सम्भावना की गई है, अत उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

शिववीर —अथ कथ्यता को वृत्तान्त ? का च व्यवस्था अस्मन्म-हाव्रताश्रम-परम्पराया ?

गौरसिंह —भगवन् सर्व सुसिद्धम्, प्रतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृत-सनातन-धर्म-रक्षा-महाव्रताना धारित-मुनि-वेषाणा वीरवराणामाश्रमा सन्ति । प्रत्याश्रमश्च वलीकेषु गोपयित्वा स्थापिता परश्शता खड्गा, पटलेषु तिरोभाविता शक्तय, कुशपुञ्जान्त स्थापिता भुशुण्डयश्च समुल्ल-सन्ति । उञ्छस्य, शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्गुदी-पर्य्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्र परिमार्गणस्य, कुसुमावचयनस्य, तीर्थाटनस्य, सत्सङ्गस्य च व्याजेन, केचन जटिला, परे मुण्डिन, इतरे काषायिण, अन्ये मौनिन, अपरे ब्रह्मचारिश्च इह पटवो बटवश्चरा सञ्चरन्ति । विजयपुरादुड्डीयात्राऽऽगच्छन्त्या मक्षिकाया अत्यन्त स्थित वय विद्म, किं नाम एषा यवनहतकानाम् ?

हिन्दी अनुवाद—शिववीर—तो बताइये, (आश्रमवासियो का) क्या वृत्तान्त है ? और हमारे महाव्रतधारी आश्रमपरम्परा की क्या व्यवस्था है ? गौरसिंह—भगवन् ! सब ठीक है । प्रत्येक दो कोस के बीच सनातन धर्म की रक्षा के महा व्रत को धारण करने वाले मुनि वेषधारी शूर वीरो के आश्रम हैं । प्रत्येक आश्रमो के वलीको (छज्जा) मे छिपा कर रखी गई सैकडो तलवारें, छप्परो मे छिपाई हुई शक्तियाँ और कुशो की ढेरो के बीच मे रखी हुई बन्दूकें विद्यमान हैं ।

खेतो मे गिरे हुए अन्न को इकटठा करने, बालियाँ बिनने, समिधा लाने, इङ्गुदी खोजने, भोजपत्र ढूँढने, तीर्थाटन करने, फूल चुनने और सत्सङ्ग के बहाने से कोई जय धारण किये, कोई शिर मुडाये हुए, अन्य लोग गेरुआ वस्त्र धारण किए हुए, और अन्य लोग ब्रह्मचारी के वेष मे अनेको चतुर गुप्तचर बालक घूम रहे है। विजयपुर से यहाँ तक उडकर आने वाली मक्खी तक की आन्तरिक बातो को हम लोग जान लेते है, इन दुष्ट यवनो की तो बात ही क्या है ?

सस्कृत-व्याख्या—शिववीर —अथ = अनन्तरम्, कथ्यताम् = कथयतु, को वृत्तान्त = का वार्ता (अस्ति) ? अस्मन्महाश्रमपरम्पराया = अस्मन्महान्तयो वनसञ्चलानस्य, काव्यवस्था = क स्वरूप ?

गौरसिंह —भगवान् = महाशय ! सर्वम् = निखिलम्, सुसिद्धम् = सुव्यवस्थितम्, प्रतिगव्यूतिम् = प्रतिक्रोसद्वयम्, अन्तराले = मध्ये, अङ्गीकृत = स्वीकृत, सवातनधर्मस्य = हिन्दुधर्मस्य, रक्षाया = रक्षणस्य, महाव्रत = महान् नियम यैस्तेपाम्, धारितमुनिवेपाणाम् = मुनिवेषधारिणाम्, वीरवराणाम् = सुभटानाम्, आश्रमा = स्थानानि, सन्ति। प्रत्याश्रमन् = प्रत्येक तपोवनम्, वलीकपु, गोपयित्वा = सगोप्य, स्थापित = निक्षिप्ता, परश्शता = शताधिका, खड्गा = कृपाणा, पटलेपु = छादनेपु = तिरोभाविता = अन्तर्हिता, शक्तय = शस्त्र विशेपा, कुशपुञ्जान्त स्थापिता = दर्भपटलेपु निहिता, भुशुण्ड्यश्च = अन्यास्त्रविशेपा, समुल्लसन्ति = विराजन्ते। उञ्छस्य = पतितकणग्रहणस्य, शिलस्य = कणिशाना ग्रहणस्य समिदाहरणस्य = समिदानयनस्य, इङ्गुदीपर्य्यन्वेपणस्य = णिण्याक मार्गणस्य, भूर्जपत्र मार्गणस्य = भुर्जपत्रान्वेषणस्य, कुसुमावचयनस्य = पुष्प ग्रहणस्य, तीर्थाटनस्य = तीथभ्रमणस्य, सत्सङ्गस्य = सज्जनसभागमस्य, च व्याजेन = छलेन, केचन् = केचन वटव, जटिला = जटाधारिण, परे = अन्ये, मुण्डिन = मुण्डितशिरा, इतरे = अन्ये, कापायिण = कपायवस्त्रधारिण, अन्ये = केचन, मौनिन = मौनव्रतधारि साधुवेपा, अपर = अन्ये, ब्रह्मचारिण = ब्रह्मचारिवेपधारिण, च, पटव = दक्षा वटव = ब्रह्मचारि बालका, सञ्चरन्ति भ्रमन्ति। विजयपुरात् = तन्नग ात, उड्डीय = उत्पत्य, अत्र, आगच्छन्त्या = आयान्त्या, मक्षिकाया अपि = क्षुद्र जीवानामपि, अन्त स्थितम् = आन्तरिकम, (विपयम्) वयम् = महाव्रतधारिण, विद्म = जानीम, कि नाम् काकथा, एपा = एतेपाम् यवनकृतकानाम् = दुष्ट म्लेच्छानाम् ?

हिन्दी-व्याख्या—कथ्यताम् = कहिए। अस्मन्महाव्रताश्रमपरम्परया = हमारे महाव्रत के आश्रमो के परम्परा की। सुसिद्धम् = ठीक है, 'सु + √षिध + क्त'। प्रतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृतसनातनधर्मरक्षामहाव्रतानाम् = प्रत्येक दो कोस के मध्य मे सनातन धर्म की रक्षा के व्रत को स्वीकार करने वाले (वीरो का विशेषण), प्रति = प्रत्येक, गव्यूति = दो कोस, अन्तराल = मध्य, अङ्गीकृत = स्वीकृत। प्रतिगव्यूतीनाम् = अन्तराले अङ्गीकृत सनातनधर्मस्य रक्षाया महाव्रत यैस्ते, तेषाम् (ब० व्री०)। धारितमुनिवेषाणाम् = मुनिवेष को धारण करने वाले, 'धारित मुने वेष यैस्ते, तेषाम्' (ब० व्री०)। वीरवराणाम् = श्रेष्ठ वीरो का। गोपयित्वा = छिपाकर '√गुप् + णिच् + क्त्वा'। वलीकेषु = छज्जो मे। परश्शता = सौ से अधिक। पटलेषु = छप्परो मे। तिरोभाविता = छिपाई हुई। शक्तय = शक्तियाँ (शस्त्र विशेष)। कुशपुञ्जस्थापिता = कुशो की ढेरो मे रखी हुई। भुशुण्ड्य = बन्दूके, समुल्लसन्ति = विद्यमान हैं 'सम् + उत् + √लस + लट् (झि)' उञ्छस्य = उञ्छवृति के, खेतो मे गिरे हुए दानो को, जो कृषि स्वामी द्वारा त्याग दिये जाते हैं, सञ्चित करने को 'उञ्छ' कहते है। आश्रमवासियो की जीवनयापन की एक प्रकार की वृत्ति हे। दानो की बालियो को सञ्चित करने को शिल कहते है। "उञ्छ कणश आदानम् कणिकाशद्यर्जनम् शिलम्" (अमरकोष)। शिलस्य = बालियो के बिनने के। इङ्गुदीपर्यन्वेषणस्य = इङ्गुदीफल (हिंगोट के बीज) के ढूँढने के। भूर्जपत्रपरिमार्गणस्य = भोजपत्र के ढूँढने के, भूर्जपत्राणाम् परिमार्गणम् तस्य (तत्पु०)। कुसुमावचयनस्य = फूलो को चुनने के, कुसुमानाम् अवचमनम् तस्य (तत्पु०)। व्याजेन = बहाने से, जटिला = जटाधारी 'जटा + इलच्'। मुण्डिन = शिर मुडे, काषायिण = गेरुआ वस्त्रधारी। मौनिन = मौनी साधू। चरा = गुप्तचर। उड्डीय = उडकर। आगच्छन्त्या = आने वाली। मक्षिकाया = मक्खी का, अन्त स्थितम् = आन्तरिक बात को। विद्म = जान लेते है।

शिववीर—साधु साधु, कथ न स्यादेवम् ? भारतवर्षीया यूयम्, तत्रापि महोच्चकुलजाता, अस्ति चेद भारत वर्षम्, भवति च स्वाभाविक एवानुराग सर्वस्यापि स्वदेशे, पवित्रतमश्च यौष्माकीण सनातनो धर्म तमेते जाल्मा समूलमुच्छिन्दन्ति अस्ति च "प्राणा यान्तु, न च धर्म"

इत्यार्याणा दृढ सिद्धान्त । महान्तो हि धर्मस्य कृते लुण्ठ्यन्ते, पात्यन्ते, हन्यन्ते, न धर्मं त्यजन्ति, किन्तु धर्मस्य रक्षायै सर्वसुखान्यपि त्यक्त्वा, निशीथेष्वपि, वर्षास्वपि, ग्रीष्म-घर्मेष्वपि, महारण्येष्वपि, कन्दरिकन्दरेष्वपि व्यालवृन्देष्वपि, सिंह-सङ्घेस्वपि, वारण-वारेष्वपि, चन्द्रहास-चमत्कारेष्वपि च निर्भया विचरन्ति। तद् धन्या स्थ यूय वस्तुत आर्यं वशीया. वस्तुतश्च भारतवर्षीया ।

हिन्दी अनुवाद—शिवाजी—बहुत अच्छा, ऐसा क्यो न हो ? तुम लोग भारतीय हो, उसमे भी उच्च कुल मे पैदा हुए हो, यह भारतवर्ष है, अपने देश के प्रति सभी का स्वाभाविक ही अनुराग होता है, आप का सनातन धर्म सबसे पवित्र है, उसको ये जालिम जड से उखाड रहे हैं और "प्राण चले जायें किन्तु धर्म न जाय" यह आर्यो का दृढ सिद्धान्त है। महापुरुष धर्म के लिये लुट जाते हैं, मार दिये जाते हैं, धर्म नहीं छोडते हैं किन्तु धर्म की रक्षा के लिये सभी सुख को भी छोडकर, अर्द्धरात्रि मे भी, वर्षा मे भी, ग्रीष्म की धूप मे भी, महान् जगलो मे भी, पर्वतो की गुफाओ मे भी, सूर्यसमूह मे भी, सिंह के झुण्डो मे भी हाथियो के झुण्डो मे भी और तलवारो की चमत्कृति मे भी निर्भय विचरण करते है। इसलिये तुम लोग धन्य हो और वस्तुत आर्यवशीय तथा भारतवर्षीय हो।

सस्कृत-व्याख्या—साधु साधु = अतिशोभनम्, कथ न स्यादेवम् = एवम् कथ न भवे ? भारतवर्षीया = भारतीया, यूयम् = भवन्त, तत्रापि = तस्मिन्नपि, महोच्चकुलजाता = कुलीना, इदम् = एतद्, च भारतवर्षम् = देशविशेष, अस्ति, सर्वस्यापि = नि शेषस्य जनस्य, स्वदेशे = स्वदेश प्रति, स्वाभाविक = प्राकृतिक, एव अनुराग = स्नेह, भवति, पवित्रतमश्च = अतिशयपूतश्च, यौष्माकीण = यौष्माक, सनातन धर्म = हिन्दुधर्म, तम् = हिन्दुधर्मम्, एते = इमे, जाल्मा = मूर्खा, समूलम् = मूलेन सहितम्, उच्छिन्दति = उखाड रहे हैं, प्राणा = असव, यान्तु = गच्छन्तु, न च, धर्म = स्वकीय सनातनोधर्म, इति = एतत्, आर्याणाम् = आर्याभिधायिनाम्, दृढ = स्थिर, सिद्धान्त = सकल्प, अस्ति। महान्त = महापुरुषा, धर्मस्यकृते = धर्मार्थम्, लुण्ठ्यन्ते =

वस्त्रों से प्राप्त पत्र को बाहर निकाल सभी लोग विजयपुर के नरेश की मुहर (जो पत्र पर लगी हुई थी) को देखकर "यह क्या है ? यह कहाँ से (प्राप्त हुआ) ? यह कैसे (प्राप्त हुआ) ? यह किससे (मिला) ?" इसे जानने की इच्छा से (अत्यधिक) उत्कण्ठित हो उठे । गौरसिंह, उस पत्र की प्राप्ति का वृत्तान्त सुनने की शिववीर की भी इच्छा जानकर सक्षेप मे सारा वृत्तान्त कह डाला । उसके बाद—"दिखाओ खोलो, पढो, कहो, यह क्या है ?" शिववीर के इतना पूंछने पर गौरसिंह बोला ।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तदनन्तरम्, कथ्यताम् = कथयतु, कोऽपि = कश्चित्, विशेप = नूतन., अवगत = विपय ज्ञात, वा = अथवा, अफजलखानस्य विपये = विजयपुराधीशसेनापते विषये ? गौरसिंह—"अवगत = ज्ञात, तत्पत्रम = अफजलखानस्य पत्रम्, एव, दर्शयामि = अवलोकयामि,"—इति = एवम्, व्याहृत्य = उक्त्वा, उष्णीषसन्धौ = शिरोवेष्टनमध्ये, स्थापितम् = निक्षिप्तम्, कन्यापहारकयवनयुवकमृतशरीरवस्त्रान्त = कन्यापहारकस्य = बालिकाचोरस्य, यवनयुवकस्य = म्लेच्छ युवकस्य, मृतस्य = गतासो शरीरस्य = देहस्य, वस्त्रान्त = वसनान्तराले, प्राप्तम् = लब्धम् पत्रम्, बहिश्चकार = बहिष्कृतवान् ।

सर्वे च = सर्वे च जना, विजयपुराधीशमुद्राम् = विजयपुरनरेशराजचिह्नम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, "किमेतत् = किमिदम्, कुत एतत् = कुत्रत्य इदम्, कथमेतद् एतत् कथ प्राप्तम्, कस्मादे, तत् = एतत् पत्रम् कस्मात् प्राप्तम् ?" इति = एवम्, जिज्ञासमाना = ज्ञातुमिच्छन्त, सोत्कण्ठा = उत्कण्ठिता, वितस्थिरे = स्थिता । गौरसिहस्तु = एतन्नामक वटु, शिववीरस्य = महाराष्ट्रेश्वरस्य, अपि, तत्प्राप्तिचरितशुश्रूषाम् = पत्रप्राप्तिवृत्तान्तश्रवणेच्छाम्, अवगत्य = ज्ञात्वा, सक्षिप्य = सक्षेप कृत्वा, सर्वम् = निखिलम्, वृत्तान्तम् = वार्ताम्, अवोचत् = कथयामास । ततस्तु = तदनन्तरम्, "दर्श्यताम् = अवलोकय, प्रसार्यताम् = प्रसारय, पठ्यताम् = पठतु, कथ्यताम् = उच्यताम्, किमिदम् = किमेतत् ?" इति = एवम्, पृच्छति = उक्तवति, शिववीरे = तन्नाम्नि राज्ञे, गौरसिंह = वटु, व्याजहार = उक्तवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—कथ्यताम् = कहिए । विशेष = नया । अवगत = ज्ञात

हुआ। दर्शयामि = दिखाता हूँ। व्याहृत्य = कहकर, 'वि + आ + √हृ + ल्यप्'। उष्णीषसन्धौ = पगडी के अन्दर, उष्णीष = पगडी, सन्धि = मध्य। 'उष्णीषस्य सन्धौ (तत्पु०)'। स्थापितम् = रखे हुये। कन्यापहारकयवनयुवकमृतशरीरवस्त्रान्त = बालिका चुराने वाले यवन युवक के मृतशरीर के वस्त्र के अन्दर से। अपहारक = अपहरण करने वाला, "अप + हृ + ण्वुल् (अक)"। "कन्याया अपहारक य यवनयुवकस्तस्यमृतम् शरीरम् तस्य वस्त्रस्य अन्त (तत्पु०)"। बहिश्चकार = बाहर किया, "बहि. + √कृ + लिट (तिप्)।" विजयपुराधीशमुद्राम् = विजयपुर के राजा की मुहर को, "विजयपुरस्य अधीशस्तस्य मुद्राम् (तत्पु०)। जिज्ञासमाना = जानने की इच्छा वाले, "√ज्ञा + सन् + शानच् (प्रथमा ब० व०)'। सोत्कण्ठा = उत्कण्ठित हुए, "उत्कण्ठया-सहिता इति सोत्कण्ठा।" वितस्थिरे = स्थित हो गये। 'वि + स्था + लिट् (झ), आत्मनेपद-"समवप्रविभ्य स्थ"। त प्राप्ति चरित शुश्रूषाम् = पत्रप्राप्ति के वृत्तान्त को सुनने की इच्छा को। "तस्य प्राप्ते चरितस्य शुश्रूषाम् (तत्पु०)।" अवगत्य - जानकर, 'अव + गम् + ल्यप्।' सक्षिप्य = सक्षिप्त करके। अवोचत् = कहा। दर्श्यताम् = दिखाइये। प्रसार्यताम् = फैलाइये, "प्र + √सृ + लोट्।" पृच्छति = पूछने पर, '√प्रच्छ + शतृ (सप्तमी ए० व०)। व्याजहार = कहा, 'वि + आ + हृ + लिट् (तिप्)।"

भगवन्! सर्पाकारैरक्षरै पारस्य-भाषाया लिखित पत्रमेतदस्ति। एतस्य साराशोऽयमस्ति-विजयपुराधीश स्वप्रेषितमपजलखान सेनापति सम्बोध्यलिखति यत्-"वीरवर! महाराष्ट्र-राजेन सह योद्धु प्रस्थितोऽसीति मा सम्भूत्कश्चानान्तरायस्तव विजये। शिव युद्धे जेष्यसि चेत्, पद्भ्या सिह जितवान् सीति मस्ये, किन्तु सिहहननापेक्षया जीवत सिहस्य वशीकार एवाधिक प्रशस्य। तद यदि छलेन जीव त शिवमानये तद् वीरपुङ्गवोपाधि-दान सहकारेण तव महती पदवृद्धि कुर्य्याम्। गोपीनाथपण्डितोऽपि मया तव निकटे प्रस्थापितोऽस्ति, स मम तात्पर्य विशदीकृत्य तव निकटे कथयिष्यति। प्रयोजनवशेन शिवमपि साक्षात्करिष्यति" इति।

हिन्दी अनुवाद—भगवन्! यह पत्र सर्पाकार अक्षरो से फारसी भाषा मे

लिखा गया है। इसका आशय यह है कि विजयपुर नरेश अपने द्वारा भेजे गये सेनापति अफजल खाँ को सम्बोधित करके लिखता है कि—"वीरवर महाराष्ट्र के राजा के साथ युद्ध करने के लिये प्रस्थान किये हो, अत तुम्हारी विजय मे किसी प्रकार का विघ्न न हो। यदि शिववीर को युद्ध मे जीत लिया तो पैदल ही सिंह को जीत लिया, ऐसा मानूंगा, किन्तु सिंह को मारने की अपेक्षा जीवित सिंह को वश मे कर लेना अधिक प्रशसनीय होता है। यदि छल से जीवित ही शिव को (पकड) लाओ तो वीर पुङ्गव की उपाधि देने के साथ तुम्हारी बहुत बडी पदवृद्धि भी कर दूंगा। गोपीनाथ पण्डित भी मेरे द्वारा तुम्हारे समीप भेज दिये गये हैं, वे मेरे तात्पर्य (अभिप्राय) को विस्तार से तुम से कहेगे और प्रयोजनवश शिवाजी से भी मिलेंगे।

सस्कृत-व्याख्या—भगवन्! श्रीमन्, सर्पाकारै =वक्रै, अक्षरै =वर्णै, पारस्यभाषायाम् =यवनलिप्याम्, लिखितम् =अक्षरायितम्, एतत् =इदम्, पत्रम्, अस्ति। एतस्य =अस्य, साराश =भाव, अयमस्ति—विजयपुराधीश विजय-पुरनरेश, स्वप्रेषितम् =विजयपुराधीशप्रेषितम्, अफजलखानम् =एतन्नामकम्, सेनापतिम् =च भूपतिम्, सम्बोध्य =अभिमुखीकृत्य, लिखति =सन्दिशति, यत्, —"वीरवर! =सुभट!, महाराष्ट्रराजेन =शिववीरेण, सह =समम्, योद्धुम् =युद्ध कर्त्तुम्, प्रस्थितोऽसि =प्रस्थान कृतोऽसि, इति, मास्म भूत =न भवेत्, कश्चन् =कोऽपि, अन्तराय =विघ्न, तव =भवत, विजये =विजयप्राप्तौ। युद्धे =सग्रामे, शिवम् =महाराष्ट्राधीश्वरम्, जेष्यसि =विजयिष्यसे, चेत् =यदि, पदभ्याम् =चरणाभ्याम्-पदात्या वा, सिंहम् =केसरिणम्, जितवान् =विजय कृतवान्, असि, इति, मस्ये =ज्ञास्ते, किन्तु सिंहहननापेक्षया =केसरिमाणापेक्षया, जीवत =श्वसत, सिंहस्य =केसरिण, वशीकार =वशीकरणम्, एव, अधिकम् =विशेषत, प्रशस्य =प्रशसनीय। तद् =तस्मात्, यदि =चेन्, छलेन =छद्मना, जीवनाम् =प्राणवन्तम्, शिवम् =शिववीरम्, आनये =समानये, तद् =तर्हि, वीरपुङ्गवोपाधिदानसहकारेण ='वीरपुङ्गव' नामकोपाधि प्रदानेन सह, तव =भवत, महतीम् =अतिशयाम्, पदवृद्धिम् =पदोन्नतिम्, कुर्य्याम् =करिष्यामि। गोपीनाथपण्डिते =एतन्नामक पण्डित, अपि, मया =विजयपुराधीशेन, तव =अफजलखनस्य, निकटे =पार्श्वे, प्रस्थापित =प्रेपित, अस्ति, स =गोपीनाथ,

मम = विजय पुराधीशस्य, तात्पर्यम् = अभिप्रायम्, विशदीकृत्य = स्पष्टीकृत्य, तव = भवत, निकटे = समीपे, कथयिष्यति = वदिष्यति । प्रयोजनवशेन = सोद्देश्यम्, शिवम् = शिववीरम्, अपि, साक्षात्करिष्यति = मिलिष्यति" इति = एवम् (पत्रेलिखितमासीत्) ।

हिन्दी-व्याख्या—सर्पाकारै = टेढे-मेढे, 'सर्पस्य आकार इव आकार येपाम् तै (ब० व्री०)' । अक्षरै = अक्षरो से । पारस्यभाषायाम् = फारसी भाषा मे, 'पारस्यानाम् भाषा तस्याम् (तत्पु०)' । स्वप्रेषितम् = अपने द्वारा भेजे हुए । सम्बोध्य = सम्बोधित करके, 'सम् + √बुध् + ल्यप् ।' महाराष्ट्रराजेन = महाराष्ट्र के राजा शिववीर के । योद्धुम् = युद्ध करने के लिये, '√युध् + तुमुन्' । प्रस्थितोऽसि = प्रस्थान किये हो । मास्मभूत = न हो '√भू + लुङ् (तिप्)' मा के योग मे अट् का अभाव । कश्चन् = कोई । अन्तराय = विघ्न । जेष्यसि = जीत लोगे, '√जि (जये) + लृट् (सिप्)' । पद्भ्याम् = पैरो से अर्थात् पैदल । जितवान् असि = जीत लिये हो । मस्ये = मानूँगा, "√मन् + लृट् (इड्) ।" सिंहहननापेक्षया = सिंह को मारने की अपेक्षा । 'सिंहस्य हननम्, तस्य अपेक्षया ।" जीवत = जीवित सिंहस्य का विशेपण) । '√जीव + शतृ (षष्ठी ए० व०) । वशीकार = वश मे करना । प्रशस्य = प्रशसनीय, 'प्र + √शस् + यत्' । जीवन्तम् = जीवित । आनये = लाते हो, 'आ + नी + लिङ् (सिप्)' । वीरपुङ्गवोपाधिदानसहकारेण = 'वीरपुङ्गव' की उपाधि देने के साथ ही । 'वीरपुङ्गवस्य उपाधे दानम् तस्य सहकारस्तेन (तत्पु०) । प्रस्थापित: अस्ति = भेजे गये है । तात्पर्यम् = अभिप्राय को । विशदीकृत्य = विस्तृत करके, विशद से 'च्वि' प्रत्यय । प्रयोजनवशेन = प्रयोजन के कारण । साक्षात्करिष्यति = साक्षात्कार करेंगे अथवा मिलेगे ।

टिप्पणी—(१) 'शिव युद्धे जेष्यसि चेत् पद्भ्या सिंह जितवानसि' इस स्थल मे निदर्शनालकार है ।

(२) 'वीरपुङ्गव' एक प्रकार की राज्यप्रदत्त वीरता की उपाधि है ।

इत्याकर्णयत एव शिववीरस्य अरुणकौशेय-जाल-निबद्धौ मीनाविव नयने सजाते, मुखश्च बाल-भास्कर-बिम्ब विडम्बना-माललम्बे, अधरञ्च धीरताधुरामधरीकृतवान् ।

अथ स दक्षिण-कर-पल्लवेन श्मश्रु परामृशन्नाकाशे दृष्टिं बद्ध्वा अरे रे विजयपुर-कलङ्क ! स्वयमेव जीवन् शिव तव राजधानीमाक्रम्य, वीरपुङ्गवोपाधिसहकारेण तव महती पदवृद्धिमङ्गीकरिष्यति, तर्तिक प्रेपयसि मृत्यो क्रीडनकानेतान् कदर्य्य-हतकान् ?—इति साम्रेडमवोचत्। अपृच्छच्च "ज्ञायते वा कश्चिद् वृत्तान्तो गोपीनाथपण्डितस्य ?"

हिन्दी अनुवाद—इतना सुनते ही शिववीर की आँखें लाल रेशमी जाल मे फसी मछली की तरह हो गईं, मुख प्रात कालीन सूर्य बिम्ब के समान (लाल) हो गया और अधर (निम्नोष्ठ) ने धीरता को छोड़ दिया (अर्थात् फड़कने लगा)।

उसके बाद शिववीर पल्लव सदृश दाहिने हाँथ से मूंछो का स्पर्श करते हुए, आकाश को ओर देखते हुए—"अरे रे विजयापुर के कुलङ्क ! स्वय जीवित शिववीर ही तुम्हारी राजधानी पर आक्रमण करके वीरपुङ्गव की उपाधि के साथ तुम्हारी (दी हुई) महती पदवृद्धि को अङ्गीकार करेगा, तो क्यो मृत्यु के खिलौने इन दुष्ट कायरो को भेजते हो ?" इसे कई बार कहा। और पूंछा कि "क्या गोपीनाथ पण्डित का कोई समाचार मिला।"

संस्कृत-व्याख्या—इति = एतद्, आकर्णयत = शृण्वत, एव शिववीर अरुण-कौशेयजाल निबद्धौ = लोहितकौशेयानायगृही तौ, मीनौ = मत्स्यौ, इव नयने = नेत्रे, सजाते = बभूवतु, मुखञ्च = आस्यञ्च, बालभास्कर बिम्ब विडम्बनाम् = नवोदितसूर्यमण्डलाकृतिम्, आललम्बे = धृतवत्, अधरञ्च = ओष्ठम् च, धीरताधुराम् = धैर्यभारम्, अधरीकृतवान् = त्यक्तवान्।

अथ = तत, स = शिववीर, दक्षिणकरपल्लवेन = वामेतरहस्तपल्लवेन, श्मश्रु, परामृशन् = स्पृशन्, आकाशे = अन्तरिक्षे, दृष्टिम् = नेत्रम्, बद्ध्वा = प्रक्षिप्य, 'अरे रे, विजयपुरकलङ्क = विजयपुर कर्दम, स्वमेव = स्वमेव, जीवन् प्राण धारयन्, शिव = शिववीर, तव = भवत, राजधानीम् = विजयपुरम्, आक्रम्य = आक्रमण कृत्वा, वीरपुङ्गवोपाधिसहकारेण = वीरपुङ्गवेति नाम्नोपाधिना सहैव, तव = भवत, महतीम् = अत्यधिकाम्, पदवृद्धिम् = स्थानोन्नतिम्, अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, तत्किम्-तत् कथम्, प्रेपयसि = प्रस्थापयसि, मृत्यो कालस्य, क्रीडनकान = कन्दुकान्, एतान् = इमान्, कदर्य्यहतकान् =

दुष्टकदर्य्यान् ?" इति=एवम्, साम्रेडम्=अनेकश', अवोचत्=अकथत्। अपृच्छच्च=पप्रच्छ च, ज्ञायते=अवगम्यते, वा, कश्चिद्, वृत्तान्त=वार्ता, गोपीनाथ पण्डितस्य=एतन्नामकस्य पण्डितस्य।"

हिन्दी-व्याख्या—आकर्णयत एव=सुनते ही। अरुणकौशेयजालनिबद्धौ= लाल-लाल रेशमी जाल मे निबद्ध (या फसे हुए)। "अरुणम् कौशेयस्य जालम् तेन निबद्धौ (तत्पु०)।" मीनौ इव=मछली के समान। सजाते=हो गये। बालभास्करबिम्बविडम्बनाम्=नवोदित सूयमण्डल के समान (लाल)। "बाल-श्चासौ भास्करस्तस्य बिम्बम् तस्य विडम्बनाम् (तत्पु०)"। आललम्बे=धारण किये हुए। धीरता धुराम् धीरता के भार को, धीरता=धैर्य, धुरा=भार। 'धीरताया धुराम्।' अधरीकृतवान्=छोड दिया, न धर, धर कृतवान् इति अधरीकृतवान्—'नञ्+अधर+च्वि+√कृ+क्तवतु।' श्मश्रु=मूंछ को। परामृशन्=सस्पर्श करते हुए, "परा+आ+मृश्+शत्"। दृष्टिबद्ध्वा= आँख गडाकर। '√दृश्+क्तिन्' (नेत्र), '√बध+क्त्वा।' जीवन्=जीते हुए। आक्रम्य=आक्रमण करके, "आ+√क्रम+ल्यप्।" अङ्गीकरिष्यति= स्वीकार करेगा। प्रेषयसि=भेज रहे हो। क्रीडनकान=खिलौनो को, 'क्रीड्-यतेऽनेनेति कीडनम् '√क्रीड+घञ्'। क्रीडनमेव क्रीडनकम्, क्रीडन+क= क्रीडनक (द्वितीय ब० व०)। कदर्य्यहतकान्=दुष्ट नीचो को, कदर्य्य=नीच, हृतक=दुष्ट। साम्रेडम्=अनेक बार। अवोचत्=कहा। अपृच्छच्च=और पूंछा। ज्ञायते=जानते हो। वृत्तान्त=समाचार।

टिप्पणी—(१) गौर के वचन सुनकर शिववीर अत्यन्त क्रुद्ध हो गया। आँखें लाल हो गईं और ओंठ फडकने लगा। अपनी मूंछो पर हाथ फेरने लगा इससे यहाँ वीर रस है, क्रोध स्थायी भाव है और मुख विकृति आदि अनुभाव है।

(२) वैदर्भी रीति प्रसाद गुण है।

यावद् गौर्सिंह किमपि विवक्षति तावत्प्रतीहार प्रविश्य 'विजयता महाराज' इति त्रिर्व्याहृत्य, करौ सपुटीकृत्य, शिरो नमयित्वा कथितवान् 'भगवन्! दुर्गद्वारि कश्चन गोपीनाथनामा पण्डित श्रीमन्त दिदृक्षुरुप-तिष्ठते। नाय समय प्रभूणा दर्शनस्य, पुनरागम्यताम्" इति बहुश-

कथ्यमानोऽपि "किञ्चनात्यावश्यककार्यम्" इति प्रतिजानाति। तदत्र प्रभुचरणा एव प्रमाणम्—इति।

हिन्दी अनुवाद—जैसे ही गौरसिंह कुछ कहना चाहता वैसे ही प्रतीहारी प्रवेश करके—"जय हो महाराज की" ऐसा तीन बार कहकर हाँथ जोडकर शिर झुकाकर कहा—"भगवन् ! दुर्ग के द्वार पर कोई गोपीनाथ नामक पण्डित आपके दर्शन की इच्छा से खडे हैं। यह स्वामी के दर्शन का समय नहीं है, पुन आइयेगा" ऐसा बार-बार कहने पर भी कहते है कि "कुछ अत्यावश्यक कार्य है।" अब प्रभु का जैसा आदेश हो।

संस्कृत-व्याख्या—यावत् = यदैव, गौरसिंह = एतन्नामक बटु, किमपि = किञ्चित् विवक्षति = वक्तुमिच्छति, तावत् = तदैव, प्रतिहार = सन्देशहर, प्रविश्य = समागत्य, विजयताम् = जयतु, महाराज = प्रभु, इति = एवम, त्रि = वारत्रयम्, व्याहृत्य = उक्त्वा, करौ = हस्तौ, सपुटीकृत्य = एकीकृत्य, शिं = मूर्धानम्, नमयित्वा = नमन कृत्वा, कथितवान् = उक्तवान्, "भगवन् = श्रीमन्, दुर्गद्वारि = सिंहदुर्गद्वारि, कश्चन् = कोऽपि, गोपीनाथनामा = एतन्नामक, पण्डित, श्रीमन्तम् = भवन्तम्, दिदृक्षु = दर्शनमिच्छु, उपतिष्ठते = प्रतीक्षते। नायम्, समयः = अवसर, प्रभूणाम् = स्वामिना, दर्शनस्य = मिलनस्य, पुन = भूय, आगम्यताम् = आगच्छतु," इति = एवम्, भूयश = अनेकश, कथ्यमान = कथित, अपि "किञ्चन् = किमपि, अत्यावश्यककार्यम् = अनतिक्रमणीयम्-कार्यम्" इति, प्रतिजानाति = दृढतयाकथयति। तदत्र = तदस्मिन्, प्रभुचरणा = स्वामिपादा, एव, प्रमाणम् = प्रमाणत्वेन तिष्ठन्ति-इति।

हिन्दी-व्याख्या—विवक्षति = कहने की इच्छा करता है। "√वच् + सन् + लट् (तिप्)' प्रविश्य = प्रवेश करके, 'प्र + √विश् + ल्यप्'। विजयताम् = जय हो। त्रि = तीन बार, व्याहृत्य = कहकर, "वि + आ + √हृ + ल्यप्।" सपुटीकृत्य = जोडकर। नमयित्वा = झुककर। कथितवान् = कहा, '√कथ + क्तवतु (प्रथमा ए० व०)" दुर्गद्वारि = किले के द्वार पर। दिदृक्षु = देखने की इच्छा वाले, '√दृश् + सन् + उ।' उपतिष्ठते = प्रतीक्षा कर रहे है। 'उप + √स्था + लट् (त)"। बहुश = अनेक बार, 'बहु + शस्।' कथ्यमान अपि = कहे जाने पर भी, "√कथ् + शानच्"। प्रतिजानाति = दृढता से कह रहे हैं। तत्

=तो। अत्र=इस विषय मे। प्रभुच णा =स्वामी, एव=ही प्रमाणम् = प्रमाण है। इस पूरे वाक्य का आशय हुआ कि इस विपय मे जैसा आप आदेश करें वैसा किया जाय।

तदवगत्य "सोऽय गोपीनाथ सोऽय गोपीनाथ" इति साम्रेड सतर्क सोत्साहञ्च व्याहृतवत्सु निखिलेपु, शिववीरेण निजबाल्यप्रियो माल्यश्रीकनामा सबोध्य कथितो यद् "गम्यता दुर्गान्तर एव महावीरमन्दिरे तस्मै वासस्थान दीयताम, भोज्य-पर्यङ्कादि-सुखद-सामग्रीजातेन च सत्क्रियताम्, ततोऽहमपि साक्षात्करिष्यामि"—इति

हिन्दी अनुवाद—यह जानकर, "यह वही गोपीनाथ हैं, यह वही गोपीनाथ हैं" ऐसा सभी लोगो के द्वारा तर्क और उत्साह के साथ बार-बार कहने पर शिववीर ने अपने बाल्यकाल के मित्र माल्यश्रीक को सम्बोधित करके कहा कि "जाओ किले के भीतर ही महावीर मन्दिर मे उन्हे रुकने का स्थान दे दो और पदार्थ तथा पलग आदि सुखद सामग्रियो से उनका सत्कार करो, तब मैं भी उनसे मिलूंगा।

संस्कृत-व्याख्या—तदवगत्य =एतज्ज्ञात्वा, सोऽयम्=पूर्वचर्चितोऽयम्, गोपीनाथ =तन्नामक पण्डित, (पुनरपितदेव), इति=एवम्, साम्रेडम्=बहुश, सतर्कम्=सानुमानुम्, सोत्साहम्=उत्साहपूर्वकम्, च, निखिलेषु=सर्वेषु, व्याहृत्वत्सु=उच्चरत्सु, शिववीरेण=महाराष्ट्रधीश्वेण, निज बाल्यप्रिय = स्वबाल्यमित्रम्, माल्यश्रीकनामा – एतन्नामक, सबोध्य=अभिमुखीकृत्य, कथित =उक्त, यत्, "गम्यताम्=गच्छतु, दुर्गान्तरे=दुर्गमध्ये एव, महावीर मन्दिरे =हनुमन्मन्दिरे, तस्मै=गोपीनाथाय, वासस्थानम् =निवास, दीयताम् = प्रयच्छताम्, भोज्यपर्यङ्कादिसुखसामग्रीजातेन=भोजनशयनादि—सुखदवस्तुप्रदानेन, च सत्क्रियताम्=समाद्रियताम्, तत तदनन्तरम्, अहमपि=शिववीरोऽपि, साक्षात्करिष्यामि=द्रक्ष्यामि" इति।

हिन्दी-व्याख्या—तत्-अवगत्य=वह जानकर, "अव+$\sqrt{}$गम्+ल्यप्"। साम्रेडम्=अनेक वार। सतर्कम्=तर्क या अनुमान पूर्वक। सोत्साहम् = उत्साहपूर्वक। व्याहृतवत्सु=कहने पर, "वि+आ+$\sqrt{}$हृ+क्तवतु (सप्तमी ब० व०)। निखिलेषु=सभी के। निजबाल्यप्रिय =अपने बचपन के मित्र,

"निजस्य वाल्यः प्रिय इति निज वाल्यप्रिय ।' बालेभव 'बाल+यत्' (बचपन का)। सम्बोध्य=सम्बोधित करके। कथित =कहा। गम्यताम्=जाओ। दुर्गान्तरे=किले के अन्दर। तस्मै=गोपीनाथ को। दीयताम्=दीजिये। भोज्यपर्यङ्कादिसुखदसामग्रीजातेन=भोजन, पलग आदि सुखद सामग्रियो के द्वारा, "भोज्य पर्याङ्कादयश्च या सुखद सामग्र्यस्ताभ्योजातस्तेन"। भोज्य=भोजन करने योग्य, '√भुज्+यत् (योग्य अर्थ मे)'। पयङ्क=पलग। सत्क्रियताम्=सत्कार करिये। तत.=बाद मे। साक्षात्करिष्यामि=मिलूँगा।

ततो बाढमित्युक्त्वा प्रयाते माल्यश्रीके, "महाराज! आज्ञा चेदहमद्यैव अपजलखान कथमपि साक्षात्कृत्य, तस्याखिल व्यवसित विज्ञाय प्रभुचरणेषु विनिवेदयामि, नाधुना मम क्षान्ति शान्तिश्च, यत सन्यासिवेषोऽह समागच्छन् द्वयोर्यवनभटयोर्वार्तयाऽवागमम्, यत श्व एवैते युयुत्सन्ते" इति गौरसिहो मन्द कर्णान्तिक व्याहार्षीत्।

ततो "वीर! कुशलोऽसि, सर्वं करिष्यसि, जाने तव चातुरीम्, तद् यथेच्छ गच्छ, नाह व्याहन्मि तवोत्साहम्, नीतिमार्गान् वेत्सि, किन्तु परिपन्थिन एते अत्यन्तनिर्दया, अतिकदर्य्या., अतिकूटनीतयश्च सन्ति। एतैः सह परम-सावधानतया व्यवहरणीयम्"—इति कथयित्वा शिववीरस्त विससर्ज।

हिन्दी अनुवाद—तब "ठीक है" ऐसा कहकर माल्यश्रीक के चले जाने पर "महाराज यदि आज्ञा हो तो आज ही किसी प्रकार अफजलखान से मिलकर उसके सम्पूर्ण कार्यक्रम को जानकर आप से निवेदन करूँ, इस समय मुझमे शान्ति या सहिष्णुता नहीं रह गई है क्योंकि सन्यासीवेष मे आते हुए मुझे दो यवन योद्धाओ से यह ज्ञात हुआ कि कल ही ये लोग (यवन सैनिक) युद्ध करना चाहते हैं" ऐसा गौरसिंह ने कान के पास धीरे से कहा। तब, "वीर! तुम कुशल हो, सब कुछ करोगे, तुम्हारी चतुरता को जानता हू, अत तुम अपनी इच्छानुसार जाओ, मैं तुम्हारे उत्साह को नहीं मारना चाहता, तुम नीति मार्गों को जानते हो, किन्तु ये शत्रु अत्यन्त निर्दय नीच तथा कूटनीति वाले हैं। इन सबके साथ अत्यन्त सावधानी से व्यवहार करना चाहिए" ऐसा कहकर शिववीर ने गौरसिंह को बिदा कर दिया।

संस्कृत-व्याख्या—तत =तदनन्तम् वाढम् =युक्तम्, इति =एवम्, उक्त्वा =कथितत्वा, माल्यश्रीके =शिववीर मित्रे, प्रयाते =गते ="महाराज =भगवन् ! आज्ञा =आदेश, चेत् =यदि, अहम् =गौरसिंह, अद्यैव, अफजलखानम् =विजयपुराधीश्वरसेनापतिम्, कथमपि =केनापि प्रकारेण, साक्षात्कृत्य =मिलित्वा, तस्य =अफजलखानस्य, अखिलम् =सर्वम्, व्यवसितम् =चेष्टितम्, विज्ञाय ज्ञात्वा, प्रभुचरणेषु =स्वामिपादेषु, विनिवेदयामि =कथयामि, न, अधुना =सम्प्रति, मम =गौरसिंहस्य, शान्ति =सहनशक्ति, शान्तिश्च =साम च, यत =यस्मात्, सन्यासिवेष =परिव्राजकवेष, अहम् =गौरसिंह, समागच्छन् =आगच्छन्, द्वयो, यवनभटयो =म्लेच्छ सैनिकयो, वार्तया =आलापेन, अवागमम् अवेदिषम्, यत्, श्वएव =आगामिने दिवस एव, ऐते =यवना युयुतसन्ते =युद्ध कर्त्तुमिच्छन्ति' इति =एवम् गौरसिंह =पूर्वोक्त गौरबटु, मन्दम् =अतिमन्दस्वरेण, कर्णान्तिकम् =कर्णयो समीपे, व्याहार्षीत् =अवदत्। तत =तत्पश्चात्, वीर =सुभट ! कुशलोऽसि =अतिदक्षोऽसि, सर्वं करिष्यसि =सर्वंकर्त्तु शक्योऽसि, जाने =वेद्मि, तव गौरसिंहस्य, चातुरीम् =चतुरताम्, तद् =तस्मात्, यथेच्छम् =इच्छानुसारम्, गच्छ =याहि, न अहम् =शिववीर, तव =भवत, उत्साहम् =मनोभावम्, व्याहन्मि =नाशयामि, नीतिमार्गान् =नीतितत्वान्, वेत्सि =जानासि, किन्तु, परिपन्थिन =शत्रव, एते =इमे, अत्यन्त निर्दया =क्रूरा, अविकदर्य्या =परम नीचा, अति-अतिकूटनीतय =कपटा चारचतुरा च सन्ति। एतै सह =भवनै सह, परमसावधानतया =अतिसूक्ष्मतया, व्यवहरणीयम् =व्यवहार 'करणीयम्," इति =एतद्, कथयित्वा =उक्त्वा, शिववीर, तम् =गौरसिंहम्, विससर्ज =प्रेषयामास।

हिन्दी-व्याख्या—बाढम् =ठीक है (अव्यय)। इति उक्त्वा =ऐसा कहकर। प्रयाते =चले जाने पर, "प्र + √या + क्त (सप्तमी ए० व०)" चेत् =यदि। साक्षात्कृत्य =साक्षात्कार करके। व्यवसितम =इच्छाओ (इरादो) को 'वि + अव + षिञ् + क्त'। विज्ञाय =जानकर, "वि + ज्ञा + ल्यप्"। प्रभुचरणेषु =स्वामी के चरणो मे। विनिवेदयामि =निवेदन करूँगा, "वर्तमाने सामीप्ये लट्" से लट् लकार का प्रयोग हुआ है। क्षान्ति =क्षमा या सहिष्णुता। सन्यासीवेष =सन्यासी वेष धारण किये हुये। समागच्छत =आता हुआ, "सम् + आ +

"निजस्य बाल्य. प्रिय इति निज बाल्यप्रिय ।' बालेभव 'बाल + यत्' (बचपन का)। सम्बोध्य = सम्बोधित करके। कथित = कहा। गम्यताम् = जाओ। दुर्गान्तरे = किले के अन्दर। तस्मै = गोपीनाथ को। दीयताम् = दीजिये। भोज्यपर्यङ्कादिसुखदसामग्रीजातेन = भोजन, पलग आदि सुखद सामग्रियो के द्वारा, "भोज्य पर्याङ्कादयश्च या सुखद सामग्र्यस्ताभ्योजातस्तेन"। भोज्य = भोजन करने योग्य, '√भुज् + यत् (योग्य अर्थ मे)'। पयङ्क = पलग। सत्क्रियताम् = सत्कार करिये। तत. = बाद मे। साक्षात्करिष्यामि = मिलूँगा।

ततो बाढमित्युक्त्वा प्रयाते माल्यश्रीके, "महाराज ! आज्ञा चेदहमद्यैव अपजलखान कथमपि साक्षात्कृत्य, तस्याखिल व्यवसित विज्ञाय प्रभुचरणेषु विनिवेदयामि, नाधुना मम क्षान्ति शान्तिश्च, यत सन्यासिवेषोऽह समागच्छन् द्वयोर्यवनभटयोर्वार्तयाऽवागमम्, यत श्व एवैते युयुत्सन्ते" इति गौरसिहो मन्द कर्णान्तिक व्याहार्षीत्।

ततो "वीर ! कुशलोऽसि, सर्वं करिष्यसि, जाने तव चातुरीम्, तद् यथेच्छ गच्छ, नाह व्याहन्मि तवोत्साहम्, नीतिमार्गान् वेत्सि, किन्तु परिपन्थिन एते अत्यन्तनिर्दया, अतिकदर्य्या., अतिकूटनीतयश्च सन्ति। एतैः सह परम-सावधानतया व्यवहरणीयम्"—इति कथयित्वा शिववीरस्त विससर्ज।

हिन्दी अनुवाद—तब "ठीक है" ऐसा कहकर माल्यश्रीक के चले जाने पर "महाराज यदि आज्ञा हो तो आज ही किसी प्रकार अफजलखान से मिलकर उसके सम्पूर्ण कार्यक्रम को जानकर आप से निवेदन करूँ, इस समय मुझमे शान्ति या सहिष्णुता नहीं रह गई है क्योकि सन्यासीवेष मे आते हुए मुझे दो यवन योद्धाओ से यह ज्ञात हुआ कि कल ही ये लोग (यवन सैनिक) युद्ध करना चाहते हैं" ऐसा गौरसिंह ने कान के पास धोरे से कहा। तब, "वीर ! तुम कुशल हो, सब कुछ करोगे, तुम्हारी चतुरता को जानता हूँ, अत तुम अपनी इच्छानुसार जाओ, मैं तुम्हारे उत्साह को नहीं मारना चाहता, तुम नीति मार्गो को जानते हो, किन्तु ये शत्रु अत्यन्त निर्दय नीच तथा कूटनीति वाले हैं। इन सबके साथ अत्यन्त सावधानी से व्यवहार करना चाहिए" ऐसा कहकर शिववीर ने गौरसिंह को बिदा कर दिया।

सस्कृत-व्याख्या—तत =तदनन्तम् वाढम्=युक्तम्, इति=एवम्, उक्त्वा =कथितत्वा, माल्यश्रीके=शिववीर मिश्रे, प्रयाते=गते ="महाराज=भगवन्! आज्ञा=आदेश, चेत्=यदि, अहम्=गौरसिंह, अद्यैव, अफजलखानम्= विजयपुराधीश्वरसेनापतिम्, कथमपि=केनापि प्रकारेण, साक्षात्कृत्य=मिलित्वा, तस्य=अफजलखानस्य, अखिलम्=सर्वम्, व्यवसितम्=चेष्टितम्, विज्ञाय ज्ञात्वा, प्रभुचरणेपु=स्वामिपादेपु, विनिवेदयामि=कथयामि, न, अधुना= सम्प्रति, मम=गौरसिंहस्य, शान्ति =सहनशक्ति, शान्तिश्च=साम च, यत = यस्मात्, सन्यासिवेष =परिव्राजकवेप, अहम्=गौरसिंह, समागच्छन्=आगच्छन्, द्वयो, यवनभटयो =म्लेच्छ सैनिकयो, वार्तया=आलापेन, अवागमम् अवेदिषम्, यत्, श्वएव=आगामिने दिवस एव, ऐते=यवना युयुतसन्ते=युद्ध कर्त्तुमिच्छन्ति' इति=एवम् गौरसिंह =पूर्वोक्त गौरबटु, मन्दम्=अतिमन्दस्वरेण, कर्णान्तिकम्=कर्णयो समीपे, व्याहाषीत्=अवदत्। तत =तत्पश्चात्, वीर=सुभट! कुशलोऽसि=अतिदक्षोऽसि, सर्वं करिष्यसि=सर्वंकर्त्तु शक्योऽसि, जाने=वेद्मि, तव गौरसिंहस्य, चातुरीम्=चतुरताम्, तद्=तस्मात्, यथेच्छम्=इच्छानुसारम्, गच्छ=याहि, न अहम्=शिववीर, तव=भवत, उत्साहम्=मनोभावम्, व्याहन्मि=नाशयामि, नीतिमार्गान्=नीतितत्वान्, वेत्सि=जानासि, किन्तु, परिपन्थिन -शत्रव, एते=इमे, अत्यन्त निर्दया = क्रूरा, अविकदर्य्या =परम नीचा, अति-प्रतिकूटनीतय =कपटा चारचतुरा च सन्ति। एतै सह=भवनै सह, परमसावधानतया=अतिसूक्ष्मतया, व्यवहरणीयम्=व्यवहार 'करणीयम्," इति=एतद्, कथयित्वा=उक्त्वा, शिववीर, तम्=गौरसिंहम्, विससर्ज=प्रेषयामास।

हिन्दी-व्याख्या—वाढम्=ठीक है (अव्यय)। इति उक्त्वा=ऐसा कहकर। प्रयाते=चले जाने पर, "प्र+√या+क्त (सप्तमी ए० व०)" चेत्=यदि। साक्षात्कृत्य=साक्षात्कार करके। व्यवसितम=इच्छाओ (इरादो) को 'वि+अव+पिञ्+क्त'। विज्ञाय=जानकर, "वि+ज्ञा+ल्यप्"। प्रभुचरणेषु= स्वामी के चरणो मे। विनिवेदयामि=निवेदन करूँगा, "वर्तमाने सामीप्ये लट्" से लट् लकार का प्रयोग हुआ है। क्षान्ति =क्षमा या सहिष्णुता। सन्यासीवेष =सन्यासी वेप धारण किये हुये। समागच्छत=आता हुआ, "सम्+आ+

√गम् + शतृ ।" यवनभटयो = मुसलमान योद्धाओ की । वार्तया = बातचीत से । आवागमम् = ज्ञात हुआ । श्व = काल । युयुत्सन्ते = युद्ध करना चाहते हैं, "√युध् + सन् + लट् (झ)," । कर्णान्तिकम् = कानो के पास, "कर्णयो अन्तिकम् इति, कर्णान्तिकम्" । व्याहार्षीत् = कहा, "वि + आ + √हृ + लुङ्" । चातुरीम् = चतुरता को । यथेच्छम् = इच्छानुसार, "इच्छामनुसृत्य इति यथेच्छम् (अव्य०) । व्याहन्मि = नष्ट करूँगा, "वि + आ + √हन् + लट् (मिप्) ।" वेत्सि = जानते हो । परिपन्थिन = शत्रु । अतिकदर्य्या = अत्यन्त नीच "कदर्येकृपण क्षुद्र " (अमरकोप) । अतिक्रूरनीतय = कपटाचरण मे अत्यन्त चतुर । कूट = छल, "मायानिश्चलयन्त्रेपु कैतवानृतराशिपु । अयोवने शैलशृङ्गे सीराङ्गे कूटमस्त्रियाम्" (अमरकोष) । परमसावधानतया = अत्यन्त सावधानी से । व्यवहरणीयम् = व्यवहार करना चाहिए, "वि + अव + √हृ + अनीयर" । विससर्ज = विदा कर दिया, "वि + √सृज + लिट् (तिप्) ।

गौरसिंहस्तु त्रि प्रणम्य, उत्थाय, निवृत्य, निर्गत्य, अवतीर्य सपदि तस्या एव निम्ब-तरु-तल-वेदिकाया समीप आगत्य, स्वसहचर कुमारमिङ्गितेनाऽऽहूय कस्मिंश्चित् स्वसकेतित-भवने प्रविश्य, आत्मन कुमारस्यापि च केशान प्रमाधनिकया प्रसाध्य, मुखमार्द्रपटेन प्रोञ्छ्य, ललाटे सिन्दूर-बिन्दु-तिलक विरचय्य, उष्णीषमपहाय, शिरसि सूचिस्यूता सौवर्ण-कुसुम-लतादि-चित्र-विचित्रतामुष्णीपिका सधार्य, शरीरे हरितकौशेय-कञ्चुकिकामायोज्य, पादयो शोण-पट्ट-निर्मितमधोवसनमाकलय्य, दिल्लीनिर्मिते महार्हे उपानहौ धारयित्वा, लघीयसी तानपूरिकामेका सह नेतु सहचर हस्ते समर्प्य, गुप्तच्छुरिका दन्तावलदन्त-मुष्टिका यष्टिका मुष्टौ गृहीत्वा, पट-वासैर्दिगन्त दन्तुरयन, करस्थपटखण्डेन च मुहुर्मुहुरानन प्रोञ्छन् वायकवेषेण अफजलखान-शिविराभिमुख प्रतस्थे ।

हिन्दी अनुवाद—गौरसिंह तीन वार प्रणाम कर, उठकर घूमकर निकल कर, (नीचे) उतरकर तुरन्त उसी नीम के पेड के नीचे के चबूतरे के पास आकर अपने सहचर बालक को सकेत से बुलाकर किसी पहले से निश्चित भवन मे प्रवेश करके अपने और कुमार के भी बालो को कघी से सवार कर मुख को गीले

कपडे से पोछकर मस्तक पर सिन्दूर-बिन्दु का तिलक लगा कर, पगडी को अलग करके, शिर पर सुई से सिले सोने के पुष्प लतादि चित्रो से चित्रित टोपी लगा कर, शरीर मे हरा रेशमी कुर्त्ता पहनकर, पांवो मे लाल रेशमी वस्त्र से निर्मित अधोवस्त्र (पायजामा) तथा दिल्ली से निर्मित बहुमूल्य जूते धारण कर, एक छोटे से तानपूरे को साथ ले चलने के लिये सहचर (बालक) के हांथ मे देकर गुप्त छूरी वाली तथा हाथी दांत के मूंठ वाली छडी (गुप्ती) को मुटठी मे लेकर कपडे मे लगी सुगन्ध से दिशाओ को सुगन्धित करते हुए, हांथ मे लिये हुए रूमाल से बार-बार मुख को पोछते हुए गायकवेष से अफजलखान के शिविर की ओर प्रस्थान कर दिया ।

सस्कृत-व्याख्या—गौरसिंह =तत्बटु, वि =बारत्रयम्, प्रणम्य=नमस्कृत्य, उत्थाय=आसन परित्यज्य, निवृत्य=परावृत्य, निर्गत्य=नि सृत्य, अवतीर्य= प्रमादाध आगत्य, सपदि=तत्क्षणमेव, तस्या एव=पूर्वोक्ताया एव, निम्बतरुतल वेदिका‌या =निम्बवृक्षाधो निर्मितचत्वरस्य, एव, समीपे=पार्श्वे, आगत्य= समेत्य, स्वसरचरम्=एव सतीर्थ्यम्, कुमारम्=बालकम्, इङ्गितेन=सङ्केतेन, आहूय=आमन्त्र्य, कस्मिश्चित्, स्वसकेतित भवने=पूर्वनिश्चितभवने, प्रविश्य =प्रवेश कृत्वा, आत्मन =स्वस्य, कुमारस्यापि=बालकस्यापि, च, केशान्= कुन्तलान्, प्रसाधनिकया=कङ्कतिकया, प्रसाध्य=प्रसाधन कृत्वा, मुखम्= आस्यम्, आर्द्रपटेन=जलसिक्तवस्त्रेण, प्रोञ्छ्य=परिमृज्य, ललाटे=मस्तके, सिन्दूराबिन्दुतिलकम्=सिन्दूरबिन्दुचिह्नम्, विरचय्य= रचयित्वा, उष्णीषम्= शिरोवेष्टनम्, अपहाय=परित्यज्य, शिरसि=मूर्ध्नि, सूचिस्यूताम्=सूचिग्रथिताम्, सौवर्णकुसुमलतादि चित्रविचित्रिताम्=सुवर्णविरचित पुष्पलादिचित्रसवलिताम्, उष्णीषिकाम्=लघूष्णीषम् (टोपिकामित्यर्थ), सधार्य= धारयित्वा, शरीरे=देहे=हरितकौशेयकञ्चुकिकाम्=हरिद्वर्ण क्षौमवासोनिर्मितामूर्ध्वपरिधानम्, आयोज्य=समायोज्य, पादयो =चरणयी, शोणपट्टनिर्मितम्=रक्तकौशेयरचितम्, अधोवसनम्=अधोवस्त्रम्, आकयय्य= दिल्लीनिर्मिते=दिल्लीप्रदेशविरचिते, महार्हे=बहुमूल्ये, उपानहौ=चरचसेविके, धारयित्वा=सधार्य्य, लघीयसीम्=अतिह्रस्वाम्, तानपूरिकाम्= वाद्यविशेपम्, एकाम्=केवलाम्, सह=सार्धम्, नेनु=गृहीतुम्, सहचरहस्ते

=बालकदाणो, समर्प्य=अर्पयित्वा, गुप्तच्छुरिकाम्=अन्तर्हितछुरिका दन्तावलदन्तमुष्टिकाम् -गजदन्तमुष्टिकाम्, यष्टिकाम्=लघुदण्डिकाम्, मुष्टौ=करतले, गृहीत्वा=नीत्वा, पटवासै =वस्त्रसुगन्धितद्रव्यै, दन्तुरयन्=उन्नतय करस्थपटखण्डेन=हस्तस्थवस्त्रखण्डेन च, मुहुर्मुहु =भूयोभूय, आननम्=मुख पोञ्छन्=परिमार्जन कुर्वन्, गायकवेषेण, अफजलखानशिविराभिमुखम्=अफ जलखानवासस्थानम्, प्रतस्थे=प्रस्थितवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—त्रि प्रणम्य=तीन बार प्रणाम करके । निवृत्य=लौट कर । निर्गत्य=निकलकर, 'निर्+√गम्+ल्यप्' । अवतीर्य=उतरकर 'अव+√तृ+ल्यप' । सपदि=तुरन्त । निम्बतरुतलवेदिकाया=नीम के वृक्ष के नीचे के चबूतरे के, "निम्बस्य तरो तले या वेदिकातस्या (तत्पु०)" । स्वसहचरम्=अपने साथी को । इङ्गितेन=सकेत से । आहूय=बुलाकर । स्वसकेतित भवने=पूर्वनिश्चित भवन मे । प्रविश्य=प्रवेश करके । आत्मन=अपने । केशान्=बालो को । प्रसाधनिकया=कघी से, "प्रसाधनी कङ्कतिका" (अमरकोष) । प्रसाध्य=सवारकर, "प्र+√साधि+ल्यप" । आर्द्रपटेन=गीले वस्त्र से । प्रोञ्छ्य=पोछकर, "प्र+√उछि+ल्यप्" । सिन्दूरबिन्दुतिलकम्=सिन्दूर की बिन्दी का तिलक । विरचय्य=बनाकर, "वि+√रच्+ल्यप । उष्णीषम्=पगडी को । अपहाय=उतार कर, 'अप+ओहाक् (त्यागे)+ल्यप्' । सूचिस्यूताम् =सुई से सिली हुई । सौवर्णकुसुमलतादिचित्रविचित्रिताम्=सोने के बने हुए पुष्पलता आदि चित्रो से चित्रित । "सौवर्णेन कुसुमलतादीना चित्रेण विचित्रिताम् (तत्पु०)" । उष्णीषिकाम्=टोपी को । सधार्य=धारण करके । 'सम+√धृञ्+ल्यप्' । हरितकौशेयकञ्चुकिकाम्=हरे रेशमी वस्त्र के अगरखे को, "हरितेन कौशेयेननिर्मिता या कञ्चुकिका ताम् (तत्पु०)" । आयोज्य=पहनकर, 'आ+√युज्+ल्यप । शोणपट्टनिर्मितम् =लाल कपडे के बने हुए, "शोणपट्टेननिर्मितम् (तत्पु०)" । अधोवसनम्=पायेजामे को । 'अधोवसन' कटिभाग से नीचे पहने जाने वाले वस्त्र को कहते हैं, अत धोती या पायजामा कोई भी वस्त्र हो सकता है । 'अधोमार्गेण (चरणेन) धारणीयम् वसनम्' ऐसी व्युत्पत्ति करने पर पायजामा आदि तत्कालीत परिवेश के आधार पर अर्थ लगाया जाता है । आकलय्य=ग्रहण

करके, "आ + √कल + ल्यप्" । महार्हे = बहुमूल्य । उपानहौ = जूते को । धारयित्वा = धारण करके । लघीयसीम् = छोटे से, "अतिशयेन लघु इति लघीयसी लघु + ईयसुन्" । तानपूरिकाम् = तान पूरे को । सह = साथ मे 'आत्मना' का आक्षेप करके उसी के साथ 'सह' का अन्वय किया जाता है—"आत्मना सह' । तानपूरिका के साथ 'सह' का विशेष्य विशेषण भाव नही है । इसीलिये तृतीया की आशका नही करनी चाहिये । नेतुम् = ले चलने के लिये । समर्प्य = देकर । गुप्तछुरिकाम् = जिसके अन्दर छुरी छिपी थी, "गुप्ता छुरिका यस्याम् सा (ब० व्री०) । दन्तावलदन्तमुष्टिकाम् = हाँथी दाँत की बनी हुई मूँठ वाली, दन्तावलस्य दन्तेन निर्मिता मुष्टिका यस्या ताम्' । दन्तावल = हाँथी, मुष्टिका = मूँठ (हाँथ से पकडने का भाग) । यष्टिकाम् = छडी को दन्तुरयन् = उन्नत करता हुआ (अर्थात् सुगन्धित करता हुआ) । करस्थपटखण्डेन = हाँथ मे लिये हुये रूमाल से । प्रोञ्छन् = पोछता हुआ, "प्र + उञ्छि + शतृ" । गायकवेषेण = गाने वाले के वेष मे । अफजलखान शिविराभिमुखम् = अफजल-खान के शिविर की ओर, "अफजलखानस्य शिविरस्य अभिमुखम्" । प्रतस्थे = प्रस्थान किया, "प्र + √स्था + लिट् (त)" ।

टिप्पणी—ब्रह्मचारिबटु गौरसिंह मे राजनीतिक चेतना और गुप्तचरता का सुन्दर चित्रण किया गया है ।

अथ तौ त्वरित गच्छन्तौ, सपद्येव परश्शत-श्वेतपट-कुटीरै शारद-मेघ-मण्डलायित दीपमाला-विहित-बहुल-चाकचक्यम अफजलखान-शिविर दूरत एव पश्यन्तौ, यावत्समीपमागच्छतस्तावत् कश्चन कोकनद-च्छवि-वस्त्र-खण्ड-वेष्टित-मूर्द्धा, कटिपर्यन्तसुनद्ध-काकश्यामाङ्गरक्षिक, कर्बुराधो-वसन, शोण-श्मश्रु, विजयपुराधीश-नामाङ्कित-वर्तुल-पित्तल-पट्टिका-परिकलित-वाम-वक्षस्थल स्कन्धे भुशुण्डी निधाय, इतस्ततो गतागत कुर्वन् सावष्टम्भमुर्दूभाषया उवाच—'कोऽय कोऽयम् ?' इति, ततो गौरसिंहेनापि 'गायकोऽह श्रीमन्त दिदृक्षे' इति समादेव व्याख्यायि । ततो 'गम्यतामन्येऽपि गायका वादकाश्च सम्प्रत्येव गता सन्ति' इति कथयति प्रहरिणि, 'घृतेन स्नातु भवद्रसना' इति व्याहरन् शिविर-मण्डल प्रविवेश ।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद जल्दी-जल्दी जाते हुए वे दोनो (गौरसिंह और उसके सहचर) सैकडो सफेद खेमो से शरत्कालीन मेघ-मण्डल के समान लगने वाले तथा दीपमालाओ से जगमगाने वाले अफजल खाँ के शिविर को दूर से ही देखते हुए शीघ्र ही जब उसके पास पहुचे, तभी लाल कमल की छवि वाले वस्त्र खण्ड से शिर को लिपटे हुए, कटिभाग पर्यन्त लटकने वाले कौए के समान काले रङ्ग का अङ्गरखा पहने हुए, चितकबरे रङ्ग का अधोवस्त्र (लुङ्गी) पहने हुए, लाल दाढी-मूंछ वाला, विजयपुर के सुल्तान के नाम से अङ्कित-गोल पीतल की पट्टिका (चपरास) को बाँयें वक्षस्थल पर डाले हुए, बन्दूक को कन्धे पर रखकर इधर-उधर आने जाने वाले (गश्त लगाने वाले) किसी आदमी ने उन्हे (गौरसिंह को) रोककर उर्दू भाषा मे बोला—"यह कौन है, यह कौन है ?" तब गौरसिंह ने भी नम्रता से कहा—मैं गायक हू, श्रीमान् को देखना चाहता हूं। तब—"जाओ, अन्य गायक, वादक भी इसी समय गये हुए हैं।' प्रहरी के ऐसा कहने पर—"तम्हारी जीभ घी से डूबे" ऐसा कहता हुआ गौरसिंह शिविरमण्डल मे प्रवेश कर गया।

सस्कृत-व्याख्या—अथ = तत, तौ = कुमार गौरसिंहश्च, त्वरितम् = शीघ्रम्, गच्छतौ = व्रजन्तौ, समद्य व = तत्क्षणमेव, परश्शतश्वेत पटकुटीरै = शताधिकोपकारिकाभि, शारदमेघमण्डलायितम् = शरत्कालीनमेघमण्डलमिवाचरितम्, दीपमालाविहितबहुलचाकचक्यग् = प्रदीपावलिकृताधिकचाकचक्यम्, अफजलखानशिविरम् = विजयपुराधीशसेनापति निवासस्थानम्, दूरत = दूरेणैव, पश्यन्तौ = अवलोकयन्तौ, यावत् = यदैव, समीपम् = निकटे, आगच्छत = आयात', तावत् = तदैव, कश्चन् = कोऽपि, कोकनदच्छविवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्धा = कोकनदस्य = रक्तकमलस्य, छवि इव = कान्ति इव, छविर्यस्य तेन, वस्त्रखण्डेन = पटशकलेन, वेष्टित = आच्छादित, मूर्धा = शिर, यस्य स, कटिपर्यन्तसुलम्बकाकश्यामाङ्गरक्षिक = कटिपर्यन्ता = मध्यभागपर्यन्ता, सुलम्बा = लम्बिता, काकश्यामा = अतिश्यामला, अङ्गरक्षिका = कञ्चुकिका, यस्य स, कर्बु राधोवसन = विविधवर्णकाधोवस्त्र, शोणश्मश्रु = रक्तवर्णश्मश्रु, विजयपुराधीशस्य = शाइस्ताखानस्य, नामाङ्कितया = नामधेयेन चिह्नितया, वर्तु लया = गोला-, पित्तलपट्टिकया = चानुफरक्रिकया, परिकलितम् = भूपितम्, वाम =

दक्षिणेतरग्, वक्षस्थलम् = कक्ष, यस्य स, स्कन्धे = ग्रसे, भृशुण्डीम् = ग्रग्नेयास्त्रम्, निधाय = निक्षिप्य, इतस्तत, गतागतम् = यातायातम्, कुर्वन् = सम्पादयन्, सावष्टम्भम् = सप्रतिरोधम्, उर्दू भाषया = पारसीकभाषाया, उवाच = ग्रवदत्, कोऽयम् = कोऽस्मायाति ? इति = एवम्, तत = तदनन्तरम्, गौरसिंहेन = पूर्वचर्चितबटुना, अपि, गायक = ग्रहम् = गौरसिंह, "श्रीमन्तम् = ग्रफजलखानम् दिदृक्षे = द्रष्टुमिच्छामि," इति, समार्दवम् = स नम्रम्, व्याख्यायि = ग्रवोचि । तत = तदनन्तरम्, गम्यताम् = गच्छ, अन्येऽपि = ग्रपरेऽपि, गायका = गानकारका, वादका = वादयितार, सम्प्रति = इदानीम्, एव, गता = याता, सन्ति, इति, कथयति = वदति, प्रहरिणि = द्वाररक्षके, "घृतेन स्नातु भवद्रसना सर्पिषा सिञ्चित स्याद भवद्रसना, (लोकोक्तिरियम्)" इति = एवम्, व्याहरन् = कथयन्, शिविरमण्डलम् = पटकुटीरम्, प्रतिवेश = प्रविष्टवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—**त्वरितम्** = शीघ्र ही । **गच्छन्तौ** = जाते हुए "√ गम् + शतृ (प्रथमा, द्वि० व०) । **सपदि एव** = शीघ्र ही । **परश्शतश्वेतपटकुटीरैः** = सैकडो सफेट पटकुटीरो (खेमो) के कारण, परश्शतै श्वेत पटाना कुटीरै ।' पट कुटीर = तम्बू या खेमा । **शारदमेघमण्डलायितम्** = शरद ऋतु के मेघ मण्डल के समान प्रतीत होने वाले, 'शरदिभवम् शारदम्, शारद् मेघ मण्डलमिवाचरति" 'मण्डल + क्यच् + क्त = मण्डलायितम्' । (उपमान के समान ग्राचरण करने मे क्यच् प्रत्यय) । **दीपमालाविहितबहुलचाकचक्यम्** = दीपमालिकाग्रो से ग्रत्यधिक प्रकाशित होने वाले, "दीपमालाभि विहितम् बहुलम् चाकचक्यम् यस्य तत् (ब० व्री०) ।" चाकचक्यम् = जगमगाहट । **दूरत** = दूर से । **पश्यन्तौ** = देखते हुए, "√दृश् (पश्य) + शतृ (द्वि० व०)' । **कश्चन्** = कोई । **कोकनदच्छविवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्धा** = लाल कमल की कान्ति वाले वस्त्रखण्ड से शिर को लपेटे हुए, कोकनद = लाल कमल, वेष्टित = लपेटे हुए । "कोकनदस्य छवि इव छविर्यस्य तेन, वस्त्रखण्डेन वेष्टित मूर्धायस्य स" (ब० व्री०) । **कटिपर्यन्तसुनद्धकाकश्यामाङ्गरक्षिक** = कमर तक लम्बे कौए के समान काले ग्रगरखे वाला । कटिपर्यन्त = कमर तक, सुनद्ध = लटकने वाला, काक = कौग्रा, श्याम = काला, ग्रङ्गरक्षका = ग्रगरखा । "कटिपर्यन्ता सुनद्धा काक इव श्यामा

अङ्गरक्षिका यस्य स (ब० व्री०)।" कबुराधोवसन.=चितकबरा अधोवस्त्र पहने हुए अधोवसन का अर्थ 'लुङ्गी' किया जाता है। शोणश्मश्रु=लाल दाढी मूछो वाला। 'विजयपुराधीश वक्षस्थल'=विजयपुर के सुल्तान के नाम से अङ्कित गोल पीतल की पट्टिका (चपरास) को बाये वक्षस्थल पर लटकाये हुए। वर्तुल=गोल, पित्तलपट्टिका=पीतल की पट्टी (आज कल इसे चपरास भी कहा जाता है, जिसे सरकारी अधिकारियो के चपरासी लटकाये रहते हैं), परिकलित=विभूषित। 'विजयपुराधीशस्य नाम्ना अङ्कितया वर्तुलया पित्तल-पट्टिकया परिकलित वाम वक्षस्थलम् यस्य स (तत्पुरुष गर्भ ब० व्री०)"। गतागतम्=गश्त। सावष्टम्भम्=प्रतिरोधपूर्वक। दिदृक्षे=देखना चाहता हूँ, "√दृश्+सन्+लट् (इड्)।" समार्दवम् नम्रता पूर्वक, "मृदोभवि मार्दवस्तेन सहितम् समार्दवम्।" व्याख्याथि=कहा, "वि+आ+√ख्या+लुड्"। गम्यताम्=जाइये। गायका =गाने वाले। वादका =बजाने वाले। सम्प्रति= इसी समय। गता =गये। कथयति=कहते हुए, "√कथ+शतृ+सप्तमी ए० व०)" प्रहरिणि=प्रहरी (पहरेदार) के, "यस्य भावेन भावलक्षणम्" से सप्तमी विभक्ति। घृतेन स्नातु भवद्रसना=यह एक प्रकार की लोकोक्ति है इसका हिन्दी रूपान्तर है—"तुम्हारे मुह मे घी शक्कर।" व्याहरन्=करता हुआ। प्रविवेश=प्रवेश किया, 'प्र+विश+लिट् (तिप्)।

तत्र च क्वचित् खट्वासु पर्यङ्केषु चोपविष्टान्, सगडगडाशब्द ताम्रक-धूममाकृष्य, मुखात् कालसर्पानिव श्यामल-नि.श्वासानुद्गिरत, स्वहृदय-कालिमानमिव प्रकटयत, स्वपूर्वपुरुषोपार्जित-पुण्यलोकानिव फूत्कारैरा-ग्निसात् कुर्वत, मरणोत्तरमतिदुर्लभ मुखाग्निसयोग जीवन-दशायामे-वाऽऽकलयत. प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान्, क्वचिद् "हरिद्रा, हरिद्रा लशुन लशुनम्, मरिच मरिचम्, चक्र चक्रम्, वितुन्नक वितुन्नकम्, शृङ्गवेर शृङ्गवेरम्, रामठ रामठम्, मत्स्यण्डी मत्स्यण्डी, मत्स्या मत्स्या, कुक्कुटाण्डं, कुक्कुटाण्डम् पपल पललम्" इति कलकलैर्बालाना निद्रा विद्रावयत, समीप-सख्यार्पित-कुतू-कुतुप कर्करी-कण्डोल कट-कटाह-कम्बि कड-म्लान उग्रगन्धीनि मासानि शूलाकुर्वत, नखम्पचा यवागू-स्थालिकासु

प्रसारयत हिंगुगन्धीनि तेमनानि तिन्तिडीरसैर्मिश्रयत, परिपिष्टेषु कलम्बेषु जम्बीर-नीर निश्च्योतयत, मध्ये मध्ये समागच्छतस्ताम्रचूडान् व्यजन-ताडनैः पराकुर्वत, त्रपु-लिप्तेषु ताम्र-भाजनेषु आरनाल परिवेषयत सूदान्, क्वचिद्वक्र प्रसाधितकाकपक्षान्, मद-व्याघूर्णित-शोण-नयनान्, सपारस्परिक कण्ठग्रह पर्य्यटत योवन-चुम्बित-शरीरान्, स्वसौन्दर्य-गर्व-भारेणेव मन्दगतीन्, अनवरताक्षिप्त-कुसुमेषु-बाणैरिव कुसुमैर्भूषितान्, वसनातिरोहिताङ्गच्छटान्, विविध-पटवास-वासितानपि चिरास्नानमहा-मलिन-महोत्कट-स्वेद-पूतिगन्ध-प्रकटीकृतास्पृश्यतान् यवनयुवकान्।

हिन्दी अनुवाद—(यहाँ से अफजल खाँ के शिविर का वर्णन प्रारम्भ होता है) वहाँ (शिविर मे) कहीं खाटों और पलगों पर बैठे हुए गउगड शब्द के साथ तम्बाकू के घुएँ को खींचकर, मुख से काले-सर्पो के समान श्यामल निश्वास को निकालते हुए ऐसे लगते थे कि मानो अपने हृदय की कालिमा को प्रकट रहे हो, मानो अपने पूर्वजो के द्वारा उपार्जित पुण्य लोको को फूत्कारो से (फूंक मारकर) जला रहे हो, मरने के बाद न प्राप्त होने वाले मुखाग्नि सयोग को जीवित दशा मे ही प्राप्त कर ले रहे हो, अधिकार प्राप्त होने के कारण अत्यन्त गर्व से युक्त (यवन युवको को), कहीं पर—"हल्दी-हल्दी, लहसुन-लहसुन, मिर्च-मिर्च, चटनी-चटनी, सौंफ-सौंफ, अदरख-अदरख, हींग-हींग, राब-राब, मछलियो-मछलियो, मुर्गी का अण्डा, माँस-माँस" इस प्रकार के कोलाहलो से बालको की नींद भङ्ग करते हुए, समीप मे ही रखे हुए कुप्पा-कुप्पी, करवा, टोकरी, चटाई, कडाही, कलछुल और साग के डन्ठलो को, उग्रगन्ध वाले मास लोहे की सलाखो मे पिरोकर पकाये जाते हुए, गरम गरम गीले भात थालियो मे फैलाये जाते हुए, हींग की गन्ध से युक्त (व्यञ्जन) कढी मे इमली का रस मिलाते हुए, पिसी हुई चटनी मे नीबू का रस निचोडते हुए, बीच-बीच मे आने वाले मुर्गो को पखो (व्यजन) से मारकर दूर करते हुए तथा कराईदार ताबे के बर्तनो में काजी परोसते हुए रसोइयो को, कहीं पर तिरछे बालो को सवारे हुए, नशे में झूमते हुए लाल नेत्रो वाले, एक दूसरे के गले मे हाँथ डालकर घूमते हुए यौवन से चुम्बित शरीर वाले, मानो अपने सौन्दर्य के गर्व-के भार के कारण मन्दगति

वाले, निरन्तर चलाये जा रहे कामबाण रूपी पुष्पो से, वस्त्रो से अङ्ग की शोभा को तिरोहित न कर सकने वाले, विविध प्रकार की इत्रो से सुगन्धित होते हुए भी, बहुत दिनो से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मलिन और उत्कट गन्ध वाले पसीने की दुर्गन्ध से अपनी अस्पृश्यता वाले यवन युवको को (देखते हुए) ।

संस्कृत-व्याख्या—तत्र = शिविरे, च, क्वचित् = कुत्रापि, खट्वसु, पर्यङ्केषु शयनेषु, च, उपविष्टान् = स्थिताम्, सगडगडाशब्दम् = गडगडेतिशब्देन सह, ताम्रकधूममाकृष्य = तमालधूमयन्त्रनिगृह्य, मुखात् = आननात्, कालसर्पान् = = कृष्णभुजङ्गान्, इव, श्यामल निश्वासान् = कृष्णोच्छ्वासान्, उद्गिरत = वमत, स्वहृदय कालिमान् = निजान्तर्निहितकालुष्यानि, इव, प्रकटयत = प्रकटीकुर्वत, स्वपूर्वपुरुपोपार्जितपुण्यलोकान् = निजपूर्वज सञ्चितस्वर्गादिकान्, इव फूत्कारै = मुखनि सारितवायुभि, अग्निसात् = वह्न्यधीनीभूतान्, कुर्वत, मरणोत्तरम् = मृत्योरनन्तरम् अतिदुर्लभम् = दुष्प्राप्यम्, मुखाग्निसयोगम् = वह्न्यानन सश्लेपणम्, जीवनदशायाम् = जीवितावस्थायाम्, एव, आकलयत = प्राप्नुवत, प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान् = लब्धस्वाम्यबहुलीभूताभिमानान्, क्वचित् = कुत्रापि, "हरिद्रा-हरिद्रा = महारजनम्-महारजनम्, लशुनम्-लशुनम्, मरिचम्-मरिचम्, चुक्रम् चुक्रम् = वृक्षाम्लम्-वृक्षाम्लम्, रामठम्-रामठम् = हिङ्गु-हिङ्गु, वितुन्नकम्-वितुन्नकम् = छत्रा-छत्रा, शृङ्गवरेम्-शृङ्गवेरम् = आर्द्रकम-आर्द्रकम्, मत्स्यण्डी-मत्स्यण्डी = फाणितम्-फाणितम्, मत्स्या -मत्स्या = मीना मीना, कुक्कुटाण्डम् कुक्कुटाण्डम, = ताम्रचूडाण्डम् पललम् पललम् = मास मासम्," इति = एतत्, कलकलै = कोलाहलै, बालानाम् = शिशूनाम् निद्राम्, स्वापम्, विद्रावयत = दूरीकुर्वत, समीपे = निकटे, सस्थापिता = निक्षिप्ता', कुतू = चर्मनिर्मितं तैलाद्याधारपात्रम्, कुतुपा = लघुकुतू, कर्करी = हस्तप्रक्षालनादियोग्यपात्रम्, कण्डोल' = पिट, कट = पिट, कटाह' = शष्कुल्यादिपाकयोग्यपात्रम्, कम्बि = दर्वि, कडम्ब, चैतान्, उग्रगन्धीनि = उत्कटगन्धयुक्तानि, मासानि = पललानि, शूलाकुर्वत = लोहशलाकया सस्कुर्वत, तरवम्पचा = उष्णा, यवागू = तरला, स्थालिकासु = भक्षणपात्रेषु, प्रसारयत = प्रसारण कुर्वत, हिंगु गन्धीनि = रामठगन्धीनि, तेमनानि = व्यञ्जनानि, तितिण्डीरसै = चुक्ररसै', मिश्रयत' संयोजयत, परिपिष्टेषु = वर्तितेषु, कलम्बेषु = वास्तुका-

दिशाकदण्डेषु, जम्बीरनीरम् = निम्बुरसम्, निश्च्योतयत = क्षारयत, मध्ये-मध्ये = अन्तरान्तरा, समागच्छत = समेप्यत, ताम्रचूडान् = कुक्कुटान्, व्यजनताडनै = तालपत्रप्रताडनै, पराकुर्वत = दुरीकुर्वत, त्रपुलिप्तेषु, रागयुक्तेषु ताम्रभाजनेषु = ताम्रपात्रेषु, आरनालम् = काञ्जिकम्, परिवेषयत = स्थापयत, सूदान् = पाचकान्, क्वचिद्, वक्रप्रसारितकाकपक्षान् = वक्रप्रसारित-कुञ्चितकचान्, मदव्याघूर्णितशोणनयनान् = आसवोद्वेजित-रक्तनेत्रान्, सपारस्परिककण्ठग्रहम् = अन्योन्यकण्ठग्रहसहितम्, पर्य्यटत = परिभ्रमत, यौवनचुम्बितशरीरान् = अभिनव वय सम्बद्धदेहान्, स्वसौन्दर्यगर्भभारेणेव = निजलावण्यगवधुरेव, मन्दगतीन् = मन्दगमनान्, अनवरताक्षिप्तकुसुमेषुवाणै = निरन्तर पतित कामशरै, इव, कुसुमै = पुष्पै, भूषितान् = अलकृतान्, वसनातिरोहिताङ्गच्छटान् = वस्त्रानाच्छादिताङ्गशोभान्, विविधपटवासवासितानपि = अनेकविधेत्र सुगन्धितानपि, चिरस्नानेन = अत्यधिक कालतोदेहानिर्णेजनेन, महामलिनस्य = अत्य तमलीमसस्य, महोत्कटस्य = अत्युग्रस्य, स्वेदस्य = धर्मोदकस्य, पूतिगन्धे । = प्रकटीकृता = व्यक्तीकृता, अस्पृश्यता = स्पर्शायोग्यता, यैस्तान्, यवनयुवकान् = म्लेच्छयुवकान्, (ददर्श इति शेष)।

हिन्दी-व्याख्या—खट्वासु = खाटो पर। पर्यङ्केषु = पलङ्गो पर। उपविष्टान् = बैठे हुए। 'उप + √विश + क्त (द्वितीया व० व०)'। सगडगडाशब्दम् = गडगड शब्द के साथ, यह अनुकरणमूलक शब्द है। ताम्रकधूमम् = तम्बाकू के धुँए को, ताम्रक = तम्बाकू। आकृष्य = खीचकर। उद्गिरत = निकालते हुए, "उद् + गिर + शतृ (द्वितीया, ब० व०), स्वहृदयकालिमानम् = अपने हृदय की कालिमा को। प्रकटयत = प्रकट करते हुए। स्वपूर्वपुरुषोपार्जितपुण्यलोकान् = अपने पूर्वजो के द्वारा उपार्जित (स्वर्गादि, पुण्यलोको को, "स्वपूर्वपुरुषै उपार्जिता पुण्यलोकास्तान्।" फूत्कारै = फूँको से। अग्निसात् अग्नियुक्त, "अग्नेस्तुल्यम् इति अग्निसात्—'अग्नि + सात्'। कुर्वत = करते हुए, "√कृ + शतृ + (द्वितीय ब० व०)"। मरणान्तरम् = मरने के बाद। मुखाग्निसयोगम् = मुख और अग्नि के सयोग को। मरने के बाद 'शव' के दाह के लिये पहले मुख मे ही अग्नि डाली जाती है। मुसलमानो के यहाँ मुर्दों को जलाना उनके धर्म के अनुसार निषिद्ध है। अत मुखाग्नि संयोग नहीं होता है।- मानो इसीलिये

वाले, निरन्तर चलाये जा रहे कामबाण रूपी पुष्पो से, वस्त्रो से अङ्ग की शोभा को तिरोहित न कर सकने वाले, विविध प्रकार की इत्रो से सुगन्धित होते हुए भी, बहुत दिनो से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मलिन और उत्कट गन्ध वाले पसीने की दुर्गन्ध से अपनी अस्पृश्यता वाले यवन युवको को (देखते हुए)।

संस्कृत-व्याख्या—तत्र = शिविरे, च, क्वचित् = कुत्रापि, खट्वासु, पर्यङ्केषु शयनेषु, च, उपविष्टान् = स्थिताम्, सगडगडाशब्दम् = गडगडेतिशब्देन सह, ताम्रकधूममाकृष्य = तमालधूमयन्त्रान्निगृह्य, मुखात् = आननात्, कालसर्पान् = = कृष्णभुजङ्गान्, इव, श्यामल नि श्वासान् = कृष्णोच्छ्वासान्, उद्गिरत = वमत, स्वहृदय कालिमान् = निजान्तर्निहितकालुष्यानि, इव, प्रकटयत = प्रकटीकुर्वत, स्वपूर्वपुरुषोपार्जितपुण्यलोकान् = निजपूर्वज सञ्चितस्वर्गादिकान्, इव फूत्कारै = मुखनि सारितवायुभि, अग्निसात् = वह्न्यधीनीभूतान्, कुर्वत, मरणोत्तरम् = मृत्योरनन्तरम् अतिदुर्लभम् = दुष्प्राप्यम्, मुखाग्निसयोगम् = वह्न्यानन सश्लेषणम्, जीवनदशायाम् = जीवितावस्थायाम्, एव, आकलयत = प्राप्नुवत, प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान् = लब्धस्वाम्यबहुलीभूताभिमानान्, क्वचित् = कुत्रापि, "हरिद्रा-हरिद्रा = महारजनम्-महारजनम्, लशुनम्-लशुनम्, मरिचम्-मरिचम्, चुक्रम् चुक्रम् = वृक्षाम्लम्-वृक्षाम्लम्, रामठम्-रामठम् = हिङ्गु-हिङ्गु, वितुन्नकम्-वितुन्नकम् = छत्रा-छत्रा, शृङ्गवेरम्-शृङ्गवेरम् = आर्द्रकम-आर्द्रकम्, मत्स्यण्डी-मत्स्यण्डी = फाणितम्-फाणितम्, मत्स्या -मत्स्या = मीना मीना, कुक्कुटाण्डम् कुक्कुटाण्डम, = ताम्रचूडाण्डम् पललम् पललम् = मास मासम्," इति = एतत्, कलकलै = कोलाहलै, बालानाम् = शिशूनाम् निद्राम्, स्वापम्, विद्रावयत = दूरीकुर्वत, समीपे = निकटे, सस्थापिता = निक्षिप्ता, कुतू = चर्मनिर्मितं तैलाद्याधारपात्रम्, कुतुपा = लघुकुतू, कर्करी = हस्तप्रक्षालनादियोग्यपात्रम्, कण्डोलः = पिट', कट = पिट, कटाह' = शष्कुल्यादिपाकयोग्यपात्रम्, कम्बि = दर्वि, कडम्ब, चैतान्, उग्रगन्धीनि = उत्कटगन्धयुक्तानि, मासानि = पललानि, शूलाकुर्वत = लोहशलाकया सस्कुर्वत, नरवम्पचा = उष्णा, यवागू = तरला, स्थालिकासु = भक्षणपात्रेषु, प्रसारयत = प्रसारण कुर्वत, हिंगु गन्धीनि = रामठगन्धीनि, तेमनानि = व्यञ्जनानि, तितिण्डीरसै = चुक्ररसै, मिश्रयत संयोजयत, परिपिष्टेषु = वर्तितेषु, कलम्बेषु = वास्तुका-

दिशाकदण्डेषु, जम्बीरनीरम् = निम्बुरसम् निश्च्योतयत = क्षारयत, मध्ये-मध्ये = अन्तरान्तरा, समागच्छत = समेय्यत, ताम्रचूडान् = कुक्कुटान्, व्यजनताडनै = तालपत्रप्रताडनै, परा‌कुर्वत = दुरीकुर्वत, त्रपुलिप्तेपु, रागयुक्तेपु ताम्रभाजनेपु = ताम्रपात्रेपु, आरनालम् = काञ्जिकम्, परिवेपयत = स्थापयत, सूदान् = पाचकान्, क्वचिद्, वक्रप्रसाधितकाकपक्षान् = वक्रस्फालित कुञ्चितकचान्, मदव्याघूर्णितशोणनयनान् = आसवोद्वेजित-रक्तनेत्रान्, रपारस्परिककण्ठग्रहम् = अन्योन्यकण्ठग्रहसहितम्, पर्य्यटत = परिभ्रमत, यौवनचुम्बितशरीरान् = अभिनव वय सम्बद्धदेहान्, स्वसौन्दर्यगर्भभारेणेव = निजलावण्यगर्वधुरेव, मन्दगतीन् = मन्दगमनान्, अनवरताक्षिप्तकुसुमेषुबाणै = निरन्तर पतित कामशरै, इव, कुसुमै = पुष्पै, भूपितान् = अलकृतान्, वसनातिरोहिताङ्गच्छटान् = वस्त्रानाच्छादिताङ्गशोभान्, विविधपटवासवासितानपि = अनेकविवेश्र सुगन्धितानपि, चिरस्नानेन = अत्यधिक कालतोदेहानिर्णेजनेन, महामलिनस्य = अत्य तमलीमसस्य, महोत्कटस्य = अत्युग्रस्य, स्वेदस्य = घर्मोदकस्य, पूतिगन्धे । = प्रकटीकृता = व्यक्तीकृता, अस्पृश्यता = स्पर्शायोग्यता, यैस्तान्, यवनयुवकान् = म्लेच्छयुवकान्, (ददर्श इति शेप)।

हिन्दी-व्याख्या—खट्वासु = खाटो पर। पर्यङ्केषु = पलङ्गो पर। उपविष्टान् = बैठे हुए। 'उप + √विश + क्त (द्वितीया ब० व०)'। सगडगडाशब्दम् = गडगड शब्द के साथ, यह अनुकरणमूलक शब्द है। ताम्रकधूमम् = तम्बाकू के धुँए को, ताम्रक = तम्बाकू। आकृष्य = खीचकर। उद्गिरत = निकालते हुए, "उद् + गिर + शतृ (द्वितीया, ब० व०), स्वहृदयकालिमानम् = अपने हृदय की कालिमा को। प्रकटयत = प्रकट करते हुए। स्वपूर्वपुरुषोपार्जितपुण्यलोकान् = अपने पूर्वजो के द्वारा उपार्जित (स्वर्गादि, पुण्यलोको को, "स्वपूर्वपुरुषै उपार्जिता पुण्यलोकास्तान्।" फूत्कारै = फूँको से। अग्निसात् अग्नियुक्त, "अग्नेस्तुल्यम् इति अग्निसात्—'अग्नि + सात्'। कुर्वत = करते हुए, "√कृ + शतृ + (द्वितीय ब० व०)"। मरणान्तरम् = मरने के बाद। मुखाग्निसयोगम् = मुख और अग्नि के सयोग को। मरने के बाद 'शव' के दाह के लिये पहले मुख मे ही अग्नि डाली जाती है। मुसलमानो के यहाँ मुर्दों को जलाना उनके धर्म के अनुसार निषिद्ध है। अत मुखाग्नि संयोग नहीं होता है।- मानो इसीलिये

यवन युवक जीवन दशा मे ही मुख मे अग्नि डाल रहे हो। जीवनदशायाम्= जीवित अवस्था मे। आकलयत =प्राप्त करते हुए, 'आ+√कल+शतृ'। प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान् =अधिकार सम्पन्न होने के कारण अत्यधिक घमण्ड से युक्त। "प्राप्तेन अधिकारेणन कलित अखर्व गर्व यैस्तान् (ब०व्री०)। अखर्व=बहुत अधिक। मरिचम्=मिर्चा। चुक्रम=खटाई। वितुन्नकम्= सौफ। शृङ्गवेरम्=अदरख। रामठम्=हीग। मत्स्यण्डी=राब। मत्स्या= मछलियाँ। कुक्कुटाण्डम्=मुर्गी का अण्डा। पललम्=मांस। विद्रावयत =दूर करते हुए, "वि+√द्रु+णिच्+शतृ (द्वितीया ब० व०)"। 'समीप सस्थापित ·· कडम्बान्='समीप मे ही रखे हुए कुतू (कुप्पा), कुतुप=(कुप्पी), कर्करी (करवा या गडुवा), कण्डोल (टोकरी), कट (चटाई), कटाह (कडाही), कम्बि (करछुल) और कडम्ब (साग के डण्ठल) को। "समीपे सस्थापिता कुतूकुतुप कर्करीकण्डोल कटकटाहकम्बिकडम्बास्तान्", उग्रगन्धीनि=उत्कट गन्ध वाले। शूलाकुर्वत =लोहे की सलाख से पकाये जाते हुए। शूलेन सस्कुर्वत शूला-कुर्वत ='शूल+डाच्+√कृ+शतृ (द्वितीया ब० व०)।' 'शूलात्पाके' से डाच् प्रत्यय। नखम्पचा =गरम-गरम, नखम्पचन्तीति नखम्पचा। यवागू = गीला भात, "यवागूरुष्णिकाधाना विलेपी तरला च सा" (अमरकोष)। हिंगु-गन्धीनि=हीग की गन्ध वाले, 'हिंगुन गन्धो येषु तानि'— 'अल्पाख्यायाम्' से 'गन्ध' के अन्तिम 'अकार' को इकार होता है—'गन्धो गन्धक आमोपेलेशे सम्बन्ध गर्वयो' (अमरकोप)। तेमनानि=व्यञ्जनो (कढी) को। तितिण्डीरसै =इमली के रस से। मिश्रयत =मिलाते हुए। परिपिष्टेषु=पीसी हुई— 'परि+√पिष्+क्त (सप्तमी ब० व०)'। कलम्बेषु=साग के डण्ठिओ मे— "अस्मी शाक हरितक शिग्रुरस्य तु नाडिका। कलम्बश्च कडम्बश्च" (अमर-कोप)। जम्बीरनीरम्=नीबू के रस को। निश्च्योतयत =निचोडते हुए, 'निस् +√च्युतिर्+शतृ (द्वितीया ब० व०)'। व्यजन ताडनै =पङ्खो की मार से। पराकुर्वत =भगाते हुए। त्रपुलिप्तेषु=कलई किये हुये। ताम्रभाजनेषु= ताँवे के वर्तनो मे। आरनालम्=काँजी—"आरनालकसौवीरकुलमापाभिपुतानि च। काञ्जिके ' (अमरकोप)। परिवेषयत =परोसते हुए। सूवान्= रसोइयों को। वक्रप्रसाधितकाकपक्षान्=तिरछे वालों को सँवारे हुए, "वक्रम्

यथा स्यात्तथा प्रसाधिता काकपक्षा यैस्तान् (व० व्री०)" । मदव्याघूर्णितशोण-नयनान् = नशे से झूमते लाल नेत्रो वाले, "मदेन व्याघूर्णितानि शोणाणि नयनानि येपा तान् (व० व्री०)" । व्याघूर्णित = झूमते हुए—"वि + आ + √घूर्ण + क्त ।' शोण = लाल । सपारस्परिककण्ठग्रहम् = एक दूसरे के गले मे हाँथ डाले हुए, "पारस्परिकेण कण्ठग्रहेण सहित यथा स्यात् तथा ।" पर्यटत = पर्यटन करते हुए, 'परि + √अट् + शतृ (द्वितीया व० व०)' । यौवनचुम्बित शरीरान् = जवान शरीर वाले, "यौवनेन चुम्बितानि शरीराणि येपा तान्" । स्वसौन्दर्यगर्वभारेण = अपने सौन्दर्य के घमण्ड के भार से, "स्वस्य सौन्दर्यस्य गर्वस्य भारेण (तत्पु०)" । अनवरताक्षिप्त कुसुमेषु बाणं = निरन्तर चलाये जा रहे काम-शरो से (कुसुम ' का विशेपण) । 'अनवरतम् आक्षिप्ता कुसुमेषु बाणा येपु तान्' (व० व्री०) । कुसुमेपुबाणा = कामशर । वसनातिरोहिता-ङ्गच्छटान् = वस्त्रो से न ढकी हुई अङ्गो की छटा वाले । "वसनै अतिरोहिता अङ्गच्छटा येपा तान् (ब० व्री०)" । विविधपटवासवासितान् = अनेक प्रकार की इत्रो से सुगन्धित, पटवास = इत्र । 'विविधै पटवासै वासिता तास्तान् (तत्पु०) । चिरस्नान् अस्पृश्यतान् = बहुत दिनो से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मैले और उत्कट गन्ध वाली पसीने की दुर्गन्ध से (अपनी) अस्पृश्यता को प्रकट करते हुए । चिर = देर से, अस्नान = स्नान न किये हुए, महामलिन = अधिक मैले, पूतिगन्ध = दुर्गन्ध, प्रकटीकृत = प्रकट किया है, अस्पृश्यता = अछूतपन । "चिरेण अस्नोनेन महामलिनस्य महोत्कटस्य स्वेदस्य पूतिगन्धेन प्रकटीकृता अपृश्यता यैस्तान (व० व्री०) ।'

टिप्पणी—(१) 'मुखात् कालसर्पानिव अग्निसात कुर्वत ' = 'मुख से निकलने वाला धुआँ मानो काला साप हो, मानो हृदय को कालिमा को प्रकट कर रहे हो, मानो पूर्वजो से उपार्जित पुण्यलोको की फूत्कार से जला रहे हो' —यहाँ काला साँप, हृदय की कालिमा तथा फूत्कार से पुण्यलोक को जलाने की सम्भावना का निर्देश किया गया है, अत उत्प्रेक्षा अलकार है ।

(२) 'स्वसौन्दर्य गर्वभारेण मन्दगतीन्' = 'मानो अपने सौन्दर्य-गर्व के भार के कारण मन्दगति वाले'—यहाँ पर सौन्दर्य मे भार की उत्प्रेक्षा की गई है, अत उत्प्रेक्षा अलंकार है ।

=एवम् न भवेत्, रक्ष भो ! रक्ष जगदीश्वर=पाहि परमेश्वर, अथवा=उद्वा, सम्भोभवीतितमाम्=अतिशयेन सम्भाव्यते, एवमपि=ईदृशमपि, योऽयम्, अफजलखान =तत्तोनापति, सेनापतिपदविडम्बन =चमूपतिपदविडम्बन, अपि, "शिवेन=महाराष्ट्राधीश्वरेण, योत्स्ये=युद्ध करिष्यामि, हनिष्यामि=मारयिष्यामि, ग्रहीष्यामि वा=बन्दीकरिष्यामि वा" इति=एवम् सपौढि=दृढम्, विजयपुराधीशमहासभायाम्=शाइस्ताखान महासभायाम्, प्रतिज्ञाय=प्रतिज्ञा कृत्वा, समायातोऽपि=आगतोऽपि, शिवप्रतापम्=शिववीरप्रभावम्, विदन्नपि=जानन्नपि, "अद्य नृत्यम्=नर्त्तनम्, अद्य गानम्=गीतम्, अद्य लास्यम्=वैशिकनृत्यम्, अद्य मद्यम्=सुरापानम्, अद्यवाराङ्गना=वेश्या, अद्य भ्रूकुंसक =स्त्रीवेषधारीनर्तक, अद्य वीणावादनम्=सितारवादनम्" इति, स्वच्छन्दै=उन्मुक्तै, उच्छृङ्खलाचरणै=असदाचरणै, दिनानि=दिवसान्, गमयति=यापयति।

हिन्दी-व्याख्या—दुर्गमता=अगम्यता। दुराधर्षता=दुरभिभवनीयता,—"दुर+आ+√धृष+त"। महाराष्ट्राणाम्=मराठो का। निर्भयता=निडरता। एतत् सेनानीनाम्=शिववीर के सैनिको की। त्वरितगति=क्षिप्रगति। एतद्घोटकानाम्=शिववीर के घोडो की, 'एतस्य घोटकास्तेषाम् (तत्पु०)। पारयाम =समर्थ होते हैं। धर्त्तुम्=धारण करने के लिये, '√धृ तुमुन्,। शक्नुम =समर्थ होते है। स्थातुम्=रुकने के लिये। कोनाम=कौन। द्विशिरा =दो शिरो वाला, "द्वे शिरसी यस्यासौ (ब० व्री०)"। योद्धुम्=युद्ध करने के लिये। '√युध्+तुमुन्'। द्विपृष्ठ - दो पीठो वाला, "द्वे पृष्ठे यस्यासौ द्विपृष्ठ (ब० व्री०)।" दो पीठ और दो शिर वाला ही शिववीर के योद्धाओ या सैनिको के साथ छल कपट का व्यवहार कर सकता है क्योकि उसकी उभयत शक्ति हो जाती है। साधारण व्यक्ति उनके साथ छल नही कर सकता है। तद्भटै =शिववीर सैनिको के साथ। छलालापम्=छल-कपट की बात। विदध्यात्=कर सकता है। बलिन =बलशाली। अस्माकीना=हमारी—"युष्मद्+नख+अस्माक+ख (ईन)—अस्माकीन। जानीम =नही जानते हैं। किमिति=क्यो। कम्पते इव=कप सा रहा है। क्षुभ्यतीव=क्षुब्ध सा हो रहा है। विनङ्क्ष्यति=विनष्ट होगा। न विद्म=नहीं जानते हैं।

जपतीव=धीरे-धीरे कह सा रहा है। क्षिपतीव=जमा सा रहा है। अन्त करणे =अन्त करण में। सम्बोभवीतितमाम्=ऐसा भी सभव हो सकता है, "पुन पुन सम्भवति, सम्वोभवीति, अतिशयेन सम्वोभवीति-सम्वोभवीतितमाम् 'वर्तमानसामीप्ये वर्तमानवद्वा' से लट् लकार। सेनापतिपदविडम्बन =सेनापति के पद को विडम्बित करने वाला। योत्स्ये=युद्ध करूँगा, "√युध्+लृट् (इट्)।"। हनिष्यामि=मार डालूँगा, '√हन्+लृट् (मिप्)'। ग्रहीष्यामि=पकड़ लाऊँगा, '√ग्रह्+लृट् (मिप्)।" सप्रौढ़ि=दृढ़ता के साथ। विजयपुराधीशमहासभायाम्=विजयपुर के सुल्तान की महासभा मे। प्रतिज्ञाय=प्रतिज्ञा करके, "प्रति√ +ण+ल्यप्"। समायातोऽपि=आया हुआ भी, "सम्+आ+√या+क्त'=समायात। विदन् अपि=जानते हुए भी,— '√विद्+शतृ"। लास्यम्=वैणिकनृत्य शृङ्गार प्रधान स्त्री नृत्य को लास्य कहते है। इस प्रकार का नृत्य दैशिक नृत्य भी कहा जाता है। मद्यम्=मदिरापान। वाराङ्गना=वेश्या। भ्रूकुसक=स्त्री वेपधारी नर्तक, "भ्रुवो कुस भाषणम् यस्य स, अथवा-भ्रुवा कुस=शोभा यस्य स।"। स्वच्छन्दै=स्वच्छन्द (आचरण का विशेपण)। उच्छृंखलाचरणै=उच्छृंखल आचरणो से, गमयति=विता रहा है।

टिप्पणी—(१) कम्पते इव क्षुभ्यतीव च हृदयम्=मानो कप रहा है अथवा क्षुब्ध हो रहा है। कापने और क्षुब्ध होने की सभावना की गई है अत उत्प्रेक्षा अलकार है।

(२) जपतीवकर्णे, लिखतीव सम्मुखे, क्षिपतीवचान्त करणे—कान मे कहने, सामने लिखने और अन्त करण मे जमने की सभावना की गई है अत उत्प्रेक्षा अलकार है।

न च य कदापि विचारयति यत् कदाचित परिपन्थिभि प्रेषिता काचन वारवधूरेव मामासवेन सह विष पाययेत्, कोऽपि नट एव ताम्बूलेन सह गरल ग्रासयेत्, कोऽपि गायक एव वा वीणया सह खड्गमानीय खण्डयेदित्यादि, ध्रुव एव तस्य विनाश, ध्रुवमेवपतनम् ध्रुवमेव च पशुमार मरणम। तन्न वय तेन सह जीवन-रत्न हारयिष्याम" इति व्याहरत, हताराश्च—

"मैव भो. ! श्व एव आहव-क्रीडाऽस्माकं भविष्यति, तत् श्रूयते सन्धि-वार्त्ता-व्याजेन शिव एकत आकारयिष्यते, यावच्च स स्वसेनामपहाय अस्मत्स्वामिना सहाऽऽलपितुमेकान्तस्थाने यास्यति, तावद्वय श्येना इव शकुनिमण्डले महाराष्ट्र सेनाया, छिन्धि भिन्धि-इति कृत्वा युगपदेव पतिष्याम, वसन्त-वाताहत-नीरसच्छदानिव च क्षणेन विद्रावयिष्याम !

हिन्दी अनुवाद—जो कभी भी यह नहीं सोचता हैं कि कभी शत्रुओ के द्वारा भेजी गई कोई वेश्या ही मदिरा के साथ विष पिला सकती है, कोई नट ही पान के साथ विष खिला सकता है, कोई गायक ही वीणा के साथ तलवार लाकर (मेरे) खण्ड-खण्ड कर सकता है; उसका विनाश अवश्यम्भावी है, उसका पतन निश्चित है, पशु के समान मारा जाना निश्चित है। इसलिये हम उसके साथ अपने बहुमूल्य जीवन को नहीं गवाएँगे" (कुछ) इस प्रकार व्यवहार करते हुए और दूसरे—'ऐसा मत कहो, कल ही हमारी युद्धक्रीडा होगी, सुना जाता है कि एक ओर शिववीर सन्धि वार्ता के बहाने बुलाया जायगा, जैसे ही वह अपनी सेना को छोडकर हमारे स्वामी से बात-चीत करने के लिये एकान्त स्थान में जायगा; वैसे ही हम सब पक्षियो पर बाज की तरह महाराष्ट्र सेना पर 'मारो-काटो' ऐसा करते हुए एक साथ टूट पड़ेंगे और वसन्त (पतझड) की हवा से आहत सूखे पत्तो की तरह क्षणभर मे मार भगायेंगे।

सस्कृत-व्याख्या—न च, य = अफजलखान, विचारयति = चिन्तयति, कदापि, यत्, कदाचित् = क्वचित्, परिपन्थिभि = शत्रुभि = प्रेषिता = प्रेरिता, काचन = कापि, वारवधू = वाराङ्गना, एव, माम् = अफजलखानम्, आसवेन = मद्येन, सह, विषम् = गरलम्, पाययेत् पान कारयेत्, कोऽपि = कश्चन, नट एव नर्त्तक एव, ताम्बूलेन सह, गरलम् = विषम्, ग्रासयेत् = भक्षयेत्, कोऽपि = कश्चन, गायक = गीतकार, एव, वा = अथवा, वीणया = वाद्यविशेषेण, सह, खड्गम् = कृपाणम्, आनय = नीत्वा, खण्डयेत् = खण्डखण्डम् कुर्यात् इत्यापि, ध्रुव एव = निश्चितमेव, तस्य = अफजलखानस्य, विनाश = मरणम्, पशुवत्, मरणम् = ध्रुवमेव = निश्चितमेव, पतनम् - पराजय, ध्रुवमेव च, पशुमारम् = पशुवत्, मरणम् = वध । तत् = तस्मात्, न, वयम् = सैनिका, तेन = अफजलखानेन, सह, जीवनरत्नम् = बहुमूल्यजीवितम हारयिष्याम इति = एवम्, व्यहरत = व्यवहार कुर्वत, इतराश्च = अन्याश्च—'मैव" भो. = एव मा वद, श्व एव = आगा-

मिनिदिने एव, अस्माकम्=यावनानाम्, आहवक्रीडा=युद्धक्रीडा, भविष्यति=भविता, तत्, श्रूयते=निशम्यते, सन्धि वार्ताव्याजेन=मेलालापछलेन, शिव=शिववीर, एकत=एकस्मिन्, आकारयिष्यते=आमन्त्रयिष्यते, यावत्==यदा, च, स=शिव, स्वसेनाम=निजपतानिनीम्, अपहाय=त्यक्त्वा, एकाकी=केवल, अस्मत्स्वामिना=मत्प्रभुणा, सह, आलपितुम्=वार्ताम् कर्तुम्, एकान्तस्थाने=रहसि, यास्यति=गमिष्यति, तावद्=तदा, वयम्=यवनसैनिका, श्येना इव=बाज पक्षिण इव, शकुनिमण्डले=पक्षि-मण्डले, महाराष्ट्रसेनायाम्=शिव सैनिकेषु, छिन्धि=कर्त्तय, भिन्धि=भेदय, इति=एवम्, कृत्वा, युगपदेव=सहैव, पतिष्याम=आक्रमिष्याम, वसन्तवाता-हतनीरसच्छदानिव=वसन्तवाताभिघातशुष्कपत्राणीव, च, क्षणेन=अत्यल्प-कालेन, विद्रावयिष्याम ।

हिन्दी-व्याख्या—कदापि=कभी भी। विचारयति=विचार करता है। परिपन्थिभि=शत्रुओ के द्वारा। प्रेषिता=भेजी हुई। काचन=कोई। वार-वधू=वेश्या। आसवेन=मदिरा के साथ। पाययेत्=पिला दे, "पा+√णिच्+लिङ् (तिप्)"। नट=नर्त्तक। ग्रासयेत्=खिला दे। आनीय=लाकर, "आ+√णीञ्+ल्यप्"। खण्डयेत्=खण्ड-खण्ड कर दे। ध्रुव=निश्चित। पशुमारम्=पशु की मृत्यु के समान। मरणम्=मरना। जीवन-रत्नम्=श्रेष्ठ जीवन को—"रत्न स्वजातिश्रेष्ठेऽपि" (अमरकोष)। हार-यिष्याम=हारेगे या गँवायेंगे,—"√हृ+णिच्+लृट् (मस्)।" व्याहरन्=व्यवहार करते हुए। इतराश्च=अन्यो को। नैवम्=ऐसा नही, श्व=कल, आहवक्रीडा=युद्ध रूपी खेल, "आहव एव क्रीडा।" श्रूयते=सुना जाता है। सन्धिवार्ताव्याजेन=सन्धि वार्ता के बहाने 'सन्धे वार्त्तया व्याजस्तेन (तत्पु०)"। एकत=एक ओर। आकारयिष्यते=बुलाया जायगा। अपहाय=छोडकर। अस्मत्स्वामि ना=हमारे स्वामी के, 'सह' के योग मे तृतीया। आल-पितुम्=वार्तालाप करने के लिये, "आ+√लप+तुमुन्।" एकान्तस्थाने=एकान्त (शून्य) जगह मे। यास्यति=जायगा। श्येना=बाज। शकुनिमण्डले=पक्षिसमूह पर। महाराष्ट्रसेनायाम्=मराठो की सेना पर। छिन्धि=काटो। '√छिदिर्+लोट् (सिप्)।' भिन्धि=मारो या विदारण करो, 'भिदिर+लोट् (सिप्)।' युगपद् एव=एक साथ ही। पतिष्याम=कूद पड़ेंगे। वसन्त

एवम्, आत्मनि = स्वस्मिनि, एव, स्वेन, कथयन् = उच्चरन्, स्वप्रभाधर्षित-सकलरक्षकगण = निजतेजस्तर्पितसमस्तरक्षकमण्डल, स्वसौन्दर्येण = निज-कान्त्या, आकर्षयन्निव = वशीकुर्वन्निव, विश्वेषाम् = समेषाम्, मनांसि = चेतांसि, सपद्येव = तत्क्षणमेव, प्रधानपटकुटीरद्वारम् = मुख्यपटकुटीरद्वारम्, आससाद = प्राप्तवान् । तत्र च, प्रहरिणम् = द्वाररक्षकम्, आलोकयत् = अपश्यत्, उक्तवान् = कथितवान्, च, यत्, पुण्यनगरनिवासी = पूनापत्तनवास्तव्य, गायकोऽहम् = गीतकारोऽहम्, अत्रभवन्तम् = श्रीमन्तम् अपजलखानम्, गानरसरसायनैः = गीत निष्यन्द रसायनै, अमन्दम् = अतिशयम्, आनन्दयितुम् = सुखयितुम्, इच्छामि = अभिलषामि, इति । तदवगत्य = तज्ज्ञात्वा, स = प्रहरी, भ्रूसञ्चारेण = भ्रूसङ्केतेन, कञ्चित्, निवेदकम् = सन्देशहरम्, सूचितवान् = कथितवान् । स = सन्देशहर, च, अन्त प्रविश्य = सप्रविश्य, क्षणानन्तरम् = किञ्चित्कालानन्तरम्, पुन = भूय, बहिर्निगत्य = बहिरागत्य, गायकम् = तानरगम्, अपृच्छत् = पप्रच्छ, —किं नाम भवत = तव किं नामेति ? पूर्वञ्च = एतत् पूर्वमपि, कदापि = कदाचन, समायात = समागत न वा ? अथ = तदा, स = तानरग, आह = उवाच,—'तानरगनामाऽहम् = मम नाम तानरगोऽस्ति, कदाचन, युष्मत् कर्णम् = भवत् श्रोत्रम्, अस्पृशम् = पस्पर्श । पूर्वम् = प्रथमम्, कदापि, मम = तानरगस्य, अत्र = शिविरे, उपस्थातुम् = आगन्तुम्, सयोग = अवसर, न, अभूत् = अभवत् । अद्य, भाग्या-न्यनुकूलानि = अनुकूल प्रारब्धानि, चेत् = यदि, श्रीमन्तम् = अफजलखानम्, अव-लोकयिष्यामि = द्रक्ष्यामि, इति । स = निवेदक, 'आम्' = युक्तम्, इति = एवम्, उदीर्य = उक्त्वा, पुन = भूय, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, क्षणानन्तरम् = किञ्चि-त्कालानन्तरम्, निर्गत्य = बहिरागत्य, च, विचित्रगायकम् = तानरगम्, अमुम् = इमम्, सह = साकम्, निनाय = प्रवेशयामास ।

हिन्दी-व्याख्या—इतस्तु = इधर तो । अस्मत्स्वामिसहचरा = हमारे स्वामी के सहचर । "सहचरन्तीति—'√चर + अच्'" । पाशै = जालो से । बद्ध्वा = बाँधकर । पिञ्जरे = पिंजडे मे । स्थापयित्वा = रखकर । जीवन्तम् = जीवित ही । वशवदम् = वश मे हुए, 'वशम्वदनीतिवशम्वदस्तम्', 'वश + खच् (मुम्) + वद् + अच्' 'प्रियवशे वद खच' से 'खच्' । गोप्यतम = अतिगोपनीय । मास्मभूत = न हो । कर्णगत = कान मे पहुँचना । कर्णान्तिकम् = कान के पास मे,

"कर्णयो अन्तिकम् इति" । आनीय=ले जाकर । उत्तरयत =उत्तर देते हुए, "उद्+√तर+शतृ (द्वितीया ब० व०)" । साग्रामिकभटान्=सग्राम करने वाले योद्धाओ को, 'सग्रामम्ग्र इमे माग्रामिका ते एव भटा तान् । अवलोकयन्= देखते हुए, 'अव+लोक+शतृ" । वीथिषु=मार्गो मे । विकीर्यन्ते=फैलाए जाते हैं—'वि+√कृ+यक्+लट् (झ ' । महाराष्ट्रा =मराठे । धूर्ताचार्या =पक्के धूर्त है । आत्मनि एव आत्मना= अपने मे अपने से ही अर्थात मन ही मन । कथयन्=कहता हुआ, "√कथ+शतृ" । स्वप्रभाघर्षितसकलरक्षकगण =अपने प्रकाश से प्रभावहीन कर दिया है, समस्त रक्षकगण को जिसने । "स्वस्य प्रभया घर्षित सकल रक्षकाना गणः येन स" (व व्री ,। घर्षित = भयभीत । स्वसौन्दर्येण=अपने सौन्दर्य से । आकर्षयन्निव=आकृष्ट करते हुए से, 'आ+√कृष+शतृ' । विश्वेषाम्=सभी के । प्रधानपटकुटीरद्वारम्=मुख्य खेमे के द्वार पर, "प्रधानम् यत् पटकुटीरम् तस्यद्वारम् ।" आससाद=पहुँचा 'आ+√पद्+लिट (तिप)' । प्रहरिणम्=पहरेदार को । आलोकयत्= देखा । उक्तवान् च=और कहा । '√वच्+क्तवतु' । अमन्दम्=अधिक । आनन्दयितुम्=आनन्दित करने के लिये । भ्रूसङ्केतेन=भौहो के सकेत से । निवेदकम्=सन्देशवाहक को । सूचितवान्=सूचित किया । अन्त प्रविश्य= अन्दर प्रवेश करके । बहिर्निगत्य=बाहर निकल कर । समायात = आये हो, 'सम्+आ+या+क्त' । कदाचन=कभी । युष्मत्कर्णम्=आप के कान को । अस्पृशम्=स्पर्श किया होगा । उपस्थातुम्=उपस्थित होने के लिये, 'उप+√ स्था+तुमुन्' । सयोग =अवसर । अवलोकयिष्यामि=देखूँगा । उदीर्य=कह कर । क्षणानन्तरम्=एक क्षण बाद । निर्गत्य=निकलकर, निर्+√गम्+ ल्यप्' । विचित्रगायकम्=कपटी गायक का । अमुम्=इस तानरग को । निनाय=ले गया, '√णी+लिट् (तिप) ।

टिप्पणी—(१) "स्वसौन्दर्येणाकर्षयन्निव विश्वेषा मनासि" अपने सौन्दर्य से सभी के मन आकर्षित सा कर रहा है । आकर्षित करने की सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलकार है ।

(२) यवन सैनिको और सेनापति के विलासप्रियता और अदूरदर्शिता का चित्रण किया गया है ।

तानरङ्गस्तु तेनैव तानपूरिका–हस्तेन बालकेनानुगम्यमान, शनै शनै प्रविश्य, प्रथम द्वितीय तृतीयञ्च द्वारमतिक्रम्य, काश्चित् मृदङ्ग–स्वरान् सन्दधत काश्चिद्वीणावरणमुन्मुच्य, प्रवाल प्रोञ्छय, कोण कलयत. काश्चिदविचलोऽयमेतेनैव सह योज्यन्तामपरवाद्यानीति वशीरव साक्षीकुर्वंत, काश्चित कलित–नेपथ्यान्, पादयोनूपुर बध्नत, काश्चित स्कन्धावलम्बिगुटिकात करतालिकामुत्तोलयत, काश्चिच्च कर्णे दक्षकर निधाय, चक्षुषी सम्मील्य, नासामाकुञ्च्य, पातितोभयजानु उपविश्य, वामहस्त प्रसार्य, तन्त्रीस्वरेण स्व-काकली मेलयत, सम्मुखे च पृष्ठत, पार्श्वतश्चोपविष्टै कश्चित ताम्बूलवाहकै, अपरैर्निष्ठ्यूतादान-भाजन-हस्तै, अन्यैनवरत चालितचामरै, इतिरैर्बद्धाञ्जलिभिर्लालाटिकैः परिवृ-तम्, रत्नजटितोष्णीषिकामस्तकम्, सुवर्ण सत्र रचित विविध कुसुम-कुड्मल लताप्रतानाङ्कित कञ्चुक महोपबर्हमेक क्रोडे सस्थाप्य, तदुपरि सन्धारितभुजद्वयम्, रजत-पर्य्यङ्के विविध फेन फेनिल-क्षीरधि-जल तलच्छविमङ्गीकुर्वत्या तूलिकायामुपविष्टमपजलखान च ददर्श ।

हिन्दी अनुवाद—तानरग, जिसके पीछे तानपूरा हांथ मे लिये हुए बालक चल रहा था, (वह) धीरे-धीरे प्रवेश करके, पहले, दूसरे और तीसरे दरवाजे को पार करके, किसी को मृदङ्ग का स्वर-सन्धान करते हुए, किसी को वीणा के आवरण को हटा कर, प्रवाल (वीणादण्ड) को पोंछकर, कोण (मिजराफ) पहनते हुए, किसी को–"यह स्वर अविचल है, इसी के साथ अन्य बाजो को मिलाइये" इस प्रकार वशी की तान को साक्षी देते हुए, किसी को वेष धारण करते और पैरो मे नूपुर (घुघरू) बांधते हुए, किसी को कन्धे पर लटकती हुई झोली से करताल को निकालते हुए और किसी को कानपर दाहिने हांथ को रखकर, आंख बन्द कर, नाक सिकोडकर, दोनों घुटनो के बल बैठ कर, बायें हांथ को फैलाकर, वीणा के स्वर से अपनी काकली (कलगान) को मिलाते हुए, आगे पीछे और पास मे बैठे हुए कुछ ताम्बूल वाहको, पीकदान को हांथ मे लिये कुछ अन्य लोगो, दूसरे निरन्तर चवर डलाने वाले तथा अन्य हांथ जोडे हुए

चापलूसो से घिरे हुए, रत्नजटित टोपी मस्तक पर लगाये, सोने के तारो से रचित विविध फूलो, कलियो और लता प्रतानो वाली अचकन (कुर्ता) पहने हुए गोद मे एक बडी सी मसनद रखकर, उस पर अपनी दोनो भुजाओ को रखे हुए, चाँदी के पलग पर विविध फेन से फेनिल समुद्र के जलतल की छवि का अनुकर करने वाले गद्दे पर बैठे अफजल खाँ को देखा।

संस्कृत व्याख्या—तानरग' = गीरसिह नृ, तानपूरिकाहस्तेन = गृहीततान-पूरिकेण, तेनैव = पूर्वोक्तनैव, बालकेन = कुमारेण, अनुगम्यमान = अनुसृत', शनै -शनै. = क्रमश , प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, प्रथम द्वितीयं तृतीयञ्च = प्रथमत आरभ्य तृतीय यावत्, द्वारम् = कुटीरास्यम्, अतिक्रम्य = पारेगत्वा, काश्चित्, मदङ्गस्वरान् = मृदङ्गरवान् सन्दधत = सन्धान कुर्वंत , काश्चिद्, वीणावरणम् = वीणाच्छादनम्, उन्मुच्य = अपहाय, प्रवालम् = वीणादण्डम्, प्रोञ्छ्य = अमली-कृत्य, कोणम् = वादनोपयोगिनमुपकरण विशेषम्, कलयत = धारयत', काश्चिद्, नविचलोऽयम् = स्थिरोऽयम्, एतेनैव = अनेनैव, सह — समम्, योज्यन्ताम् = सम्मेलय, अपरत्राद्यान् = अन्यत्राद्यान्, इति, वशीरवम् = वेणु-दण्डिकास्वरम्, साक्षीगुर्णा — साक्षाद्दर्शिता नयत , काश्चित् नर्तितनेपथ्यान् = धृतवेषान्, पदयो = चरणयो , नूपुरम् = ध्वनिकारकं चरणाभरणम्, बध्नत' = धारयत , काश्चित्, स्कन्धावलम्बिगुटिकात = असावलम्बितझोलिकात', करतालिकाम् = वाद्यविशेषम्, उत्तोलयत = निष्कासयत , काश्चित्, कर्णे = श्रोत्रे, दक्षकरम् = सव्य हस्तम्, निधाय = निक्षिप्य, चक्षुषी = नयने, सम्मील्य = मीलयित्वा, नासम् = घ्राणम्, आकुञ्च्य = सकोचितम् कृत्वा, पतितोभयजानु = भूमौस्थापितजानुद्वय', उपविश्य = स्थित्वा, वामहस्तम् = सव्येतरकरम्, प्रसार्य = उत्फाल्य, तन्त्रीस्वरेण = वीणारवेण, स्वकाकलीम् = निजसूक्ष्म कलम्, मेलयत = सयोजयन , सम्मुखे = अभिमुखे, च, पृष्ठत' = विपरीतत', पार्श्वतश्च = समीपतश्च, उपविष्टै = आसनस्थै , कैश्चित्, ताम्बूलवाहकै = ताम्बूल-धारकै , अपरै = अन्यै , निष्ठ्यूतादान भाजनहस्तै = पतद्ग्राहपात्रहस्तै , अन्यै = अपरै , सततचालितचामरै = सततमचालितचामरै , इतरै = अन्यै', बद्धाञ्जलिभि = सम्पुटितकरै , लालाटिकै = प्रभोभीतदर्शिभि , परिवृतम् = परित व्याप्तम्, रत्नजटितोष्णीषिकाभिरम्यकम् = रत्नमम्पूरितटोपिकाधारिणम्,

सुवर्णसूत्रेण = सुवर्णतन्तुना, रचिता या विविधा = अनेक प्रकाराः, कुसुमकुड्मल लता = पुष्पकलिकावल्लय, तासा प्रतानै = विततनै, अङ्कित = अञ्चित, कञ्चुक = निचोल, यस्य स तम्, महोपबर्हम = महोपधानम्, एकम्, क्रोडे = अङ्के, निधाय = सस्थाप्य, तदुपरि = उपधानोपरि, सन्धारितभुजद्वयम् = स्थापित करद्वयम्, रजतगर्यङ्के = रजत निर्मिते पर्यङ्के, विविधफेनेन = प्रचुर डिण्डीरेण, फेनिलस्य = फेनयुक्तस्य, क्षीरधि जलतलस्य = समुद्र सलिलतलस्य, छविम् = शोभाम्, अङ्गीकुर्वत्याम् = धारयन्त्याम्, तूलिकायाम् = तूलमये विष्टरे, उपविष्टम् = स्थितम्, अफजलखानम् = यवन सेनापतिम्, च, ददर्श = दृष्टवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—तानरग = तानरग नामधारी गौरसिंह । तानपूरिकाहस्तेन = तानपूरे को हाँथ मे लिये हुए, 'तानपूरिका हस्ते यस्य तेन (ब० ब्री०)'। अनुगम्यमान = अनुसृत (पीछा किया जाता हुआ—गौरसिंह) 'अनु + √गम् + यक् + शानच्' । अतिक्रम्य = पार करके, 'अति + √क्रमु + ल्यप्' । काश्चित् = कुछ को। सन्दधत = साधते हुए, 'सम् + दध + शतृ (द्वितीया ब० ब०)' । वीणावरणम् = वीणा के आवरण को । उन्मुच्य = उतारकर, 'उत् + √मुच् + ल्यप्' । प्रवालम् = वीणा दण्ड को, "वीणादण्ड. प्रवाल स्यात् (अमरकोष)' । प्रोञ्छ्य = पोछकर, 'प्र + √उछि + ल्यप्' । कोणम् = मिजराफ को । कलयत = धारण करते हुए। अविचल = स्थिर । योज्यन्ताम् = मिलाइये, '√युज् + लोट्' । अपरवाद्यान् = दूसरे बाजो को । वशीरवम् = बाँसुरी के शब्द को । साक्षीकुर्वत = साक्ष्य रूप मे प्रस्तुत करते हुए। कलितनेपथ्यान् = वेष धारण करने वालो को, "कलितम् नेपथ्यम् यैस्तान्" । नूपुरम् = (पाँव मे धारण करने वाले) घुघुरू को । बध्नत = बाँधते हुए । स्कन्धावलम्बिगुटिकात = कन्धे पर लटकने वाली झोली से, 'स्कन्धे अवलम्बिनी या गुटिका तस्या.' । करतालिकाम् = करताल को । उत्तोलयतः = निकालते हुए, 'उद् + √तुल + शतृ' । दक्षकरम् = दाहिने हाँथ को । निधाय = रखकर । चक्षुषी = नेत्रो को । सम्मील्य = बन्द करके, 'सम् + मील् + ल्यप्' । नासाम् = नासिका को । आकुञ्च्य = सिकोड कर, आ + कुञ्च + ल्यप्' । पतितोभयजानु = दोनो घुटनो को जमीन मे गिराकर, "पतिते उभये जानुनी यस्य स (ब० ब्री०)" । उपविश्य = बैठकर, 'उप + विश् + √ल्यप्' । प्रसार्य = फैलाकर, 'प्र + √सृ + णिच् + ल्यप्' ।

तन्त्रीस्वरेण=वीणा नाद से, "तन्त्र्या: स्वरस्तेन (तत्पु०)" स्वकाकलीम्= अपने सूक्ष्म को। 'ईषत्कलम् इति काकलम्, स्त्रियाम् ङीष् 'काकल+ङीष्'= काकली'-'काकली तु कले सूक्ष्मे" (अमरकोष)। मेलयत=मिलाते हुए। सम्मुखे=सामने। पृष्ठतः=पीछे। पार्श्वत=पास मे। उपविष्टै=बैठे हुए, 'उप+विश्+क्त (तृतीया ब० व०)'। ताम्बूलवाहकै=ताम्बूलवाहको के द्वारा। अपरै=दूसरो के द्वारा। निष्ठ्यूतादानभाजनहस्तै=पीकदान हाथ मे लिये हुए, निष्ठ्यूतादान=पीकदान। 'निष्ठ्यूतादानस्य भाजनम् हस्ते येषा तै' (ब० व्री०)'। अनवरतचालितचामरै=निरन्तर चँवर डुलाने वालो से, 'अनवरतम् चालितम् चामरम् यैस्तै' (ब० व्री०)। बद्धाञ्जलिभि=हाँथ जोडे हुए, 'बद्धा अञ्जलय येषा तै (ब० व्री०)'। लालाटिकै=चापलूसो से, 'ललाटम् पश्यतीति लालाटिकस्तै'। जो व्यक्ति कार्य मे अक्षम और स्वामी के इशारो को ही देखने वाला लालाटिक कहलाता है। "लालाटिक प्रभोर्भालदर्शी-कार्या क्षमश्चय" (अमरकोष)। परिवृतम=घिरे हुए। रत्नजटितोष्णीषि-कामस्तकम्=रत्नो मे जडी हुई टोपी मस्तक पर लगाये, "रत्नै जटिता उष्णी-षिका मस्तके यस्य तम् (ब० व्री०)'। सुवर्णसूत्र कञ्चुकम्=सोने के तारो से बने हुए ये अनेक प्रकार के फूल, कलियाँ और लता वितान जिसमे ऐसे कुर्ते या अचकन को। "सुवर्ण सूत्रेण विविधा कुसुमकुड्मललता तासा प्रतानै अङ्कित कञ्चुक यस्य तम (ब० व्री०)'। महोपबर्हम्=मसनद (बडो तकिया)। क्रोडे=गोद मे। सस्थाप्य=रखकर, 'सम्+√स्था+ल्यप्'। सन्धारितभुज-द्वयम्=दोनो भुजाओ को रखे हुए, 'सन्धारितम् भुजद्वयम् यस्य स तम् (ब० व्री०)"। रजत पर्य्यङ्के=चाँदी के पलग पर। विविधफेनफेनिलक्षीरधिजल-तलच्छविम्=प्रचुर फेन मे फेनिल समुद्र के जलतल की शोभा को। 'विविधेन फेनेन फेनिलस्य क्षीरधे जलतलस्य छविम् (तत्पु०)"। अङ्गीकुर्वत्याम्=धारण करने वाली, 'अङ्ग+च्वि+√कृ+शतृ+ङीप (सप्तमी ए० व०)'। तूलिका-याम्=तूलिका (गद्दे) पर, तूलमस्ति यस्या सा तूला, तूलैव→तूलिका तस्याम्'। उपविष्टम्=बैठे हुए। ददर्श=देखा '√दृश्+लिट् (तिप)'।

ततस्तु तानरङ्ग-प्रभा-वशीभूतेषु सर्वेषु 'आगम्यतामागम्यतामास्यता-मास्यताम्' इति कथयत्सु, तानरङ्गोऽपि सादर दक्षिण हस्तेनाऽऽदरसूचक-सङ्केत-सहकारेण यथानिर्दिष्टस्थानमलञ्चकार।

सुवर्णसूत्रेण = सुवर्णतन्तुना, रचिता या विविधा = अनेक प्रकाराः, कुसुमकुड्मल लता = पुष्पकलिकावल्लय, तासा प्रतानै = वितननै, अङ्कित = अञ्चित', कञ्चुक = निचोल, यस्य स तम्, महोपबर्हम = महोपधानम्, एकम्, क्रोडे = अङ्के, निधाय = सम्स्थाप्य, तदुपरि = उपधानोपरि, सन्धारितभुजद्वयम् = स्थापित करद्वयम्, रजतपर्यङ्के = रजत निर्मिते पर्यङ्के, विचित्रफेनेन = प्रचुर डिण्डीरेण, फेनिलस्य = फेनयुक्तस्य, क्षीरधि जलतलस्य = समुद्र सलिलतलस्य, छविम् = शोभाम्, अङ्गीकुर्वत्याम् = धारयन्त्याम्, तूलिकायाम् = तूलमये विष्टरे, उपविष्टम् = स्थितम्, अफजलखानम् = यवन सेनापतिम्, च, ददर्श = दृष्टवान् ।

हिन्दी-व्याख्या—तानरग = तानरग नामधारी गौरसिंह । तानपूरिकाहस्तेन = तानपूरे को हाँथ मे लिये हुए, 'तानपूरिका हस्ते यस्य तेन (ब० व्री०)। अनुगम्यमान = अनुसृत (पीछा किया जाता हुआ–गौरसिंह) 'अनु + √गम् + यक् + शानच्' । अतिक्रम्य = पार करके, 'अति + √क्रमु + ल्यप्' । कांश्चित् = कुछ को । सन्दधत = साधते हुए, 'सम् + दध + शतृ (द्वितीया ब० व०)' । वीणावरणम् = वीणा के आवरण को । उन्मुच्य = उतारकर, 'उत् + √मुच् + ल्यप्' । प्रवालम् = वीणा दण्ड को, "वीणादण्ड प्रवाल स्यात् (अमरकोष)' । प्रोञ्छ्य = पोछकर, 'प्र + √उछि + ल्यप्' । कोणम् = मिजराफ को । कलयत = धारण करते हुए । अविचल = स्थिर । योज्यन्ताम् = मिलाइये, '√युज् + लोट्' । अपरवाद्यान् = दूसरे बाजो को । वंशीरवम् = बाँसुरी के शब्द को । साक्षीकुर्वत = साक्ष्य रूप मे प्रस्तुत करते हुए । कलितनेपथ्यान् = वेष धारण करने वालो को, "कलितम् नेपथ्यम् यैस्तान्" । नूपुरम् = (पाँव मे धारण करने वाले) घुघुरू को । बध्नत = बाँधते हुए । स्कन्धावलम्बिगुटिकात = कन्धे पर लटकने वाली झोली से, 'स्कन्धे अवलम्बिनी या गुटिका तस्या.' । करतालिकाम् = करताल को । उत्तोलयतः = निकालते हुए, 'उद् + √तुल + शतृ' । दक्षकरम् = दाहिने हाँथ को । निधाय = रखकर । चक्षुषी = नेत्रो को । सम्मील्य = बन्द करके, 'सम् + मील् + ल्यप्' । नासाम् = नासिका को । आकुञ्च्य = सिकोड कर, आ + कुञ्च + ल्यप्' । पतितोभयजानु = दोनो घुटनो को जमीन मे गिराकर, "पतिते उभये जानुनी यस्य स (ब० व्री०)" । उपविश्य = बैठकर, 'उप + विश् + √ल्यप्' । प्रसार्य = फैलाकर, 'प्र + √सृ + णिच् + ल्यप्' ।

तन्त्रीस्वरेण=वीणा नाद से, "तन्त्र्या. स्वरस्तेन (तत्पु०)" स्वकाकलीम्=अपने सूक्ष्म को। 'ईषत्कलम् इति काकलम्, स्त्रियाम् डीष् 'काकल+डीष्'=काकली'-'काकली तु कले सूक्ष्मे" (अमरकोष)। मेलयत=मिलाते हुए। सम्मुखे=सामने। पृष्ठत=पीछे। पार्श्वत=पास मे। उपविष्टै=बैठे हुए, 'उप+विश्+क्त (तृतीया ब० व०)'। ताम्बूलवाहकै=ताम्बूलवाहको के द्वारा। अपरै=दूसरो के द्वारा। निष्ठ्यूतादानभाजनहस्तै=पीकदान हाँथ मे लिये हुए, निष्ठ्यूतादान=पीकदान। 'निष्ठ्यूतादानस्य भाजनम् हस्ते येषा तै (ब० व्री०)'। अनवरतचालितचामरै=निरन्तर चँवर डुलाने वालो से, 'अनवरतम् चालितम् चामरम् यैस्तै' (ब० व्री०)। बद्धाञ्जलिभि=हाँथ जोडे हुए, 'बद्धा अञ्जलय येषा तै (ब० व्री०)'। लालाटिकै=चापलूसो से, 'ललाटम् पश्यतीति लालाटिकस्तै'। जो व्यक्ति कार्य मे अक्षम और स्वामी के इशारो को ही देखने वाला लालाटिक कहलाता है। "लालाटिक प्रभोर्भालदर्शी-कार्याक्षमश्चय" (अमरकोष)। परिवृतम=घिरे हुए। रत्नजटितोष्णीषि-कामस्तकम्=रत्नो से जडी हुई टोपी मस्तक पर लगाये, "रत्नै जटिता उष्णी-षिका मस्तके यस्य तम् (ब० व्री०)'। सुवर्णसूत्र कञ्चुकम्=सोने के तारो से बने हुए ये अनेक प्रकार के फूल, कलियाँ और लता वितान जिसमे ऐसे कुर्ते या अचकन को। "सुवर्ण सूत्रेण विविधा कुसुमकुड्मललता तासा प्रतानै अङ्कित कञ्चुक यस्य तम (ब० व्री०)'। महोपबर्हम्=मसनद (बडी तकिया)। क्रोडे=गोद मे। सस्थाप्य=रखकर, 'सम्+√स्था+ल्यप्'। सन्धारितभुज-द्वयम्=दोनो भुजाओ को रखे हुए, 'सन्धारितम् भुजद्वयम् यस्य स तम् (ब० व्री०)"। रजत पर्य्यङ्के=चाँदी के पलग पर। विविधफेनफेनिलक्षीरधिजल-तलच्छविम्=प्रचुर फेन से फेनिल समुद्र के जलतल की शोभा को। 'विविधेन फेनेन फेनिलस्य क्षीरधे जलतलस्य छविम् (तत्पु०)"। अङ्गीकुर्वत्याम्=धारण करने वाली, 'अङ्ग+च्वि+√कृ+शतृ+डीप (सप्तमी ए० व०)'। तूलिका-याम्=तूलिका (गद्दे) पर, तूलमस्ति यस्या सा तूला, तूलैव→तूलिका तस्याम्'। उपविष्टम्=बैठे हुए। ददर्श=देखा '√दृश्+लिट् (तिप्)'।

ततस्तु तानरङ्ग-प्रभा-वशीभूतेषु सर्वेषु 'आगम्यतामागम्यतामास्यता-मास्यताम्' इति कथयत्सु, तानरङ्गोऽपि सादर दक्षिण हस्तेनाऽऽदरसूचक-सङ्केत-सहकारेण यथानिर्दिष्टस्थानमलञ्चकार।

ततस्तु इतरगायकेषु सगर्वं सासूय सक्षोभ साक्षेप सचक्षुर्विस्फारण सशिर परिवर्तन च तमालोकयत्सु अपजलखानेन सह तस्यैवमभूदालाप ।

अपजलखान—किन्देशवास्तव्यो भवान् ?

तानरङ्ग श्रीमन् ! राजपुत्रदेशीयोऽहमस्मि ।

अपजल०—ओ. । राजपुत्रदेशीय ?

तान०—आम् ! श्रीमन् !

अप०—तत् कथमत्र महाराष्ट्रदेशे ?

तान०—सेनापते ! मम देशाटन-व्यसन मा देशाद्देश पर्याटयति ।

अप०—आ ! एवम ! तत्कि प्राय पर्य्यटति भवान् ?

तान० —एव चमूपते ! नव्यान् देशानवलोकयितुम्, नवा नवा भाषा अवगन्तुम् नूतना नूतना गान-परिपाटीश्च कलयितुम् एधमानमहाभिलाष एष जन ।

अप०—अहो ! ततस्तु वहुदर्शी बहुज्ञश्च भवान् । अथ वङ्गदेशे गतो भवान ? श्रूयतेऽतिवैलक्षण्य तद्देशस्य ।

हिन्दी अनुवाद—तब तानरङ्ग की प्रभा से वशीभूत हुए सब के—"आइये, आइये, आइये, बैठिये, बैठिये," यह कहने पर तानरङ्ग भी आदरपूर्वक दाहिने हाथ से आदर सूचक सकेत के साथ यथा निर्दिष्ट स्थान पर बैठ गये । तब अन्य गायकों के गर्व, ईर्ष्या, क्षोभ और निन्दा के साथ आँखें फाड़ फाड़कर और सिर हिला-हिला कर उसको (तानरङ्ग को) देखने पर अफजल खाँ का (तानरङ्ग के) साथ इस प्रकार वार्तालाप हुआ ।

अफजल खाँ—आप किस देश के रहने वाले हैं ?

तानरङ्ग—श्रीमान् ! मैं राजपूताने का हूँ ।

अफजल खाँ—अरे ! राजपूताने के हो ?

तानरङ्ग—हाँ, श्रीमन् !

अफजल खाँ—तो यहाँ महाराष्ट्र देश मे कैसे ?

तानरङ्ग—सेनापते ! मेरे देशाटन का व्यसन ही मुझे एक देश से दूसरे देश को ले जाता है ।

अफजल खाँ—अरे ! ऐसा है ! तो क्या आप प्राय घूमते ही रहते है ?

तानरङ्ग—ऐसा ही है, सेनापति जी ! नये-नये देशो को देखने, नई-नई भाषाओ को सीखने और गाने की नई-नई शैलियो को जानने का यह व्यक्ति बहुत अधिक शौकीन है।

अफजल खाँ—अरे ! तब तो आप बहुज्ञ (बहुत कुछ जानने वाला) और बहुदर्शी (बहुत कुछ देखने वाला) है। क्या आप बङ्गाल गये हैं ? सुनते हैं वह देश बडा विलक्षण है।

सस्कृत-व्याख्या—तत=तदनन्तरम, तु, तानरगप्रभावशीभूतेपु=गायक-दीप्तिस्तब्धीभूतेपु, सर्वेषु=निखिलेपु, "आगम्यताम्=आगच्छतु, आस्यताम्=उपविशतु," इति=एवम्, कथयत्सु=वदत्सु, तानरगोऽपि=गायकोऽपि, सादरम्=आदरपूर्वकम्, दक्षिणहस्तेन=सव्यकरेण, आदरसूचक सकेतसहकारेण=सम्मानसूचक सकेतेन सह, यथानिर्दिष्टम्=सकेतानुसारम्, स्थानम्, अलञ्चकार=शोभितवान्। ततस्तु=तदातु, इतरगायकेषु=अन्यगायकेषु, सगर्वम्=साभिमानम् रासूयम=सेर्ष्यम्, सक्षोभम्=क्षोभयुक्तम्, साक्षेपम्=आक्षेपेण सह, स चक्षुर्विस्फारणम्=स नेत्रस्फालनम्, सशिर परिवर्तनम्=सशिर कम्पनम्, च, तम्=तानरगम्, आलोकयत्सु=पश्यत्सु अफजलखानेन=सेनापतिना, सह, तस्य तानरङ्गस्य, एवम्=इत्थम आलाप=वार्तालाप, अभूत=अभवत्।

अफजलखान—किन्देश वास्तव्यो भवान्=कस्मिन् देशे निवसति ?

तानरग—श्रीमन्=भगवन ! राजपुत्र देशीयोऽहमस्मि=राजपुत्रदेशवास्तव्योऽहम्।

अफजलखान—पो, राजपुत्रदेशीय=राजपुत्रदेशे वससित्वम्।

तानरग—आम् ! श्रीमन् !=बाढम, भगवन् !

अफजलखान—त कथमत्र महाराष्ट्रदेशे=तर्हि 'कस्मादस्मिन् देशे आगत ?

तानरग— सेनापते=चमूपते ! मम=तानरंगस्य, देशाटन व्यसनम्=देशभ्रमणस्वभाव, माम् देशाद्देशम्=देशदेशान्तरम, पर्यटयति=भ्रमयति।

अफजलखान—आ ! एवम् ! तत्कि प्राय पर्यटति भवान्=तत्केन कारणेन परिभ्रमति भवान् ?

तानरंग—एवम चमूपते !, नव्यान् देशान्=नवानिस्थानानि, नवा नवा

भाषाः = नूतना वाणी, अवगन्तुम् = ज्ञातुम, नूतना नूतना गानपरिपाटी = अभिनवाज्ञानविधी, कलयितुम् = साधयितुम्, एधमानमहाभिलाप = एधमानः = वृद्धिगच्छन्, महान् अभिलाष = इच्छा यस्य स, एष = अयम्, जन = नर'।

अफजलखान —अहो ! ततस्तु = तदा तु, बहुदर्शी = बहू वाल्लोकयिता, बहुज्ञ = बहूना विषयस्य ज्ञाता, भवान् = तानरग । अथ = किम्, वङ्गदेशे = बगालनाम्निदेशे, गत = भ्रमितः, भवान् ? श्रूयते = आकर्ण्यते, अतिवैलक्षण्यम् = अतिवैचित्र्यम्, तद्देशस्य = बगदेशस्य ।

हिन्दी व्याख्या—तानरङ्गप्रभावशीभूतेषु = तानरग की प्रभा से वशीभूत हुए, प्रभा = कान्ति, वशीभूत = स्तब्ध । 'तानरगस्य प्रभया वशीभूता तेषु (तत्पु०)" । आगम्यताम = आइये । आस्यताम् = बैठिये । कथयत्सु = कहने पर, "√कथ + शतृ (सप्तमी ब० व०)" । सादरम् = आदरपूर्वक । दक्षिणहस्तेन = दाहिने हाथ से आदरसूचक सकेत सहकारेण = आदरसूचक सकेत के साथ अर्थात् 'सलाम' करते हुए । यथानिर्दिष्टम् = सकेतित, 'निर्दिष्टमनतिक्रम्य इति (अव्ययी०)' । स्थानम् = स्थान पर । अलञ्चकार = बैठ गया, "अलम् + √कृ + लिट् (तिप्)' । इतरगायकेषु = अन्यगायको के 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी । सासूयम् = असूयापूर्वक । साक्षेपम् = आक्षेप (निन्दा) के साथ । सचक्षुर्विस्फारणम् - नेत्रविस्फारण के साथ अर्थात् आँखे फैला फैलाकर । "चक्षुषो विस्फारणमिति चक्षुर्विस्फारणम् तेन सहितम्—सचक्षुर्विस्फारणम्" । सशिर परिवर्तनम् = शिर हिला-हिलाकर । तम् = तानरग को। आलोकयत्सु = देखने पर, 'आ + √लोक + शतृ (सप्तमी ब० व०)' । आलाप = वार्तालाप । किन्देश वास्तव्य = किस देश के रहने वाले । राजपुत्रदेशीय = राजपुत्र देश का। देशाटनव्यसनम् = देशभ्रमण का शौक, 'देशानाम अटनस्य व्यसनम् (तत्पु०) । देशाद्देशम् = एक देश से दूसरे देश को । पर्याटयति घुमाता है । 'परि + आ + √अट + णिच् + लट् (तिप्)' । चमूपते = सेनापते । अवगन्तुम् = जानने के लिये, 'अव + √गम् + तुमुन्' । गानपरिपाटी = गाने की शैलियो को। कलयितुम् = जानने के लिये । एधमान महाभिलाष = बढती हुई इच्छाओ वाला। एधमान' महान् अभिलाषः यस्य सः (ब० व्री०)" । बहुदर्शी = बहुत कुछ देखने

वाला। बहुज्ञ =बहुत कुछ जानने वाला। अतिवैलक्षण्यम् =अति विलक्षणता है। तद्देशश्य =उस देश की।

तानरङ्ग —सेनापते ! वर्षत्रयात्पूर्वमह काश्या गगाया सस्नाय उज्जयिनीदेशीय क्षत्रियकुलालकृतम् भोजपुरदेशमालोक्य गङ्गागण्डकतटोपविष्टम् हरिहरनाथ प्रणम्य विलासि-कुल विलसितम् पाटलिपुत्रपुरमुल्लघ्य सीताकुण्डविक्रमचण्डिकादि पीठपटल पूजितम् विक्रमयश· सूचक दुर्गविशेषशोभितम देवधुनीतरङ्ग क्षालित प्रान्त मुद्गलपुर निरीक्ष्य कर्ण-दुर्गस्थानेन तद्यशोमहामुद्रयेवाङ्कितभङ्गदेश दिनत्रयमध्युष्य, अतिवर्द्धमान वैभव वर्द्धमान-नगर च सम्यक् समालोक्य, यथोचित सम्भारैस्तारेकेश्वर-मुपस्थाय, ततोऽपि पूर्व वङ्गदेशे, पूर्ववङ्गेऽपि च चिरमहमटाट्यामकार्षम्।

हिन्दी अनुवाद—सेनापति ! तीन वर्ष पूर्व मैने काशी मे गङ्गा मे स्नान करके उज्जैन देश के क्षत्रिय वशो से अलकृत भोजपुर देश को देखकर, गङ्गा और गण्डक नदियो के तट पर विराजमान हरिहरनाथ को प्रणाम करके, विलासियो के कुल से सुशोभित पाटलिपुत्र नगर को पार करके, सीताकुण्ड, विक्रम-चण्डिका आदि पीठो से पूजित, विक्रमादित्य के यश के सूचक दुर्गों के खण्डहरो से शोभित और गङ्गा की लहरो से प्रक्षालित प्रान्त मुद्गलपुर (मु गेर) को देखकर, कर्ण दुर्ग स्थान से मानो उसके यश रूपी महामुद्रा से अङ्कित अङ्ग देश मे तीन दिन रुककर, अत्यन्त बढे हुए वैभव वाले वर्धमान (वर्दवान) नगर को भली-भाँति देखकर, यथोचित सामग्री से भगवान् तारकेश्वर की पूजा करके, उससे भी पूर्व मे बगाल और पूर्वी बगाल मे भी मैने बहुत समय तक भ्रमण किया।

संस्कृत व्याख्या—सेनापते =चमूपते ! वर्षत्रयात् पूर्वम =हायनत्रयपूर्वम्, अहम् =तानरग, काश्याम् =कारणस्याम् गगायाम् =मन्दाकिन्याम्, सस्नाय =स्नान कृत्वा, उज्जयिनीदेशीयक्षत्रिय कुलालङ्कृतम् =उज्जैन निवासि क्षत्रिय वश-विभूषितम्, भोजपुरदेशम् =एतत्प्रदेशम् आलोक्य =दृष्ट्वा, गगागण्डक तटो-पविष्टम् =गगागण्डकयो नद्यो पुलिने विराजमानम्, हरिहरनाथम् =शङ्करम्, प्रणम्य =नमस्कृत्य, विलासिकुलविलासितम् =विलासिकुलसेवितम्, पाटलिपुत्र

भाषाः=नूतना वाणी, अवगन्तुम्=ज्ञातुम, नूतना नूतना गानपरिपाटी=अभिनवाज्ञानविधी, कलयितुम्=साधयितुम्, एधमानमहाभिलाष=एधमानः=वृद्धिंगच्छन्, महान् अभिलाप=इच्छा यस्य स, एष=अयम्, जन=नर'।

अफजलखान—अहो! ततस्तु=तदा तु, बहुदर्शी=बह्वालोकयिता, बहुज्ञ=बहूना विषयस्य ज्ञाता, भवान्=तानरंग। अथ=किम्, वङ्गदेशे=बंगालनाम्निदेशे, गत=भ्रमित', भवान्? श्रूयते=आकर्ण्यते, अतिवैलक्षण्यम्=अतिवैचित्र्यम्, तद्देशस्य=बंगदेशस्य।

हिन्दी व्याख्या—तानरङ्गप्रभावशीभूतेषु=तानरंग की प्रभा से वशीभूत हुए, प्रभा=कान्ति, वशीभूत=स्तब्ध। 'तानरंगस्य प्रभया वशीभूता तेषु (तत्पु०)"। आगम्यताम=आइये। आस्यताम्=बैठिये। कथयत्सु=कहने पर, "√कथ+शतृ (सप्तमी ब० व०)"। सादरम्=आदरपूर्वक। दक्षिणहस्तेन=दाहिने हाथ से आदरसूचक संकेत सहकारेण=आदरसूचक संकेत के साथ अर्थात् 'सलाम' करते हुए। यथानिर्दिष्टम्=संकेतित, 'निर्दिष्टमनतिक्रम्य इति (अव्ययी०)'। स्थानम्=स्थान पर। अलञ्चकार=बैठ गया, "अलम्+√कृ+लिट् (तिप्)'। इतरगायकेषु=अन्यगायकों के 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी। सासूयम्=असूयापूर्वक। साक्षेपम्=आक्षेप (निन्दा) के साथ। सचक्षुर्विस्फारणम्-नेत्रविस्फारण के साथ अर्थात् आँखे फैला फैलाकर। "चक्षुषो विस्फारणमिति चक्षुर्विस्फारणम् तेन सहितम्-सचक्षुर्विस्फारणम्"। सशिरःपरिवर्तनम्=शिर हिला-हिलाकर। तम्=तानरंग को। आलोकयत्सु=देखने पर, 'आ+√लोक+शतृ (सप्तमी ब० व०)'। आलाप=वार्तालाप। किन्देशवास्तव्य=किस देश के रहने वाले। राजपुत्रदेशीय=राजपुत्र देश का। देशाटनव्यसनम्=देशभ्रमण का शौक, 'देशानाम् अटनस्य व्यसनम् (तत्पु०)। देशाद्देशम्=एक देश से दूसरे देश को। पर्याटयति घूमाता है। 'परि+आ+√अट+णिच्+लट् (तिप्)'। चमूपते=सेनापते। अवगन्तुम्=जानने के लिये, 'अव+√गम्+तुमुन्'। गानपरिपाटी=गाने की शैलियों को। कलयितुम्=जानने के लिये। एधमान महाभिलाष=बढती हुई इच्छाओं वाला। एधमान' महान् अभिलापः यस्य सः (ब० व्री०)"। बहुदर्शी=बहुत कुछ देखने

वाला। बहुज्ञ = बहुत कुछ जानने वाला। अतिवैलक्षण्यम् = अति विलक्षणता है। तद्देशस्य = उस देश की।

तानरङ्ग —सेनापते! वर्षत्रयात्पूर्वमहं काश्यां गंगायां मग्नाय उज्जयिनीदेशीय क्षत्रियकुलालङ्कृतम् भोजपुरदेशमालोक्य गङ्गागण्डकतटोपविष्टम् हरिहरनाथं प्रणम्य विलासि-कुल विलसितम् पाटलिपुत्रपुरमुल्लंघ्य सीताकुण्डविक्रमचण्डिकादि पीठपटल पूजितम् विक्रमयश सूचक दुर्गविशेषशोभितम देवधुनीतरङ्ग क्षालित प्रान्त मुद्गलपुर निरीक्ष्य कर्णदुर्गस्थानेन तद्यशोमहामुद्रयेवाङ्कितभङ्गदेश दिनत्रयमध्युष्य, अतिवर्द्धमान वैभव वर्द्धमान-नगर च सम्यक् समालोक्य, यथोचित सम्भारैस्तारकेश्वरमुपस्थाय, ततोऽपि पूर्व वङ्गदेशे, पूर्ववङ्गेऽपि च चिरमहमटाट्यामकार्षम्।

हिन्दी अनुवाद—सेनापति! तीन वर्ष पूर्व मैने काशी मे गङ्गा मे स्नान करके उज्जैन देश के क्षत्रिय वशो मे अलकृत भोजपुर देश को देखकर, गङ्गा और गण्डक नदियो के तट पर विराजमान हरिहरनाथ को प्रणाम करके, विलासियो के कुल से सुशोभित पाटलिपुत्र नगर को पार करके, सीताकुण्ड, विक्रमचण्डिका आदि पीठो से पूजित, विक्रमादित्य के यश के सूचक दुर्गों के खण्डहरो से शोभित और गङ्गा की लहरो से प्रक्षालित प्रान्त मुद्गलपुर (मुगेर) को देखकर, कर्ण दुर्ग स्थान से मानो उसके यश रूपी महामुद्रा से अङ्कित अङ्ग देश मे तीन दिन रुककर, अत्यन्त बढे हुए वैभव वाले वर्धमान (वर्दवान) नगर को भली-भांति देखकर, यथोचित सामग्री से भगवान् तारकेश्वर की पूजा करके, उससे भी पूर्व मे बगाल और पूर्वी बगाल मे भी मैने बहुत समय तक भ्रमण किया।

सस्कृत व्याख्या—सेनापते = चमूपते! वर्षत्रयात् पूर्वम = हायनत्रयपूर्वम्, अहम् = तानरग, काश्याम् = वाराणस्याम् गगायाम् = मन्दाकिन्याम्, सस्नाय = स्नान कृत्वा, उज्जयिनीदेशीयक्षत्रियकुलालङ्कृतम् = उज्जैन निवासि क्षत्रिय वशविभूषितम्, भोजपुरदेशम् = एतत्प्रदेशम् आलोक्य = दृष्ट्वा, गगागण्डक तटोपविष्टम् = गगागण्डकयो नद्यो पुलिने विराजमानम्, हरिहरनाथम् = शङ्करम्, प्रणम्य = नमस्कृत्य, विलासिकुलविलासितम् = विलासिकुलसेवितम्, पाटलिपुत्र

पुरम् = पटनानगरम्, उल्लङ्घ्य = लङ्घयित्वा, सीताकुण्ड विक्रमचण्डिकादि पीठपटलपूजितम् = सीताकुण्ड विक्रम चण्डिकादिदेवस्थानसमूह शोभितम्, विक्रम-यश सूचकदुर्गविशेषशोभितम् = विक्रमादित्यकीर्तिपरिचायकदुर्गविशेषयुक्तम्, देवधुनीतरङ्गक्षालित प्रान्तम् = सुरसरित्तरङ्गधौतप्रदेशम्, मुद्गलपुरम् = एतन्न-गरम्, निरीक्ष्य समवलोक्य, कर्णदुर्गस्थानेन = कर्णस्य राज्ञः दुर्गस्थानेन, तद्य-शोमहामुद्रया = तत्कीर्तिमहामुद्राङ्कनेन, इव, अङ्कितम् = मुद्रितम, अङ्गदेशम् = एतद्देशम्, दिनत्रयम् = त्रीणिदिनानि, अध्युष्य = वास कृत्वा, अतिवर्द्धमान वैभवम् = अतिशयं प्रवर्द्धमानसम्पदम, वर्द्धमाननगरम् = एतन्नामक नगरम्, च सम्यक् = यथाविधि, समालोक्य = दृष्ट्वा, यथोचित सम्भारैः = समुचित-सामग्रीभि, तारकेश्वरम् = एतद्देवम्, उपस्थाय = सपूज्य, ततोऽपि = तस्मादपि, पूर्वम् = प्राच्याम, वङ्गदेशे = वङ्गालेति प्रान्ते, पूर्ववङ्गेऽपि = तत पूर्व पूर्व-वङ्गालेऽपि, च चिरम् = चिरकालम् यावत्, अहम्, अट्टाट्याम् = पर्यटनम्, अकार्षम् = अकारेम् ।

हिन्दी व्याख्या— वर्षत्रयात् पूर्वम् = तीन वर्ष के पूर्व । सम्नाय = स्नान करके, 'सम् + √स्ना + ल्यप्' । उज्जयिनी देशीय क्षत्रिय कुलालङ्कृतम् = उज्जैन देश के क्षत्रिय कुलो से अलकृत । उज्जयिनीदेशीय = उज्जयिनी देश मे होने वाला — 'देश + छ (ईय) = देशीय, क्षत्रिय = 'क्षत्र + घ' 'क्षत्राद्घ' से घ' प्रत्यय । 'क्षत्र + घ → इय' = क्षत्रिय । 'उज्जयिनी देशीयाना क्षत्रियाणाम् कुलै अलङ्कृतम् (तत्पु०)' । आलोक्य = देखकर । गगागण्डकतटोपविष्टम् = गगा और गण्डक के तट पर विराजमान (हरिहरनाथ का विशेषण) । 'गगगण्डकयोस्तटे उपविष्टम् (तत्पु०)' । विलासिकुलविलसितम् = विलासियो के कुल से शोभित, 'विलासिना कुलै विलसितम् (तत्पु०)' । विलसितम् = वि + √लस + क्त' । उल्लङ्घ्य = पार करके, 'उत + √लङ्घि + ल्यप्' । सीताकुण्ड विक्रम चण्डिकादिपीठपटलपूजितम् = सीता कुण्ड और विक्रमचण्डिका आदि देव-पीठो से पूजित । पटल = समूह, पूजितम् = सुशोभित । विक्रम यश. सूचक दुर्गविशेषशोभितम् = विक्रमादित्य के यश के सूचक किले के अवशेषो (खण्डहरो) से शोभित । 'विक्रमस्य यशस सूचकैः दुर्गस्य अवशेषै शोभितम् (तत्पु०)' । देवधुनीतरङ्गक्षालितप्रान्तम् = गंगा की लहरो से प्रक्षालित प्रान्त

फक्किकाकारया नौकया भिन्नाञ्जन-लिप्ता-इव मसी-स्नाता इव साकारा अन्धकारा इव काला धीवर-बाला निर्भया क्रीडन्ति ।

हिन्दी अनुवाद – अफजल खाँ— क्या, क्या, क्या, पूर्वी बगाल भी देखा ? तानरग—हाँ, श्रीमान् ! पूर्वी बगाल भी अच्छी तरह इस व्यक्ति (तानरग) ने देखा है । जहाँ तट पर उगी हुई कमल की पक्ति को कुचलती हुई, द्रवीभूत हुई लक्ष्मी के समान जल प्रवाह से युक्त पद्मा नदी बहती है, जहाँ ब्रह्मपुत्र के शत्रुओ की सेना को नाश करने मे दक्ष, ब्रह्मदेश का (भारत से) विभाग करता हुआ ब्रह्मपुत्र नामक नद भूभाग को सींचता है, जहाँ खट्टमिट्ठे रस से पूर्ण, फूंककर के उडा दी गई है राख जिनकी ऐसे प्रज्वलित अगारो के वर्ण को जीत लेने वाले जगत्प्रसिद्ध सतरे पैदा होते हैं, जिस देश के नींबू, आम, ताल, नारियल, और खजूर की महिमा सभी देशो के रसिको के कान को बार-बार छूती है । जहाँ सहस्त्रो भयकर आवर्तो से व्याप्त नदियो मे हो हो करते हुए डाँड को डालते हुए, पतवार को चलाते हुए, मत्स्यवेधक यन्त्र को लगाते हुए, जाल मे फसी हुई मरणासन्न मछलियो के छटपटाने को देखकर आनन्दित होते हुए, तट न दिखाई पडने वाले महाप्रवाहो मे छोटी-छोटी, कुभडे की 'फाँक' की आकार वाली नौका से पिसे हुए काजल से सलिप्त हुए से, स्याही से स्नान किये, शरीरधारी अन्धकार के समान धीवरो (मछुओ) के लडके निर्भय होकर खेलते हैं ।

सस्कृत-व्याख्या—अफ० किम् = किंकथितम्, पूर्ववङ्गेऽपि = पूर्ववङ्गाले गतोऽसि ?

तानरग—आम् = एवम्, श्रीमन् = भगवन् । पूर्ववङ्गमपि = तद्देशमपि, सम्यक् = यथाविधि, अवालुलोकत् = अवलोक याञ्चकार, जनः = नर, यत्र = पूर्ववङ्गे, प्रान्तप्ररूढाम् = तटोपान्त समुद्भूताम्, पद्मावलीम् = कमलश्रेणिम्, परिमर्दयन्ती – कूर्चन्ती, पद्मेव = श्रीरिव, द्रवीभूता = उपस्नुता, पय. पूर प्रवाह परम्पराभि = जलप्रवाहपटलयुक्ताभि, पद्मा = एषानदी, प्रवहति = वहति, यत्र = वङ्गे, ब्रह्मपुत्र इव = गरलविशेष इव शत्रुसेनानाशनकुशल = वैरिपताकिनी विनाशदक्ष, ब्रह्मदेशम् = एतद्देशम्, विभजन् = विभाग कुर्वन्, ब्रह्मपुत्रोनाम = एतन्नाम, नद = विशालानदी, भूभागम् = भूमिस्थलम्, क्षालयति = सिञ्चति ।

यत्र=वङ्गे, साम्लसुमधुररसपूरितानि=सुमधुराम्लरसयुक्तानि, फूत्कारेण=मुखवायुना, उद्धूता=उड्डायिता, भूति=भस्म, येषां तादृशा ये ज्वलन्त=प्रकाशमाना, अङ्गारा, तद्दाम, विजिन्वन्ति - जयशीला, वर्णा येषां तानि, जगत्प्रसिद्धानि=विश्वविख्यातानि, नारङ्गाणि=ननारगापि, उद्भवन्ति=प्रादुर्भवन्ति, यद्देशीयानाम=यद्देशोद्भवानाम् जम्बीराणाम, रसालानाम्=आम्राणाम्, तालानाम्=तालवृक्षाणाम् खर्जूरगणाम=खर्जूरवृक्षाणाम्, नारिकेलानाम्=फलविशेषाणाम्, च, महिमा=गौरवम, सर्वदेशरसज्ञानाम्=निखिलदेशरसिकानाम, साम्रेडम्=पुन पुन, कर्णम्=श्रोत्रम्, स्पृशति=अभिपतति, यत्र=वङ्गे, च, भयकरावर्तसहस्राकुलासु=भीतिजनकभ्रमिसहस्रै, स्रोतस्वतीषु=नदीषु, सहोहोङ्कारम्='हो हवि'ति शब्द युक्तम्, क्षेपणी=नौकादण्डान्, क्षिपन्त=निक्षिपन्त, अरित्रम=केनिपातकम्, चालयन्त=चालन कुर्वन्त, वडिशम्=मत्स्यवेधनम्, योजयन्त=सयोजन कुर्वन्त, कुवेणीस्थम्रियमाणमत्स्यपरीवर्त्तनालोकम् कुवेण्याम=मत्स्याधान्या तिष्ठन्ति ये ते कुवेणीस्था, म्रियमाणा=आसन्नमरणा ये मत्स्यास्तेषा परीवर्त्तान्=पार्श्वपरिवर्तितानि, आलोकम्=दर्शम्, आनन्दत=आनन्द प्राप्नुवत, अदृष्टतटेष्वपि=अदृष्ट पुलिनेष्वपि, महाप्रवाहेष्वपि=घोरप्रवाहेष्वपि, स्वल्पया=अतिह्रस्वया, नौकया=तरणिकया, भिन्नाञ्जनलिप्ता इव=पिष्टकज्जल सलिप्ता इव, मसीस्नाता इव=श्यामलिकासिक्ता इव, साकारा=सशरीरा, अन्धकारा इव=तमासीव, काला=कृष्णा, धीवरबाला=धीवरपुत्रा, निर्भया=भयरहिता, क्रीडन्ति=खेलन्ति ।

हिन्दी-व्याख्या—अवालुलोकत्=देखा, 'अव + √लोक्+लङ् (तिप्)'। गृध जन=तानरग । प्रान्तप्ररूढाम्=किनारे पर उगी हुई, 'प्रान्ते प्ररूढा ताम् (तत्पु०)' । पद्मावलीम्=कमल की पंक्ति को, अवली=पंक्ति। परिमर्दयन्ती=मसलती हुई, 'परि+√मृद्+णिच्+शतृ (ङीप्)' । पद्मा इव=शोभा के समान। द्रवीभूता=जलरूप मे परिवर्तित हुई । पय पूरप्रवाहपरम्पराभि=जल पूरित प्रवाह परम्पराओ से । ब्रह्मपुत्र इव=ब्रह्मपुत्र नद के समान, "ब्रह्मपुत्र पदीपन" (अमरकोष) । शत्रुसेनानाशनकुशल=शत्रुओ की सेना के नाश मे दक्ष, 'शत्रूणा सेनाया नाशने कुशल (तत्पु०)' । विमजन्=

विभाग करता हुआ । क्षालयति = धोता है । साम्ल सुमधुरसपूरितानि = खट्टे और मीठे रस से भरे हुए, 'शोभनम् मधुर सुमधुरम्, आम्लेन सहित साम्लः साम्लश्चासौ सुमधुरस्तेन रसेन पूरितानि ।' फूत्कारोद्धूतभूतिज्वलदङ्गार विजित्वरवर्णानि = फूंकने से उडा दी गई है भस्म जिसकी, ऐसे धधकते हुए अंगारो के विजयी रंग वाले (नारङ्गापि का विशेषण), अर्थात् जिनकी राख फूंककर उडा दी गई है ऐसे जलते हुए अंगारो को मात देने वाले हैं रंग जिसके । फूत्कार = फूंकना, उद्धूत = उडा दिया गया, भूति = राख, ज्वलत् = जलते हुए, विजित्वर = जीतने वाले । ' 'फूत्कारेण उदधूता भूति येषा तादृशा ये ज्वलदङ्गारा तेषां विजित्वरा वर्णा येषा तानि (ब० व्री०)' । उद्धूत = 'उद् + √धूञ् + क्त', विजित्वर = जयनशील, नारङ्गापि = संतरे । उद्भवन्ति = पैदा होते हैं । यद्देशीयानाम् = जिस देश के, देशीय = 'देश + छ' । जम्बीराणाम् = नीबुओ के । सर्वदेशरसाज्ञानाम् = सभी देशो के रसिको के । साम्रेडम् = बार-बार । भयंकरावर्त सहस्त्रा कुलासु = हजारो भयंकर लहरो से आकुल (व्याप्त) (नदी का विशेषण), ''भयकरै· आवर्त्त सहस्त्रै आकुलास्तासु' (तत्पु०) । आवर्त्त = लहर 'स्यावर्त्तोऽम्भसा भ्रम.' (अमरकोष) । स्रोतस्वतीषु = नदियो मे, 'स्रोतस् + मतुप + ङीप्' । क्षेपणी = डाँड "नौकादण्ड क्षेपणी स्यात्" (अमर कोष) । क्षिपन्त = डालते हुए । अरित्रम् = पतवार, 'अरित्रम केनिपात' (अमर कोष) । बडिशम् = मछली फसाने वाले काँटे, 'बडिशम् मत्स्यवेधनम्' (अमर कोष) । योजयन्त = डालते हुए । कुवेणीस्थ म्रियमाण मत्स्यपरीवर्त्तान् = जाल मे फसी मरणासन्न मछलियो के छटपटाने (तडपन) को, कुवेणी = मछलियो वाला जाल, म्रियमाण = मरणासन्न, '√मृङ् + शानच्', परीवर्त्तान् = छटपटाहट । ''कुवेण्या तिष्ठन्ति ये ते कुवेणीस्था ये म्रियमाणा· मत्स्यास्तेषा परीवर्त्तान् (तत्पु०)' । आलोकमालोकम् = देख-देखकर । आनन्दत = आनन्दित होते हुए । अदृष्ट तटेषु = तट न दिखाई पडने वाले, 'अदृष्ट तट येषा तेषु' । कूष्माण्डफक्किकाकारया = कुम्हडे (कद्दू) के फाँक की आकार वाली (नौका का उपमान है), 'कूष्माण्डस्य फक्किकाया आकार इव आकार यस्या सा तया (ब० व्री०)' । भिन्नाञ्जनलिप्ता इव = पिसे हुए काजल से लिपेपुते से, 'भिन्नेनाञ्जनेन लिप्ता (तत्पु०)' । मसीस्नाता इव = स्याही से स्ना ,

अफजल खाँ—(क्षणभर बाद) अच्छा, तो आप मूर्छना प्रधान गाते हैं अथवा तान प्रधान ?

तानरग—ऐसा और वैसा भी अर्थात् मूर्छना प्रधान और तान-प्रधान दोनो गाता है।

अफजल खाँ—(थोडी देर बाद) ठीक है, कोई राग अलापिये।

तानरग—(कुछ विचार कर) यदि आज्ञा हो तो एक रागमाला गीत गाऊँ जिस गीत के प्रत्येक खण्ड मे एक नया ही राग होगा और एक ही ध्रुव से चलेगा और उन सभी रागो के नाम भी उसी मे प्राप्त हो जाएँगे।

अफजल खाँ—वाह ! क्या ऐसा है ? ऐसा तो गाना प्राय. नही सुना जाता है, तो गाइये।

सस्कृत-व्याख्या—अफजल खाँ—(स्वयम् = अफजलखान, हसन् = प्रफुल्लन, सवान् = अन्यान्, च, हसत, पश्यन् = अवलोकयन्) सत्य सत्यम् = समीचीनम् ! धन्य = साधुवादार्ह, भवान् = त्वम्, य· = तानरग, अल्पेनैव = अल्पीयसैव, वयसैवम् = अवस्थयैवम्, विदेशभ्रमणै = देशदेशाटनै, चातु· रीम् = कुशलताम्, कलयति = धारयति।

तानरग—धन्य एव = धन्योऽहम्, यदि = चेत्, युष्मादृशै = भवासदृशै, अभिनन्द्ये = अभिनन्दितो भवामि !

अफजल खान—(किञ्चित्समयानन्तरम्) अथ, भवान् = तानरग, मूर्च्छ· नाप्रधानम् = आरोहावरोह क्रम युक्त स्वरसमूहम्, गायति = गान करोति, वा = अथवा, तानप्रधानम् = आरोह क्रम युक्त स्वरसमूहम् ?

तानरग—ईदृक्षम् = मूर्च्छनाप्रधानम्, तादृक्षञ्च = तान प्रधानञ्च।

अफजलखान—(क्षणानन्तरम्) अस्तु = युक्तम्, आलप्यताम् = आलाप क्रियताम्, कश्चन् राग = किमपि रञ्जकस्वर सन्दर्भ।

तानरग—(किञ्चिद्विचार्य्य) आज्ञा चेत = चेत् आज्ञापयतु भवान्, एकाम् = केवलाम्, रागमालागीतिम् = एतन्नाम्नी गीतिम, गायानि = गान करोमि, यत्र = यस्मिन् प्रत्याभोगम् = प्रतिगेय खण्डम्, नवीन एव = नूतन एव, राग = आलाप, भवेत् = स्यात्, एकेनैव च, ध्रुवेण = स्थिरपदेन, सङ्गच्छेत् = सम्मे-

से, 'भिन्नेनाञ्जनन ।।।~।।

ल्येत्, तत्तद्राग-नामानि = गीत प्रयुक्तप्रतिरागनामानि, च, तत्रैव = रागैव, प्राप्ये-रन् = लभेरन् ।

अफजलखान - आ ! किमेवम् = एतदस्ति ? ईदृशम् = एतद्विधम्, तु, गानम् = गीतिम्, न, प्राय = सामान्यरूपेण, श्रूयते = आकर्ण्यते, तद्, गीयताम् = आलप्यताम् ।

हिन्दी-व्याख्या—अल्पेनैव = कम ही । वयसा = अवस्था से । विदेशभ्रमणै = विदेशो के भ्रमण से । चातुरीम् = कुशलता को । कलयति = प्राप्त कर लिये हो । युष्मादृशै = आप जैसे लोगो के द्वारा । अभिनन्द्ये = अभिनन्दित किया जाऊं । मूर्च्छना प्रधानम = मूर्च्छना प्रधान, तानप्रधानम् = तानप्रधान, आरोह और अवरोह क्रमयुक्त स्वरसमुदाय को मूर्च्छना और आरोहक्रम युक्त स्वरो को तान प्रधान कहा जाता है—'आरोहावरोहक्रमयुक्ता स्वरसमुदायोमूर्च्छनेत्युच्यते, तानस्त्वारोहक्रमेण भवति' (मतग) । आलप्यताम् = अलापिये । रागमालागीतिम् = एक विशेष प्रकार की राग वाला गीत । प्रत्याभोगम् = प्रत्येक गेयखण्ड । ध्रुवेण = स्थिर पद, सभी पदो के अन्त मे जिसका उच्चारण बार-बार किया जाता है, उसे ही ध्रुव (अन्वर्थक सज्ञा) कहा जाता है । सगच्छेत = चले । तत्तद्राग नामानि = उन-उन रागो के नाम । प्राप्येरन् = प्राप्त हो जाते हैं । ईदृशम् = इस प्रकार । श्रूयते = सुना जाता है ।

ततस्तानपूरिकाया स्वरान् सगेल्य पातित-वाम-तानपूरिकातुम्ब क्रोडे निधाय दक्षपादस्योत्थितजानुनि च दक्ष-हस्त-कूर्पर-स्थापन-पुरसर तेनैव हस्तेन तर्जन्यङ्गुल्या तानपूरिका रणयन् स्वकण्ठेनापि त्रीन् ग्रामान् सप्त स्वराश्च समधात् ।

हिन्दी अनुवाद—तब तानपूरे के स्वर को मिलाकर, बायाँ घुटना टेककर, तानपूरे की तूँबी को गोद मे रखकर, दाहिने पाँव की उठी हुई जघा पर दाँये हाँथ की कुहनी रखकर, उसी हाँथ की तर्जनी उँगली से तानपूरे को बजाते हुये, अपने कठ से भी (षड्ज, मध्यम, गान्धार) तीन ग्रामों और [निषादादि] सात स्वरो को अलापित किया ।

सस्कृत-व्याख्या—तत = तदनन्तरम्, तानपूरिकाया = वाद्यविशेषस्य, स्वरान् = निषादादीन्, सम्मेल्य = सयोज्य, पातितवामजानु = भूमि-स्थापित-

दक्षेतरक्षेतरजानु, तानपुरिकातुम्बम् = तानपूरिकाप्रवालम्, क्रोडे = अङ्के, निधाय = संस्थाप्य, दक्षपादस्य = सव्यचरणस्य, उत्थितजानुनि, पक्षहस्तकूर्परस्थापन-पुरःसरम् = दक्षकरकफोणिस्थापनपूर्वकम्, तेनैव = दक्षिणेनैव, हस्तेन = करेण, तर्जन्यगुल्या = विशेषैकांगुल्या, तानपूरिकाम = वाद्यविशेषम्, रणयन = वादयन्, स्वकण्ठेनापि = निजोच्चारणेनापि, त्रीन् ग्रामान् = षड्ज मध्यम गान्धारान्, सप्तस्वरान् = निषादादिसप्तस्वरान् समधात् = समयोजयत् ।

हिन्दी-व्याख्या—समेत्य = मिलाकर, 'सम् + √मिल् + ल्यप्' । पातितवाम-जानु = बाँये घुटने को गिरा कर, पातित वामजानु यस्य स (ब. व्री.) । क्रोडे = गोद मे । निधाय = रखकर । दक्षपादस्य = दाहिने पैर के । उत्थितजानुनि = उठे हुए घुटने पर, 'उत्थित जानु तस्मिन्' । दक्षहस्त' कूर्परस्थापनपुरःसरम् = दाहिने हाँथ कै कोहिनी रखकर, कूर्पर = कोहिनी । हाँथ के बीच की गाँठ को कूर्पर कहते हैं—"स्यात् कफोणिस्तु कूर्परः" (अमरकोष) । तर्जन्यंगुल्या = अगूठे के बगल की उगली से । रणयन् = अनुरणित (बजाते) करते हुए । त्रीन् ग्रामान् = षड्ज, मध्यम और गान्धार इन तीन ग्रामो को—"षड्ज—ग्रामो भवेदाद्यो मध्यमग्राम एव च । गान्धार ग्राम इत्येतद् ग्रामत्रयमुदाहृ दाहृतम् ।' सप्तस्वरान् = निषाद आदि सात स्वरो को । समधात् = समायोजित किया । 'सम् + √ध + लुङ्' ।

तन्मात्रश्रवणेनैव मुग्धेष्विवाखिलेषु इमा राग माला-गीतिमगायत्-
सखि हे नन्द-तनय आगच्छति ॥ सखि० ॥
मन्द मन्द मुरली-रणनै समधिक-सुख प्रयच्छति ॥
भैरव-रूप पापिजनाना सता सुख-करो देव ।
कलित-ललित-मालती-मालिक सुरवर-वाञ्छित-सेवा ॥
सारगै सारग-सुन्दरो हरिभिर्निपीयमान ।
चपला-चपल-चमत्कृति-वसनो विहित-मनोहर-गान' ॥
श्रीवत्सेन लाञ्छितो हृदये श्रील श्रीद श्रीश ।
सर्व-श्रीभिर्युत श्रीपति श्री-मोहनो गवीश' ॥
गौरी-पतिना सदा भावितो बर्हिण-बर्ह-किरीट ।
कनककशिपु-कदनो बलि मथनो-विहत-दशानन-कीट ।

हिन्दी अनुवाद—इतना सुनने से ही सभी के मुग्ध हो जाने पर इस रागमाला गीत को अलापा—

हे सखि नन्द के पुत्र आ रहे हैं। मन्द-मन्द मुरली के स्वर से अत्यधिक आनन्द प्रदान कर रहे हैं। (वे कृष्ण) दुष्टजनो के लिये भैरवरूप (भयकर) और सज्जनो के लिये सुखकर हैं। सुन्दर मालती की माला से युक्त हैं, देवता लोग उनकी सेवा करने को लालायित रहते हैं। कामदेव के समान सुन्दर कृष्ण हरिणो के द्वारा अपलक दृष्टि से देखे जा रहे हैं। बिजली के समान चञ्चल चमत्कारी वस्त्र धारण किये हुए हैं और मनोहर गीत गा रहे हैं। हृदय में श्रीवत्स (भृगुपद) का चिह्न है, वे श्रीमान्, लक्ष्मी को देने वाले और लक्ष्मी के स्वामी हैं। सब प्रकार की लक्ष्मी (शोभा) से युक्त लक्ष्मी के पति, लक्ष्मी को मोहित करने वाले और वे वेद-वाणी के ईश, जितेन्द्रिय तथा (वृन्दावन के) पशुओ के स्वामी है। वे शकर जी के द्वारा सेवित, मोरपख के मुकुट को धारण करने वाले, हिरण्यकशिपु का नाश करने वाले, बलि का विध्वस करने वाले तथा दशानन रूपी फोडे को मारने वाले हैं।

सस्कृत व्याख्या—तन्मात्रश्रवणेनैव = रागालापाकर्णनेनैव, मुग्धेषु = आनन्दितेषु, इव, अखिलेषु = सर्वेषु, इमाम् = एनाम्, रागमालागीतिम् = रागमालागानम्, अगायत् = गानमकरोत्—

हे सखि = हे आलि! नन्दतनय = नन्दपुत्र, आगच्छति = आयाति। मन्द मन्दम् = शनै शनै, मुरलीरणनै = मुरलीस्वरै, समधिकसुखम् = अत्यधिकानन्दम्, प्रयच्छति = ददाति। पापिजनानाम् = दुष्टजनानाम्, भैरवरूप = भीषण, सताम् = सज्जनानाम्, सुखकर = सुखद, देव = कृष्ण। कलितललितमालतीमालिक = सुन्दरमालतीमालिकया विभूषित, सुरवरवाञ्छितसेव = देवश्रेष्ठेप्सितसेव, मारगसुन्दर = निरंगसुन्दर, सारंगै = हरिणै, दृग्भि = नेत्रै, निपीयमान = दृश्यमान। चपलाचमत्कृतिवसन = विद्युदिव चञ्चलचाकचिक्यान्वितवस्त्र, निहितमनोहरगान = समाश्रितचित्ताकर्षकगान। श्रीवत्सेन = भृगुपदेन, हृदये = वक्षस्थले, लाञ्छित = चिह्नित, श्रील = श्रीमान्, श्रीद = लक्ष्मीप्रदायक, श्रीश = लक्ष्म्याधीश्वर, सर्वश्रीभि = सर्वाभि शोभाभि, श्रीपति = लक्ष्मीपति, श्रीमोहन = लक्ष्मीं वशीकर्त्तुं शक्त, गवीश = वेदा-

विष्कारक, जितेन्द्रिय, उद्वा वृन्दावनपशूनां स्वामी। गौरीपतिना = शङ्करेण, सदा = सर्वदा, भावित = सेवित, बर्हिणबर्हकिरीट = मयूरपिच्छमुकुट, कनककशिपुकदन = हिरण्यकशिपुसंहारक, बलिमथन = बलिविध्वंसी, विहतदशानन-कीटः = नाशितरावणकीटः (देव आगच्छति)।

हिन्दी-व्याख्या—नन्दतनय = नन्द के पुत्र कृष्ण। मुरलीरणनं = मुरली की ध्वनि से। समधिकसुख = अत्यधिक सुख को। प्रयच्छति = प्रदान कर रहे हैं। 'प्र + √दाण् + लट् (तिप्)'। भैरवरूप = भयङ्कर। कलितललितमालती मालिक = सुन्दर मालती की माला से युक्त, कलित = युक्त, ललित = सुन्दर। 'कलिता ललिता मालती मालिका येन स (ब० व्री०)'। सुरवरवाञ्छितसेव = इन्द्रादि देवता जिसकी सेवा कामना रखते हैं, "सुरवरैः वाञ्छिता सेवा यस्य स (ब० व्री०)'। मारग सुन्दर = कामदेव के समान सुन्दर, "मारग इव सुन्दर (कर्मधारय)'। दृग्भि. = नेत्रों से। निपीयमान. = पिये जाते हुए अर्थात् देखे जाते हुए, 'नि + √पा + य + शानच्'। चपलाचपलचमत्कृतिवसन = बिजली के समान चञ्चल चमचमाहटपूर्ण वस्त्र वाले, "चपला इव चपला चमत्कृति तादृश वसनम् यस्य स. (ब० व्री०)"। श्रीवत्सेन = महर्षि भृगु के पद से, लाञ्छित = चिह्नित हैं। श्रील = शोभावान्। श्रीदः = धन सम्पत्ति प्रदान करने वाले। श्रीश = लक्ष्मी के स्वामी। सर्वश्रीभि = सभी प्रकार की शोभा से। युत = युक्त। श्रीमोहन = लक्ष्मी को मोहित करने वाले,' श्रिय मुह्यति इति श्रीमोहन'। गवीश = वेद वाणी के आविष्कारक, 'गवा वाणीणाम् ईश' अथवा जितेन्द्रिय, 'गवाम् = इन्द्रियाणामीशः इति अथवा पशुओ के स्वामी 'गवाम् = पशूनामीश" । गौरीपतिना = शङ्कर के द्वारा, 'गौर्या पतिस्तेन (तत्पु०)। भावित = ध्यान किये जाते हुए। बर्हिणबर्हकिरीट = मोर पंख के मुकुट धारण करने वाले, बर्हं = मोरपंख, बर्ही = मोर। बर्हिण' बर्हं इव किरीटः यस्य स (ब० व्री०)। कनककशिपुकदन' = हिरण्यकशिपु को मारने वाले, कदन = मारने वाले = 'कद + ल्युट्'। नरसिंहावतार लेकर भगवान् ने हिरण्यकशिपु को मारा था। बलिमथन = बलि का ध्वंस करने वाले। वामनावतार से बलि के यज्ञ का विध्वंस किया था। विहतदशाननकीट = दशानन रूपी कीट को मारने वाले। विहत दशानन एव कीट येन स (ब०व्री०)।

टिप्पणी—(i) उक्त पद्य कृष्ण सम्बन्धी वर्णन के अतिरिक्त भैरव, ललित,

सारङ्ग, श्री राग और गौरी आदि रागो का नाम भी आ जाता है ।

(ii) कृष्ण के रूप-वर्णन मे उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक अलङ्कारो का प्रयोग किया गया है ।

अथ एतावदेव श्रुत्वा अतितरा प्रसन्नेषु पारिषदेषु, ससाधुवादं वितीर्णकङ्कणे च अपजलखाने, तानरङ्गोऽपि सप्रसाद तानपूरिका भूमौ संस्थाप्य अपजलखानस्य गुणग्राहितां प्रशशस ।

अथ अपजलखान क्रमशो मैरेय-मद-परवशता वहन् उवाच—यत् कथ्यतामस्मिन प्रान्ते भवादृशाना गुण गाहका के सन्ति ? के वा कविताया सगीतस्य च मर्मावगच्छन्ति ?

हिन्दी अनुवाद—इतना ही सुनकर सभा मे बैठे हुए लोगो के अत्यन्त प्रसन्न हो जाने पर और प्रसन्न हुए अफजल खाँ के साधुवादपूर्वक (सुवर्ण) कङ्कन का पुरस्कार देने पर तानरग ने भी प्रसन्नता पूर्वक तानपूरे को भूमि मे रखकर अफजल खाँ की गुणग्राहिता की प्रशंसा की ।

इसके बाद अफजल खाँ क्रमश शराब के नशे में मस्त बोला कि कहिए, इस प्रान्त मे आप जैसे लोगो के गुण ग्राहक कौन है ? कौन कविता और सगीत के मर्म समझते हैं ?

सस्कृत-व्याख्या—अथ, एतावेदव = इयन्मात्रमेव, श्रुत्वा = आकर्ण्य, अतितराम् = अतिशयाम्, प्रसन्नेषु = तुष्टेषु, पारिषदेषु = सभासदेषु, ससाधुवादम् = प्रशसापूर्वकम्, वितीर्णकङ्कणे = प्रदत्तकङ्कणे, च, अफजलखाने = सेनापतौ, तानरगोऽपि = गायकोऽपि, सप्रसादम् = सहर्षम्, तानपूरिकाम् = वाद्यम्, भूमौ = पृथिव्याम्, सस्थाप्य = स्थापयित्वा, अफजलखानस्य = सेनापते', गुणग्राहिताम् = गुणज्ञताम्, प्रशशंस = प्रशंसयामास ।

अथ = अनन्तरम्, अफजलखान = सेनापति, क्रमश = क्रमेण, मैरेयमदविवशताम् = आसवमदाधीनताम्, वहन् = धारयन्, उवाच = जगाद,—यत्, कथ्यताम् = वदतु, अस्मिन् प्रान्ते = इह प्रदेशे, भवादृशानाम् = त्वत्सदृशानाम्, गुणग्राहका = गुणग्राहिण, के, सन्ति ? के वा, कविताया = काव्यस्य, संगीतस्य, च, मर्म = रहस्यम्, अवगच्छन्ति = जानन्ति ?

हिन्दी-व्याख्या—एतावद् = इतना। अतितराम् = अत्यधिक, 'अति + तरप्'। पारिषदेषु = सभासदो के, 'परिषदि साधव-पारिषद, 'परिषद + अण्' यहाँ पर 'यस्य भावेनभावलक्षणम्' से सप्तमी। ससाधुवादम् = साधुवाद पूर्वक। वितीर्णकङ्कणे = कङ्कण से पुरस्कृत कर देने पर। सप्रसादम् = प्रसन्नतापूर्वक। संस्थाप्य = रखकर। भूमौ = भूमि मे। गुणग्राहिताम् = गुणग्राहकता (गुणो को पहचानने की सामर्थ्य) को। प्रशशस = प्रशसा की, 'प्र + √शस + लिट् (तिप्)'।

मैरेयमदविवशताम् = शराब की मद की विवशता को, मैरेय = मद्य (शराब), 'मैरेयस्य य मदस्तस्यविवशताम्' (तत्पु०)। वहन् = धारण किये हुए, '√वह् + शतृ। कथ्यताम् = कहिए। भवादृशानाम् = आप सदृश लोगो के। गुणग्राहका = गुण ग्रहण करने वाले। मर्म = रहस्य को। अवगच्छन्ति = जानते हैं; 'अव + गम् + लट् (झि)'।

ततस्तानरङ्गोऽव्यकथत्—को नामापर शिववीरात्? स एव राजनीतौ निष्णात, स एव सैन्धवाऽऽरोह-विद्या-सिन्धु, स एव चन्द्रहास-चालने चतुर, स एव मल्ल-विद्या-मर्मज्ञ, स एव बाण विद्या-वारिधि, स एव पण्डित-मण्डल-मण्डन, स एव धैर्य-धारि-धौरेय, स एव वीर-वार-वर, स एव पुरुष पौरुष-परीक्षक, स एव दीन-दु ख-दाव-दहन, स एव स्वधर्मरक्षन-सक्षण, स एव विलक्षण-विचक्षण, स एव च मादृश गुणि-गण-गुण-ग्रहणाऽऽग्रही वर्तते।

अथ अपजलखाने—"तत् किं शिव एष एव गुण-गण-विशिष्टोऽस्ति? एव वा वीर वरोऽस्ति?" इति सचकित सभयं सतर्कं सरोमोद्गमं च कथयति, किञ्चिद् विचार्यैव नीति कौशल-पुरसर गौर. पुनरवादीत्।

हिन्दी अनुवाद—तब तानरग ने कहा—शिववीर के अतिरिक्त और कौन ऐसा है? वे ही राजनीति मे पारगत हैं, वे ही घुडसवारी की विद्या के समुद्र हैं, वे तलवार चलाने मे चतुर हैं, वे ही मल्लविद्या के मर्मज्ञ हैं, वे ही बाण विद्या के सागर हैं, विद्वन्मण्डली के आभूषण हैं, वे ही धैर्यशालियो के धुरीण हैं, वे ही वीरो मे श्रेष्ठ हैं, वे ही पुरुषों के पौरुष के परीक्षक हैं, वे ही दीनो

के दुख रूपी जगल के लिये दावाग्नि हैं वे ही अपने धर्म के रक्षण के प्रति उत्साही है, और वे ही अद्भुत विद्वान् है, वे ही हम जैसे गुणी लोगो के गुण ग्रहण के आग्रही है।

इसके बाद अफजल खाँ के—"तो क्या यह शिववीर इस प्रकार के गुण से युक्त हैं ? क्या इतना अधिक वीर है ?" इस प्रकार आश्चर्य, भय, अनुमान और रोमाञ्चपूर्वक कहने पर, जैसे कुछ विचार करके नीतिकौशलपूर्वक गौर-सिंह पुन• बोला।

संस्कृत व्याख्या—तत =तदनन्तरम, तानरग =गायक, अनकथत्= अनवत्, को नामापग =को नामान्ग, शिववीगत= शिवात्, स एव=शिव-वीरएव, राजनीतौ, निष्णात =कुशल•, स एव, सैन्धवारोह विद्या सिन्धु=अश्वारोहणकलासागर, स एव, चन्द्रहास चालने=कृपाणचालने, चतुर=दक्ष, स एव, मल्लविद्यामर्मज्ञ =मल्लविद्याविशेषज्ञ•, स एव, बाणविद्या-वारिधि =धनुर्विद्यार्णव, स एव, पण्डित मण्डल मण्डन =विद्वन्मण्डलाभरण•, स एव, धैर्यधारिधौरेय =धीरधुरीण, स एव, वीरकारवर =वीरसमूहश्रेष्ठ, स एव, पुरुष पौरुष परीक्षक =पुरुषशक्तिज्ञ, स एव, दीनदुखदावदहन =अना-थक्लेशविपिनस्याग्नितुल्य, स एव, स्वधमरक्षणसक्षण =निजधर्मपरिपालने सोत्साह, स एव, विलक्षणविचक्षण =विशिष्टविद्वान्, स एव च, मादृशगुणि-गणगणग्रहणाग्रही =मत्सदृशगुणिसमूहगुणावग्रहाग्रही, वर्तते=अस्ति।

अथ=अनन्तरम्, अफजलखाने=सेनापतौ="तत्किम्, शिव.=शिववीर, एप =अयम्, एवम्=ईदृग्, गुणगणविशिष्ट =गुणगणयुक्त, अस्ति=वर्तते ? एव वा, वीरवरोऽस्ति=वीरश्रेष्ठोऽस्ति," इति=एवम, सचकितम्=चकितेन सह, सभयम्=भयेन सह, सतर्कम्=तर्केण सह, सरोमोद्गमण=सरोमाञ्चम्, च कथयति=वदति, किञ्चिद=ईषद्, विचार्य इव=चिन्तयित्वेव, नीतिकौशल-पुरसरम्=नीतिचातुर्यपूर्णम्, गौर =गौरसिंह, पुन =भूय, अवादीत्=अवदत्।

हिन्दी-व्याख्या—अचकथत्=कहा। को नाम्=कौन (है)। राजनीतौ=राजनीति में। निष्णात'=स्नान किये हुए अर्थात् पारंगत। 'नि+स्ना+क्त'।

सैन्धवारोहविद्यासिन्धु = घोडो के आरोहण की विद्या के समुद्र, अर्थात् घुड-सवार की कला मे श्रेष्ठ। सैन्धव = घोडा, सिन्धो अयम् सैन्धव, 'सिन्धु + अण्'। "सैन्धवस्य आरोहणस्य विद्याया सिन्धु' (तत्पु०)'। चन्द्रहासचालने = तलवार चलाने मे, चन्द्रहास्य चालने (तत्पु०)'। मल्लविद्यामर्मज्ञ = मल्लविद्या के मर्मज्ञ, शारीरिक युद्ध को मल्लविद्या कहते है। बाणविद्यावारिधि = धनुर्विद्या के समुद्र, 'बाणाना विद्याया वारिधि (तत्पु०)'। पण्डितमण्डलमन्डन' = पण्डित मण्डली के आभूषण। धैर्यधारिधौरेय = धैर्यधारियो मे धुरीण, 'धैर्यंधारयन्तीति धैर्यधारिणस्तेषु धौरेय' (तत्पु०)। वीरवारवर = वीर समूह मे श्रेष्ठ, वार = समूह, 'वीराणा वारस्तस्मिन् वर (तत्पु)'। पुरुषपौरुषपरीक्षक = पुरुषो के पौरुष (शक्ति) के पारखी, 'पुरुषाणा पौरुषस्य परीक्षक (तत्पु०)'। दीनदुखदावदहन' = दीनो के दुख रूपी जगल के जलाने वाले, दावदहन, = दावाग्नि। 'दीनाना दु खमेवदावस्तस्य दहन (तत्पु०)'। स्वधर्मरक्षणसक्षण = अपने धर्म के रक्षण मे उत्साही, 'स्वस्य धर्मस्य रक्षणे सक्षण (तत्पु०)'। क्षणेन सहितः-सक्षण = सोत्साह या सहर्ष। विलक्षण विचक्षण = विद्वानो मे श्रेष्ठ, विचक्षण = विद्वान्। मादृशगुणिगणिगुणग्रहणाग्रही = हम जैसे लोगो के गुणो के ग्रहण मे रुचि रखने वाले, 'मादृशाना गुणिना गणस्य गुण ग्रहणे आग्रह अस्ति यस्मिन् स (ब० व्री०)'। 'आग्रह + इन', आग्रही = आग्रह वाला। वर्तते = है। गुणगण विशिष्ट = गुणो से युक्त। वीरवर = वीरो मे श्रेष्ठ। सचकितम् = आश्चर्य पूर्वक। सतर्कम् = अनुमान पूर्वक। सरोमोद्गमम् = रोमाञ्च के साथ। विचार्य इव = विचार सा करके। नीतिकौशलपुरःसरम् = नीतिकौशल पूर्वक। अवादीत् = बोला।

टिप्पणी—(१) सैन्धवारोहविद्यासिन्धु = घुडसवारी विद्या के सागर, बाणविद्या वारिधि' = बाण विद्या के समुद्र, पण्डितमण्डलमण्डन = पण्डित मण्डली के आभूषण और दीनदुखदावदहन = दीनो के दुख रूप जगल के दहन के द्वारा विद्या के सागर, आभूषण और अग्नि का शिववीर मे आरोप किया गया है, अत रूपक अलकार है।

(२) 'मादृश ग्रही' मे अनुप्रास अलकार है।

(३) किञ्चिद्-विचार्येव = 'मानो कुछ विचार करके' यहाँ उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

भगवन् ! सामान्य-राजभृत्यस्य पुन शिववीरो यदि नाम नाभविष्य-त्स्वयमीदृश ऊर्जस्वरा, तत्कथ स्वणदेव-गहण महचर प्राप्स्यत् ? तद्-द्वारा समस्त कल्याण-प्रदेश कल्याण-दुर्गं च स्वहस्तगतमकरिष्यत् ? कथ तोरण दुर्ग-भोग-भाजनतामकलयिष्यत् ? कथ तोरण-दुर्गाद् दक्षिण-पूर्वस्या पर्वतस्य शिखरे महेन्द्र-मन्दिर-खण्डमिव धर्षितारि-वर्गं डमरु-हुडुक्कार-तोपित भर्गं रायगढनामक महादुर्गं व्यरचयिष्यत् ? कथ वा तपनीयभि-त्तिका-जटित-महारत्न- किरणावली वितन्यमान-महाविनान-वितति-विरो-चित-प्रताप-तापित-परिपन्थि-निवह चन्द्रचुम्बन-चतुर-चारु-शिखर-निकरं भुशुण्डिका-किणाङ्कित-प्रचण्ड-भुजदण्ड-रक्षक-कुल-विघोगमान-सहस्रप-रिक्रम घमद्धमद्दोधूयमानानेक-ध्वज-पटल-निर्माथित-महाकाश प्रताप-दुर्गं निरमापयिष्यत् ? कथ वा 'आगत एष शिववीर '— इति भ्रमेणापि सम्भा-सम्भाव्य अस्य विरोधिषु केचन मूर्च्छिता निपतन्ति, अन्ये विस्मृत शस्त्रा-स्त्रा पलायन्ते, इतरे महात्रासाऽऽकुञ्चितोदरा विशिथिल-वासमो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखा दशनेषु तृण सन्धाय साक्रन्ड प्रणिपात-परम्परा रचयन्तो जीवन याचन्ते ।

हिन्दी अनुवाद—श्रीमन् ! एक सामान्य राजा के नौकर का लड़का शिववीर यदि स्वयम् इस प्रकार तेजस्वी न होता तो स्वणदेव जैसा साथी कैसे प्राप्त करता ? उसके द्वारा सारे कल्याण प्रदेश और कल्याण दुर्ग को हस्त-गत कैसे कर लेता ? तोरण दुर्ग को अपना भोग्य कैसे बनाता ? तोरण दुर्ग से दक्षिण पूर्व मे पर्वत की चोटी पर इन्द्र के महल के एक खण्ड के समान दुश्मनो को डराने वाले, डमरू की हुडुक्-हुडुक की ध्वनि से शकर जी को प्रसन्न करने वाले रायगढ नामक महादुर्ग की रचना कैसे करता ? अथवा सोने की दीवालों पर जडे हुए महारत्नो की किरणावलियो से ताने गये महावितानो से सुशोभित प्रताप से शत्रुओ को सतप्त करने वाले, गगनचुम्बी अनेक शिखरो वाले, बन्दूक के (पकड़ने मे बने हुए) घट्टो से अकित प्रचण्ड भुजदण्डो वाले रक्षको के द्वारा हजारों परिक्रमाओ (गश्तो) से रक्षित और 'धमद्-धमद्' शब्द से युक्त फहराते

वाली अनेको पताकाओ से महाकाश को मथने वाले प्रताप दुर्ग को कैसे बनवा लेता ? अथवा 'यह शिववीर आये हैं" भ्रम से भी यह समझकर इनके विरोधियो मे कुछ मूर्च्छित होकर क्यो गिर पडते हैं, कुछ शस्त्रास्त्र छोडकर क्यो भाग जाते है, कुछ अत्यन्त भय से पेट के सिकुड जाने पर वस्त्र के ढीले हो जाने से नगे क्यो हो जाते हैं और दूसरे सूखे मुह वाले दाँतो मे तृण रखकर बार-बार प्रणाम करते हुए जीवन की भिक्षा क्यो माँगने लगते हैं ?

संस्कृत-व्याख्या—भगवन् = श्रीमन् । सामान्यराजभृत्यस्य = सामान्यस्य राजानुचरस्य, पुत्र = सुत , शिववीर = शिव॰, यदि नाम = चेदेवम्, न, अभविष्यत् = स्यात्, स्वयम् = शिववीर , ईदृश = एवम्, उर्जस्वल तेजस्वी, तत्कथम् = केन प्रकारेण, स्वर्णदेवसदृशम् = स्वर्णदेवसमम, सहचरम् = सहयोगिनाम्, प्राप्स्यत् = प्राप्तमकरिष्यत् ? तद्द्वारा = स्वर्णदेवेन, समस्तम् = निखिलम्, कल्याण प्रदेशम् ? कल्याणदुर्गम् = एतद्दुर्गम्, च स्वहस्तगतम् = स्वकरग्रहणम् अकरिष्यत् = कुर्यात् ? कथम्, तोरणदुर्गभोगभाजनताम् = एतद्दुर्गभोग्यताम, आकलयिष्यत् = अप्राप्स्यत् ? कथम्, तोरणदुर्गात् = तद्दुर्गात्, दक्षिणपूर्वस्याम् = दक्षिणपूर्वयो अन्तराले, पर्वतस्य = गिरे, शिखरे = शृङ्गे, महेन्द्र मन्दिर खण्डम — इन्द्रप्रासादशकलम्, इव धर्षितारिवर्गम् = भीतारिसमूहम्, डमरुहुडुक्कारतोषितभर्गम् = डमरुशब्दतोषितशिवम्, रायगढनामकम्, महादुर्गम् = विशाल दुर्गम्, व्यरचयिष्यत् = निरमापयिष्यत् ? कथं वा, तपनीयस्य = सुवर्णस्य, भित्तिकासु = कड्येषु, जटितानाम् = खचितानाम्, महारत्नानाम्, किरणावलीभि = मयूखसमूहै , वितन्यमानस्य = विस्तार्यमाणस्य, महावितानस्य = महोल्लोचस्य, वितत्या = विस्तारेण, विरोचितेन = शोभितेन, प्रतापेन = तापेन, परिपन्थिनिवहं येनतम्; चन्द्रचम्बने = इन्दुस्पर्शे, चतुर' = समर्थ', चारु = शोभन , शिखर निकर = शृङ्गसमूह यस्य तम, भुशुण्डिकानां, किणै = आघातै , शङ्किता = चिह्निता , प्रचण्डा भुजा दण्डा इव गदा तेषाम् रक्षकाणाम् = रक्षातपराणाम्, कुलेन = समूहेन, विधीयमाना सम्पाद्यमाना, परस्सहस्रा = सहस्रादधिका परिक्रमा = मण्डलानि, यस्य तम्, धमद्धमद्धोघूयमान — धमद्धमदिति शब्देन दोधूयमाना भृश कम्पमाना, अनेकेषाम् = बहूनाम्, ध्वजानाम् = पताकानाम्, पटलैन = समूहेन, निर्मथित' = विलो-

दिन, महानाश येन स तम्, प्रतापदुर्गम्=एतन्नामक दुर्गम्, निरमास्यिष्यत् =व्यरचयिष्यत् ? कथ वा, "आगत =आयात, गम =गयम्, शिववीर = शिव", इति क्रमेणापि, सम्भाव्य=अनुचिन्त्य, अस्य=शिवस्य, विरोधिषु= शत्रुषु, केचन, मूच्छिता =चेतनारहिता, =निपतन्ति =स्खलन्ति, गरे, विस्मृत शस्त्रास्त्रा =विस्मृतायुधा, पलायन्ते =दूर व्रजन्ति, इतरे, महात्रासेन =महा- भयेन, आकुञ्चितानि =अशिगानर्यन्त, उदराणि येषा ते, विशिथिलवासस =स्खलितवस्त्रा, नग्ना =निवस्त्रा, शयन्ति, गरे च =अन्ये च, शुष्कमुखा = निरार्द्रमुखा, दशनेषु=रदेषु, तृणम्, सन्धाय =संस्थाप्य, साश्रु टग्, भृशम्, प्रणिपातपरम्पराम्=अतिनमन परम्पराम, रचयन्त =कुर्वन्त, जीवनम्= जीवनदानम्, याचन्ते =प्रार्थयन्ते ।

हिन्दी व्याख्या—सामान्यराजभृत्यस्य=राजा के साधारण कर्मचारी का । अभविष्यत=होता '√भू+लृङ् (तिप)' ईदृग =इस प्रकार । ऊर्जस्वल = बलशाली । स्वर्ण देवसदृशम्=स्वर्ण देव के समान । सहचरम्=साथी को, 'सहचरतीति=सहचरस्तम' '√चर+अच' । प्राप्स्यत्=प्राप्त करते । तद् द्वारा=स्वर्णदेव द्वारा । स्वहस्तगतम =अपने हाथ मे प्राप्त कर लेना । अकरि- ष्यत =कर लेते । तोरणदुर्गभोगभाजनताम्=तोरण दुर्ग को भोग का भाजन (पात्र) । आकलिष्यत्=प्राप्त कर लेते, '√कल+लृङ् (तिप्)' । तोरणदुर्गात =तोरण नामक दुर्ग से । दक्षिणपूर्वस्याम =दक्षिण और पूर्व के मध्य मे । शिखरे=शिखर पर । महेन्द्रमन्दिरखण्डमिव=इन्द्रभवन के खण्ड के समान, महेन्द्रस्य मन्दिरस्य खण्डमिव' । धर्षितारिवर्गम्=शत्रुवर्ग को भयभीत करने वाले, धर्षित=भयभीत, अरिवर्ग=शत्रुवर्ग । 'धर्षित अरीणाम् वर्ग येन तम् (ब० व्री०)' । धर्षित—'√धृष (प्रहसने)+क्त' । डमरुहुडुक्कारतोषितभर्गम्= डमरु के निनाद से शकर को प्रसन्न करने वाले, डमरु=वाद्य विशेष, हुडुक्कार हुडुरु-हुडुक की ध्वनि, तोषित=प्रसन्न किये गये, भर्ग=शकर । "डमरुहुडुक- कारेण तोषित भर्ग अस्मिरतम् (ब० व्री०)' । महादुर्गम्=विशाल किला । व्यरचयिष्यत्= वि+√रच्+लृङ् (तिप)', रचना कर पाते ? तपनीय··· परिपन्थिनिवहम्=सोने के दीवालो मे जटित महारत्नो की किरण समूहो से ताने गये विशाल मण्डप से सुशोभित तेज से शत्रुओ को जलाने वाले, तपनीय

वाली अनेको पताकाओ से महाकाश को मथने वाले प्रताप दुर्ग को कैसे बनवा लेता ? अथवा 'यह शिववीर आये हैं" भ्रम से भी यह समझकर इनके विरोधियो मे कुछ मूच्छित होकर क्यो गिर पडते हैं, कुछ शस्त्रास्त्र छोडकर क्यो भाग जाते हैं, कुछ अत्यन्त भय से पेट के सिकुड जाने पर वस्त्र के ढीले हो जाने से नगे क्यो हो जाते है और दूसरे सूखे मु ह वाले दांतो मे तृण रखकर बार-बार प्रणाम करते हुए जीवन की भिक्षा क्यो मांगने लगते हैं ?

संस्कृत व्याख्या—भगवन् = श्रीमन् । सामान्यराजभृत्यस्य = सामान्यस्य राजानुचरस्य, पुत्र = सुन , शिववीर = शिव', यदि नाम = चेदेवम्, न, अभविष्यन् = स्यात्, स्वयम् = शिववीर , ईदृश = एवम्, उजस्वल तेजस्वी, तत्कथम् = केन प्रकारेण, स्वणदेवसदृणम् = स्वणदेवसमम, सहचरम् = सहयोगिनाम्, प्राप्स्यत् = प्राप्तमकरिष्यत् ? तद्द्वारा = स्वर्णदेवेन, समस्तम् = निखिराम्, कल्याण प्रदेशम् ? कल्याणदुर्गम् = एतद्दुर्गम्, च स्वहस्तगतम् = स्वकरग्रहणम् अकरिष्यत् = कुर्यात् ? कथम्, तोरणदुगभोगभाजनताम् = एतद्दुर्गभोग्यताम, आकलयिष्यत् = अप्राप्स्यत् ? कथम्, तोरणदुर्गात् = तद्दुर्गात्, दक्षिणपूर्वरयाम् = दक्षिणपूवयो अन्तराले, पर्वतस्य = गिरे, शिखरे = शृङ्गे, महेन्द्र मन्दिर खण्डम = इन्द्रप्रासादशकलम, इव धर्षिताग्विर्गम् = भीतारिसमूहम्, डमरुहुडुक्कारनोषितभर्गम् = डमरुशब्दतोषितशिवम्, रायगदनामकम्, महादुर्गम् = विशाल दुर्गम्, व्यरचयिष्यत् = निरमापयिष्यत् ? कथ वा, तपनीयस्य = सुवर्णस्य, भित्तिकासु = कड्येषु, जटितानाम = खचितानाम्, महारत्नानाम्, किरणावलीभि = मयूखसमूहै , वितन्यमानस्य = विस्तार्यमाणस्य, महावितानस्य = महोल्लोचस्य, विततमा = विस्तारेण, विरोचितेन = शोभितेन, प्रतापेन = तापेन, परिपन्थिनिवहं येनतम्, चन्द्रचम्बने = इन्दुस्पर्शो, चतुर' = समर्थे', चारु = शोभन , शिखर निकर = शृङ्गसमूह' यस्य तम; भुशुण्डिकानां किणै = आघातै , अङ्किता = चिह्निता , प्रचण्डा भुजा दण्डा इव येषा तेषाम् रक्षकाणाम् = रक्षातत्पराणाम्, कुलेन = समूहेन, विधीयमाना सम्पाद्यमाना, परस्सहस्रा = सहस्रादधिक परिक्रमा = मण्डलानि, यस्य तम्, धमद्धमद्धोधूयमान = धगद्धगदिति शब्देन दोधूयमाना भृश सञ्चलानाम्, अनेकेषाम् = बहूनाम्, ध्वजानाम् = पताकानाम्, पटलैन = समूहेन, निर्मथित' = विलो-

वाली अनेकों पताकाओं से महाकाश को नापने वाले प्रताप दुर्ग को कैसे बनवा लेता ? अथवा 'यह शिववीर आये हैं" भ्रम से भी यह समझकर इनके विरोधियों में कुछ मूर्च्छित होकर क्यों गिर पड़ते हैं, कुछ शस्त्रास्त्र छोड़कर क्यों भाग जाते हैं, कुछ अत्यन्त भय से पेट के सिकुड़ जाने पर वस्त्र के ढीले हो जाने से नंगे क्यों हो जाते हैं और दूसरे सूखे मुंह वाले दाँतों में तृण रखकर बार-बार प्रणाम करते हुए जीवन की भिक्षा क्यों माँगने लगते हैं ?

संस्कृत-व्याख्या—भगवन् = श्रीमन् ! सामान्यराजभृत्यस्य = सामान्यस्य राजानुचरस्य, पुत्र = सुत , शिववीर = शिव', यदि नाम = चेदेवम्, न, अभविष्यत् = स्यात्, स्वयम् = शिववीर , ईदृश = एवम्, उजस्वल तेजस्वी, तत्कथम् = केन प्रकारेण, स्वर्णदेवसदृशम् = स्वर्णदेवसमम, सहचरम् = महयोगिनाम्, प्राप्स्यत् = प्राप्तमकरिष्यत् ? तद्द्वारा = स्वर्णदेवेन, समस्तम् = निखिलम्, कल्याण प्रदेशम् ? कल्याणदुर्गम् = एतद्दुर्गम्, च स्वहस्तगतम् = स्वकरग्रहणम् अकरिष्यत् = कुर्यात् ? कथम्, तोरणदुर्गभोगभाजनताम् = एतद्दुर्गभोग्यताम्, आकलयिष्यत् = अप्राप्स्यत् ? कथम्, तोरणदुर्गात् = तद्दुर्गात्, दक्षिणपूर्वस्याम् = दक्षिणपूर्वयो अन्तराले, पर्वतस्य = गिरे, शिखरे = शृङ्गे, महेन्द्र मन्दिर खण्डम = इन्द्रप्रासादशकलम्, इव धर्षिताग्विर्गम् = भीतारिसमूहम्, डमरुहुडुक्कारनोषितशर्गम् = डमरुशब्दतोषितशिवम्, रायगदनामकम्, महादुर्गम् = विशाल दुर्गम्, अरचयिष्यत् = निरमापयिष्यत् ? कथ वा, तपनीयस्य = सुवर्णस्य, भित्तिकासु = कड्येषु, जटितानाम् = खचितानाम्, महारत्नानाम्, किरणावलीभि = मयूखसमूहै , वितन्यमानस्य = विस्तार्यमाणस्य, महावितानस्य = महोल्लोचस्य, वितत्या = विस्तारेण, विरोचितेन = शोभितेन, प्रतापेन = तापेन, परिपन्थिनिवह येनतम्, चन्द्रचुम्बने = इन्दुस्पर्शे, चतुर' = समर्थे', चारु = शोभन , शिखर निकर = शृङ्गसमूह यस्य तम्, भुशुण्डिकानां, किणै = आघातै , शङ्किता = चिह्निता , प्रचण्डा भुजा दण्डा इव येषा तेषाम् रक्षकाणाम् = रक्षातत्पराणाम्, कुलेन = समूहेन, विधीयमाना सम्पाद्यमाना, परस्सहस्त्रा = सहस्त्रादधिका परिक्रमा = मण्डलानि, यस्य तम्, धमद्धमद्धोधूयमान -- धमद्धमदिति शब्देन धोधूयमाना भृश सञ्चलताम्, अनेकेषाम् = बहूनाम्, ध्वजानाम् = पताकानाम्, पटलैन = समूहेन, निर्मथित = विलो-

=सुवर्ण, भित्तिका=दीवाल, जटित=जड़े हुए, महारत्न=हीरे पन्नगादि बहुमूल्य रत्न, किरणावली=किरणो की पंक्ति, वितन्यमान=फैलाया जाने वाला, महावितान=विशाल मण्डप, वितति=विस्तार, विरोचित=सुशोभित, प्रताप=तेज, तापित=संतप्त, परिपन्थि=शत्रु, निवह=समूह। "तपनीयस्य भित्तिकासु जटितानां महारत्नानां किरणावलीभिः वितन्यमानस्य विततयाविरोचितेन प्रतापेन तापितः परिपन्थि निवहः येन तम् (व० ब्री०)" चन्द्रचुम्बनचतुर चारु शिखरनिकरम्=चन्द्रमा को स्पर्श करने वाले अनेक सुन्दर शिखरो वाले, "चन्द्र चुम्बने चतुरश्चचारुश्च शिखरनिकरः यस्य तम् (व० ब्री०)" भुशुण्डिका परस्सहस्र परिक्रमम्=बन्दूक के पकड़ने मे पड़े हुए गड्ढो से अङ्कित प्रचण्ड भुजदण्डो वाले रक्षको के कुल से जिसकी हजारो परिक्रमाएं की जा रही है, भुशुण्डिका=बन्दूक, किण=आघात, अङ्कित=चिह्नित, विधीयमान=सम्पादित। "भुशुण्डिकानां किणैः अङ्किताः प्रचण्डाः भुजा दण्डाः इव येषां तेषां, रक्षकाणां कुलेन विधीयमानाः परिसहस्राः परिक्रमाः यस्य तम् (ब० ब्री०)'। धमद्धमद्दोधूयमान महाकाशम्=धमद-धमद् की ध्वनि से फहराने वाले ध्वज समूह से निर्मथित है आकाश जिसमे धमद्-धमद्=ध्वजा के शब्द, दोधूयमान =फहराने वाले, पटल=समूह, निमथित=मथा हुआ। "धमद्धमादिति शब्देन दोधूयमाना=नामनेकधा ध्वजानां पटलेन निमथितं महाकाशं येन तम् (ब० ब्री०)'। निरमापयिष्यत्=बनवा लेते? सम्भाव्य=सम्भावना करके। मूर्च्छिता=अचेत हुए। विस्मृत शस्त्रास्त्रा=शस्त्रास्त्र को भूल जाने वाले, 'विस्मृतानि शस्त्रास्त्राणि यैस्ते (व० ब्री०)'। पलायन्ते=भाग जाते है। महात्रासाकुञ्चितोदर=महात्रास (भय) के कारण संकुचित हो गया है उदर (पेट) जिनका, आकुञ्चित=सिकुड़ा हुआ। 'महात्रासेन आकुञ्चितानि उदराणि येषां ते (ब० ब्री०)'। विशिथिलवाससः=ढीले हो गये हैं वस्त्र जिनके, "विशिथिलानि वासांसि येषां ते (ब० ब्री०)" शुष्कमुखा=सूखे मुख वाले। दशनेषु =दाँतो मे। सन्धाय=रखकर। प्रणिपातपरम्पराम्=नमन की परम्परा को। रचयन्त=करते हुए। याचन्ते=माँगते है।

टिप्पणी—(१) महेन्द्रमन्दिरखण्डमिव—दुर्ग की उपमा इन्द्र महल के खण्ड सी की गई है, उपमा अलङ्कार है।

(२) प्रतापदुर्ग का अति उदात्त वर्णन करने से उदात्तालङ्कार है।

(३) प्रतापदुर्ग की शिखरें चन्द्र चुम्बनी बताई गई हैं, अत अतिशयोक्ति अलङ्कार है।

ततस्तस्य महाप्रतापमवगत्य किञ्चिद्भीते इव तच्छत्रूणा चावहेला-माकलय्य किञ्चिदरुण-नयने इव, दक्षिण-हस्ताङ्गुष्ठतर्जनीभ्या श्मश्रवग्रं परिमृजति यवन-सेनापतौ, तानरङ्ग पुनर्न्यवेदयत्—

परन्त्वद्य सिंहेन सह शिवस्य साम्मुख्यमस्ति, तन्मन्ये इयमस्तमनवेला तत्प्रतापसूर्यस्य।

तत् कर्ण कृत्वा सन्तुष्ट इव सकन्धराकम्प सेनापतिरुवाच—अथात्र सग्रामे कस्य विजय सम्भाव्यते ?

स उवाच—श्रीमन्! यदि शिवस्य साहाय्य साक्षाच्छिव एव न कुर्यात्, तद् विजयपुरस्यैव विजय।

अथ सहास सोऽब्रवीत्—को नाम खपुष्पायित शशशृङ्गायित कमठी-स्तन्यायित सरीसृप—श्रवणायित भेक—रसनानायित वन्ध्यापुत्रायितश्च शिवोऽस्ति ? य एन रक्षिष्यति, दृश्यता श्व एवैषोऽस्माभि पाशैर्बद्ध्वा चपेटैस्ताड्यमानो विजयपुर नीयते।

हिन्दी अनुवाद—तब शिववीर के महाप्रताप को जानकर (अफजल खाँ के) कुछ भयभीत हो जाने पर और उसके शत्रुओ की अवहेलना को सुनकर नेत्रो के कुछ लाल लाल हो जाने पर, अपने दाहिने हाथ के अँगूठे और तर्जनी से मूँछ के अग्रभाग के उमेठने पर तानरग ने पुन. निवेदन किया—किन्तु आज सिंह के साथ शिवराज का सामना पडा है, इसलिये मैं समझता हूँ कि यह उसके प्रताप रूपी सूर्य के अस्त होने का समय है।

यह सुनकर सन्तुष्ट हुआ सा कन्धो को हिलाता हुआ सेनापति बोला—इस सग्राम मे किसकी विजय की सम्भावना है ?

तानरग बोला—श्रीमन्! यदि शिववीर की सहायता साक्षात् शङ्कर ही न करें तो विजयपुर की ही जीत होगी।

तब हँसते हुए अफजल खाँ बोला—यह आकाश कुसुम के समान, खरगोश

की सींग के समान, कछुई के स्तन के समान, सर्प के कान के समान, मेढक की जीभ के समान और बाँझ के पुत्र के समान शिव क्या है ? जो इसकी (शिवाजी की) रक्षा करेगा, देखिये कल ही वह हम लोगो के द्वारा जाल से बाँधकर थप्पड़ो से मारा जाता हुआ विजयपुर को लाया जायगा ।

संस्कृत-व्याख्या—तत =तदनन्तरम्, तस्य= शिवस्य, महाप्रतापम् = महाप्रभावम्, अवगत्य=सज्ञाय, किञ्चित् =ईषद्, भीते इव =धर्षिते इव, तच्छत्रूणाम् =शिववीरवैरिणाम्, च, अवहेलाम् =निन्दाम्, आकलय्य =श्रुत्वा, किञ्चिदारुणे =ईषद्रक्ते, इव, नयने =नेत्रे, दक्षिण हस्ताङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम् = वामेतरकराङ्गुष्ठतर्जनीभ्याम्, समश्रयम्, परिमृजति =सस्पृशति, यवनसेनापतौ अफजलखाने, तानरग =गायकः, पुन, न्यवेदयत् =प्रार्थयत्—परन्तु =किन्तु अद्य, सिंहेन सह =केशरिणासह, शिवस्य =शिववीरस्य, सम्मुख्यम् =आभिमुख्यम्, अस्ति =वर्तते, तन्मन्ये =तस्माज्जानामि, इयम् =एषा, अस्तमनवेला =समाप्तिवेला, तत्प्रतापसूर्यस्य =शिवप्रतापरवे ।

तत्कर्णे कृत्वा =एतच्छ्रुत्वा, सन्तुष्ट इव =परितुष्ट इव, सकन्धराकम्पम् सस्कन्धकम्पम्, सेनापति =अफजलखानः, उवाच =अवदत्, अथ, अत्र = अस्मिन्, सगामे =युद्धे, कस्य, विजय =जय, सम्भाव्यते =अनुमीयते ?

स =तानरग उवाच,—श्रीमन् ! यदि शिवस्य =चेत् शाकरस्य, साहाय्यम् =सहायताम्, साक्षाच्छिव' =प्रत्यक्षरूपेण शंकर', एव, न कुर्यात् =न विदध्यात्; तद् विजयपुरस्यैव =अफजलखानस्यैव विजय =जय ।

अथ =तदा, सहासम् =हासपूर्वकम्, स =अफजलखानः अब्रवीत्-कोनाम =कश्चेत्, खपुष्पायित =आकाशकुसुममिवाचरित, शशशृगायित. =शशशृगमिवाचरित, कमठीस्तन्यायित =कमठ्या स्तनमिवाचरित, सरीसृपश्रवणायित =सरीसृपस्य जन्तो-कर्णमिवाचरित, भेकरसनायितः =मण्डूकीजिह्वा या इव आचरित, वन्ध्यापुत्रायितश्च =वन्ध्याया पुत्रमिवाचरित, शिव. = शङ्कर, अस्ति =वर्तते ? य:, एनम् =शिववीरम्, रक्षिष्यति =रक्षा करिष्यति, दृश्यताम् =पश्यतु, श्व एव =आगामिनिदिने एव, एष =अयम्, अस्माभि = यवनसेनाभि, पाशै =जालै बद्ध्वा =सनियम्य चपेटैं, ताड्यमान =प्रताडित सन्, विजयपुरम् =मद् राजधानीम्, नीयते =प्रापयति ।

हिन्दी-व्याख्या—महाप्रतापम्=महाप्रताप को, 'महाँश्चासौप्रतापतम् (कर्मधारय)'। अवगत्य=जानकर, 'अव+√गम्+ल्यप्'। किञ्चिद्भीते= कुछ भयभीत हुए '√भी+क्त (सप्तमी ए० व०)'। तच्छत्रूणाम्=उसके शिव के) शत्रुओ की। अवहेलाम्=अवहेलना को। आकलय्य=सुनकर, 'आ+√ कल+ल्यप्'। किञ्चिदरुणनयने=कुछ लाल नेत्रो वाले, 'अरुण नयने यस्य स स्तस्मिन्' (ब० व्री०)। दक्षिणहस्तागुष्ठतर्जनीभ्याम्=दाहिने हाथ के अगूठे और तर्जनी से। श्मश्रुवग्रम्=मूछ के अग्रभाग को। परिमृजति=सस्पर्श करता है, 'परि+√मृज्+लट्→शतृ (सप्तमी ए० व०)। यवनसेनापतौ=यवन सेना-पति के। न्यवेदयत्=निवेदन किया। साम्मुख्यम्=सामने। मन्ये=मानता हूँ। अस्तमनवेला=अस्त होने का समय। सूर्य, अस्त और उदित नही होता है केवल कुछ खण्ड के निवासियो के लिये उसके अदृष्ट होने पर अस्त और दृष्ट होने पर उदय का व्यवहार होता है। अतएव कहा गया है—"नैवास्तमनमर्कस्य नोदय सर्वदा सत"। तत्प्रतापसूर्यस्य=शिववीर के प्रताप रूपी सूर्य का, 'तस्य प्रताप एव सूर्यस्तस्य'। अर्थात् शिववीर का प्रताप समाप्त होने वाला है। तत्=उस शब्द को। सकन्धराकम्पम्=कन्धो के कम्पन के साथ अर्थात् कधो को हिलाता हुआ, 'कन्धराया कम्पस्तेन सहितम्, सकन्धराकम्पम्'। सम्भाव्यते=सम्भावना की जाती है। 'सम्+√भावि+लट्'। साहाय्यम्=सहायता। साक्षात्= प्रत्यक्ष रूप मे। शिव=शङ्कर जी। सहासम्=हास पूर्वक, 'हासेन सहितम्' (अव्ययीभाव)। खपुष्पायित=आकाशपुष्प के समान आचरण करने वाला, 'खपुष्पमिवाचरित खपुष्पायित' 'खपुष्प+क्यच्+क्त'। शशशृगायित= खरगोश की सीग के समान। कमठीस्तन्यायित=कछुई के स्तन के समान। सरीसृपश्रवणायित=सर्प के कान के समान। भेकरशनायित=मेढक की जीभ के समान। बन्ध्यापुत्रायितत=बन्ध्या (बाँझ स्त्री) के पुत्र के समान। खपुष्पा-यित बन्ध्यापुत्रायिते=मे 'तद्वदाचरतीति' अर्थ मे क्यच् प्रत्यय हुआ है। इनमे उनका सकलन है जिनका कोई अस्तित्व नही। ये शकर जी के उपमान के लिये प्रयुक्त है। जिस प्रकार इन चीजो का अस्तित्व नही है वैसे ही शकर का भी कोई अस्तित्व नही है। एनम्=शिवराज को। रक्षिष्यति=रक्षा करेगा। दृश्यताम्=देखिये। पाशै=जालो या रस्सियो से बाँधकर। चपेटै=थप्पड़ो से ताड्यमान - मारा जाता हुआ। नीयते=लाया जायगा।

टिप्पणी—(१) प्रताप सूर्यस्य=प्रताप मे सूर्य का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।

(२) 'खपुष्पायित—पुत्रायितश्च' मे आकाश पुष्प, शशशृङ्ग, कमठीस्तन, सर्पकर्ण, भेजरशना और वन्ध्यापुत्र को शङ्कर के उपमान के रूप मे प्रस्तुत किया गया है किन्तु इव 'वाचक' शब्द नही है, अत लुप्तोपमा अलङ्कार है।

—इति सकण्टमाकर्ण्य, "स्यादेव भगवन्!" इति कथयति तानरङ्गे, अभिमान परवश स स्वसहचरान सम्बोध्य पुनरादिशत्—भो-भो योद्धार! सूर्योदयात् प्रागेव भवन्त पञ्चापि सहस्राणि सादिना दशापि च सहस्राणि पत्तीना सज्जीकृत्य युद्धाय तिष्ठत। गोपीनाथ पण्डित—द्वाराऽऽहूतोऽस्ति मया शिव-वराक। तद यदि विश्वस्य स समागच्छेत्, ततस्तु बद्ध्वा जीवन्त नेष्याम, अन्यथा तु सदुर्गमेन धूली करिष्याम। यद्यप्येव स्पष्ट-मुदीरण राजनीति-विरुद्धम्, तथापिमदावेशस्तु न प्रतीक्षते-विवेकम्।

हिन्दी अनुवाद—इतना कष्टपूर्वक सुनकर "ऐसा हो सकता है" तानरग के यह कहने पर अभिमान के कारण वह अपने सहचरो को सम्बोधित करके फिर आदेश दिया—ऐ, ऐ योद्धाओ! सूर्योदय से पूर्व ही (कल) आप सभी पाँचो हजार घुडसवारो और दशो हजार पैदल सैनिको को सज्जित करके युद्ध के लिये तैयार रहना। गोपीनाथ पण्डित के द्वारा मैंने उस वराक (बेचारे) शिव को बुलाया है। तब यदि वह विश्वास करके आवे, तब तो बाँधकर जीवित ही ले चलेंगे, नहीं तो दुर्गसहित उसे धूलि मे मिला देंगे। यद्यपि इस प्रकार कहना राजनीति के विरुद्ध है, तथापि मेरा आवेश (जोश) विवेक की परवाह नहीं करता।

सस्कृत-व्याख्या—इति=एतद्, सकष्टम्=सक्लेशम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, "स्यात्=भवेत्, एवम्, भगवन्=श्रीमन्।" इति=एवम्, कथयति=उक्तवति, तानरगे=गायके, अभिमानपरवश=अहङ्कारवशीभूत, स=अफजलखान, स्वसहचरान्=निजसहयोगिनम्, सम्बोध्य=अभिमुखीकृत्य, पुन, आदिशत्=आदिष्टवान्, भो भो योद्धार=युद्धकर्त्तार!, सूर्योदयात् प्रागेव=सूर्योदयात् पूर्वमेव, भवन्त=यूयम्, पञ्चापि सहस्राणि, सादिना=अश्वारोहिणाम्,

दशापि च सहस्राणि, पत्तीनाम् = पदातीनाम्, सज्जीकृत्य = सुसज्जित कृत्वा, युद्धाय = सग्रामाय, तिष्ठत = प्रतीक्षध्वम्, गोपीनाथ पण्डित द्वारा = एतन्नामक-पण्डितेन, आहूत = आमन्त्रित अस्ति, मया = अफजलखानेन, शिववराक = क्षुद्रशिव । तद्, यदि = चेत्, विश्वस्य = विश्वास कृत्वा, स = शिव, समागच्छेत् = आगच्छेत्, ततस्तु = तदा तु, बद्ध्वा = बन्दीकृत्य, जीवन्तम् = प्राणान् धारयन्तमेव, नेष्याम = प्रापयिष्याम, अन्यथा तु, सदुर्गम् = दुर्ग सहितम्, एनम् = शिवम्, धूली करिष्याम = चूर्णयिष्याम, यद्यपि एवम् = इत्थम्, स्पष्टम् = अगोप्यम्, उदीरणम् = कथनम्, राजनीति । विरुद्धम् = राजनीतिविपरीतम्, तथापि, मदावेशस्तु = अफजलखानावेशस्तु न, प्रतीक्षते = प्रतीक्षा करोति, विवेकम् = बौद्धिकताम् इति ।

हिन्दी-व्याख्या—सकष्टम् = कष्टपूर्वक । स्यादेवम् = ऐसा हो सकता है। कथयति = कहने पर। अभिमानपरवश = अभिमान के वशीभूत हुआ । सम्बोध्य = सम्बोधित करके। आदिशत् = आदेश दिया, 'आ + √दिश् + लङ्' । पञ्चापि सहस्रापि = पाँचो हजार । सादिनाम् = घुडसवारो के, "अश्वारोहास्तु सादिन" (अमरकोप) । दशापि सहस्राणि = दशो हजार, पत्तीनाम् = पदातियो (पैदलो) को "पदातिपत्तिवतगपादातिकपदाजय" (अमरकोप) । सज्जीकृत्य = तैयार करके, 'च्वि' प्रत्यय । तिष्ठत = प्रतीक्षा करो । आहूत = बुलाया गया । शिववराक = बेचारा शिववीर । विश्वस्य = विश्वास करके, 'वि + √श्वस् + ल्यप् । समागच्छेत् = आ जाय । बद्ध्वा = बाँधकर । जीवन्तम् = जीवित । नेष्याम = ले चलेंगे । धूलीकरिष्याम = धूलि मे मिला देंगे, 'धूलि' से 'च्वि' प्रत्यय । उदीरणम् = कहना । राजनीतिविरुद्धम् = राजनीति के विरुद्ध है। मदावेश = मेरा आवेश । प्रतीक्षते = प्रतीक्षा करता है ।

तदवधार्य समस्तक-कूर्चान्दोलनम्—"यदाज्ञाप्यते" यदाज्ञापयते इति वाचा धारासपातैरिव स्नापयत्सु पारिषदेषु, "गोपनीयोऽप्य वृतान्त कथ स्पष्ट कथ्यते?" इति दुर्मनायमानेष्विव च अकस्मादेव प्रविश्य सूदेनोक्तम् "श्रीमन् ! व्यत्येति भोजनसमय" तत् श्रुत्वा "आ ! एव किलैतत्" इति सोत्प्रास सविस्मय सकूर्चोद्धूनन सोपबर्हताडनमुच्चार्य सपद्युत्थाय, 'पुनरागम्यताम्' इति

तानरङ्ग विसृज्य सेनापतिरन्त प्रविवेश । तानरगश्च यथागत निववृते।

इतस्तु प्रतापदुर्गे विहिताहार व्यापारे रजतपर्यङ्किकामेकामधिष्ठिते किञ्चित तन्द्रा परवशे इव गोपीनाथे, शिववीर शनैरुपसृत्य प्रणम्य उपाविशदवोचच्च–अहो ! भाग्यमस्माक यदालय युष्माहृशा भूदेवा स्वचरण-रजोभि पावयन्ति-इति ।

हिन्दी अनुवाद—यह सुनकर सिर और दाढी हिलाते हुए—"जो आदेश है, जो आदेश है" इस प्रकार मानो वाणी की मूसलाधार वर्षा से सभासदो के स्नान कराने पर और "यह गोपनीय वृत्तान्त है, स्पष्ट (खुले आम) कैसे कहा जा रहा है ?" इस कारण कुछ नाराज से होने पर, एकाएक रसोइये ने प्रवेश करके कहा —"श्रीमन् ! भोजन का समय बीत रहा है" यह सुनकर, कुछ मुस्कराकर, विस्मयपूर्वक, दाढी हिलाते हुए और मसनद पर हाथ मारकर—"अरे ! क्या ऐसा है ? यह कहकर तुरन्त ही उठकर, "फिर आइयेगा" ऐसा तानरग से कह कर, विदा करके सेनापति ने अन्दर प्रवेश किया । तानरग जिस मार्ग से आया था उसी से लौट गया ।

इधर प्रतापदुर्ग मे गोपीनाथ जब भोजन करके एक चाँदी के पलग पर बैठे कुछ अलसा से रहे थे, (तभी) शिववीर धीरे से जाकर, प्रणाम करके बैठ गये और बोले—"अहो ! हमारा सौभाग्य है कि मेरे घर को आप जैसे ब्राह्मण ने अपनी चरण-रज से पवित्र कर दिया ।

सस्कृत-व्याख्या—तदवधार्य = तच्छ्रुत्वा, समस्तककूर्चान्दोलनम् = सशिर-स्कूर्चकम्पम्,— "यदाज्ञाप्यते = यदादिश्यते," इति, वाचाम् = गिराम्, धारा सपातैरिव = मूसलाधारवृष्टिभिरिव, स्नापयत्सु = स्नान कारयत्सु, पारिषदेषु = सभासदेषु, "गोपनीयोऽयम् = रहस्यात्मकोऽयम्, वृत्तान्त = प्रवृत्ति, कथम्, स्पष्टम् = प्रत्यक्षत , कथ्यते = उच्यते", इति, दुर्मनायमानेष्विव = विमनाय-मानेष्विव, च, अकस्मादेव = सहसैव, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, सूदेनोक्तम् = पाच-केन कथितम्, "श्रीमन् = भगवन् !, व्यत्येति = समाप्यते, भोजन समय = अशनावसर," तत् श्रुत्वा = एनदाकर्ण्य, "आ, एवम् किलैतत् = किन्वेवम् ?"

इति, सोत्प्रासम् = ईषद्धास्येन सह, सविस्मयम् = साश्चर्यम्, सकूर्चाद्धूननम् = श्मश्रूल्लासनेन सह, सोपबर्हताडनम् = उपधानप्रहारेण साकम्, उच्चार्य = कथयित्वा, सपदि = तत्क्षणमेव, उत्थाय, "पुनरागम्यताम् = पुनरायातु" इति तानरङ्गम् = गायकम्, विसृज्य = प्रस्थाप्य, सेनापति = अफजलखान अन्त-प्रविवेश = अन्तर्जगाम । तानरङ्गश्च = गायकश्च, यथागतम् = यथा यातम्, निववृते = प्रत्यावर्तत् ।

इतस्तु, प्रतापदुर्गे = एतद्दुर्गे, विहिताहारव्यापारे = सम्पा भोजनव्यापारे, रजतपर्य्यङ्किकाम् एकाम्, अधिष्ठिते = विराजमाने, किञ्चित = ईषद्, तन्द्रा परवशे इव = निद्रावशीभूते इव, गोपीनाथे = एतन्नामके पण्डिते, शिववीर = महाराष्ट्राधीश्वर, शनैः = मन्दम्, उपसृत्य = उपगम्य, प्रणम्य = नमस्कृत्य, उपाविशत् = अतिष्ठत, अवोचत् = उवाच, च, "अहो ! अस्माकम् = शिव-वीरस्य, भाग्यम् = सौभाग्यम्, यद्, युष्मादृशा = भवत्सदृशा, भूदेवा = ब्राह्मणा, स्वचरणरजोभि = निजपादधूलिभि, आलयम् = गृहम्, पावयन्ति = पुनन्ति— इति ।

हिन्दी-व्याख्या—तदवधार्य = यह सुनकर । 'अव + √धृ + ल्यप्' । समस्त-ककूर्चान्दोलनम् = शिर और दाढी हिलाने के साथ, 'कूर्च = दाढी, आन्दोलनम् = कम्पन । 'मस्तककूर्चयो आन्दोलनम् तेन सहितम्' । धारासपातै = मूसलाधार वृष्टि से । स्नापयत्सु = स्नान कराने पर, 'स्ना + णिच् + पुक् + शतृ (सप्तमी ब० व०)' पारिषदेषु = सभासदो के । गोपनीय = छिपाने योग्य, '√गुप् + अनीयर्' । स्पष्टम् = खुले आम । कथ्यते - कहा जा रहा है । दुर्मनायमानेषु = कुछ नाराज से होने पर । अदुर्मनसो दुर्मनसो भवन्तीति दुर्मनायमानास्तेषु— 'दुर् + मनस् + क्यङ् + शानच् (स० ब० व०)' । सूदेन = रसोइये के द्वारा । व्यत्येति = समाप्त हो रहा है, 'वि + अति + √इण् + लट् (तिप्)' । सोत्प्रासम् = हासपूर्वक । सकूर्चोद्धूननम् = दाढी हिलाते हुए, 'कूर्चस्य उद्धूननम् तेन सहितम्' । सोपबर्हताडनम् = मसनद पर हाथ पटकते हुए, 'उपबर्ह = मसनद । 'उपबर्हे ताडनम् तेन सहितम्' । उच्चार्य = उच्चारण करके । सपदि = शीघ्र ही । उत्थाय = उठकर । विसृज्य = भेजकर, 'वि + √सृज् + ल्यप्' । अन्त-प्रविवेश = अन्दर प्रवेश किया । 'प्र + विश् + लिट् (तिप्)' । यथागतम् =

जैसे आया था। निवृत्ते = लौट गया। विहिताहारव्यापारे = भोजन कर चुकने पर, 'विहित आहारव्यापार येन स स्तास्मिन्' । रजतपर्य्यङ्किकाम् = चाँदी के पलग पर। अधिष्ठिते = बैठने पर, 'अधि + स्था + क्त (स० ए० व०)' । तन्द्रापरवशे = तन्द्रा के वश मे हुए। उपसृत्य = पास मे जाकर, 'उप + √सृ + ल्यप्' । उपाविशत् = बैठ गया, 'उप + √विश् + लङ् (तिप्)' । युष्मादृशा' = आप जैसे। भूदेवा = ब्राह्मण। स्वचरण रजोभि = अपने चरण की धूलियों से। पावयन्ति = पवित्र करते हैं।

अथ तयोरेवमभूवन्नालापा ।

गोपीनाथ —राजन् ! कोऽत्र सदेह ? सर्वथा भाग्यवानसि, पर साम्प्रत नाह पण्डितत्वेन कवित्वेन वा समायातोऽस्मि, किन्तु यवन-राज-दूतत्वेन । तत् श्रूयता यदह निवेदयामि ।

शिववीर —शिव ! शिव ! खलु खलु खल्विदमुक्त्वा, येषा श्रीमता चरणेनाङ्कित विष्णोरपि वक्ष स्थलमैश्वर्यं मुद्रयेव मुद्रित विभाति, न तेषा ब्राह्मण-कुल-कमल-दिवाकराणा यवन-कैङ्कर्यकलङ्क-पङ्को युज्यते य श्रुण्वतोऽपि मम स्फुटत इव कर्णौ । तथाऽपि कुलीना निरभिमाना भवन्ति-इति आनीतश्चेत् कश्चित् स देश , तदेष आज्ञाप्यता श्रीमच्चरण-कमल-चञ्चरीक ।

गोपीनाथ —वीर ! कलिरेष काल , यवनाऽऽक्रान्तोऽय भारतभूभाग , तन्नास्माक तथा तानि तेजासि, यथा वर्णयसि। साम्प्रत तु विजय-पुराधीश वितीर्णा वृत्ति भुञ्जे इति तदाज्ञामेव परिपालयामि। तत् श्रूयता तदादेश !

शिववीर —आर्य !, अवदधामि ।

हिन्दी अनुवाद—इसके बाद उन दोनो मे इस प्रकार बातें हुईं।

गोपीनाथ—राजन् ! इसमे क्या सन्देह है ? वस्तुत आप भाग्यवान् है, परन्तु इस समय मैं पण्डित रूप या कवि रूप मे नहीं आया हू, अपितु यवन-राज के दूत-रूप मे। इसलिये सुनिये, जो मैं कहता हूं ।

शिववीर—शिव ! शिव ! ऐसा मत कहिये, जिन महानुभावो के चरण से

अङ्कित विष्णु का वक्षस्थल भी ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सुशोभित होता है, उन ब्राह्मण कुल रूप कमलो के सूर्यो को यवनो की सेवा से उत्पन्न कलङ्क रूप पङ्क शोभा नहीं देता, जिसे सुनते हुए भी मेरे कर्ण मानो फूटते हैं। तथापि कुलीन अभिमान रहित होते हैं, इसलिये यदि कोई सन्देश लाया गया है, तो इस श्रीमान् के चरण-कमल के भ्रमर को आज्ञा दीजिये।

गोपीनाथ—वीर ! यह कलियुग है, यह भारत का भूभाग यवनो से आक्रान्त है, इसलिये हममे वैसा तेज नहीं है जैसा वर्णन कर रहे हो। इस समय मै विजय पुर के नरेश द्वारा दिये जाने वाले वेतन का भोग करता हू इसलिये उनकी आज्ञा का ही पालन करूंगा। इसलिये उनका आदेश सुनो।

शिववीर—आर्य ! मैं सावधान हू।

सस्कृत-व्याख्या—अथ=तदनन्तर, तयो =शिववीरगोपीनाथयो , एवम्=इमा , अभूवन्, आलापा =वार्ता । राजन्=क , अत्र=अस्मिन् कथने, सन्देह =सशय , सर्वथा=सर्वप्रकारेण, भाग्यवान्=सौभाग्यशाली असि, पर=किन्तु, साम्प्रत=इदानीम्, अह, पण्डितत्वेन—विद्वद्रूपे, कवित्वेन=कविरूपे, वा=अथवा न, समायात =आगत , अस्मि, किन्तु, यवन-राज-दूतत्वेन यवनाना राजा भूपति तस्य दूत सन्देशवाहक तस्य भाव तेन। तत्=अतएव, श्रूयता =शृणोतु, यत्, अह, निवेदयामि=कथयामि। शिव ! शिव !, खलु=अलम्, इदम्, उक्त्वा=कथित्वा, येषा, श्रीमता=महानुभावाना, चरणेन=पदेन अङ्कित=चिह्नित, विष्णो =हरे, अपि, वक्ष स्थलम्=उर स्थलम्, ऐश्वर्य-मुद्रया=ऐश्वर्यस्य गौरवस्य मुद्रा मणि तया, मुद्रित=अङ्कित, इव, विभाति शोभते, तेषा ब्राह्मणकुलकमल दिवाकराणा=ब्राह्मणाना द्विजाना कुल वश तत् एव कमल पकज तस्य दिवाकर सूर्य ये तेषा, यवन कैङ्कर्यकलङ्कपङ्क =यवनाना कैङ्कर्य सेवा तस्मात् यत् कलङ्क दोष तत् एव पङ्क, न, युज्यते=विशोभते, य, शृण्वत =आकर्णयत , अपि, मम, कर्णौ=श्रवणौ, स्फुटत =विदीर्ण भवत , इव। तथाऽपि=तदपि, कुलीना =उच्चकुलोत्पन्ना , निरभि-माना =गर्वरहिता , भवन्ति, इति, चेत्=यदि, कश्चित्, सन्देश =सवाद , आनीत =प्रस्तुत , तत्=तर्हि, एष , श्रीमच्चरणकमलचञ्चरीक =श्रीमत महानुभावस्य चरणे=पदे ते एव कमले पङ्कजे तयो चञ्चरीक भ्रमर , आज्ञा-

प्यता = प्रादिश्यताम् । एष, कलि काल = कलियुग', अय, भारतभूभाग = भारतस्य भारतवर्षस्य भूभाग प्रदेश, यवनाऽऽक्रान्त = यवनै आक्रान्त पीडित, तत् = अतएव, अस्माक, तानि, तेषा सिवलानि, तथा न, यथा, वर्णयसि = कथयति । साम्प्रत तु इदानीम्, विजयपुराधीशवितीर्णा = विजयपुरस्य आधीश स्वामी तेन वितीर्णा प्रदत्ता, वृत्ति = वेतन, भुञ्जे = भोग करोमि, जीनवनिर्वाह करोमि इत्यर्थं, इति, तदाज्ञाम् = तस्य आज्ञा आदेश ताम्, एव, परिपालयामि धारयामि । तत् = अतएव, तदादेश = तस्य आदेश आज्ञा, श्रूयता = आकर्ण्यंता । अवदधामि = सावधानोऽस्मि ।

हिन्दी-व्याख्या—अथ = इसके पश्चात् । तयो = शिवाजी और गोपीनाथ के मध्य । आलापा = वार्ता, 'आङ् + √ल्यप् + घञ्' (प्र० वि० बहु०) । अत्र = इस कथन मे । सन्देह = सशय । सर्वथा = सब प्रकार से । भाग्यवान् = सौभाग्यशाली । पडितत्वेन = विद्वान् रूप मे, पण्डा + इतच् = पण्डित, पण्डित + त्व = पण्डितत्वेन (तृ० ए० व०) । कवित्वेन = कविरूप मे, कवि + त्व (तृ० एक व०), 'प्रकृत्यादिभ्य उपसख्यानम्' सूत्र से 'पण्डितत्वेन' और 'कवित्वेन' मे तृतीया विभक्ति है । समायात अस्मि = आया हूँ, सम् + आङ् + √या + क्त । यवनराजदूतत्वेन = यवनराज के दूत रूप मे, यवनराज –'राजाऽह सखिभ्यष्टच्' से समासान्त टच् प्रत्यय, दूतत्वेन = दूत + त्व = (तृ० एक व०) । श्रूयताम् = सुनो । खलु = मत, यह निश्चय और निषेध दोनो अर्थों मे प्रयुक्त होता है । उक्त्वा = '√वच् + त्वा, कह कर । श्रीमता = महानुभावो के, श्री + मतुप्, (ष० व० व०) । ऐश्वर्यमुद्रया = ऐश्वर्यस्य मुद्रा तया (ष० त० पु०) । मुद्रित = चिह्नित, विभाति = सुशोभित होता है, वि + √भा दीप्तौ, लट् लकार (प्र० पु० एक व०) । ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणा ब्राह्मण कुल रूपी कमल के सूर्यों का, ब्राह्मणाना कुल तत् एव कमलम् तस्य दिवाकरा तेषा (ब० व्री०) यवनकैङ्कर्यकलङ्कपङ्क = यवनो की सेवा से उत्पन्न कलक रूपी कीचड, कैङ्कर्य = सेवा, 'किङ्कर् + ष्यञ्', यवनाना कैङ्कर्यात् यत् कलङ्क तदेव पङ्क (कर्मधा०) । शृण्वत = सुनते हुए, श्रु + क्त, 'श्रुव शृच' से 'श्रु' को 'शृ' आदेश और 'श्नु' । प्रत्यय । स्फुटत = फूट रहे हैं, √'स्फुट विकसने' लट् लकार (प्र० पु० द्वि० व०) । निरभिमाना = अभिमान रहित, निर्गत अभिमान

येभ्यै ते (ब० व्री०) । आनीत = लाया गया है, आङ् + √नी + क्त । आज्ञाप्यता = आज्ञा दीजिये, 'आ + √ज्ञा + णिच् . पुक् + लोट्' श्रीमच्चरण-कमलचञ्चरीक = श्रीमान् के चरण रूपी कमलो का भ्रमर, श्रीमत चरणे एव कमले तयो चञ्चरीक (ब० व्री०) । कलि काल = चौथा युग अर्थात् कलि-युग । सत, त्रेता, द्वापर और कलि = ये चार युग माने जाते हैं । यवनाऽऽक्रान्त = यवनो से आक्रान्त, यवनै आक्रान्त (त० पु) । आक्रान्त = आङ् + √क्रम् 'पादविक्षेपे' + क्त । साम्प्रत = इस समय, सम्प्रति + अण् । विजयपुराधीश वितीर्णां = विजयपुर के स्वामी द्वारा दी गयी, विजयपुरस्य आधीशेण वितीर्णा, ताम् (तत्पु०), वितीर्णा = वि + √तॄ + क्त, 'रदाभ्या निष्ठातो न' पूर्वस्य च द' से 'त्' को न् आदेश । वृत्ति = वेतन । भुञ्जे = √भुज् लट् लकार, (उ० पु० ए० व०) । श्रूयता = सुनो, √श्रु + यक् लोट् लकार (प्र० पु० ए० व०) । अवदधामि = सावधान हूँ, अध + √धा लोट् लकार (उ० पु० ए० व०), 'जुहोत्यादिभ्य श्लु' से धातु को अभ्यास कार्य और शप् को 'श्लु' आदेश ।

टिप्पणी—(१) 'वक्ष स्थलमैश्वर्यमुद्रया मुद्रितमिव'—वक्ष स्थल ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सा प्रतीत होता है'—यह अर्थ होने के कारण उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

(२) 'ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणा' में 'ब्राह्मणकुल' पर कमल का आरोप होने के कारण रूपकालकार है । 'यवनकैङ्कर्यकलङ्कपङ्क' मे भी यवनो की सेवा के कारण उत्पन्न कलङ्क पर कीचड का आरोप होने के कारण रूपक है । 'श्रीम-च्चरणकमलचञ्चरीक' मे भी रूपक है ।

(३) उपन्यासकार ने ब्राह्मणो के अपकर्ष का सकेत दिया है । तत्कालीन समाज मे विदेशियो के शासन के कारण ब्राह्मणो की शक्ति का अपकर्ष हो रहा था । ब्राह्मण अपनी मान-मर्यादा का परित्याग कर अपने आश्रयदाता की ही उचित या अनुचित आज्ञा का पालन करते थे ।

(४) प्रस्तुत खण्ड से यह भी विदित है कि भारत के अधिकाश भूभाग पर यवनो का अधिकार था ।

(५) शिवाजी द्वारा यवनो की सेवा स्वीकार करने वाले ब्राह्मणो पर व्यग्य किया गया है ।

प्यता = श्रादिश्यताम् । एप , कलि काल = कलियुग:, अयं, भारतभूभाग = भारतस्य भारतवर्षस्य भूभाग प्रदेश , यवनाऽऽक्रान्त = यवनै श्राक्रान्त पीडित., तत् = अतएव, अस्माक, तानि, तेपा शिवलानि, तथा न, यथा, वर्णयसि = कथयति । साम्प्रत तु इदानीम्, विजयपुराधीशवितीर्णा = विजयपुरस्य प्राधीश स्वामी तेन वितीर्णा प्रदत्ता, वृत्ति = वेतन, भुञ्जे = भोग करोमि, जीनवनिर्वाह करोमि इत्यर्थं , इति, तदाज्ञाम् = तस्य श्राज्ञा आदेश ताम्, एव, परिपालयामि धारयामि । तत् = अतएव, तदादेश = तस्य आदेश श्राज्ञा, श्रूयता = आकर्ण्यता । अवदधामि = सावधानोऽस्मि ।

हिन्दी-व्याख्या—अथ = इसके पश्चात् । तयो = शिवाजी और गोपीनाथ के मध्य । आलापा = वार्ता, 'आङ् + √ल्यप् + घञ्' (प्र० वि० बहु०) । अत्र = इस कथन मे । सन्देह = सशय । सर्वथा = सब प्रकार से । भाग्यवान् = सौभाग्यशाली । पण्डितत्वेन = विद्वान् रूप मे, पण्डा + इतच् = पण्डित, पण्डित + त्व = पण्डितत्वेन (तृ० ए० व०) । कवित्वेन = कविरूप मे, कवि + त्व (तृ० एक व०), 'प्रकृत्यादिभ्य उपसख्यानम्' सूत्र से 'पण्डितत्वेन' और 'कवित्वेन' में तृतीया विभक्ति है । समायात अस्मि = श्राया हूँ, सम् + आङ् + √या + क्त । यवनराजदूतत्वेन = यवनराज के दूत रूप मे, यवनराज —'राजाऽह सखिभ्यष्टच्' से समासान्त टच् प्रत्यय, दूतत्वेन = दूत + त्व = (तृ० एक व०) । श्रूयताम् = सुनो । खलु = मत, यह निश्चय और निषेध दोनो अर्थों मे प्रयुक्त होता है । उक्त्वा = '√वच् + त्वा, कह कर । श्रीमता = महानुभावो के, श्री + मतुप्, (ष० ब० व०) । ऐश्वर्यमुद्रया = ऐश्वर्यस्य मुद्रा तया (ष० त० पु०) । मुद्रित = चिह्नित, विभाति = सुशोभित होता है, वि + √भा दीप्तौ, लट् लकार (प्र० पु० एक व०) । ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणा ब्राह्मण कुल रूपी कमल के सूर्यों का, ब्राह्मणाना कुल तत् एव कमलम् तस्य दिवाकरा तेपा (ब० व्री०) यवनकैङ्कर्यकलङ्कपङ्क = यवनो की सेवा से उत्पन्न कलक रूपी कीचड, कैङ्कर्य = सेवा, 'किङ्कर् + ष्यञ्', यवनाना कैङ्कर्यात् यत् कलङ्क तदेव पङ्क (कर्मधा०) । शृण्वत = सुनते हुए, श्रु + क्त, 'श्रुव शृच' से 'श्रु' को 'शृ' आदेश और 'श्नु' । प्रत्यय । स्फुटत = फूट रहे हैं, √'स्फुट विकसने' लट् लकार (प्र० पु० द्वि० व०) । निरभिमाना = अभिमान रहित, निर्गत अभिमान

येभ्यं ते (ब० व्री०) । आनीत = लाया गया है, आड़् + √नी + क्त । आज्ञाप्यतां = आज्ञा दीजिये, 'आ + √ज्ञा + णिच् . पुक् + लोट्' श्रीमच्चरण-कमलचञ्चरीक = श्रीमान् के चरण रूपी कमलो का भ्रमर, श्रीमत चरणे एव कमले तयो चञ्चरीकः (ब० व्री०) । कलि काल = चौथा युग अर्थात् कलि-युग । सत, त्रेता, द्वापर और कलि = ये चार युग माने जाते हैं । यवनाऽऽक्रान्त = यवनो से आक्रान्त, यवनै आक्रान्त (त० पु) । आक्रान्त = आड़् + √क्रम् 'पादविक्षेपे' + क्त । साम्प्रत = इस समय, सम्प्रति + अण् । विजयपुराधीश वितीर्णां = विजयपुर के स्वामी द्वारा दी गयी, विजयपुरस्य आधीशेण वितीर्णा, ताम् (तत्पु०), वितीर्णां = वि + √तृ + क्त, 'रदाभ्या निष्ठातो न पूर्वस्य च द' से 'त्' को न् आदेश । वृत्ति = वेतन । भुञ्जे = √भुज् लट् लकार, (उ० पु० ए० व०) । श्रूयता = सुनो, √श्रु + यक् लोट् लकार (प्र० पु० ए० व०) । अवदधामि = सावधान हूँ, अध + √धा लोट् लकार (उ० पु० ए० व०), 'जुहोत्यादिभ्य श्लु' से धातु को अभ्यास कार्य और शप् को 'श्लु' आदेश ।

टिप्पणी—(१) 'वक्ष स्थलमैश्वर्यमुद्रया मुद्रितमिव'—वक्ष स्थल ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सा प्रतीत होता है'—यह अर्थ होने के कारण उत्प्रेक्षा अलङ्कार है ।

(२) 'ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणा' मे 'ब्राह्मणकुल' पर कमल का आरोप होने के कारण रूपकालंकार है । 'यवनकैङ्कर्यकलङ्कपङ्क' मे भी यवनो की सेवा के कारण उत्पन्न कलङ्क पर कीचड का आरोप होने के कारण रूपक है । 'श्रीम-च्चरणकमलचञ्चरीक' मे भी रूपक है ।

(३) उपन्यासकार ने ब्राह्मणो के अपकर्ष का सकेत दिया है । तत्कालीन समाज मे विदेशियो के शासन के कारण ब्राह्मणो की शक्ति का अपकर्ष हो रहा था । ब्राह्मण अपनी मान-मर्यादा का परित्याग कर अपने आश्रयदाता की ही उचित या अनुचित आज्ञा का पालन करते थे ।

(४) प्रस्तुत खण्ड से यह भी विदित है कि भारत के अधिकाश भूभाग पर यवनो का अधिकार था ।

(५) शिवाजी द्वारा यवनो की सेवा स्वीकार करने वाले ब्राह्मणो पर व्यग्य किया गया है ।

गोपीनाथ —कथयति विजयपुरेश्वरो यद्—"वीर! परित्यज नवा-मिमा चञ्चलतामस्माभि सह युद्धस्य, त्वदपेक्षयाऽत्यन्तमधिक बलिनो वयम्, प्रवृद्धोऽत्र कोष , महती सेना, बहूनि दुर्गाणि, बहवश्च वीरा सन्ति। तच्छुभमात्मान इच्छसि चेत् त्यक्त्वा निखिला चञ्चलताम्, शस्त्र दूरत परित्यज्य, करप्रदतामङ्गीकृत्य, समागच्छ मत्सभायाम्। मत्त प्राप्तपदश्चिरं जीविष्यसि, अन्यथा तु सदुर्दश निहत कथावशेष सवत्स्यंसि। तत् केवल त्वयि दययैव सन्देश प्रेषयामि, अङ्गीकुरु। मा स्म वृद्धाया प्रसवित्र्या रजतश्वेता पक्ष्मपङ्क्तिमश्रु-प्रवाह-दुर्दिने पातय"–इति।

हिन्दी अनुवाद—गोपीनाथ–विचयपुर के नरेश कहते हैं कि–"वीर हमारे साथ युद्ध की इस नवीन चञ्चलता का परित्याग कर दो, तुम्हारी अपेक्षा हम अत्यधिक शक्तिशाली है, यहाँ कोष अत्यधिक है, बडी सेना है, अनेक दुर्ग हैं, बहुत वीर हैं। यदि अपना शुभ चाहते हो तो सम्पूर्ण चञ्चलता और शस्त्र को दूर से छोडकर, कर देना स्वीकार करके, मेरी सभा मे आओ। मुझसे पद प्राप्त किये हुए (तुम) चिरकाल तक जीवित रहोगे, अन्यथा दुर्दशा के साथ मारे हुए कथा मात्र अवशेष रहोगे। इसलिये केवल तुम पर दया के कारण ही सन्देश भेज रहा हू, (इसे) स्वीकार करो। वृद्धा माँ की रजत-सदृश श्वेत बरौनियो को अश्रु प्रवाह रूपी दुर्दिन मे मत गिराओ अर्थात् डुबाओ।"

संस्कृत-व्याख्या—कथयति = वर्णयति, विजयपुरेश्वर = विजयपुराधीश यद्, वीर = बलवान्, अस्माभि सह = सार्धम्, युद्धस्य = रणस्य, इमा = एमा, नवाम् = नवीनाम्, चञ्चलताम् = चपलताम्, परित्यज = त्यज, त्वदपेक्षया = भवदपेक्षया, वयम्, अत्य तमधिक = अत्यधिक, बलिन = शक्तिशालिन, अत्र, प्रवृद्धो = समृद्ध, कोष = धनागार, महती = विशाला, सेना = वाहिनी, बहूनि = अनेकानि, दुर्गाणि = किलानि, बहव. = अनेके, वीरा = वीरसैनिका च, सन्ति। तत्, आत्मन = स्वस्य, शुभ = कल्याण, इच्छसि = वाञ्छसि, चेत = यदि, निखिला = सकला, चञ्चलताम् = चपलताम्, त्यक्त्वा = विमुच्य, शस्त्र, दूरत = दूरात्, परित्यज्य = विमुच्य, करप्रदताम् = करदानम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, मत्सभायाम् = मम सभायाम् राजद्वारे, समागच्छ = आगाहि। मत्त;

प्राप्तपद. = प्राप्त ग्रहीत पद स्थान य म, चिर = दीर्घकाल, जीविष्यमि = जीवन धारिष्यसि, अन्यथा तु, सदुर्दश = मदुर्गति, निहन = हृत, कथावशेष = वृतान्तमात्रशेप, सवत्स्यंमि = भवि यमि । तत् = अतएव, केवल, त्वयि, दयया = कृपया, एव सन्देश = सवाद, प्रेपयामि = कथयामि, अङ्गीकुरु = स्वीकार कुरु । वृद्धाया = जीर्णाया, प्रसविन्या = मातु, रजतश्वेता = रजत कलधौत तद्वत् श्वेता धवला, पक्ष्मपक्तिम् = पक्ष्मयो पक्तिम् आवलिम्, अश्रु प्रवाह-दुर्दिने = अश्रूणा नयनजलाना प्रवाह धारा एव दुर्दिन वर्षापूर्णदिवस तस्मिन, मा स्म, पातय = क्षेपय ।

हिन्दी-व्याख्या—विजयपुरेश्वरो = विजयपुर के ईश्वर अर्थात् राजा, विजय-पुरस्य ईश्वर (प० त० पु०)। परित्यज = छोड दो, परि + √त्यज् लोट् लकार, (म० पु० ए० व०)। चञ्चलताम् = चञ्चलता को, चञ्चल + ता। अस्माभि सह = हमारे साथ, यहाँ पर 'सहयुक्तेऽप्रधाने' से सह' के योग मे तृतीया विभक्ति। त्वदपेक्षया = तुम्हारी अपेक्षा, बलिन = शक्तिशाली, बल + णिनि। प्रवृद्ध = समृद्ध, प्र + √वृ वर्धने' + क्त। महती = बडी, महत् का स्त्रीलिंग रूप। त्यक्त्वा = छोडकर, √त्यज् + त्वा। निखिला = सम्पूर्ण। दूरत. = दूर से, पचमी के अर्थ में 'तसिल्' प्रत्यय। परित्यज्य = छोडकर, परि + √त्यज् + ल्यप्। कर प्रदताम् = कर प्रदान करना, प्रदता = 'प्र + √दा + तल', करस्य प्रदता ताम् (त० पु०)। मत्सभायाम् = मेरी सभा मे, मम सभायाम् (ष० त० पु०)। मत्त = मुझमे, 'अस्मद्' से पचमी के अर्थ मे 'तसिल्' प्रत्यय। प्राप्तपद = पद प्राप्त किये हुये (शिवाजी), प्राप्त पद य स (त० पु०), प्राप्त = प्र + √आप् + क्त। जीविष्यसि = जीवित रहोगे। सदुर्दश = दुर्दशा सहित, दुर्दशया सहितम् (त० पु०)। निहत = मारे गये (शिवाजी), नि + हन् + क्त। कथावशेष = कथामात्र शेप। सवत्स्यंसि = होगे, सम् + वृत् लृट् लकार (म० पु० ए० व०), 'वृद्भ्य स्यसनो.' से विकल्प से परस्मैपद और 'वृद्भ्यश्चतुर्भ्यं' से 'इट्' निषेध। त्वयि = तुम पर। प्रेपयामि = भेज रहा हूँ। अङ्गीकुरु = स्वीकार करो, न अङ्ग अनङ्ग, अनङ्ग अङ्गमिव कुरु इति अङ्गी कुरु। वृद्धाया प्रसविन्या = वृद्ध माता की, प्रसविन्या = प्रसव + णिनि = स्त्री० (प० ए० व०)। रजतश्वेता = चांदी के समान श्वेत, रजतवत् श्वेता

(कर्म० धा०)। पक्ष्मपक्तिम्=बरौनियो की पक्ति को, पक्ष्मयो पक्तिम् (त० पु०)। अश्रु-प्रवाह-दुर्दिने=अश्रु प्रवाह रूप दुर्दिन मे, अश्रूणा प्रवाह तदेव दुर्दिन तस्मिन् (बहु० व्री०), दुर्दिन=मेघाच्छन्न एव वर्षा से पूर्ण दिन, यहाँ णिजन्त 'पत्' के प्रयोग के कारण सप्तमी विभक्ति है। पातय=गिराओ, डुबाओ, √पत्+णिच् लोट् लकार (म० पु० ए० व०)। मा=मत।

टिप्पणी—(१) 'अश्रुप्रवाहदुर्दिने' मे अश्रु प्रवाह पर दुर्दिन का आरोप होने के कारण रूपक अलकार है।

(२) इस खण्ड से विदित होता है कि अनेक बलशाली राजा निर्बल राजाओ को जीतकर उन्हे कुछ किंचित् प्रदेश शासन करने के लिए दे देते थे, तथा वे निर्बल राजा अपने स्वामी को कर प्रदान करते थे।

(३) यहाँ अम्बिकादत्त व्यास ने समास रहित शैली का प्रयोग किया है।

शिववीर.—भगवन्! कथयेदेव कश्चिद् यवनराज, पर किं, भवानपि मामनुमन्यते—यद् ये अस्मदिष्टदेवमूर्तीर्भङ्क्त्वा, मन्दिराणि समुन्मूल्य, तीर्थस्थानानि पक्कणीकृत्य, पुराणानि पिष्ट्वा, वेदपुस्तकानि विदार्य च, आर्यवंशीयान् बलाद् यवनीकुर्वन्ति, तेषामेव चरणयोरञ्जलिं बद्ध्वा लालाटिकतामङ्गीकुर्याम्? एवं चेद्धिङ् मा कुल-कलक क्लीवम्, य. प्राणभयेन सनातनधर्मद्वेषिणा दासेरकता वहेत्। यदि चाहमाहवे म्रियेय, बध्येय, ताड्येय वा तदैव धन्योऽहम्, धन्यौ च मम पितरौ! कथ्यता भवादृशा विदुषामत्र का सम्मति?

गोपीनाथ—(विचार्य) राजन्! धर्मस्य तत्त्व जानासि, तन्नाहं स्वसम्मतिं कामपि दिदर्शयिषामि। महती ते प्रतिज्ञा, महत्तवोद्देश्यमिति प्रसीदामितमाम्। नारायणस्तव साहाय्य विदधातु।

शिववीर—करुणानिधान्! नारायण स्वय प्रकटीभूय न प्रायेण साहाय्य विदधाति, किन्तु भवादृश-महाशय-द्वारैव। तत् प्रतिज्ञायता काऽपि सहायता।

गोपीनाथ—राजन् कथ्यता किमहं कुर्याम्, पर यथा न मामधर्म. स्पृशेत्, तथैव विधास्यामि।

शिववीर—शान्त पापम्। कोऽत्राधर्म ? केवल श्वोऽस्मिन्नुद्यान-प्रान्तस्थ-पट्ट-कुटीरे यवन सेनापति अफजलखान आनेय, यथा तेनैकाकिनाऽहमेकाकनी मिलित्वा किमप्यालपामि।

गोपीनाथ—तत सम्भवति।

हिन्दी अनुवाद—शिववीर कोई यवनराज ऐसा कहे, किन्तु क्या आप भी मुझे अनुमति देते हैं कि—जो हमारे इष्ट देव की मूर्तियो को तोडकर, मन्दिरो को नष्ट करके, तीर्थस्थानो को भीलो की बस्ती बनाकर, पुराणो को पीसकर, वेद पुस्तको को फाडकर, आर्यवशियो को बल से यवन बनाते हैं, उन्हीं के चरणो मे अञ्जलि बाँधकर आधीनता स्वीकार करूँ ? यदि ऐसा हो तो मुझ कुल-कलकी पुरुषार्थहीन को धिक्कार है, जो प्राणो के भय से सनातनधर्म के विरोधियो की दासता को धारण करे। यदि मैं युद्ध मे मारा जाऊँ अथवा पीडित किया जाऊँ तब ही मैं धन्य हू, और मेरे माता-पिता धन्य हैं। कहिये, आप सदृश विद्वानो की इस विषय मे क्या सम्मति है ?

गोपीनाथ—(विचार करके) राजन् ! धर्म के तत्त्व को जानते हो, इसलिए मैं अपनी कोई भी सम्मति नही देना चाहता। तुम्हारी प्रतिज्ञा महान् है, तुम्हारा उद्देश्य महान् है—

नारायण तुम्हारी सहायता को धारण करे अथवा तुम्हारे सहायक होवें।

शिववीर—करुणानिधान् ! प्राय नारायण स्वय प्रकट होकर सहायता नहीं करता, अपितु आप जैसे महानुभावो के द्वारा ही (करवाता है)। इसलिए कोई सहायता करने की प्रतिज्ञा करिये।

गोपीनाथ—राजन् ! कहिये मुझे क्या करना चाहिये, परन्तु जिस प्रकार मुझे अधर्म नहीं स्पर्श करेगा। मैं करूँगा।

शिववीर—पाप शान्त हो। यहाँ पर अधर्म क्या है ? केवल कल इस उद्यान के किनारे पर स्थित तम्बू मे यवन सेनापति अफजलखाँ लाये जाने चाहिये, जिससे अकेले मेउसके साथ मैं अकेला मिलकर कुछ बात-चीत करूँ।

गोपीनाथ—यह सम्भव है।

सस्कृत-व्याख्या—भगवन् = श्रीमन्, कश्चिद्, यवनराज = यवनभूपति, एव = एतादृश, कथयेत् = उच्चारयेत्, पर = किन्तु, किं, भवानपि, माम् =

= शिववीर, अनुमन्यते = अनुज्ञा ददाति, यद्, ये = यवना अस्मदिष्टदेवमूर्ती = अस्माक इष्टस्य वाञ्छितस्य देवस्य ईश्वरस्य मूर्ती प्रतिमा । भङ्क्त्वा नष्ट्वा, मन्दिराणि = देवगृहाणि, समुन्मूल्य = नष्ट्वा, तीर्थस्थानानि = पुण्यस्थलानि, पक्कणीकृत्य = शबराणा नगरी निर्माय, पुराणनि, पिष्ट्वा = चूर्ण कृत्वा, वेद-पुस्तकानि = वेदा , विदार्य = भिदित्वा, च, आर्यवंशीयान् = सनातनधर्मानुयायिन , वलाद् = सशक्तं , यवनी = कुर्वन्ति = यवना निर्मान्ति, तेषामेव एतादृशामेव चरणयो = पदयो , अञ्जलिं = पाणिद्वयसयोग, बद्ध्वा = कृत्वा, लालाटिकताम् = सेवा, अङ्गीकुर्याम् = स्वीकुर्याम् ? एव चेत् = यदि इद भवेत्, मा, कुल = कलक = कुलस्य वशस्य कलक दोष य तम्, क्लीबम् = पुरुषार्थहीन, य , प्राणभयेन = मृत्युभीते , सनातनधर्मद्वेषिणा = सनातन य हिन्दू धर्म मन तस्य द्वेपिणा विरोधिना, दासेरकता = दासता, वहेत् = गृह्णीयात् । यदि च, अहम्, आहवे = युद्धे, म्रियेय = मृत स्याम्, वध्येय = मारित स्याम्, ताड्येय = पीड्येय, वा, तदा, एव, धन्य = सौभाग्यशाली, अहम्, धन्यौ = सौभाग्यशालिनौ, च, मम् = मे, पितरौ = मातापितरौ । कथ्यता = वदतु, भवादृशा = त्वादृशा, विदुषाम् = पाण्डितानाम्, अत्र = अस्मिन् विषये, का, सम्मति = मत ? राजन् = भूपते । धर्मस्य = सनातनमतस्य, तत्त्व = सार, जानासि = अधिगच्छसि, तत् = अतएव, अह = गोपीनाथ कामपि स्वसम्मति = स्वविचार, न, दिदर्शयिषामि = दर्शयितुमिच्छामि । महती = महत्त्वपूर्णा, ते = तव, प्रतिज्ञा = वचन, महत् = उच्च, तव = ते, उद्देश्यम् = लक्ष्यम् इति, प्रसीदामितमाम् = अत्यन्त प्रसीदामि । नारायण = विष्णु , तव, साहाय्य = सहायता, विदधातु = करोतु । करुणानिधान ! = दयागार !, नारायण , स्वय = सशरीर, प्रकटीभूय = आगत्य, प्रायेण = प्राय , साहाय्य, - सहायता, न, विदधाति - करोति, किन्तु, भवादृशमहाशय-द्वारा = भवादृशा त्वादृशमहापुरुषद्वारा, एव, तत् = अत , काऽपि, सहायता = साहाय्यम् । प्रतिज्ञायता = प्रण क्रियताम् राजन्, कथ्यता = वदतु, किम्, अह, कुर्याम् = विधेयम, पर = किन्तु, यथा = येन, माम्, अधर्म = पाप, न, स्पृशेत् = भवेत्, तथैव = तदेव, विधास्यामि = करिष्यामि । शान्त = विनाश, पाप = दोष , कोऽत्र, अधर्म पाप, केवल, श्व , अस्मिन् = तस्मिन्, उद्यान-प्रान्तस्थ-पट-कुटीरे = उद्यानस्य उपवनस्य, प्रान्तस्थ = उपान्तस्थ , पटस्य =

वस्त्रस्य कुटीरे=गृहे, यवनसेनापति =यवनाना मेनापति कटकाध्यक्ष , अफजलखान , आनेय =आनीतव्य , यथा=यस्मात्, एकाकिना तेन=सहायकरहितेन अफजलखानेन, अहम्, एकाकी, मिलित्वा=समर्ग कृत्वा, किमपि=किंचिद्, आलपामि=वार्ता करिष्यामि । तत्=इदम्, सम्भवति=सम्भवमस्ति ।

हिन्दी-व्याख्या—भगवन्=श्रीमान्, भग अस्ति अस्य इति भगवत्, भग+मतुप् । कथयेत्=कहे, √कथ् वि० लि० प्र० पु० ए० व०, सम्भावना अर्थ मे । यवनराज =यवनो का राजा, यवनाना राजा इति यवनराज , समासान्त 'टच्' । अनुमन्यते=अनुमति देते है, अनु+√मन् लट् लकार प्र० पु० ए० व० । अस्मदिष्टदेवमूर्तो भङ्क्त्वा=हमारे इष्ट देव की मूर्तियो को तोडकर, भङ्क्त्वा=तोडकर, √भञ्जो 'आमर्दने'+त्वा, इष्ट य देव इष्ट देव , अस्माक इष्टदेवस्य मूर्ती इति अस्मदिष्टदेवमूर्ती । समुन्मूल्य=पूर्णतया नष्ट करके, 'सम्+उत्+√मूल्+ल्यप्' । पक्कणीकृत्य=भीलो की बस्ती बनाकर, न पक्कण अपक्कण, अपक्कण पक्कणमिव कृत्वा इति पक्कणीकृत्य, 'पक्कण+च्वि+कृ+ल्यप्' 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से 'कृ को तुक् का आगम । पुराणानि=पुराणो को=व्यासादि मुनि प्रणीत गन्थ-विशेप । पुराणो मे पाँच प्रकार के विपय लिखे जाते हैं—(i) सर्ग-आदि-सृष्टि का उत्पत्ति-क्रम, (ii) प्रतिसर्ग-प्रलयानन्तर सृष्टिक्रम, (iii) वश=देवता, दानव और राजाओ की वशावली, (iv) मन्वन्तर=मनुओ का राज्यकाल और राजव्यवस्था, (v) वशानुचरित=मनुओ की वशावली । पिष्ट्वा=पीसकर, '√पिश्' अवयवे'+त्वा' । वेदपुस्तकानि=वेदग्रन्थ, वेद चार हैं'—ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद, वेदाना पुस्तकानि इति वेदपुस्तकानि (तत्पु०) । विदार्य=फाडकर, वि+√दृ विदारणे'+ल्यप् । आर्यवशीयान् आर्य वश के लोगो को, आर्यस्य वश तस्मिन् भवा इति आर्यवशीया, आयवश+छ=आर्यवशीय । यवनीकुर्वन्ति=मुसलमान बनाते हैं । बद्ध्वा=बाँधकर, √बध् त्वा । लालाटिकताम्=दासता को, 'ललाट पश्यतीति लालाटिक तस्य भाव ताम् ।' अङ्गीकुर्याम्=स्वीकार करूँ । एव चेत्=यदि ऐसा हो । कुलकलक=कुल के कलक, 'कुलस्य कलक य तम्' क्लीवम्=पुरुपार्थहीन, 'धिक्' के योग मे द्वितीया । प्राणभयेन=प्राणो के भय से, प्राणेभ्य भयेन इति प्राणभयेन । सनातनधर्म-

द्वेषिणा=सनातन धर्म के द्वेषियों की, सनातन चासौ धर्म सनातनधर्म तस्य द्वेषिण तेष म्, द्वेषिणा=द्वेष+णिनि, ष० बहु० । दासेरकता=दासता को । वहेत्=ग्रहण करूँ, √वह् वि० लि० प्र० पु० ए० व० । आहवे=युद्ध मे । म्रियेय=मारा जाऊँ, '√मृङ् 'प्राणत्यागे'+णिच्+वि० लि० उ० पु०' ए० व० वध्येय=बाँधा जाऊँ, '√वध्+णिच्'+वि० लि० उ० पु० ए० व० । ताड्येय=पीडित होऊँ, 'तड़्+णिच्+लिङ्' उ० पु० ए० व० । पितरौ=माता-पिता, माता च पिता च पितरौ (एकशेष द्वन्द्व) । कथ्यता=कहिये, कथ्+यक्+लोट् ल० प्र० पु० ए० व० । भवादृशा=आपके सदृश, भवत्+√भवत्+√दृश्+क्विन् । क्विन् का लोप भवादृश्, ष० बहु० भवादृशा । सम्मति=विचार, सम्+मन्+क्तिन् । दिदशयिषामि=देने की इच्छा करता हूँ, √दृश्+सन् लोट लकार उ० पु० ए० व० । प्रसीदामितमाम् =प्रसीदामि+तमाम् (अतिशय अर्थ मे) साहाय्य=सहायता, सहाय+ष्यञ । विदधातु=करे, वि+√धा लोट लकार प्र० पु० ए० व० । करुणानिधाने=करुणा के आगार, करुणाया निधान इति सम्बोधने करुणानिधाने निधान=नि+धा+ल्युट् । प्रकटीभूय=प्रकट होकर, प्रकट+च्वि+भू+ल्यप् । भवादृश महाशयद्वारैव=आप जैसे महापुरुषो के द्वारा ही, भवादृशै महाशयै द्वारा इति भवादृशमहाशय द्वारा । प्रतिज्ञायता=प्रतिज्ञा करे, प्रतिज्ञा+क्यच्+लोट् लकार प्र० पु० एक व० । यथा न मामधर्मं स्पृशेत् तथैव विचारयामि= जिससे मुझे अधर्म स्पर्श न करे वैसा ही करूँगा अर्थात् जिस कार्य से स्वामी की आज्ञा का उल्लघन न हो वह काय मैं कर सकता हूँ । शान्तं पापम्=पाप शान्त हो । उद्यानप्रान्तस्थपटकुटीरे=उद्यान के किनारे स्थित तम्बू मे, प्रान्तस्थ='प्रान्त+√स्था+क', 'उद्यानस्य प्रान्ते स्थित य. पटस्य कुटीर तस्मिन्' (ब० व्री०), पट कुटीर=वस्त्र से निर्मित छोटा गृह अर्थात् तम्बू, 'अल्पा कुटी कुटीर स्यात्' इत्यमर । यवन सेनापति=यवनो का सेनापति यवनाना सेनापति त० पु०) । आनेय= लाया जाना चाहिये, आङ्+नी+यत् । मिलित्वा=मिलकर, '√मिल्+त्वा ।' आलपानि=बात करूँ, 'आङ्+√लप्' लोट लकार उ० पु० ए० व०' । 'तेन एकाकिना'='सह' शब्द का प्रयोग न होने पर भी 'सह' का अर्थ होने के कारण 'तेन एकाकिना' मे तृतीया है । सम्भवति=सम्भव है, 'सम्+√भू लट् लकार प्र० पु० ए० व० ।'

टिप्पणी—(१) उपर्युक्त पक्तियो से स्पष्ट है कि तत्कालिन समय मे हिन्दू धर्म का विनाश हो रहा था। यवनराजा हिन्दू धर्म के चिह्नो को नष्ट कर बलपूर्वक हिन्दुओ को यवन बनाते थे।

(२) शिवाजी की स्वाधीन जीवन के प्रति प्रेम प्रकट होता है।

(३) गोपीनाथ के चरित्र मे उत्कर्ष दृष्टिगोचर होता हे। वह शिवाजी की सहायता के लिए तत्पर है।

(४) 'नारायण स्वय भवादृशमहाशयद्वारैव'—इस पक्ति से प्रतीत होता है कि 'नारायण सशरीर प्रकट होकर भक्त की सहायता करते है'—इस प्राचीन धारणा मे परिवर्तन हुआ।

(५) 'ये अस्मदिष्टदेवैर्मूर्तिभङ्क्त्वा यवनीकुर्वन्ति' यहाँ भङ्क्त्वा, समुन्मूल्य, पक्कणीकृत्य इत्यादि अनेक क्रियायें एक ही कर्त्ता से सम्बद्ध हे। अत दीपक अलकार है।

तत पर गोपीनाथेन सह शिववीरस्य बहुविधा आलापा अभूवन, यै शिववीरस्य उदारहृदयता धार्मिकता शूरताञ्चावगत्य गोपीनाथोऽतितरा पर्य्यतुष्यत्।

अथ स तमाशीर्भिरनुयोज्य यावत्प्रतिष्ठते, तावदुपातिष्ठत ससहचर-स्तानरङ्ग । गोपीनाथस्तु तमनवलोकयन्निव तस्मिन्नेव निशीथे दुर्गदवा-तरत। कपट-गायको गौरसिंहस्तु शिववीरेण सह बहुश आलप्य, सेना-ऽभिनिवेश-विषये च सम्मन्त्र्य, तदाज्ञात स्ववासस्थान जगाम।

शिववीरोऽप्यन्यसेनापतीन यथोचितमादिश्य, स्वशयनागार प्रविश्य होरात्रय यावत्किञ्चन् निद्रासुखमनुभूय, अल्पशेषायामेव रजन्या-मुदतिष्ठत्।

शिववीर—सेनास्तु यथासकेत प्रथममेव इतस्ततो दुर्गप्रचीरान्तरालेषु गहन-लता-जालेषु उच्चावच-भूभाग-व्यवधानेषु सज्जा पर्यवातिष्ठन्त। बहवो अश्वारोहा यवन-पट कुटीर कदम्बक परिक्रम्य तत पश्चादागत्य अवसर प्रतिपालयन्ति स्म।

हिन्दी अनुवाद—इसके पश्चात गोपीनाथ के साथ शिववीर की अनेक प्रकार की बातें हुई, जिससे शिवाजी की उदारहृदयता धार्मिकता और वीरता को जानकर गोपीनाथ अत्यधिक सन्तुष्ट हुआ।

इसके बाद उसने (गोपीनाथ ने) उसको (शिवा जी को) आशीर्वचन प्रदान कर जब तक प्रस्थान किया, तब तक सहचर के साथ तानरंग आ गया। गोपीनाथ उनको न देखते हुये से उसी अर्धरात्रि में दुर्ग से उतरे। कपट से गायक वेषधारी गौरसिंह ने शिवाजी के साथ अनेक बातें करके और सेना के अभिनिवेश के विषय में मन्त्रणा करके, उससे (शिवाजी से) आज्ञा प्राप्त किये हुये, अपने निवास स्थान को चला गया।

शिवाजी भी अन्य सेनापतियों को यथायोग्य आदेश देकर, अपने शयनागार में प्रवेश करके तीन घण्टे तक कुछ निद्रा के सुख का अनुभव कर थोड़ी शेष रात्रि में ही जाग गये।

शिवाजी की सेना तो संकेतानुसार पहले से ही इधर उधर किले की प्राचीर के अन्दर, घनी झाड़ियों के समूह में, ऊँची-नीची भूमि के भागों के बीच में, सुसज्जित चारों ओर खड़ी थी। बहुत से अश्वारोही यवनों के तम्बुओं के समूह का चक्कर लगाकर, वहाँ से पीछे आकर, अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे।

संस्कृत-व्याख्या—तत पर = तदनन्तर, गोपीनाथेन, सह = साकं, शिववीरस्य बहुविधा = अनेकप्रकारा, आलापा = वार्ता, अभूवन्, यै = आलापै, शिववीरस्य, उदारहृदयता = हृदयविशालता, शूरताम् = वीरता, च, अवगत्य = ज्ञात्वा, गोपीनाथ, अतितरा = अत्यधिक, पर्यतुष्यत् = अतृपत्। अथ = तत, स, = गोपीनाथ, तम् = शिववीर, आशीर्भि = आशीर्वचोभि, अनुयोज्य = योजयित्वा। यावत्, प्रतिष्ठते = प्रस्थानमकरोत्, तावत्, ससहचर = ससख, तानरङ्ग, उपातिष्ठत् = आगच्छत्। गोपीनाथ, तु, तम् = तानरङ्ग, अनवलोकयन् = न पश्यन्, इव = सदृश, तस्मिन् एव, निशीथे = अर्धरात्रौ, दुर्गात् = प्रताप-दुर्गात् अवातरत = अवारोहत् कपट-गायक = कपटेन छलेन गायक संगीतज्ञ, गौरसिंह, तु, शिववीरेण, सह सम, बहुश = अनेकथा, आलप्य = विचार्य, सेनाऽभिनिवेश विषये = सेनाया वाहिन्या, अभिनिवेश स्थिति तस्मिन् विषये सम्बन्धे, च सम्मन्त्र्य = विचार्य, तदाज्ञाम् = तस्य शिववीरस्य आज्ञा अनुज्ञा प्राप्य स्ववासस्थान = स्वस्य गौरसिंहस्य वासस्य निवासस्य स्थान पद। जगाम = यायात्। शिववीरोऽपि, अन्यसेनापतीन् = इतरकटकाध्यक्षान्, यथोचितम् = यथायोग्य, आदिश्य = निर्देश दत्वा, स्वशयनागार = स्वस्य शयनागार निशा-

वासगृह, प्रविश्य = गत्वा, होरात्रय यावत् । किञ्चन् = अल्प, निद्रासुखम् = निद्राया शयनस्य सुख क्ल, अनुभूय = प्राप्य, अल्पशेषायाम् = अल्प किञ्चित् शेप अवशिष्ट या तस्याम्, रजन्याम् = रात्री, उदतिष्ठत् । शिववीरसेना = शिववीरस्य सेना वाहिन्य, तु, यथासकेत = सकेतानुसार, प्रमभेव = पूर्वमेव, इतस्तत = अत्र, तत्र दुर्गप्राचीरान्तरालेपु = दुर्गाणा किलाना प्राचीराणाम वेष्टिनीनाम् अन्तरालेपु मध्येपु । गहन-लता-जालेपु = गहनाना सघनाना लतानाम् वल्लरीणाम् जालेपु समूहेपु, उच्चावच-भूभाग-व्यवधानेषु = उच्चानि उन्नतानि अवचानि अवनतानिच भूभागानि प्रदेशा तेषा व्यवधानेपु मध्येपु, सज्जा = सुसज्जिता, पर्यवातिष्ठन्त = आसन् । वहव = अनेकत, अश्वारोह्य = सैन्ववोरुढा, यवन-पट-कुटीर-कदम्बक यवनाना पटकुटीराणाम् वस्त्रगृहाणाम् कदम्वक समूह, परिक्रम्य = परिगत्य, तत = तस्मात् स्थानात्, पश्चादागत्य = प्रत्यागत्य, अवसर = उपयुक्तसमय, प्रतिपालयन्ति स्म = प्रतीक्षा अकुर्वन् ।

हिन्दी-व्याख्या—तत पर = इसके बाद । गोपीनाथेन सह = गोपीनाथ के साथ, 'सहयुक्तेऽप्रधाने' से तृतीया । बहुविधा = अनेक प्रकार की । आलापा = बातें, आङ् + √लप् + घञ । उदारहृदयता = हृदय की विशालता, उदारं हृदय तस्य भाव, उदारहृदय + ता । धार्मिकता = धर्मपरायणता, धर्म + ठक् + ता । शूरता = वीरता, शूर + ता । अवगत्य = जानकर, अव + √गम् + ल्यप् । पर्य्यतुष्यत् = सन्तुष्ट हुआ, 'परि + √तुष् + लङ् लकार प्र० पु० ए० व०' । अथ = इसके बाद, स = गोपीनाथ । आशीर्भि = आशीर्वादो से, 'आशीस्' तृ० बहु० । अनुयोग्य = योजित करके अनु + युज् + ल्यप् । यावत् = जब तक । प्रतिष्ठते = प्रस्थान किया, 'प्र + √स्था लट् लकार प्र० पु० ए० व०' । समव-प्र = विभ्य स्थ.' से आत्मनेपद का प्रयोग । तावत् = तब तक ससहचर = सहचर के साथ, सहचरेण सहितम् इति ससहचर (अव्ययीभाव) ।' अव्यीभावे चाऽकाले' से 'सह' को 'स' आदेश । उपातिष्ठत् = समीप आया, 'उप + √स्था लङ् लकार प्र० पु० ए० व० ।' अनवलोकयन् = न देखते हुये, अव + √लोक + शतृ-अवलोकयन, न अवलोकयन् इति अनवलोकयन् (नञ् त० पु०) । निशीथे = अर्धरात्रि मे । अवातरत् = उतरे, 'अव + अतरत्' । कपट गायक = कपट से गायक का वेप धारण किये हुए, कपटेन गायक (त० पु०), गायक

इसके बाद उसने (गोपीनाथ ने) उसको (शिवा जी को) आशीर्वचन प्रदान कर जब तक प्रस्थान किया, तब तक सहचर के साथ तानरंग आ गया। गोपीनाथ उसको न देखते हुये से उसी अर्धरात्रि मे दुर्ग से उतरे। कपट से गायक वेषधारी गौरसिंह ने शिवाजी के साथ अनेक बातें करके और सेना के अभिनिवेश के विषय मे मन्त्रणा करके, उससे (शिवाजी से) आज्ञा प्राप्त किये हुये, अपने निवास स्थान को चला गया।

शिवाजी भी अन्य सेनापतियो को यथायोग्य आदेश देकर, अपने शयनागार मे प्रवेश करके तीन घण्टे तक कुछ निद्रा के सुख का अनुभव कर थोडी शेष रात्रि मे ही जाग गये।

शिवाजी की सेना तो संकेतानुसार पहले से ही इधर उधर किले की प्राचीर के अन्दर, घनी झाडियो के समूह मे, ऊँची-नीची भूमि के भागो के बीच मे, सुसज्जित चारो ओर खडी थी। बहुत से अश्वारोही यवनो के तम्बुओ के समूह का चक्कर लगाकर, वहाँ से पीछे आकर, अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे।

संस्कृत व्याख्या—तत पर = तदनन्तर, गोपीनाथेन, सह = साकं, शिववीरस्य बहुविधा = अनेकप्रकारा, आलापा = वार्ता, अभूवन्, यै = आलापै, शिववीरस्य, उदारहृदयता = हृदयविशालता, शूरताम् = वीरता, च, अवगत्य = ज्ञात्वा, गोपीनाथ, अतितरा = अत्यधिक, पर्य्यतुष्यत् = अतृपत्। अथ = तत, स. = गोपीनाथ, तम् = शिववीर, आशीर्भि = आशीर्वचोभि, अनुयोज्य = योजयित्वा। यावत्, प्रतिष्ठते = प्रस्थानमकरोत्, तावत्, ससहचर = ससख, तानरङ्ग, उपातिष्ठत् = आगच्छत्। गोपीनाथ, तु, तम् = तानरङ्ग, अनवलोकयन् = न पश्यन्, इव = सदृश, तस्मिन् एव, निशीथे = अर्धरात्रौ, दुर्गात् = प्रतापदुर्गात्, अवातरत = अवारोहत् कपट-गायक = कपटेन छलेन गायक संगीतज्ञ, गौरसिंह, तु, शिववीरेण, सह सम, बहुश = अनेकश, आलाप्य = विचार्य, सेनाऽभिनिवेश विषये = सेनाया वाहिन्या, अभिनिवेश स्थिति तस्मिन् विषये सम्बन्धे, च सम्मन्त्र्य = विचार्य, तदाज्ञा = तस्य शिववीरस्य आज्ञा अनुज्ञा प्राप्त स्ववासस्थान = स्वस्य गौरसिंहस्य वासस्य निवासस्य स्थान पद। जगाम = यायात्। शिववीरोऽपि, अन्यसेनापतीन् = इतरकटकाध्यक्षान्, यथोचितम् = यथायोग्य, आदिश्य = निर्देश कृत्वा स्वशयनागार — स्वस्य शयनागार निशा-

वासगृह, प्रविश्य = गत्वा, होरात्रय यावत् । किञ्चन् = अल्प, निद्रासुखम् = निद्राया शयनस्य सुख कल, अनुभूय = प्राप्य, अल्पशेषायाम् = अल्प किञ्चित् शेप अवशिष्ट या तस्याम्, रजन्याम् = रात्री, उदतिष्ठत् । शिववीरसेना = शिववीरस्य सेना वाहिन्य, तु, यथासंकेत = संकेतानुसार, प्रमभेव = पूर्वमेव, इतस्तत = अत्र, तत्र दुर्गप्राचीरान्तरालेषु = दुर्गाणा किलाना प्राचीराणाम वेष्टिनीनाम् अन्तरालेषु मध्येषु । गहन-लता-जालेषु = गहनाना सघनाना लतानाम् वल्लरीणाम् जालेषु समूहेषु, उच्चावच-भूभाग-व्यवधानेषु = उच्चानि उन्नतानि अवचानि अवनतानिच भूभागानि प्रदेशा तेषा व्यवधानेषु मध्येषु, सज्जा = सुसज्जिता, पर्यवातिष्ठन्त = आसन् । वहव. = अनेकत, अश्वारोह्य = सैन्यवोल्ढा, यवन-पट-कुटीर-कदम्बक यवनाना पटकुटीराणाम् वस्त्रगृहाणाम् कदम्बक समूह, परिक्रम्य = परिगत्य, तत = तस्मात् स्थानात्, पश्चादागत्य = प्रत्यागत्य, अवसर = उपयुक्तसमय, प्रतिपालयन्ति स्म = प्रतीक्षा अकुर्वन् ।

हिन्दी-व्याख्या—तत पर = इसके बाद । गोपीनाथेन सह = गोपीनाथ के साथ, 'सहयुक्तेऽप्रधाने' से तृतीया । बहुविधा = अनेक प्रकार की । आलापा = बातें, आङ् + √लप् + घञ । उदारहृदयता = हृदय की विशालता, उदारं हृदय तस्य भाव, उदारहृदय + ता । धार्मिकता = धर्मपरायणता, धर्म + ठक् + ता । शूरता = वीरता, शूर + ता । अवगत्य = जानकर, अव + √गम + ल्यप् । पर्य्यतुष्यत् = सन्तुष्ट हुआ, 'परि + √तुष् + लट् लकार प्र० पु० ए० व०' । अथ = इसके बाद, स = गोपीनाथ । आशीर्भि = आशीर्वादो से, 'आशीस्' तृ० बहु० । अनुयोग्य = योजित करके अनु + युज् + ल्यप् । यावत् = जब तक । प्रातिष्ठत = प्रस्थान किया, 'प्र + √स्था लट् लकार प्र० पु० ए० व०' । समव = प्र = विभ्य स्थ.' से आत्मनेपद का प्रयोग । तावत् = तब तक ससहचर = सहचर के साथ, सहचरेण सहितम् इति ससहचर (अव्ययीभाव) ।' अव्ययीभावे चाऽकाले' से 'सह' को 'स' आदेश । उपातिष्ठत् = समीप आया, 'उप + √स्था लङ् लकार प्र० पु० ए० व० ।' अनवलोकयन् = न देखते हुये, अव + √लोक + शतृ-अवलोकयन, न अवलोकयन् इति अनवलोकयन् (नञ् त० पु०) । निशीथे = अर्धरात्रि मे । अवातरत् = उतरे, 'अव + अतरत्' । कपट गायक = कपट से गायक का वेष धारण किये हुए, कपटेन गायक (त० पु०), गायक

=गै + √ण्वुल् । आलप्य = बातें करके, आङ् + √लप् + ल्यप् । सेनाऽभि-निवेशविषये = सेना की स्थिति अथवा व्यूह-रचना के विषय पर, सेनाया अभि-निवेशस्य विषय तस्मिन् (ब० व्री०), अभिनिवेश = 'अभि + नि + √विश् + + अच्' । सम्मन्त्र्य = सम्यक् रूप से मन्त्रणा करके, 'सम् + √मन्त्रि + ल्यप् ।' तदाज्ञात = उसकी आज्ञा प्राप्त किये हुये, तेन आज्ञात (त० पु०), आज्ञा + √क्त । जगाम = गये, '√गम् लिट् लकार प्र० पु० ए० व०' । आदिश्य = आदेश देकर, 'आङ् + √दिश् ल्यप्' । स्वशयनागार = स्वस्य शयनस्य आगार तम्, अपने शयनागार को । प्रविश्य = प्रवेश करके, 'प्र + √विश् + ल्यप् ।' होरात्रय = तीन घण्टे, 'अहोरात्र' के आदि 'अ' । और अन्त के 'त्र' के लोप करने पर होरा शेष होता है । होरा = दिन-रात किन्तु सम्प्रति इसका प्रयोग घण्टा के लिये होता है । निद्रासुखम् = निद्रा के सुख को निद्राया सुखम् (त० पु०) । अनुभूय = अनुभव करके, 'अनु + √भू + ल्यप् ।' अल्पशेषायाम् = थोडी शेष, 'अल्पा शेषा या तस्याम्' । उदतिष्ठत् = उठ गये, 'उत् + √स्था लङ् लकार' । शिववीरसेना = शिवाजी की सेनायें, शिववीरस्य सेना (त० पु०) । दुर्गप्राचीरान्तरालेषु = दुर्गों की चहारदीवारी के अन्दर, दुर्गाणा प्राचीराणाम् अन्तरालेषु । गहन-लता-जालेषु = सघन लताओ के समूह मे, गहना लताः तासाम् जालानि तेषु । उच्चावच-भूभाग-व्यवधानेषु = ऊँचे-नीचे भूमि भागो के मध्य मे, उच्चानि अवचनानि च ये भूभागानि तेषाम् व्यवधानेषु, व्यवधान = बीच मे । सज्जा = सुसज्जित । पर्यवातिष्ठन्त = चारो ओर खडी थी, परि + अव + √स्था लङ् लकार प्र० पु० बहु० । अश्वारोहा = घुडसवार, अश्वान् आरोहन्ति ये ते अश्व + √आ + √रुह् + अच् । यवन-पट-कुटीर-कदम्बक = यवनो के तम्बूओं के समूह का, यवनाना पटकुटीराणाम् कदम्बक (त० पु०) । परिक्रम्य = चक्कर लगाकर, परि + √क्रमु + ल्यप् । तत = वहाँ से, 'तत्' से पचम्यर्थ में 'तसिल्' । पश्चादागत्य = पीछे आकर । प्रतिपालयन्ति स्म = प्रतीक्षा कर रहे थे, 'प्रति + √पालि + लट् ल० प्र० पु० ए० व०' ।

टिप्पणी—(१) 'शिववीरसेनास्तु यथासकेत प्रतिपालयन्ति स्म'—इस खण्ड से मराठो की सेना की व्यूह-रचना का ज्ञान होता है ।

इतश्च सूर्य प्रभाभिररुणी-क्रियामाणे भूभागे अरुण-श्मश्रवोऽपि सेना सज्जीकृतवन्त ।

बहवो—"वयमद्य शिवमवश्यमेव विजेष्यामहे, पर तथाऽपि न जानीमहे किमिति कम्पत इव हृदयम्, अहो ! विलक्षण प्रताप एतस्य, पवनेऽपि प्रवहति, पतत्रेऽपि पतति, पत्रेऽपि मर्मरीभवति, स एवाऽऽगत इत्यभिशक्यतेऽस्माभि । अहह !! विचित्रोऽय वीरो यो दुर्गप्राचीरमुल्लघ्य, प्रहरिपरीवारमविगणय्य, लोहार्गलश्रृखलासहस्र-बद्धानि करि-कुम्भाघातसहानि द्वाराणि प्रविश्य, विकोशचन्द्रहासामिश्रेनुका-रिष्टितोम शक्ति-त्रिशूल मुद्गर-भुशुण्डी कराणा रक्षकाणा मण्डलमवहेल्य, प्रियाभि सह पर्य्यङ्केषु सुप्तानामपि प्रत्यर्थिना वक्षस्थलमारोहति, निद्रास्वपि तान् न जहाति, स्वप्नेष्वपि च विदारयति । कथमेतस्य चञ्चच्चन्द्रहास-चमत्कार-चाकचक्य-चिल्लीभूत-चक्षुष्का समराङ्गणे स्थास्याम ? इति चिन्ताचक्रमारूढा अपि कथ कथमपि कैश्चित् वीरवरैर्वर्धितोत्साहा समरभूमिमवातरन् ।

हिन्दी-अनुवाद—इधर सूर्य के प्रकाश से पृथ्वी के लाल रग के होने पर, लाल मूँछो वाली (यवन) सेनायें भी सुसज्जित की गयीं । 'आज हम शिवाजी को अवश्य जीतेंगे किन्तु फिर भी (हम) नहीं जानते हैं कि क्यो हृदय काँप सा रहा है, अहो । इसका (शिववीर का) प्रताप विलक्षण है, पवन के चलने पर भी, पक्षियो के उड़ने पर भी पत्तों के मर्मर करने पर भी, 'वह (शिवाजी) ही आये हैं'—ऐसी हमारे द्वारा शका की जाती है । अहह ! यह विचित्र वीर है जो दुर्ग की चहारदीवारी को लाँघकर, प्रहरियो के परिवार की अवहेलना कर, हजारो लोहे की जजीरो की श्रृखलाओ से बँधे हुये और हाथी के मस्तक के आघात को सहन करने योग्य द्वारो मे प्रवेश करके, कोश रहित अर्थात् नग्न तलवार, छुरी, रिष्टि तोम-शक्ति, त्रिशूल, मुदगर और बन्दूक हाथो मे लिए हुये रक्षको के समूह की अवहेलना करके, प्रियाओ के साथ पलग पर सोये हुये शत्रुओ के वक्षस्थल पर चढता है, निद्रा में भी उनको नहीं छोडता है स्वप्न मे भी विदारण करता है । कैसे इसके

हम समरभूमि मे स्थित हो सकेंगे ?"—इस प्रकार चिन्ताचक्र पर आरूढ अर्थात् चिन्ता करते हुये भी किसी प्रकार कुछ श्रेष्ठ वीरो के द्वारा उत्साह-वर्धन किये जाते हुये बहुत से (यवन) युद्धभूमि में उतरे ।

संस्कृत-व्याख्या—"वयम्, अद्य, शिव = शिववीर, अवश्यमेव = निश्चित-मेव, विजेष्यामहे = पराजित करिष्याम, पर = किन्तु, तथाऽपि = तदपि, न, जानीमहे = जानाम', किमिति, कम्पते = धुनोति, इव, हृदयम् = मन, अहो = आश्चर्यसूचक अव्यय, एतस्य = शिववीरस्य, प्रताप = प्रभाव, विलक्षणः = अद्वितीय, पवने = वायौ, अपि, प्रवहति = चलति, पतत्रेऽपि = खगेऽपि, पतति = उड्डीयमाने, पत्रेऽपि = किसलयेऽपि, मर्मरीभवति = मर्मरिति शब्दे सति, स = शिववीर, एव, आगत = आयात, इति, अस्माभि = यवनसैनिकै, अभि-शक्यते = शका क्रियते । अहह ! विचित्र = अद्भुत अय, वीर = शूरवीर, य, दुर्गप्राचीरम् = दुर्गस्य प्राचीर वेष्टिनी, उल्लघ्य = उत्क्रम्य, प्रहरि परीवारम-विगणय्य प्रहरीणाम् रक्षकाणा परीवारम् परिवारम् अविगणय्य अवहेल्य । लोहार्गलश्रृ खलासहस्र-नद्धानि = लोहस्य लौहस्य अर्गलाना जजीराणा श्रृ खलाणा पक्तीनाम् सहस्र तेन नद्धानि बद्धानि, करिकुम्भाघात-सहानि = करीणा इमाना कुम्भाना मस्तकाना आघात प्रहार सहन्ति ये ते । द्वाराणि, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, विकोशचन्द्रहासासिधेनुकारिष्टितोमशक्ति-त्रिशूल-मुद्गर-भुशुण्डी कराणा = नग्नचन्द्रहासमिधेनुकारिष्टितोमशक्ति-त्रिशूल मुद्गरभुशुण्डी-हस्ताना, रक्षकाणा = पालकाना, मण्डलम् समूहम्, अवहेल्य = अवगण्य्य, प्रिया-भि. = कान्ताभि, सह, पर्य्यङ्केषु शयनेषु = सप्ताना = निद्राप्राप्ताना, प्रत्यर्थिना = शत्रूणा, वक्ष स्थलम् = उर स्थलम्, आरोहति, निद्रासु = शयनेषु, अपि, तान् = शत्रून्, न, जहाति = मुञ्चति, स्वप्नेषु, अपि, च, विदारति = हन्ति । कथम्-केन प्रकारेण, एतस्य = शिववीरस्य, चञ्चच्चन्द्रहास-चमत्कार-चाकचक्य-चिल्लीभूत चक्षुष्का = समराङ्गणे = युद्धक्षेत्रे, स्थास्याम = योत्स्यामहे ?"— इति, चिन्ताचक्रम् = चिन्ताया आशकाया चक्रम् आरूढा. = धृता, बहव = अनेके यवनसैनिका, कथ कथमपि = येन केन प्रकारेण, कैश्चित्, वीरवरै = वीरेषु शूरेषु वरै श्रेष्ठै, वर्धितोत्साहाः = वर्धित वितानित उत्साह, साहस येषाम् ते, समर-भूमिम् = युद्धक्षेत्र, अवतरन् = आगच्छन् ।

हिन्दी-व्याख्या—इत = इधर, इदम् शब्द से तसिल् प्रत्यय । सूर्यप्रभाभिः = सूर्य की प्रभा से, सूर्यस्य प्रभाभि । अरुणीक्रियमाणे = लाल किये जाने पर, 'अरुण + च्वि + कृ + णिच् + शानच् ।' भूभागे = पृथ्वी के भाग, भुव भागे तस्मिन्, 'अरुणीक्रियमाणे भूभागे' में 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी ।

प्ररुणश्मश्रव =लाल मूंछो वाले, अरुणा श्मश्रव येषा ते । सज्जीकृतवन्त.=सुसज्जित किया, सज्जा+च्वि+कृ+क्तवतु । विजेष्यामहे=जीतेंगे, 'वि+√जि लृट्लकार उ० पु० बहु०', 'विपराभ्याजे' से आत्मनेपद । जानीमहे=जानते हैं, '√ज्ञा लट्लकार आत्मने० उ० पु० बहु०' । कम्पत इव=मानो काँप रहा है, कम्पते+इव=कम्पत इव —यहाँ 'एचोऽयवायाव से 'अय्' आदेश और 'लोप' शाकल्यस्य' से यकार का लोप । विलक्षण =अद्भुत । पतत्रे=पक्षी (स० ए० व०), पतत्रे स्त यस्य तस्मिन् पतत्रे । मर्मरीभवति=मर्मर की ध्वनि होने पर, 'मर्मर+च्वि+भू+शतृ (स० ए० व०) । पतत्रेऽपि प्रवहृति मर्मरीभवति'— 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी । आगत =आये हुये, आङ्+√गम्+क्त । दुर्गप्राचीरम्=दुर्ग की चहारदीवारी को, दुर्गस्य प्राचीरम् । उल्लङ्घ्य=लाँघ कर, उत्+√लघि+ल्यप् । प्रहरि परीवारम्=प्रहरियो का समूह, प्रहरीणाम् परीवारम् (त० पु०) । अविगणय्य=अवहेलना करके, अवि+गण्+ल्यप् । लोहार्गल शृङ्खलासहस्रनद्धानि=सहस्रो लोहे की जजीरो की शृखलाओ से बँधे हुये, लोहस्य अर्गला तासाम् शृङ्खला तासाम् सहस्र तेन नद्धानि, नद्धानि='√णह्+क्त' । करि-कुम्भाघात-सहानि=गज मस्तक के आघातो को सहन करने योग्य, 'करीणा कुम्भाना आघातानि सहन्ति ये ते' । विकोशचन्द्रहासासिधेनुकारिष्टितोमशक्ति-त्रिशूल-मुद्गर भुशुण्डी-कराणा=नग्न तलवार, छुरी, रिष्टि-तोम-शक्ति, त्रिशूल, मुद्गर और ब दूक को हाथो में धारण करने वाले (रक्षक), कोश=म्यान, विगत कोश विकोश चासौ चन्द्रहास इति विकोशचन्द्रहास, विकोशचन्द्रहासश्च असिधेनुका च, रिष्टि-तोम-शक्ति च त्रिशूलञ्च मुद्गरञ्च भुशुण्डी च सन्ति करेषु येषाम् तेषाम् । अवहेल्य=अवहेलना करके, अव+√हेला+ल्यप् । प्रियाभि सह=प्रियाओ के साथ, 'सहयुक्तेऽप्रधाने' से तृतीया । प्रत्यर्थिना=शत्रुओ के, 'प्रति+अर्थिन् ष० बहु०' । चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कार-चाकचक्य-चिल्लीभूतचक्षुष्का=चलती हुई तलवार की चमत्कार की चकचमाहट से चकाचौध हुए नत्रो वाले, चिल्ली-भूत=चौंधियाए हुए । "चञ्चत्चन्द्रहासस्य चमत्कारेण यच्चाकचक्य तेन चिल्लीभूतानि चक्षूंषि येषा ते ।" समराङ्गणे=युद्धक्षेत्र मे । चिन्ताचक्रम्=चिन्ता चक्र पर, चिन्ताया चक्रम् । आरूढा—चढे हुये, आङ्+रुह्+क्त । वीरवर्रा=वीरों में श्रेष्ठ, वीरेषु वरा तैः । वर्धितोत्साहा=जिनका उत्साह

बढ़ाया गया है, वर्धित उत्साह येषाम् ते। समर-भूमिम् = युद्ध क्षेत्र मे। अवातरन् = उतरे।

टिप्पणी—(१) 'कम्पत इव 'हृदयम्'—'हृदय काँप सा रहा है' यहाँ पर क्रियोत्प्रेक्षा है। (२) 'निद्रास्वपि तान् च विदारयति' यहाँ विरोध प्रतीति होती है किन्तु 'निद्रा मे शिवाजी को स्वप्न भी युद्ध से सम्बन्धित आते थे'—इस प्रकार अर्थ करने पर विरोध परिहार सम्भव है। अतः यहाँ विरोधाभास अलकार है। (३) 'चञ्चच्चन्द्रहास चञ्चुका'-म—'च' वर्ण की आवृत्ति अनेक बार होने के कारण वृत्त्यनुप्रास है। (४) इस खण्ड से शिवाजी की वीरता का ज्ञान होता है। (५) 'पवनेऽपि पवहृति मर्मरीभवति'—इसी प्रकार का वर्णन, बाण ने कादम्बरी मे वृद्ध-शबर से भयभीत वैशम्पायन नामक शुक की मानसिक-स्थिति के वर्णन मे किया है।

अथ कथचित् प्रकाश बहुले सवृत्ते नभ स्थले, परस्पर परिचीयमानासु आकृतिषु, कमलेष्विव विकचतामासादयत्सु वीरवदनेषु, भ्रमरालिष्विव परित· प्रस्फुरन्तीषु असि-पक्तिषु, चटकैः चककायितेषु, कवच चमत्कारेषु गोपीनाथ-पण्डितो वारमेक शिववीर दिशि परतश्च यवन-सेनापति-दिशि गतागत विधाय, सेनाद्वयस्य मध्य एव कस्मिश्चित् पट-कुटीरे अफजलखानमानेतु प्रबबन्ध।

शिववीरोऽपि कौशेय कचुकस्यान्तर्लोह—वर्म परिधाय, सुवर्णसूत्र-ग्रथितोष्णीषस्याप्यधस्तादायस शिरस्त्राण सस्थाप्य, सिंहनख-नामक शस्त्रविशेष करयोरारोप्य, दृढबद्ध-कटिरफजलखान-साक्षात्काराय सज्ज-स्तिष्ठति स्म।

हिन्दी अनुवाद—इसके पश्चात् आकाश मे पर्याप्त प्रकाश फैल जाने पर, परस्पर आकृतियो के पहचान मे आने पर, कमलो के समान वीरो के मुख प्रफुल्लता को प्राप्त होने पर, भ्रमरो की पंक्ति के समान चारो ओर तलवारों की पक्तियो के चमकने पर, गौरय्या पक्षी के द्वारा चकचक ध्वनि के सदृश कवचो के ध्वनि करने पर गोपनीय पण्डित एक बार शिववीर की दिशा मे तदनन्तर यवन-सेनापति की ओर चक्कर लगाकर, दोनो सेनाओ के मध्य ही किसी तम्बू मे अफजलखान ने लाने का प्रबन्ध किया।

रेशमी कुर्ते के अन्दर लौह-कवच पहनकर, स्वर्ण-तारो से, कढ़ी हुई पगड़ी के नीचे लोहे को शिरस्त्राण रखकर, सिंहनख नामक शस्त्र-विशेष को हाथों मे

धारण करके और कस कर कमर बांधे हुये शिवाजी भी अफजलखान से साक्षात्कार के लिए तैयार बैठे थे।

संस्कृत व्याख्या—अथ = तदनन्तर, कथंचित् = प्रकाश-बहुले = ज्योत्यधिके, संवृत्ते = प्रसृते, नभःस्थले = आकाशे, परस्पर, परिचीयमानासु = अवगम्यमानासु, आकृतिषु = मुखाकृतिषु, कमलेषु = सरोजेषु, इव, विकचताम् = प्रफुल्लताम, आमादयत्सु = वीरवदनेषु = वीराणां शूराणां वदनेषु मुखेषु भ्रमरालिषु = भ्रमराणां मधुकराणां आलिषु पंक्तिषु, परितः = समन्तात्, प्रस्फुरन्तीषु - सचलनतीषु, असि-पंक्तिषु = असीनां चन्द्रहासां पंक्तिषु आलिषु, चटकैः = चटकनामकैः पक्षिविशेषैः चकचकायितेषु—कवच-चमत्कारेषु = चम-शब्दायितेषु, गोपीनाथ = पण्डित, वारमेकं = सकृत्, शिववीर—, दिशि = शिववीरस्य दिशि आशायाम्, परतश्च = ततश्च, यवन-सेनापति-दिशि = यवनानां सेनापतेः सेनाध्यक्षस्य दिशि आशायाम्, गतागतं = गमनागमनं, विधाय = कृत्वा, सेनाद्वयस्य = मराठायवनकटकयोः, मध्ये = अन्तरे, एव कस्मिंश्चित् = कस्मिन्, पट-कुटीरे = वस्त्रगृहे, अफजलखानम्, आनेतुं—, प्रबन्ध = व्यवस्थामकरोत्।

शिववीरोऽपि, कौशेयकंचुकस्य = कौशेयं दुकूलं कंचुकं शरीरं परिवेष्टनाय वस्त्रं तस्य, अन्तः = अधस्तात्, वर्म = कवच, परिधाय = गृहीत्वा, सुवर्ण-सूत्रग्रथितोष्णीषस्य = सुवर्णस्य कंचनस्य सूत्रैः तारैः ग्रथितं निर्मितं उष्णीषं शिरोवेष्टनं तस्य, अपि, अधस्तात् = अधः, आयसं = लौहं, शिरस्त्राणं = शिरसः रक्षाकवचं, संस्थाप्य = धारित्वा, सिंहनखनामकं—, शस्त्रविशेषं = विशिष्टं शस्त्रं, करयोः = भुजयोः, आरोप्य = परिधाय, दृढबद्धकटिः = दृढेन प्रगाढेन बद्धा नद्धा कटिः शरीरमध्यभागः यस्य सः, अफजलखान साक्षात्काराय = अफजलखानस्य साक्षात्काराय = मिलितुं, सज्जः—तिष्ठति = उपविशति, स्म।

हिन्दी व्याख्या—अथ कथंचित् = इसके पश्चात् किसी तरह। प्रकाशबहुले = पर्याप्त प्रकाश में, 'प्रकाशस्यबहुलस्तस्मिन्'। संवृत्ते = फैलने पर परिचीयमानासु = पहचाने जाते हुये, 'परि + चि + णिच् + शानच् (स० ब०व्रीहि)' वीरवदनेषु = वीरों के मुख के, वीराणां वदनेषु। विकचताम् = प्रफुल्लित, विकच + ता। आसादयत्सु = होने पर, 'आङ् + √मद् + णिच् + शतृ (स० ब० व०)। भ्रमरालिषु = भ्रमरों की पंक्ति, भ्रमराणां आलिषु। प्रस्फुरन्तीषु = चमकने पर, 'प्र + √स्फुर् + शतृ + ङीप् स० बहु०'। चटकैः = गौरय्या नामक पक्षी,

बढाया गया है, वर्धित उत्साह येषाम् ते। समर-भूमिम् = युद्ध क्षेत्र मे। अवातरन् = उतरे।

टिप्पणी—(१) 'कम्पत इव 'हृदयम्'—'हृदय कांप सा रहा है' यहाँ पर क्रियोत्प्रेक्षा है। (२) 'निद्रास्वपि तान् च विदारयति' यहाँ विरोध-प्रतीति होती है किन्तु 'निद्रा मे शिवाजी को स्वप्न भी युद्ध से सम्बन्धित आते थे'—इस प्रकार अर्थ करने पर विरोध परिहार सम्भव है। अतः यहाँ विरोधाभास अलंकार है। (३) 'चञ्चच्चन्द्रहास चञ्चुका'-म—'च' वर्ण की आवृत्ति अनेक बार होने के कारण वृत्त्यनुप्रास है। (४) इस खण्ड से शिवाजी की वीरता का ज्ञान होता है। (५) 'पवनेऽपि पवहृति मर्मरीभवति'—इसी प्रकार का वर्णन, बाण ने कादम्बरी मे वृद्ध-शबर से भयभीत वैशम्पायन नामक शुक की मानसिक-स्थिति के वर्णन मे किया है।

अथ कथञ्चित् प्रकाश बहुले सवृत्ते नभःस्थले, परस्पर परिचीयमानासु आकृतिषु, कमलेष्विव विकचतामासादयत्सु वीरवदनेषु, भ्रमरालिष्विव परितः प्रस्फुरन्तीषु असि-पङ्क्तिषु, चटकै चककायितेषु, कवच चमत्कारेषु गोपीनाथ-पण्डितो वारमेकं शिववीर दिशि परतश्च यवन-सेनापति-दिशि गतागत विधाय, सेनाद्वयस्य मध्य एव कस्मिंश्चित् पट-कुटीरे अफजल-खानमानेतु प्रबबन्ध।

शिववीरोऽपि कौशेय कचुकस्यान्तर्लोह-वर्म परिधाय, सुवर्णसूत्र-ग्रथितोष्णीपस्याप्यधस्तादायस शिरस्त्राण सस्थाप्य, सिहनख-नामक शस्त्रविशेष करयोरारोप्य, दृढबद्ध-कटिरफजलखान-साक्षात्काराय सज्ज-स्तिष्ठति स्म।

हिन्दी अनुवाद—इसके पश्चात् आकाश मे पर्याप्त प्रकाश फैल जाने पर, परस्पर आकृतियो के पहचान मे आने पर, कमलो के समान वीरो के मुख प्रफुल्लता को प्राप्त होने पर, भ्रमरों की पंक्ति के समान चारो ओर तलवारों की पंक्तियो के चमकने पर, गौरय्या पक्षी के द्वारा चकचक ध्वनि के सदृश कवचो के ध्वनि करने पर गोपनीय पण्डित एक बार शिववीर की दिशा मे तदनन्तर यवन-सेनापति की ओर चक्कर लगाकर, दोनो सेनाओ के मध्य ही किसी तम्बू मे अफजलखान के लाने का प्रबन्ध किया।

रेशमी कुर्ते के अन्दर लौह-कवच पहनकर, स्वर्ण-तारो से कढ़ी हुई पगड़ी के नीचे लोहे का शिरस्त्राण रखकर, सिहनख नामक शस्त्र-विशेष को हाथों मे

धारण करके और कस कर कमर बांधे हुये शिवाजी भी अफजलखान से साक्षात्कार के लिए तैयार बैठे थे।

संस्कृत व्याख्या—अथ = तदनन्तर, कथचित् = प्रकाश-बहुले = ज्योत्यधिके, सवृत्ते = प्रसृते, नभ स्थले = आकाशे, परस्पर, परिचीयमानासु = अवगम्यमानासु, आकृतिपु = मुखाकृतिपु, कमलेपु = सरोजेपु, इव, विकचताम् = प्रफुल्लताम्, आमादयत्सु = वीरवदनेपु = वीराणा शूराणा वदनेपु मुखेपु भ्रमरालिपु = भ्रमराणा मधुकराणा आलिपु पक्तिपु, परित = समन्तात्, प्रस्फुरन्तीपु - सचलन्तीपु, असि-पक्तिपु = असीना चन्द्रहासा पक्तिपु आलिपु, चटकै = चटकनामकै पक्षिविशेपै चकचकायितेपु—कवच-चमत्कारेपु = चम-शब्दायितेपु, गोपीनाथ = पण्डित, वारमेक = सकृत्, शिववीर—, दिशि = शिववीरस्य दिशि आशायाम्, परतश्च = ततश्च, यवन-सेनापति-दिशि = यवनाना सेनापते सेनाध्यक्षस्य दिशि आशायाम्, गतागत = गमनागमन, विधाय = कृत्वा, सेनाद्वयस्य = मराठायवनकटकयो, मध्ये = अन्तरे, एव कस्मिश्चित् = कस्मिन्, पट-कुटीरे = वस्त्रगृहे, अफजलखानम्, आनेतु—, प्रबन्ध = व्यवस्थाम् अकरोत्।

शिववीरोऽपि, कौशेयकचुकस्य = कौशेय दुकूल कचुक शरीर परिवेष्टनाय वस्त्र तस्य, अन्त = अधस्तात्, वर्म = कवच, परिधाय = गृहीत्वा, सुवर्ण-सूत्र-ग्रथितोष्णीषस्य = सुवर्णस्य कचनस्य सूत्रै तारै ग्रथित निर्मित उष्णीष, शिरोवेष्टन तस्य, अपि, अधस्तात् = अध, आयस = लौह, शिरस्त्राण = शिरस. रक्षाकवच, सस्थाप्य = धारित्वा, सिंहनखनामक—, शस्त्रविशेष = विशिष्ट शस्त्र, करयो = भुजयो, आरोप्य = परिधाय, दृढबद्धकटि = दृढेन प्रगाढेन बद्धा नद्ध कटि शरीर मध्यभाग यस्य स, अफजलखान साक्षात्काराय = अफजलखानस्य साक्षात्काराय = मिलितु, सज्ज —तिष्ठति = उपविशति, स्म।

हिन्दी व्याख्या—अथ कथचित् = इसके पश्चात् किसी तरह। प्रकाशबहुले = पर्याप्त प्रकाश मे, 'प्रकाशस्यबहुलस्तस्मिन्'। सवृत्त = फैलने पर परिचीयमानासु = पहचाने जाते हुये, 'परि + चि + णिच् + शानच् (स० व०ब्रीहि)' वीरवदनेपु = वीरो के मुख के, वीराणा वदनेपु। विकचताम् = प्रफुल्लित, विकच + ता। आसादयत्सु = होने पर, 'आङ् + √मद् + णिच् + शतृ (स० ब० व०)। भ्रमरालिपु = भ्रमरो की पंक्ति, भ्रमराणा आलिपु। प्रस्फुरन्तीपु = चमकने पर, 'प्र + √स्फुर् + शतृ + ङीप् स० 'बहु०'। चटकै = गौरय्या नामक पक्षी,

चकचकायितेषु = चकचक करने पर चकचक कुर्वन्तीति इव चकचकायिता। तेषु। कवच-चमत्कारेषु = कवचो के ध्वनि करने पर, कवचाना चमत्कारेषु। शिववीरदिशि = शिवाजी की ओर, शिववीरस्य दिशि। परत. = तदनन्तर, 'परम्' से 'तसिल्' प्रत्यय। यवन-सेनापति-दिशि = यवन-सेनापति की ओर यवनाना सेनापतिः तस्य दिशि। गतागत = गमनागमन, √गम् + क्त = गत, आगत = आङ् + गम् + क्त। विधाय = करके, वि + √धा + ल्यप्। सेनाद्वयस्य = दोनो सेनाओ के, सेनयो द्वय तस्य। मध्ये एव = मध्य मे ही। पटकुटीरे = तम्बू मे। प्रबबन्ध = प्रबन्ध किया, 'प्र + √बन्ध लिट् लकार प्र० पु० ए० व०'। आनेतु = लाने के लिए, आङ् + √नी + तुमुन्। 'प्रकाशबहुले सवृत्ते ... कवच-चमत्कारेषु' = इन स्थलो मे 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी है। कौशेय-कचुकस्य = रेशमी कन्चुक के, कौशेय = 'कोशे संभवति' इस अर्थ मे 'कोश' से 'ढञ्' प्रत्यय। अन्त. = नीचे। लोहवर्म = लोह-कवच, लोहस्य वर्म। परिधाय = धारण करके, 'परि + √धा + ल्यप'। सुवर्ण-सूत्र-ग्रथितोष्णीषस्य = सुवर्ण-तारो से कढी हुई उष्णीष के, सुवर्णस्य सूत्रै ग्रथित यः उष्णीष तस्य। अधस्तान् = नीचे। आयस = लोह-निर्मित, अयस् + अण्। शिरस्त्राण = सिर की रक्षा हेतु विशेष कवच। सस्थाप्य = रखकर, 'सम् + √स्था + ल्यप्'। सिहनखनामक शस्त्रविशेष = 'सिहनख' नाम के विशिष्ट शस्त्र को। करयो = हाथो मे। आरोप्य = धारण कर, आङ् + √रूप् + ल्यप्। दृढबद्धकटि. = जिसकी कमर कसकर बँधी है, दृढेन बद्ध कटि. यस्य स., बद्ध — √बध् + क्त। अफजलखान-साक्षात्काराय = अफजलखान के साक्षात्कार के लिए, अफजलखानस्य साक्षात्काराय। सज्ज = तैयार, '√सञ्ज + क्त'। तिष्ठति स्म = बैठा था।

टिप्पणी—(१) 'कमलेष्विव विकचतामासादयत्सु वीरवदनेषु' और 'भ्रमरालिष्विव परित. प्रस्फुरन्तीषु असि-पङ्क्तिषु' मे क्रमश 'वीरवदन' की उपमा 'कमल' से और 'असि-पक्ति' की उपमा 'भ्रमर-पक्ति' से देने के कारण उपमालकार है।

अफजलखानोऽपि च—"यदाऽहमेन साक्षात्कृत्य, करताडनमेव कुर्य्याम्, तदैव तालिकाध्वनि-समकालमेव अमुंकामुकं श्येनैरिवाभिपत्य

पाशैरेव बन्धनीय, सेनया च क्षणात् तत्सेना झञ्झया घनघटेवापनेया" । इति सकेत्य, सूक्ष्म-वसन-परिधान, वज्रक-जटितोष्णीषिक, गल-विलुलित-पद्मराग--माल, मुक्ता-गुच्छ चोचुम्ब्यमान-भाल, विश्वास-प्रश्वास-परिमथित-मद्यगन्ध-परि-पूरित-पाश्व देशान्तराल, शोण-श्मश्रु-कूर्च-विजित-नूतन-प्रवाल, कञ्चुक-स्यूत-काञ्चन-कुसुम-जाल, विविध-वर्ण-वर्णनीय-शिविकामारुह्य निर्दिष्टपटकुटीमभिमुग्न प्रतस्थे ।

इतस्तु कुरङ्गमिव तुरङ्ग नर्तयन् रश्मिग्राह-वेषेण गौरसिंहेनानुगम्यमान माल्यश्रीक-प्रभृतिभिर्वीरवरैर्युद्ध मज्जै सतर्क निरीक्ष्यमाण शिववीरोऽपि तस्यैव सकेतितस्य समागमस्थानस्य निकटे एव मन्गकरेण वल्गामाकृष्याश्वमवारुधत ॥

हिन्दी अनुवाद---और अफजलखान ने भी, "जैसे ही मैं उससे (शिवाजी) मिलकर एक बार ताली बजाऊँ, तभी ताली की ध्वनि के साथ ही अमुक-अमुक ो द्वारा बाज सदृश टूट कर उसे रस्सियो से बाँध लेना चाहिये, और सेना क्षण भर मे उसकी सेना को उसी प्रकार नष्ट कर देना चाहिये जिस ार आंधी घनघटा को ।" —यह सकेत करके, महीन कपडे के परिधान धारण करने वाले हीरे जडी टोपी-धारण किये हुये, कण्ठ मे पद्मराग मणियों की माला से शोभित, मुक्ता-गुच्छ द्वारा माथे का चुम्बन किये जाते हुये, श्वास-प्रश्वास के कारण निसृत शराब की गन्ध से जिसके समीप के भाग पूर्ण है, रक्त दाढी-मूँछो से नये पत्तो (की शोभा) को विजित किये हुये, सौवर्णिक पुष्प-समूह से युक्त कचुक धारण किये हुये (अर्थात् सुवर्ण तारो के कढे हुये कचुक को धारण किये हुये), विविध वर्णों वाली वर्णन के योग्य पालकी पर चढ कर पूर्व निश्चित तम्बू की ओर चल पडा ।

इधर हरिण-सदृश घोडे को नचाते हुये, सारथि के वेष मे गौरसिंह द्वारा नुगमन किये जाते हुये, युद्ध के लिए तैयार माल्यश्रीक आदि श्रेष्ठ वीरो के ारा सतर्कता पूर्वक देखे जाते हुये, शिवाजी उसी सकेतित मिलने के स्थान के निकट ही बायें हाथ से लगाम खींचकर अश्व को रोका ।

सस्कृत-व्याख्या—अफजलखानोऽपि च, यदा, अहम् = अफजलखान, एम = शिववीर, साक्षात्कृत्य = मिलित्वा, एक = केवलम, करताडन = करध्वनिम्, कुर्याम् = विधेयम्, तदैव = तत्क्षणमेव, तालिकाध्वनि-समकालम् = तालिकाया तालस्य ध्वने शब्दस्य समकालम् एव = समम् एव, अमुकामुकै = निर्दिष्ट

वीरैं, श्येनै =बाजैः, इव, अभिपत्य =आक्रमण कृत्वा, पाशैं =बन्धनै, बन्धनीय =बन्धितु योग्य, सेनया =वाहिन्या, च, क्षणात् =तत्क्षणम्, तत्सेना =तस्य =शिववीरस्य, सेना =वाहिनी, झन्झया =तीव्रवायुना, घनघटा -घना =अविरला, घटा =मेघमाला, अपनेया =नष्टव्या, इति, सकेत्य =आदिश्य, सूक्ष्म-वसन-परिधान =सूक्ष्मवसनानाम् =सूक्ष्म पटाना परिधानानि यस्य स, वज्रक-जटितोष्णीपिक =वज्रकेण हीरेण जटित खचित उष्णीप शिरोवेष्टन यस्य स, गल विलुलितपद्मराग-माल =गले कण्ठे विलुलिता शोभिता पद्मरागाणा रक्तवर्णमणीना माला स्रग् यस्मिन स, मुक्ता-गुच्छचोचुम्ब्यमान-भाल =मुक्ताना मौक्तिकाना गुच्छेन स्तबकेन चोचुम्ब्यमान स्पर्शमाण भाल मस्तक यस्य स, निश्वास-प्रश्वास-परिमथित-मद्य-गन्ध-परि-पूरित-पार्श्व-देशान्तराल = निश्वास प्रश्वासाभ्या प्राणवायवागमननिर्गमनाभ्या परिमथित निसृत मद्यस्य सुराया गन्धेन दुर्गन्धेन परिपूरिता व्याप्ता पार्श्वस्य समीपस्य देशस्य अन्तराल येन स, शोण-श्मश्रु-कूर्च-विजित-नूतन प्रवाल =शोणौ रक्तवर्णौ श्मश्रुकूर्चौ ताभ्या विजित तिरस्कृत नूतन नवीन प्रवाल पत्र येन स, कञ्चुक-स्यूत-काञ्चन-कुसुम-जाल —कञ्चुके =वस्त्रे स्यूत =ग्रथितम्, काञ्चनाना =सौवर्णाना कुसुमाना =पुष्पाणा जाल =समूह यस्मिन् स, विविध-वर्ण वर्णनीय-शिविका =विविधानि अनेकानि वर्णानि अतएव वर्णनीया प्रशसनीया शिविका पालकीम्, आरुह्य =स्थित्वा, निर्दिष्ट-पट-कुटीराभिमुखनिर्दिष्ट निश्चित पटकुटीर तस्य अभिमुख, प्रतस्थे =प्रस्थान अकरोत्। इतस्तु =अत्र, कुरङ्ग =हरिण, इव, तुरङ्ग =अश्व, नृत्यन्, रश्मिग्राह-वेषेण =रश्मि ग्राहस्य सारथे वेषेण रूपेण, गौरसिहेन, अनुगम्यमान =पश्चाद्गम्यमानः, युद्ध-सज्जै =युद्धाय रणाय सज्जै तत्परैं, माल्यश्रीकप्रभृतिभि =माल्यश्रीकादिभ, वीरवरै =वीरेषु शूरेषु वरै श्रेष्ठै, सतर्कं =सतर्कतापूर्वक, निरीक्ष्यमाण =प्रेक्ष्यमाण, शिववीरोऽपि, तस्यैव संकेतितस्य =तस्यैव निर्दिष्टस्य, समागमस्थानस्य =समागमस्य मिलनस्य स्थान प्रदेश तस्य, निकटे एव =समीपे एव, सव्यकरेण =वामकरेण, वल्गाम् =खलीन, आकृष्य =दृढ कृत्वा, अश्व =तुरङ्ग, अवारुधत् =अरुधत्।

हिन्दी-व्याख्या—अफजलखानोऽपि च =और अफजलखान ने भी। यदाहम् =जैसे ही मैं। एन =शिवाजी को। साक्षात्कृत्य =मिलकर, साक्षात् + कृ + ल्यप्। करताडन =ताली, करयो ताडन (त० पु०)। कुर्याम् =करूँ। तदैव = तब ही। तालिकाध्वनि-समकालम् =ताली की ध्वनि के समय ही, तालिकायाः

ने समकाल। अमुकामुकं = अमुक अमुक, अपजलगान ने कुछ व्यक्तियों को ाजी पर आक्रमणार्थं नियुक्त किया था। श्येनैरिव = बाज के समान। अभि-र = टूटकर अर्थात् आक्रमण करके। अभि + √पत् + टाप्। वन्धनीय = व लेना चाहिये, वन्ध् √ + अनीयर्। तत्सेना = उसकी सेना, तस्य सेना। ञ्झया = आंधी से। घनघटा = सघन मेघ माला, घना चासौ घटा (कमधा०), टा = मेघो की पक्ति। अपनेया = समाप्त कर दी जानी चाहिये, अप + √नी -यत् + टाप्। इति सकेत्य = इस प्रकार बताकर, सूक्ष्म-वसन परिधान = हीन कपड़े के वस्त्रो को धारण करने वाला, सूक्ष्माणि वसनानि तेषाम् परिधा-ानि यस्य स इति सूक्ष्मवसनपरिधान (व० व्री०), वसन = वस्त्र, √वस् + युट् (भावे), परिधान = सिले हुये वस्त्र, परि + √धा + ल्युट्। वज्रक-जटि-तोष्णीषिक = हीरे जटित उष्णीष को धारण करने वाला, वज्रकेण जटित उष्णीष यस्मिन् स (व० व्री०), वज्रकजटितोष्णीष + ठन् = वज्रकजटितोष्णी-षिक। गल विलुलित-पद्मराग-माल = गले मे पद्मराग मणियो की माला से सुशोभित, गले विलुलिता पद्मरागाणा माला यस्मिन् स, विलुलित = सुशो-भित। मुक्तागुच्छचोचुम्ब्यमानभाल = मुक्ता गुच्छ मे जिसका मस्तक चूमा जा रहा है, मुक्ताना गुच्छेन चोचुम्ब्यमान भाल यस्य स (ब० व्री०), चोचुम्ब्यमान = चुम्बित, '√चुबि + यङ् + शानच्।' निश्वास प्रश्वासपरिमथित मद्य गन्ध-परि-पूरित पार्श्वदेशान्तराल = श्वास-प्रश्वास के कारण मदिरा की गन्ध से जिसके समीप के भाग परिपूर्ण थे, रात्युत्सव मे मदिरा-पान के कारण यवन सैनिको के मुख से दुर्गन्ध निकल कर रही थी जिसके कारण समीपवर्ती प्रदेश भी दुर्गन्ध-युक्त हो रहे थे, निश्वास = श्वास लेना, प्रश्वास = श्वास निकालना, परिमथित = मथा गया। परि √ + मथ् + क्त, देशान्तराल = मध्यभाग। शोण-श्मश्रु कूर्च-विजित-नूतन-प्रवाल = जिसने रक्तवर्ण मूंछ और दाढी से नवीन पत्र को तिरस्कृत कर दिया है शोणौ श्मश्रु कूर्चौ ताभ्या विजित नूतन प्रवाल येन स (व व्री०), विजित = वि √जि + क्त। कञ्चुक-स्यूत काञ्चन-कुसुम जाल = सौवर्णिक पुष्पो के समूह से युक्त कञ्चुक है जिसका, कञ्चुकेन स्यूत काञ्च-नाना कुसुमाना जाल यस्मिन् स (व० व्री०), स्यूत = स्यूत् + क्त, काञ्चन = सुवर्ण के काञ्चन + अण्। विविध-वर्ण-वर्णनीय-शिविकाम् = अनेक रगो के

सत्वराभ्या पादाभ्या = तीव्र गति से । स्वागताभ्रेडनतत्परेण = पुन -पुन 'स्वागत' 'स्वागत' कहने मे तत्पर, 'स्वागतस्य भाम्रेडनम् तस्मिन् तत्परस्तेन' (तत्पु०) । आश्लेपाय = आलिङ्गन के लिए, आड् + √श्लिप् + अच्—च० ए० व । प्रसारिताभ्या हस्ताभ्या = फैलाये हुये हाथो से, प्रसारिताभ्या = प्र + √सृ + णिच् + क्त—तृ० द्वि० व० । कौशेयास्तरण-विरोचिताया = रेशमी चादर से सुशोभित, कौशेय च तत् अस्तरण तेन विरोचिता न स्याम् । धावमानौ = दौड़ते हुये, √धाव् + शानच् । आलिलिङ्गतु = आलिंगन किया, आड् + √लिड् लकार प्र० पु० द्वि० व० आलिङ्गनच्छलेन = आलिंगन के व्याज से, आलिङ्गनस्य छलेन (त० पु०) । स्वहस्ताभ्या = अपने हाथो से । तस्य स्कन्धौ = उसके कन्धो का । दृढ-गृहीत्वा = दृढता पूर्वक पकडकर, दृढेन गृहीत्वा (त० पु०) । गृहीत्वा = √ग्रह + त्वा । सिहनखै = सिहनख नामक अस्त्र विशेष से । जत्रुणी = कन्धे के जोड । कन्धरा = गीवा को । व्यपाटयत् = चीर डाला, वि + √पट + लड् लकार प्र० पु० ए० व० । रुधिरदिग्ध = लहू से लथपथ, रुधिरेण दिग्ध (त० पु०), दिग्ध—√दिह् + क्त । तच्छरीर = उसके शरीर को, तस्य शरीर, इति तच्छरीर । कटि-प्रदेशे = कटि भाग तक । समुत्तोल्य = उठाकर, सम् + उत् + तुल् + ल्यप् । भूपृष्ठे = पृथ्वी पर । अपोथयत् = पटक दिया, '√पथ—लङ् लकार प्र० पु० ए० व०' ।

तत्क्षणादेव च शिववीर ध्वजिन्या महाध्वज एक. समुच्छ्रित । तत्सम-कालमेव यवन-शिविरस्य पृष्ठस्थिता शिववीर सेना शिविरमग्निसा-त्कृतवती, पुर स्थितसेनासु च अकस्मादेव महाराष्ट्र-केसरिण समपतन् । तेषा 'हरहर-महादेव' गर्जनपुरस्सर छिन्धि-भिन्धि-मारय-विपोथय-इति कोलाहल प्रत्यर्थिना च 'खुदा-तोबा-अल्लादि' पारस्य-पदमय कलकलो रोदसी समपूरयत् ।

हिन्दी अनुवाद—उसी समय शिवाजी की सेना मे एक महाध्वज फहराया और उसके साथ ही यवन शिविर के पीछे स्थित शिवाजी की सेना ने शिविर मे आग लगा दी, और सामने स्थित सेनाओ पर अकस्मात् ही महाराष्ट्र के सिहो ने अर्थात् सिह सदृश महाराष्ट्रीय वीरो ने आक्रमण कर दिया । उनके 'हरहर—महादेव' इस गर्जन के साथ ही छेदन करो, भेदन करो, मारो, पटको

इस कोलाहल से तथा शत्रुओ के 'खुदा-तोवा-अल्ला' आदि फारसी शब्दमय कोलाहल ने आकाश और पृथ्वी को भर दिया।

संस्कृत-व्याख्या—तत्क्षणादेव – तत्कालमेव, च, शिववीर-ध्वजिन्या = शिववीरस्य ध्वजिन्या सेनायाम्, महाध्वज = महापताका, एक, समुच्छ्रत = आकाशे समुल्लसित । तत्समकालमेव, यवनशिविरस्य = यवनाना शिविरस्य पटकुटीरस्य, पृष्ठस्थिता = विपरीतदिक्स्था, शिववीर-सेना = शिववीरस्य सेना वाहिनी, शिविरम् = पटकुटीरम्, अग्निसात्कृतवती = अज्वलत, पुर स्थित = सेनासु पुरः अग्रे स्थितासु सेनासु वाहिन्यासु, च, अकस्मादेव, महाराष्ट्र-केसरिण = महाराष्ट्रस्य केसरिण सिंह सदृशा वीरा, समपतन् = आक्रमण अकुर्वन् । तेषा = शिववीर-सैनिकाना, 'हरहर महादेव' गर्जनपुरस्सर = कथनपूर्वक, छिन्धि = छेदन कुरु, भिन्दि = भेदन कुरु, मारय = जहि, विपोथय = निपातय, इति, कोलाहलेन = कलकलेन, च, प्रत्यर्थिना = शत्रूणा, 'खुदा-तोबा-अल्लादि', पारस्यपदमय = फारसीशब्दमय, कलकल = कोलाहल, रोदसी = द्यावापृथिवी, समपूरयत् = पूर्णम् अकरोत् ।

हिन्दी-व्याख्या—तत्क्षणादेव् च = और उसी समय । शिववीर ध्वजिन्यां = शिवाजी की सेना मे, शिववीरस्य ध्वजिनी तस्याम् (ष० त० पु०), ध्वज + इनि + ङीप् = ध्वजिनी । एक, महाध्वज = महान् ध्वजा, महान् चासौ ध्वज महाध्वज (कर्म०) । समुच्छ्रित = फहराई, सम् + उत् + क्त । तत्समकालमेव = ध्वजा फहराने के साथ ही । यवन-शिविरस्य = यवन-शिविर के, यवनाना शिविरस्य (ष० त० पु०) । पृष्ठस्थिता = पीछे स्थित, पृष्ठे स्थिता या सा (ब० व्री०), स्थिता = $\sqrt{}$स्था + क्त + टाप् । शिववीरसेना = शिवाजी की सेना ने, शिववीरस्य सेना (त० पु०) । शिविरम् = शिविर के । अग्नि-सात्कृतवती = जला दी गई, 'अग्नि + सात् + कृ + क्तवतु + ङीप्' पुर स्थित-सेनासु = आगे स्थित सेनाओ पर, पुर स्थिता सेना. तासु । महाराष्ट्र-केसरिण = महाराष्ट्र के सिंह अर्थात् सिंह-तुल्य वीर सैनिक, महाराष्ट्रस्य केसरिण । समपतन् = टूट पड़े, सम् + $\sqrt{}$पत् + लङ् लकार प्र० पु० ए० व० । तेषा = उनके अर्थात् मराठों के । 'हरहर महादेव' गर्जनपुरस्सर = 'हरहर महादेव' इस कथन पूर्वक । छिन्धि = $\sqrt{}$छिद् लोट् लकार म० पु० ए० व० । भिन्धि— $\sqrt{}$भिद् लोट लकार ।

मारय--मारो, √मृ—लोट् ल० म० पु० ए० व० । विपोथय=पटको, वि+√पुथ्, लोट ल० म० पु० ए० व० । इति कोलाहल—इस 'कोलाहल से'। च प्रत्यर्थिनां=और शत्रुओं के, अर्थिन्=जो उद्देश्य प्राप्त सिद्ध करना चाहे, प्रत्यर्थिन्=जो उद्देश्य प्राप्ति में बाधक हो अर्थात् शत्रु । 'खुदा-तोबा-अल्लादि पारस्यपदमय=खुदा, तोबा, अल्ला आदि फारसी शब्दमय, पारस्यस्य पदमय,। कलकल—कोलाहल ने । रोदसी=आकाश और पृथ्वी को । समपूरयत्=परिपूर्ण कर दिया, 'सम्+√पूर्+लङ् लकार ।'

ततो यवन सेनासु शतस मादिन. गगन चोचुम्ब्यमाना कृत-दिगन्त-प्रकाशा कडकडा-ध्वनि-धर्षित-प्रान्त-प्रजा उड्डीयमान-दन्दह्यमान-परस्सहस्त्र-पटखण्ड-विहित-हैम-विहङ्गम विभ्रमा ज्योतिरिङ्गणायित-परस्कोटि-स्फुलिङ्ग रिङ्गित-पिङ्गीकृत प्रान्ता दोधूयमान-धूम-घटा-पटल-परिपात्यमान-भासित-सितानोकहा सकलकल ध्वनिपलायमानैः पतत्रि-पटलैरिव सो सूच्यमाना शिविरघस्मरा ज्वाला माला अवलोक्य, सहा-हाकार तदभिमुख प्रयाता । अपरे च महाराष्ट्रासि-भुजङ्गिनीभि' दन्द-श्यमाना, केचन "त्रायस्व, त्रायस्व" इति साम्रेड व्याहरमाणाः पलाय-माना', अन्ये धीरा वीराश्च—"तिष्ठत रे तिष्ठत रे धूर्तधुरीणा । महा-राष्ट्रहतका ! किमिति चौरा इव लुण्ठका इव दस्यव इव च यवनसेना-क्राम्यथ ? समागच्छत सम्मुखम् यथा शाम्येदस्मच्चन्द्रहासाना चिरप्रवृद्धा महाराष्ट्र-रुधिरास्वाद-तृषा" इति सक्ष्वेड सगर्ज्यं, युद्धाय सज्जा सम-तिष्ठन् ।

तेषा चाश्वाना सव्यापसव्य मार्गे खुर क्षुण्णा व्यदीर्यंत वसुधा । खड्ग खटखटाशब्दं सह च प्रादुरभवन् स्फुलिङ्गा । रुधिरधाराभि जपा-सुमनस्समाच्छन्नमिवाभ्रू द्रणाङ्गणम् ।

हिन्दी अनुवाद—तब यवन सेना के सैकडो घुडसवार, आकाश को छूने वाली, दिशाओं को प्रकाशित कर देने वाली, 'कड-कड' की ध्वनि से निकट के प्रजा को भयभीत कर देने वाली, उडने और जलने वाले हजारो पटखण्डो से सोने के पक्षियो का भ्रम पैदा करने वाली, जुगुनू के समान करोडो स्फुलिङ्गों (चिनगारियो) के उडने से प्रान्तभाग को पीला बना देने वाली, ऊपर उठती हुई (कपती हुई) धूम-घटाओं से चारो ओर बिखेरी जा रही भस्म से वृक्षो को

सफेद बना देने वाली, कल कल ध्वनि के साथ भागते हुए पक्षियों से गा.ो जिसकी सूचना दी जा रही है, ऐसी शिविर को जला देने वाली अग्नि की ज्वालाओं को देखकर, हाहाकार करते हुए उसी ओर दौड़ पड़े। दूसरे यवन सैनिक मराठों की तलवार रूपी सर्पिणी से डसे जा रहे थे, कुछ "रक्षा करो, रक्षा करो," कहते हुए भाग रहे थे, अन्य कुछ धैर्यशाली वीर—"रुको, ऐ धूर्त राजो ! रुको, दुष्ट मराठो ! क्यो चोरो की तरह लुटेरो की तरह और डाकुओ की तरह सेनापति पर आक्रमण कर रहे हो ? सामने आओ, जिसमे हमारे तलवारो की बहुत दिन से बढ़ी हुई मराठों के खून की पिपासा शान्त हो।" ऐसा कहकर सिहनाद पूर्वक गरज कर युद्ध के लिये तैयार हो गे। उनके घोड़ो के दाहिने बाँये मार्गा के आश्रयण से (पैंतरे बदलने से) खुरो से खुदी हुई पृथ्वी फट गई। तलवारो के खटखट शब्दो के साथ अग्नि की चिनगारियाँ निकलने लगी। खून की धारा से युद्धभूमि जपा कुसुम से आच्छन्न हुई सी (लाल) हो गई।

संस्कृत-व्याख्या—तत =तदनन्तरम्, यवन सेनासु=म्लेच्छपताकिनीसु, शतश, सादिन =अश्वारोहिण, गगन चोचुम्ब्यमाना =गगनं परामृश्यमाणा कृतदिगन्तप्रकाशा =प्रकाशिताशा, कडकडाध्वनिर्वासितासन्नप्रजा =कडकडा-ध्वनित्रासित निकटस्थ प्रजा, उड्डीयमानै =उद्गच्छद्भि, दन्दह्यमानै = नितरा ज्वलद्भि, परस्सहस्रै =सहस्राधिकै, पटखण्डै =वस्त्रशकलै विहित =सम्पादित, हंसानाम्=सौवर्णानाम्, विहगमाना=पक्षिणाम्, विभ्रम = भ्रम याभिस्ता। ज्योतिरिङ्गणायितानाम्=खद्योतायितानाम्, परस्कोटीनाम् =कोटयधिकानाम्, स्फुलिङ्गानाम्=अग्नि कणानाम्, रिङ्गितै =उड्डयनै, पिङ्गीकृता =पिञ्जरीकृता, प्रान्ता =परिसरभूमय याभिस्ता। दोधूयमानानाम्=अतितरा वृद्धिगच्छन्तीनाम् धूमघटानाम=धूमलेखानाम्, पटलेन=समूहेन, परिगार्यमाने =विकीर्यमाणै', भासितै =भस्मभि, सितीकृता, गरोरुहा =वृक्षा,, याभिस्ता। कलकलध्वनि पलायमानै =कल कल-शब्देन सह पलायमानै, पतत्रिपटलैरिव=पक्षिसमूहैरिव, सूच्यमाना =वाबु-ध्यमाना शिविरं नगरी =पटगृहदाहिका, ज्वालमाला =ज्वालपक्ती, अव-लोक्य, सहाहाकारम्=हाहाकारेण सह, तदभिमुखम्=शिविराभिमुखम्, जय ता =प्रचलिता। अपरे=अन्ये। महाराष्ट्राभिभुजाङ्गनीभि'=महाराष्ट्रकृपाणसर्पि-

णीभि , दन्दश्यमाना = भृश द्रश्यमाना केचन "त्रायस्व-त्रायस्व = पाहि-पाहि" इति सात्रं डम् = अनेकश , व्याहरमाणा = उच्चार्यमाणा , पलायमाना. = प्रस्थाप्यमाणा , अन्ये, धीरा वीराश्च = धैर्यशालिन भटाश्च, "तिष्ठत रे तिष्ठत धूर्तधूरीणा = धूतधौरेया:, महाराष्ट्रहतका = दुष्टमहाराष्ट्रा , किमिति = कथमिति, चौरा इव = परिग्रहिण इव, लुण्ठका इव, दस्यव इव, च यवन सेनापतीन् = अफजलखानम् आक्राम्यथ = आक्रमण कुरुथ ? समागच्छत = आयात, सम्मुखम् = अभिमुखम्, यथा = येन, शाम्येत् = शान्ति नयेत्, अस्मच्चन्द्रहासाना = अस्मत्कृपाणानाम्, चिरप्रवृद्धा = चिरकालात् वृद्धि गता, महाराष्ट्ररुधिरास्वादतृषा = महाराष्ट्राणाम् रक्तास्वादपिपासा" इति = एवम्, सक्ष्वेडम् = ससिहनादम्, सगर्ज्यं = गर्जन कृत्वा, युद्धाय = सग्रामाय, सज्जा = सजगा , समतिष्ठन्त = स्थिता. बभूवु ।

तेपा = यवानानाम्, च, सव्यापसव्यमार्गे = दक्षिणवामपथै खुरक्षुण्णा = खुरहता, वसुधा = पृथ्वी, व्यदीर्यंत = अभिद्यत् । खड्गकटकटाशब्दै = कृपाणकटकटारवै', सह च, प्रादुरभूवन् = सञ्जाता:, स्फुलिङ्गा = अग्निकणा' । रुधिरधाराभि = रक्तप्रवाहै , जपासुमनस्समाच्छन्नम् = जपा कुसुमाच्छादितम्, इव, अभूत, रणाङ्गणम् = युद्ध प्राङ्गणम् ।

हिन्दी-व्याख्या—यवनसेनासु = यवन सेना मे । सादिन = घुडसवार । चोचुम्ब्यमाना = बार-बार चूमने वाली, '√चुबि + यङ् + शानच्' कृतदिगन्तप्रकाशा = जिससे दिशाएँ प्रकाशित कर दी गई है, 'कृत दिगन्तस्य प्रकाशो याभिस्ता (ब० व्री०)' । कडकडाध्वनिधर्षितप्रान्तप्रजा = 'कडकड' की ध्वनि समीप लोगो को भयभीत कर देने वाली, धर्षि = भयभीत, प्रान्त = निकट के । 'कडकडेति ध्वनिना धर्षिता प्रान्तस्य प्रजा याभिस्ता '। उड्डीयमान विभ्रमा = उडने और जलने वाले हजारो वस्त्रखण्डो से सोने के पक्षी का भ्रम पैदा करने वाले । उड्डीयमान = उडते हुए, दन्दह्यमान = जलते हुए, '√दह् + यङ् + शानच्', हैम = सुवर्ण के बने हुए, विभ्रम = भ्रम । "उड्डीयमानै दन्दह्यमानैश्च परस्सहस्त्रै परखण्डै विहित हैमानाम् विहगमानाम् विभ्रम , याभिस्ता (ब० व्री०)' । ज्योतिरिङ्गणायित पिङ्गीकृतप्रान्ता = जुगनू के समान करोडो चिनगारियो के उडने से प्रान्तभाग को पीला बना देने वाली । ज्योतिरिङ्गणायित = खद्योत (जुगनू) के समान आचरण करने वाले, "ज्योतिरिङ्ग + क्यच् + क्त', परस्कोटि = करोडो, 'पर + सुट् + कोटि', 'पारस्करादित्वात् सुट' । स्फुलिङ्ग = अग्नि

कण, रिङ्गित=उडना, पिङ्गीकृत=पीले किये गये, प्रान्ता =निकट के भाग। "ज्योतिरिंगणायितानाम् परस्फोटीनाम् स्फुलिङ्गानाम्, रिङ्गितैः पिङ्गीकृता प्रान्ता याभिस्ता (व० व्री०)" दोधूयमान धूमोद्गमः=ऊपर को उठने वाली धूमलेखा समूह से चारो ओर विखेरे जाने वाली भस्म से वृक्षो को सफेद बना देने वाली, दोधूयमान=कम्पन के सहित ऊपर को उठने वाली, '√धूञ्+यङ्+शानच्' पटल=समूह, परिपात्यमान=चारो ओर गिराए जाने वाले, 'परि+√पत्+णिच्+शानच्' भसित=भस्म (राख), सितीकृत=सफेद किये गये, न सित सित कृतमिति सितीकृतम्, 'सित+च्वि+√कृ+क्त', "दोधूयमानानाम् धूमघटानाम् पटलेन परिपात्यमानैः भसितैः सितीकृता प्ररोहा याभिस्ता (व० व्री०)' सकलकलध्वनिपलायमानै=कल-कल ध्वनि के साथ उडने वाले। पतत्रिपटलै=पक्षि समुदायो के, पतत्रि=पक्षी। इव=समान। सोसूच्यमाना=बार-बार सूचना देने वाली, '√सूच+यङ्+शानच्'। शिविरघस्मरा=शिविर को जलाने वाली। ज्वालमाला=ज्वालाओ की माला। अवलोक्य=देखकर। सहाहाकारम्=हाहाकार के साथ। तदभिमुखम्=उसी ओर। प्रयाता=चल पडे, 'प्र+√या+क्त'। महाराष्ट्रासिभुजङ्गिनीभि=मराठो की तलवार रूपी सर्पिणी के द्वारा, 'महाराष्ट्राणामसय एव भुजङ्गिन्यस्ताभि'। दन्दश्यमाना=विशेष रूप से डसे जाने वाले' '√दश्+यङ्+शानच्' । (भृश दश्यमाना) व्याहरमाणा=कहते हुए, 'वि+आ+√हृ+शानच्'। पलायमाना=भागते हुए। तिष्ठत=रुको। धूर्तधुरीणाः=धूर्तराजो। धूर्तपुधुरीणा. (तत्पु०)। महाराष्ट्रहतका=दुष्ट मराठो। लुण्ठका इव=लुटेरो की तरह। दस्यव इव=डाकुओ की तरह। आक्राम्यथ=आक्रमण करते हो। समागच्छत=आओ। शाम्येत्=शान्त हो सके। अस्मच्चन्द्रहासानाम्=हम सब की तलवारो की। चिरप्रवृद्धा=बहुत दिनो से बढी हुई। महाराष्ट्ररुधिरास्वादतृषा=मराठो के खूनो के स्वाद की प्यास, "महाराष्ट्राणाम् रुधिराणाम् आस्वादस्य (तत्पु०)" स्वेडम्=सिंहनाद पूर्वक, 'क्ष्वेडातु सिंहनाद' (अमरकोष)। गर्जं=गर्जना करके। समतिष्ठन्त=खड़े हो गये। लक्ष्यपरिवर्तनात्=दाँव-पेंच बदलने से। क्षुरक्षुण्णा=छुरो से खुदी हुई, 'क्षुरैः क्षुण्णा इति'। व्यदीर्यत=फट गई। खड्गखटखटाशब्द=

तलवारों से खट-खट शब्दों से। प्रादुरभवन्=पैदा हुए। जपासुमनस्माच्छन्नम्=जपा कुसुमों से आच्छादित। रणाङ्गणम्=युद्ध क्षेत्र।

टिप्पणी—(१) शिविर को प्रज्वलित करने वाला ज्वाला अनेक प्रकार वर्णन किया गया है। (२) इस खण्ड में रूपक, उत्प्रेक्षा उपमा और अनुप्रा अलकार है।

तदवलोक्य गौरसिंहो मृतस्याफजलखानस्य शोणितशोण शोण शरी प्रलम्बवेणु-दण्डाग्रेषु बद्ध्वा समुत्तोल्य सर्वान् सदर्श्य सभेरीनाद घोषितवा यद्—"दृश्यताम्, दृश्यतामितो हतोऽयं यवन सेनापति, ततश्चाग्नि सात्कृतानि ससकल सामग्री-जातानि-शिविराणि परितश्च बहूनि विना शितानि यवनवीर कदम्बकानि, तत्किमिति अवशिष्टा यूय मुधा बक-गृध्र-शृगालाना भोज्या. सवर्तध्वे? शस्त्राणि त्यक्त्वा पलायध्व पलायध्वम् यथा नेय भू कदुष्णै भवता सद्यश्छिन्न–कन्धरा–गलद्रुधिर-प्रवाहै भॅवद्रमणीना च कज्जल–मलिनैर्बाष्प-पूरैरार्द्रा भवेद्" इति। तदवधार्य, दृष्ट्वा च रुधिर दग्ध क्रीडापुत्तलायित स्वस्वामिशरीरम, सर्वे ते हतोत्साहा विसृज्य शस्त्राणि कान्दिशीका दिशो भेजु।

हिन्दी अनुवाद—यह देखकर गौरसिंह ने मरे हुए अफजल खाँ के रक्त से लथपथ लाल शरीर को लम्बे बाँस के डण्डे के अग्रभाग मे बाँधकर, ऊपर उठा कर सभी को दिखाकर भेरीनाद के साथ घोषणा कर दी—देखो, देखो, इधर यह (अफजल खा) यवना सेनापति मार डाला गया है और उधर सम्पूर्ण सामग्रियो के साथ शिविर भी जला दिये गये हैं, चारो ओर अनेको यवन सैनिको की टुकडियाँ नष्ट कर दी गई हैं, तो क्यो शेषबचे हुये तुम सब व्यर्थ मे बगुलो, गीधों, और शृगालों के भोजन बनते हो? शस्त्र छोडकर भागो, भागो, जिससे कि यह भूमि तुम्हारी तुरन्त ही कटी गर्दन मे बहने वाली गरम-गरम खून की धाराओ से और तुम सबकी स्त्रियो के काजल से मलिन अश्रुप्रवाहों से गीली न हो।" यह सुनकर और खून से लथपथ, खिलौना बनाई गई अपने स्वामी के शरीर को देखकर, वे सभी हतोत्साहित होकर शस्त्रो को छोडकर भयभीत हुए चारो ओर भागने लगे।

सेना के साथ वीर शिवाजी विजय शङ्खनाद से पृथ्वी और अन्तरिक्ष को

पूरित करके, युद्धस्थल की सफाई का काम माल्यश्रीक को सौंपित करके, प्रतापदुर्ग में प्रवेश करके माता के चरणों में प्रणाम किया।

संस्कृत-व्याख्या—तदवलोक्य = तद्दृष्ट्वा, गौरसिंह = पूर्वोक्त ब्रह्मचारिवटु, मृतस्य = त्यक्तशरीरस्य, अफजलखानस्य = सेनापते, शोणितशोणम् = रक्तशोणम्, शोणम् = प्रकृत्यारक्तम्, शरीरम् = देहम्, प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेषु = दीर्घवंशाग्रेषु, बद्ध्वा, समुत्तोल्य = उत्थाप्य, सर्वान् = यवनान्, सन्दर्श्य = दर्शयित्वा, सभेरी नादम् = सडिण्डिभिनादम्, घोषितवान् = घोषणा कृतवान्, यद्,—दृश्यताम् = पश्यतु, इत = अत्र, अयम्, सेनापति = अफजलखान हतः = नष्ट, ततश्च = तत्रपक्षेऽपि च अग्निसात् कृतानि = प्रज्वलितानि, ससकल सामग्रीजातानि शिविरापि = रामग्रसामगी युक्तानि पटगृहाणि परितश्च = समन्तात्, वहूनि = अनेकानि, विनाशितानि = नष्टानि, यवनवीरकदम्बानि = म्लेच्छभट समूह, तत्किम् = तत्कथम्, अवशिष्टा = शेषजाता, यूयम् = भवन्त, मुधा = वथैव, वकगृध्र शृगालानाम् = पशुपक्षिणाम्, भोज्या = खाद्या, सवर्तध्वे = भवथ ? शस्त्राणि = आयुधानि, त्यक्त्वा = परित्यज्य, पलायध्वम् = अपसरत, यथा = येन, नेयम भू = पृथिवी, कदुष्णं = ईषदुष्णं, भवताम् = युष्माकम्, सद्य = सपदि छिन्ना = कर्तिता, कन्धरा = ग्रीवा, तासाम्, गलेभ्य. = कण्ठेभ्य ये रुधिराणाम् = रक्तानां, प्रवाहा = धारा, तै, भवद्रमणीनाम् = भवद्दाराणाम, च, कज्जलमलिनै = नेत्राञ्जनदूषितै, वाष्पपूरै = अश्रु प्रवाहै, आर्द्रा = सिक्ता, भवेत् = स्यात् ?" तदवगाह्य = दृष्टवा अवलोक्य, च, रुधिरदिग्धम् = रक्तक्लिन्नम्, क्रीडानुत्तलायितम = खेलाय निर्मित परादिभूतिवदाचरितम्, स्वस्वामि शरीरम् = अफजल खानदेहम, सर्वंते = यवनसैनिका, हतोत्साहा = निरुत्साहिता, शस्त्राणि = आयुधानि, विसृज्य = त्यक्त्वा, कान्दिशीका = भीता, दिश = परित, भेजु = प्रापु ।

ससेन = सेनया सहित, शिववीर = शिव, विजयशङ्खनादै = विजयशङ्खादिध्वनिभि, रोदसी = द्यावापृथिवी, सम्पूर्य = पूरयित्वा, रणाङ्गणशोधनाधिकारम = युद्धस्थलशोधनकार्यम्, माल्यश्रीकाय = एतन्नाम्ने, समर्प्य = अर्पयित्वा, प्रतापदुर्गम् = एतन्नामक दुर्गम, प्रविश्य = प्रवेश कृत्वा, मातु = जनन्या, चरणौ = पादौ, प्रणनाम = नमस्कार ।

हिन्दी-व्याख्या—मृतस्य = मरे हुए। शोणितशोणम् = खून से लाल। शोणम = लाल (शरीर)। प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेषु = लम्बे बाँसो के डण्डो के अग्रभाग मे, "प्रलम्बानाम् वेणुदण्डानामग्रेषु (तत्पु०)'। समुत्तोल्य = ऊपर उठाकर 'सम् + उत् + √तुल + ल्यप्'। सन्दर्श्य = दिखाकर, 'सम + √दृश् + ल्यप्'

तलवारों से खट-खट शब्दों ने। प्रादुरभवन्—पैदा हुए। जपाकुसुमस्तोमाच्छन्नम्=जपा कुसुमों से आच्छादित। रणाङ्गणम्=युद्ध क्षेत्र।

टिप्पणी—(१) शिविर को प्रज्वलित करने वाला ज्वाला अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है। (२) इस खण्ड में रूपक, उत्प्रेक्षा उपमा और अनुप्रास अलंकार है।

तदवलोक्य गौरसिंहो मृतस्याफजलखानस्य शोणितशोण शोण शरीर प्रलम्बवेणु-दण्डाग्रेषु बद्ध्वा समुत्तोल्य सर्वान् सदर्श्य सभेरीनाद घोषितवान् यद्—"हश्यनाम, हश्यतामितो हतोऽयं यवन सेनापतिः, ततश्चाग्नि सात्कृतानि ससकल सामग्री-जातानि-शिविराणि परितश्च बहूनि विनाशितानि यवनवीर कदम्बकानि, तत्किमिति अवशिष्टा यूयं वृथा बक-गृध्र-शृगालाना भोज्या सवतध्व? शस्त्राणि त्यक्त्वा पलायध्व पलायध्वम्, यथा नेयं भू कदुष्णैं भवता सद्यश्छिन्न-कन्धरा-गलद्रुधिर-प्रवाहैर्भवद्रमणीना च कज्जल-मलिनैर्बाष्प-पूररार्द्रा भवेद्" इति। तदवधार्य, दृष्ट्वा च रुधिर दग्ध क्रीडापुत्तलायित स्वस्वामिशरीरम, सर्वे ते हतोत्साहा विसृज्य शस्त्राणि कान्दिशीका दिशो भेजुः।

हिन्दी अनुवाद—यह देखकर गौरसिंह ने मरे हुए अफजल खाँ के रक्त से लथपथ लाल शरीर को लम्बे बाँस के डण्डे के अग्रभाग में बाँधकर, ऊपर उठा कर सभी को दिखाकर भेरीनाद के साथ घोषणा कर दी—देखो, देखो, इधर यह (अफजल खाँ) यवना सेनापति मार डाला गया है और उधर सम्पूर्ण सामग्रियों के साथ शिविर भी जला दिये गये हैं, चारों ओर अनेकों यवन सैनिकों की टुकड़ियाँ नष्ट कर दी गई हैं, तो क्यों शेषबचे हुये तुम सब व्यर्थ में बगुलों, गीधों, और श्रृगालों के भोजन बनते हो? शस्त्र छोड़कर भागो, भागो, जिससे कि यह भूमि तुम्हारी तुरन्त ही कटी गर्दन से बहने वाली गरम-गरम खून की धाराओं से और तुम सबकी स्त्रियों के कज्जल से मलिन अश्रुप्रवाहों से गीली न हो।" यह सुनकर और खून से लथपथ, खिलौना बनाई गई अपने स्वामी के शरीर को देखकर, वे सभी हतोत्साहित होकर शस्त्रों को छोड़कर भयभीत हुए चारों ओर भागने लगे।

सेना के साथ वीर शिवाजी विजय शङ्खनाद से पृथ्वी और अन्तरिक्ष को

पूरित करके, युद्धस्थल की सफाई का काम माल्यश्रीक को सौंपित करके; प्रतापदुर्ग में प्रवेश करके माता के चरणों मे प्रणाम किया।

संस्कृत-व्याख्या--तदवलोक्य=तद्दृष्ट्वा, गौरसिंह=पूर्वोक्त ब्रह्मचारिन्द्र, मृतस्य=त्यक्तशरीरस्य, सेनापतेस्य=सेनापते, शोणितशोणम् =रक्तशोणम, शोणम्=प्रकृत्यारक्तम, शरीरम्=देहम्, प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेपु= दीर्घवंशाग्रेपु, बद्ध्वा, समुत्तोल्य=उत्थाप्य, सर्वान्=यवनान्, सन्दर्श्य= दर्शयित्वा, सभेरी नादम्=सडिण्डिभिनादम्, घोषितवान्=घोषणा कृतवान्, यद्,—दृश्यताम्=पश्यतु, इत=अत्र, अयम्, सेनापति=अफजलखान' हृतः =नष्ट, ततश्च=तत्रपक्षेऽपि च अग्निसात् कृतानि=प्रज्वलितानि, ससकल सामग्रीजातानि शिविराणि=समग्रसामग्री युक्तानि पटगृहाणि परितश्च= समन्तात्, बहूनि=अनेकानि, विनाशितानि=नष्टानि, यवनवीरकदम्बानि= म्लेच्छभट समूह, तत्किम्=तत्कथम्, अवशिष्टा=शेषजाता, यूयम्=भवन्त, मुधा=व्यर्थैव, वकगृध शृगालानाम्=पशुपक्षिणाम्, भोज्या=खाद्या, सवर्तध्वे= भवथ? शस्त्राणि=आयुधानि, त्यक्त्वा=परित्यज्य, पलायध्वम्=अपसरत, यथा=येन, नेयम भू=पृथिवी, कदुष्णै=ईषदुष्णै, भवताम्=युष्माकम्, सद्य=सपदि छिन्ना=कर्तिता, कन्धरा=ग्रीवा, तासाम्, गलेभ्य= कण्ठेभ्य ये रुधिराणाम्=रक्तानां, प्रवाहा=धारा, तै, भवद्रमणीनाम्= भवद्दाराणाम, च, कज्जलमलिनै=नेत्राञ्जनदूषितै, वाष्पपूरै=अश्रुप्रवाहै, आर्द्रा=सिक्ता, भवेत्=स्यात्?" तदनवार्य=दृष्टवा अवलोक्य, च, रुधिरदिग्धम् =रक्तक्लिन्नम्, क्रीडानुत्तलायितम=खेलाय निर्मित परादिभूर्तिवदाचरितम्, स्वस्वामि शरीरम्=अफजल खानदेहम, सर्वे ते=यवनसैनिका, हृतोत्साहा= निरुत्साहिता, शस्त्राणि=आयुधानि, विसृज्य=त्यक्त्वा, कान्दिशीका=भीता, दिश=परित, भेजु=प्रापु।

ससेन=सेनया सहित, शिववीर=शिव, निजयशङ्खनादै=विजयशङ्खादिध्वनिभि, रोदसी=द्यावापृथिवी, सम्पूर्य=पूरयित्वा, रणाङ्गणशोधनाधिकारम =युद्धस्थलशोधनकार्यम्, माल्यश्रीकाय=एतनाम्ने, समर्प्य=अर्पयित्वा, प्रतापदुर्गम्=एतन्नामक दुर्गम, प्रविश्य=प्रवेश कृत्वा, मातु=जनन्या, चरणौ= पादौ, प्रणनाम=नमस्कार।

हिन्दी-व्याख्या—मृतस्य=मरे हुए। शोणितशोणम्=खून से लाल। शोणम्=लाल (शरीर)। प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेषु=लम्बे बाँसो के डण्डो के अग्रभाग मे, "प्रलम्बानाम् वेणुदण्डानामग्रेपु (तत्पु०)'। समुत्तोल्य=ऊपर उठाकर 'सम्+उत्+√तुल+ल्यप्'। सन्दर्श्य=दिखाकर, 'सम+√दृश्+ल्यप्'

(प्रेरक धातु)। दत्तभेरीनादम् = भेरी नादपूर्वक अर्थात् डुग्गी पिटाकर। अग्निसात् कृतानि = जला दिये गये हैं, 'अग्नितुल्य कृतानीति अग्निसात्कृतानि'। सकल सामग्रीजातानि शिविराणि = सम्पूर्ण सामग्री से युक्त शिविरों को, "सकलं सामग्री जातं सहितानि शिविराणि इति' विनाशितानि = नष्ट कर दिये गये हैं। यवन और कदम्बानि = यवन-सैनिकों के कदम्ब (समूह)। अवशिष्टा = बचे हुए। मुधा = व्यर्थ म। बकगृध्रशृगालानाम् = बगुले, गीधों और शृगालों के। भोज्या = खाद्य '√भुज् + ण्यत्'। भक्षण से अतिरिक्त अर्थ में भोग्य बनता है। सवर्तध्वे = हो रहे हो, 'सम + √वृत + लट्' (धाम्)' त्यक्त्वा = छोड़कर, '√त्यज् + क्त्वा'। पलायध्वम् = भाग जाओ। कदुष्णं = कुछ कुछ गरम, 'ईषद् उष्णं'। सद्य = शीघ्र ही। छिन्न कन्धरागलद्रुधिरप्रवाहै = कटी गर्दन से निकल रहे रुधिर प्रवाहों से, छिन्न = कटी हुई, कन्धरा = गर्दन, गलत् = निकलते हुए, रुधिर = खून, प्रवाह = धारा। 'छिन्नाभ्य कन्धराभ्य गलन्त रुधिराणां प्रवाहास्तैः' (तत्पु०)। '√छिद् + क्त' = छिन्न। भवद्रमणीनाम् = आपकी स्त्रियों के, 'भवता रमणीनाम् इति'। कज्जलमलिनैं = काजल से मलिन। बाष्पपूरै. = आँसुओं के प्रवाहों से। आर्द्रा = गीली। तदवधार्य = यह सुनकर, अवधार्य = 'अव + √धृ + ल्यप' दृष्ट्वा = देखकर। रुधिर दिग्धम् = खून से लथपथ, 'रुधिरेण दिग्धम', '√दिह + क्त'। क्रीडापुत्तलायितम् = खेल के बनाये गये कपड़े आदि की पुत्तलिका (पुतली) के समान, 'क्रीडा पुत्तलमिव आचरितम् इति क्रीडा पुत्तलायितम्'। स्वस्वामिशरीरम् = अपने स्वामी के शरीर को, 'स्वस्य स्वामिन शरीरम्'। हतोत्साहा = उत्साह हीन, 'हत उत्साह येषा ते'। विसृज्य = छोड़कर 'वि + √सृज् + ल्यप्'। कान्दिशीका = भयभीत, 'कान्दिशीकोभयद्रुत.' (अमरकोष)। दिश = दिशाओं की। भेजु = सेवित किया अर्थात् चारो ओर भागने लगे।

ससैन = सेना सहित 'सैनया सहित (तत्पु०)। विजयशङ्खनादै = विजय की शङ्ख ध्वनि से। रोदसी = आकाश और पृथ्वी। सम्पूर्य = भरकर। रणाङ्गणशोधनाधिकारम् = रणभूमि के शुद्ध (साफ) करने के अधिकार को, "रणस्य अङ्गणस्य शोधनस्य अधिकारस्तम्' (तत्पु०)। समर्प्य = समर्पित करके, 'सम + अर्प + ल्यप्'। प्रविश्य = प्रवेश करके। मातु = माता के। चरणौ = चरणों को, प्रणनाम = प्रणाम किया।

टिप्पणी—'क्रीडापुत्तलायितम्' = खिलौने के समान। यहाँ पर लुप्तोपमा अलङ्कार है।

द्वितीय नि श्वास समाप्त